

UNEVEN PAGES

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_184121

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP- 43- -30-1-71 -5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. 3294.53
N96V Accession No. P. G.
S2369
Author नृसिंहभट्ट
Title विधानमाला . 1920 .

This book should be returned on or before the date last marked below.

आनन्दाश्रमसंस्कृतग्रन्थावलिः ।

ग्रन्थाङ्कः ८६

श्रीनृसिंहभट्टविरचिता
विधानमाला ।

एतत्पुस्तकं

वे० शा० रा० मारुलकरोपाह्वैः शंकरशास्त्रिभिः
संशोधितम् ।

तच्च

बी. ए. इत्युपपदधारिभिः
विनायक गणेश आपटे
इत्येतैः

पुण्याख्यपत्तने

आनन्दाश्रममुद्रणालये

आयसाक्षरैर्मुद्रयित्वा

प्रकाशितम् ।

शालिवाहनशकाब्दाः १८४२

स्विताब्दाः १९२०

(अस्य सर्वेऽधिकारा राजशासनानुसारेण स्थायतीकृताः)

मूल्यं सपादरूपकचतुष्टयम् । (४०४)

आदर्शपुस्तकोल्लेखपत्रिका ।

अस्या विधानमालायाः पुस्तकानि यैः परहितैकपरतया संस्करणार्थं प्रदत्तानि तेषां नामानि पुस्तकानां संज्ञाश्च कृतज्ञतया प्रदर्श्यन्ते—

(क.) इति संज्ञितम्—संपूर्णमानन्दाश्रमसंस्कृतग्रन्थसंग्रहालयस्थम् ।

(ग्व.) इति संज्ञितम्—आठघरे. इत्युपाह्वानां पुण्यपत्तननिवासिनाम्, अप्पासाहेब इत्येतेषाम् ।

॥ श्रीः ॥

अथ विधानमालास्थविषयानुक्रमणिका प्रदर्श्यते ।

| विषयाः | पृष्ठाङ्काः | विषयाः | पृष्ठाङ्काः |
|---|-------------|------------------------------|-------------|
| मङ्गलाचरणम् | १ | तत्राभिषेकमन्त्राः | १५ |
| विधानशब्दव्याख्या | १ | मूर्तिदानमन्त्रः | १७ |
| मालाशब्दव्याख्या | २ | आश्लेषाविधानम् | ११ |
| शास्त्रस्य मङ्गलपरत्वम् | ३ | गण्डान्तविधानम् | १८ |
| धर्मार्थकामेति क्रमद्वन्द्वः | ५ | अथ होमः | ११ |
| व्यवहारो द्विविधः | १ | तत्र मन्त्राः | १९ |
| कर्मणां धर्मार्थकामपरत्वम् | १ | अथ शर्तापधयः | ११ |
| नित्यादिभेदेन कर्मणामनन्त- त्वम् | १ | सूतिकास्तन्यवर्धनविधानम् | २१ |
| आकृत्यधिकरणपूर्वपक्षीयह- ष्टान्तः | १ | रेवतीग्रहपीडाशमनम् | ११ |
| नित्यानि कर्माणि | १ | बालग्रहपीडाशमनम् | २२ |
| नैमित्तिकानि कर्माणि | १ | बलिनिक्षेपमन्त्रः | ११ |
| काम्यानि कर्माणि | ६ | विष्टताक्षग्रहपीडाशमनम् | २३ |
| नित्यकाम्यैकदेशानि | १ | नवग्रहपीडाशमनविधानम् | ११ |
| षट्संगतयः | १ | बलिनिक्षेपमन्त्रः | २४ |
| पुष्पवतीविधानम् | १ | वायसग्रहविधानम् | ११ |
| विकृतप्रसवशान्तिविधानम् | १० | महाजिह्वाग्रहपीडाशमनवि० | २५ |
| पोडशोपचारपूजामन्त्रः | ११ | क्षेत्रपालग्रहपीडाशमनविधानम् | ११ |
| तत्र दानमन्त्रः | १ | हस्तिपादग्रहपीडाशमनवि० ... | ११ |
| यममूर्तिप्रतिपादनमन्त्रः | ११ | कर्णग्रहपीडाशमनविधानम् ... | २६ |
| यमलोत्पत्तिविधानम् | १२ | तोलग्रहपीडाशमनविधानम् ... | ११ |
| बाजिदानमन्त्रः | ११ | स्कन्दग्रहपीडाशमनविधानम्... | २७ |
| दत्तमूर्तिदानमन्त्रः | १३ | स्कन्दापस्मारपीडाशमनवि० | २८ |
| समाननक्षत्रजननविधानम् | ११ | मेषग्रहपीडाशमनविधानम् | २९ |
| तत्र मूर्तिदानमन्त्रः | ११ | शिशुग्रहपीडाशमनविधानम् ... | ३० |
| मूलशान्तिविधानम् | १४ | महापूतनाग्रहपीडाशमनविधानम् | ११ |
| | | रेवतीग्रहपीडाशमनविधानम्... | ३१ |
| | | ऊर्ध्वपूतनाग्रहपीडाशमनवि० | ३२ |

| विषयाः | पृष्ठाङ्काः | विषयाः | पृष्ठाङ्काः |
|---|-------------|--|-------------|
| अथ मणिकभङ्गविधानम् ... | ११४ | जयपट्टविधानम् | १४० |
| पेषणीवरवर्तिभङ्गविधानम् ... | ११५ | रणप्रवेशविधानम् | १४१ |
| भाण्डोच्छ्रायपङ्क्तिपातविघ्न- हरं विधानम् | ११७ | अथ पङ्क्त्यन्यासः ... | १४२ |
| गृहतुलास्तम्भभङ्गजदोषहरं विधानम् ... | ११८ | पङ्क्तिरमुद्रा ... | १४२ |
| अग्निदग्धगृहपुनराधानम् ... | ११८ | अथ रक्षाविधिः ... | १४२ |
| ग्रामारिष्टशमनविधानम् ... | १२० | अथ खण्डकम् ... | १४२ |
| वृक्षोज्ज्वारिष्टशमनविधानम् ... | १२२ | अथौषधयः ... | १४२ |
| कदलीदुष्टप्रसवविघ्नशमनवि० | १२३ | सर्वायुधनिवारणम् ... | १४२ |
| निषिद्धतरुगृहप्ररोहविघ्नहरं वि० | १२४ | रणतिलकविधानम् ... | १४४ |
| स्वस्थारिष्टशमनविधानम् ... | १२४ | अथ नवौषधयः ... | १४५ |
| यात्रारिष्टशमनविधानम् ... | १२६ | गुटिकाविधानम् ... | १४५ |
| भेकदुष्टरुतजनितविघ्नशमन- विधानम् ... | १२७ | कपर्दिकाविधानम् ... | १४६ |
| कपोतशान्तिविधानम् | १२८ | योगवटितशस्त्रपरक्षिप्तशस्त्र- त्रोटनविधानम् ... | १४७ |
| पल्लीसरटनिपातविघ्नहरं वि० | १२९ | शस्त्रदारुणीकरणविधानम् ... | १४७ |
| पल्लीपतनसरटप्ररोहणविघ्न- हरं विधानम् ... | १३० | पिच्छविधानम् ... | १४८ |
| मार्जन्यादिदुष्टरजःस्पर्शजवि- घ्नहरं विधानम् ... | १३१ | त्र्यम्बकविधानम् ... | १४८ |
| दीपोपप्लवकूष्माण्डभेदफल- चार्थविधानम् ... | १३२ | जयकाहलाविधानम् ... | १४९ |
| नवदुर्गपूजनविधानम् ... | १३२ | आनन्दभाजनविधानम् ... | १४९ |
| दुर्गदृढीकरणविधानम् ... | १३४ | भस्मरेषाविधानम् ... | १५० |
| चतुरङ्गसैन्यदृढीकरणवि० | १३५ | यमार्गलयन्त्रविधानम् ... | १५० |
| रणदीक्षाविधानम् ... | १३७ | रिपुस्तम्भनविधानम् ... | १५१ |
| वीरविजयप्रदवीरकङ्कणवि० | १३९ | वैरिविद्वेषणविधानम् ... | १५१ |
| अथ वीरपट्टविधानम् ... | १४० | अथ मोहनविधानम् ... | १५२ |
| सिन्दूरपट्टविधानम् | १४० | संक्षीर्णविधानानि ... | १५२ |
| | | स्त्रीमुखप्रसवविधानम् ... | १५३ |
| | | चतुस्त्रिंशद्यन्त्रम् ... | १५३ |
| | | क्षेत्रे शलभादिकीटनिवारणं | |
| | | चतुर्विंशतियन्त्रम् ... | १५३ |
| | | छुरिकायुद्धविजयप्रदं द्विपष्टि- | |

| विषयाः | पृष्ठाङ्काः | विषयाः | पृष्ठाङ्काः |
|---|-------------|--|-------------|
| यन्त्रम् १५४ | | अथ होलिकाविधानम् ... १७० | |
| ग्रहभूतपिशाचनिवारणं शतय- न्त्रम् १५५ | | तत्र दीपनमन्त्रः ... १७१ | |
| अपुष्पापुष्ककारकं द्वात्रिंशद्य- न्त्रम् १५६ | | चैत्रशुद्धप्रतिपद्विधानानि ... १७२ | |
| अथर्वविद्योक्तमामुरीविधानम् १५६ | | काकपिण्डपरीक्षावि-.... | |
| तत्र विधानक्रमः १५७ | | धानम् १७४ | |
| षडङ्गन्यासः १५८ | | क्षिप्तधान्यपरीक्षावि-.... | |
| द्वितीयं वशीकरणम् १५९ | | धानम् १७५ | |
| प्रदोषगर्जितविधानम् १६० | | चैत्रशुद्धप्रतिपद्विधानम् | |
| अलक्षण्यालक्षणीकरणवि० १६० | | रीक्षाविधानम् १७६ | |
| अर्कवृक्षविवाहविधानम् ... १६१ | | अन्यच्च १७७ | |
| प्रतिकूलविधानम् १६२ | | वत्सराधिपतिपूजावि- धानम् १७८ | |
| वसन्तपूजाविधानम् १६३ | | दमनकारोपणवि- धानम् १७९ | |
| तत्र ध्यानविधिः १६४ | | दमनकावाहनम् १८० | |
| ततः स्तुतिः १६५ | | दमनकध्यानम् १८१ | |
| आवाहनम् १६६ | | तत्र विसर्जनमन्त्रः १८२ | |
| श्रीरागध्यानम् १६७ | | भावुकामहोत्सववि- धानम् १८३ | |
| वसन्तध्यानम् १६८ | | पवित्रारोपणविधानम् १८४ | |
| कुसुमाञ्जल्यर्पणम् १६९ | | भाद्रपदे मासि गरुडपञ्चमी- विधानम् १८५ | |
| पञ्चमध्यानम् १७० | | तत्र बीजमन्त्राः १८६ | |
| भैरवध्यानम् १७१ | | आश्विने मासि नवचण्डी- विधानम् १८७ | |
| मेघरागध्यानम् १७२ | | तत्र कुमारीपूजनमन्त्राः ... १८८ | |
| नटनारायणध्यानम् १७३ | | | |
| ततः पूजा १७४ | | | |
| कार्तिकदीपोत्सववि- धानम् १७५ | | | |
| तत्र मतान्तरम् १७६ | | | |
| माघमासपुराणोक्तं दीपसप्त- मीविधानम् १७७ | | | |

स्वर्गकामो यजेत ' इत्यादीनि । जन्माष्टम्यादीनि नित्यकाम्यैकदेशानि, अकरणे प्रत्यवायश्रवणात्फलश्रवणाच्च । एवमनन्तत्वात्कर्मणां प्रज्ञाबलेन स्वयमेवोक्तत्वम् । येषां प्रतिपादकवाक्ये कामिपदसंबन्धस्तानि काम्यान्येव । येषामकरणे प्रत्यवायस्तानि नित्यान्येव । येषां नियतदेशकालत्वाभावस्तानि ग्रहणादीनि नैमित्तिकान्येव । पुत्रजन्मसमयेऽनुष्ठीयमानानि तानि नैमित्तिककाम्यानि । काम्यनित्यैकदेशान्यपरपक्षश्राद्धादीन्येवं कर्मणामनन्तत्वम् । एतेष्वेव शान्तिकपौष्टिकसंज्ञकानि तानि विशेषतो निरूप्यन्ते । गर्भाधानादीनामनिरूपणे कारणमाह । गृह्यसूत्रादिग्रन्थेषु ग्रथितत्वान्निरूपणे व्युत्थितलक्षणो दोष एव न गुणः । तस्माच्छान्तिकपौष्टिकानि प्रत्येकं वर्णोपयोगीनि संकरजोपयोगीनि सर्वजनचमत्कारकाणीति कर्माणि निरूप्यन्ते । करोमीति प्रकृतिप्रत्ययार्थयोर्मध्ये प्रत्ययार्थस्य प्रधानत्वात् । भावनारूपत्वे च क्रियमाणत्वं मालाया एव तस्मादित्युपलभ्यते । यथा पुष्पमालाग्रन्थितुर्मालामेव प्रति कर्तृत्वम् । न च पुष्पाणि प्रत्येवं ममानेकशास्त्रदृष्टग्रन्थसंग्रहकर्तृत्वमेव न तु ग्रन्थकर्तृत्वमेषां ग्रन्थानां पौरुषेयाणां महर्षिभिर्ग्रथितत्वात् । अपौरुषेयाणां तु का कथा । अन्यथा विश्वादर्शादिवत् प्रतिकुञ्चकानि भवेयुः । यद्यर्षाण्यपि मदीयानीति योऽभिदध्यात् तेन मूर्खवद्भोत्रप्रश्नोत्तरवत्स्ववचनविघात एव कृतः स्यात् । तस्माद्वयं धर्मसंग्रहकारा एव । तत्राप्यसंगतसंगतिकाराः । ताश्च संगतयः षट्—आक्षेपिकी, आपवादिकी, प्रत्युदाहरणलक्षणा, बुद्धिस्थानलक्षणा, आतिदेशिकी, प्रासङ्गिकी चेति । इमाः स्वविषयपरा यथायथमुपयोज्यन्त इति तात्पर्यपरिशुद्धिः सर्वत्र ज्ञातव्या ।

तत्राऽऽदौ पुष्पवतीविधानं निरूप्यते ।

प्रथमतो दृश्यमानं रजः साध्वसाध्विति त्रिविच्यासाधुनः प्रतिकारः कथ्यते बराहपुराणात्—

प्रथमतो द्वितीये वा शुभाशुभनिरीक्षणम् ।

कर्तव्यं ज्ञातृभिः सम्यग्धर्मशास्त्रविचारतः ॥ १ ॥

शुभाय श्वेतवस्त्रादद्या रोगिणी रक्तवाससा ।

नीलाम्बरधरा नारी विधवा जायते ध्रुवम् ॥ २ ॥

भोगिनी पीतवस्त्रा च दृढवस्त्रा पतिव्रता ।

दुर्भगा शीर्णवस्त्रा च सुभगा क्षौमवस्त्रिणी ॥ ३ ॥

आलोहिते भवेद्वन्ध्या श्वेतवर्णे च पुत्रिणी ।
 कृष्णे न (तु) विधवा नारी रजस्ये पुत्र (वं तु) लक्षणम् ॥ ४ ॥
 ऊढा संवत्सरार्धे च मासे पक्षे तथा खलु ।
 रजस्तु दृश्यते स्त्रीणां सर्वदैवाशुभावहम् ॥ ५ ॥
 चैत्रे मासि विशेषेण वैधव्यं लभते ध्रुवम् ।
 वैशाखे बहुपुत्रा स्याज्ज्येष्ठे रोगावृता भवेत् ॥ ६ ॥
 आषाढे मृत्प्रजा * प्रोक्ता श्रावणे धनिनी भवेत् ।
 भाद्रे तु दुर्भगा क्लीबा श्रावने च तपस्विनी ॥ ७ ॥
 कार्तिके निर्धना बाला मार्गशीर्षे बहुप्रजा ।
 पौषे स्यात्पौंश्चली नारी माघे पुत्रसुखान्विता ॥ ८ ॥
 फाल्गुने सर्वसंपन्ना प्रथमर्तुफलं स्मृतम् ।
 आदित्ये विधवा नारी सोमे दैन्यमवाप्नुयात् ॥ ९ ॥
 मङ्गले शात्मघाताय कल्पते नात्र संशयः ।
 बुधे च धनिनी प्रोक्ता गुरौ भर्तुः सुखप्रदा ॥ १० ॥
 कन्यापुत्रप्रसूवारे भार्गवस्य न संशयः ।
 पौंश्चल्यकारिणी मन्देऽन्यमते भर्तुरग्रहः ॥ ११ ॥
 वैधव्यदा च प्रतिपद् द्वितीया पुत्रवर्धिनी ।
 सौभाग्यदा तृतीया च चतुर्थी सुखनाशिनी ॥ १२ ॥
 पञ्चमी सुभगा चैव षष्ठी संततिनाशिनी ।
 सप्तमी धननाशाय पुत्रदा सौर्यदाऽष्टमी ॥ १३ ॥
 नवमी क्लेशदात्री स्याद्दशमी च सुखप्रदा ।
 एकादश्यर्थनाशाय द्वादशी रतिवर्धिनी ॥ १४ ॥
 त्रयोदशी शुभा ज्ञेया दुर्भगा च चतुर्दशी ।
 पौर्णमासी त्वमात्रास्या दुःखसंभोगवर्धिनी ॥ १५ ॥
 प्रातःकाले रजः स्त्रीणां प्रथमं शोकवर्धनम् ।

* ' मृद् प्राणत्यागे ' इति पाणिनिस्मृत्युक्तमृद्धातोः क्लिप्त्याये तुकि च कृते
 ' मृत् ' इति प्रयोगस्य कथञ्चिदुपपादयितुं शक्यत्वेन प्राणवियोगाश्रया प्रजा यस्या इत्यर्था-
 विरोधे छन्दोनुरोधे च सति मृत्यवेति यथास्थितमेव साध्याति प्रतीयते । साध्वसाधु वा साधुभिर्वि-
 चारणीयम् ।

१ ख. ' हम् । आयतौ विधवा नारी प्रतिपद्यावृताऽसृजा । चै ' । २ ख. ' न्दे म्रियते भर्तुरग्रतः ।
 वे० ।

| विषयाः | पृष्ठाङ्काः | विषयाः | पृष्ठाङ्काः |
|-----------------------------|-------------|-----------------------------|-------------|
| काशीसमं प्रतिष्ठानाख्यं | ... | विधानम् | ३०२ |
| तीर्थम् | २७६ | जलाशयानां लक्षणानि | ३०३ |
| गोदावरीदर्शने जाते... | ... | अथ प्रपाविधानम् | ... ३०५ |
| मन्त्रः | २७७ | अन्नसत्रविधानम् | ३०७ |
| प्रणिपातमन्त्रः | २७८ | दत्तकपुत्रविधानम् | ... ३०९ |
| तीर्थे विधिः | २७९ | सपिण्डेषु दत्तकः कर्तव्यः | ... ३१० |
| अथ बृहस्पतिपूजनम् | २८० | तदभावेऽसपिण्डस्थोऽपि | ३११ |
| गौतमीप्रार्थनम् | ... २८१ | ग्रहणसूतकदोषदूषितौषध- | ३१२ |
| गोदावरीयायिनां नराणां | ... | मन्त्रदृढीकरणवि० | ३१३ |
| प्रशंसा | ... २८२ | अनृतमृतवार्तापरिहरणवि- | ... ३१४ |
| कन्यागते गुरौ श्रीशैलया- | ... | धानम् | ... ३१५ |
| त्राविधानम् | ... २८३ | चर्मपात्रशुद्धिविधानम् | ... ३१६ |
| कार्तिकेयदर्शनविधानम् | २८४ | शिवपूजाविधानम् | ... ३१७ |
| कमण्डल्वादीनामर्पणमन्त्राः | ... २८५ | वृषोत्सर्गविधानम् | ३१८ |
| ब्रह्मकूर्चविधानम् | ... २८६ | तत्र विधानक्रमः | ... ३१९ |
| ब्रह्मकूर्चलक्षणम् | ... २८७ | नारायणवलिविधानम् | ... ३२० |
| बालकस्योर्ध्वदन्तोद्गमजवि- | ... | नागवलिविधानम् | ३२१ |
| घ्नभङ्गवि० | २८८ | अस्थिपुरुषीकरणविधानम् | ... ३२२ |
| महानदीमहापूरभङ्गविधानम् | ... २८९ | अस्थ्यभावे पालाशविधानम् | ... ३२३ |
| बालकस्य माससंवत्सरवृ- | २९० | अथाष्ट महादानानि | ... ३२४ |
| द्धिवि० | २९१ | प्रेतकर्मणि दुष्टकालविवरणम् | ... ३२५ |
| अथ मृत्युंजयविधानम् | ... २९२ | शास्त्रवीक्षाविधानम् | ३२६ |
| अथ रुद्रानुष्ठानम् | ... २९३ | शकुनशास्त्रावलोकन- | ... ३२७ |
| वृक्षारोपणविधानम् | २९४ | विधानम् | ... ३२८ |
| वृक्षादीनां षड्विधोत्पत्तिः | ... २९५ | सप्तशतीशकुनप्रेक्षणविधानम् | ... ३२९ |
| अश्वत्थजातौ वर्णचतुष्टयम् | ... २९६ | श्रीभागवतशकुनावलोकनम् | ... ३३० |
| वल्लीविषये विशेषमाह | ... २९७ | रघुवंशशकुनावलोकनम् | ... ३३१ |
| वृक्षोद्यापनविधानम् | २९८ | उपश्रुतिविधानम् | ... ३३२ |
| वटोद्यापनम् | ... २९९ | त्रिपुष्करादियोगजविघ्न- | ... ३३३ |
| तडागादिजलाशयोद्यापन- | ३०० | भङ्गविधानम् | ... ३३४ |

| विषयाः | पृष्ठाङ्काः | विषयाः | पृष्ठाङ्काः |
|---|-------------|---|-------------|
| ग्रहणवेधदोषहरं विधानम् ... | ३४० | दिव्यमातृकाविधानम् ... | ३८२ |
| दाहादिदोषदुष्टवस्त्रदोषहरं विधानम्... .. | ३४१ | धर्मचीरिकाविधानम्.... | ३८७ |
| आस्तीकमते सर्पदष्टापमृत्यु- हरं विधानम् | ३४२ | स्थालीपाकादिहोमकुण्ड- लक्षणानि... .. | ३८८ |
| नव नागाः... .. | ३४३ | अथ विशेषकुण्डानि ... | ” |
| अभिषेके पौराणमन्त्राः ... | ” | अङ्गुललक्षणम् ... | ” |
| मन्त्रोपदेशविधानम् ... | ३४४ | मेखलालक्षणम् ... | ३८९ |
| ब्रह्मयामलोक्तं प्रासादोद्या- पनविधानम् ... | ३४५ | मानाधिक्यन्यूनत्वफलम् ... | ” |
| प्रासादकलशन्यासविधानम्.... | ३४७ | अन्नहीनहोमस्य फलम् ... | ” |
| वास्तुपूजाविधानम् ... | ३४८ | द्रव्यहीनहोमस्य फलम् ... | ” |
| प्रासादवास्तुपूजाविधानम् ... | ३४९ | मन्त्रहीनहोमफलम् ... | ” |
| गृहवास्तुपूजाविधानम् ... | ३५० | होमद्रव्यहीनहोमफलम् ... | ” |
| वास्तुमण्डलदेवताः ... | ” | ब्राह्मणलक्षणम् ... | ” |
| दुष्टस्थानगतादित्यपूजावि० ... | ३५२ | होममुद्राः ... | ३९० |
| तत्र पूजाविधानम् ... | ३५३ | द्रव्यहोमे विशेषः ... | ३९१ |
| चन्द्रपूजाविधानम् | ३५४ | अथ सुवधारणलक्षणम् ... | ” |
| मङ्गलपूजाविधानम् ... | ३५६ | आहुतिविभागलक्षणम् | ” |
| बुधपूजाविधानम् ... | ३५८ | वर्गेषु कुण्डविशेषः | ३९२ |
| गुरुपूजाविधानम् | ३५९ | तत्रौष्टकण्डविशेषमाह... .. | ” |
| शुक्रपूजाविधानम् ... | ३६० | देवयोनिलक्षणम् | ३९३ |
| शनैश्चरपूजाविधानम्... .. | ३६१ | अन्यच्च | ” |
| रोहिणीशकटभेद- विधानम्.... .. | ३६३ | विवाहव्रतबन्धमध्ये ... | ” |
| शनिस्तोत्रम् ... | ३६८ | मातृरजोदोषे ... | ३९४ |
| राहुपूजाविधानम् | ३७० | सप्त जिह्वानामान्याह ... | ३९५ |
| अथ केतुपूजाविधानम् ... | ३७१ | सप्त जिह्वास्तुतिमन्त्राः | ” |
| अथ तुलापुरुषविधानम् ... | ३७२ | पौराणाः | ३९६ |
| विष्णुश्राद्धविधानम् ... | ३७८ | मञ्चकदानमन्त्रः ... | ” |
| | | अथ पुण्याहवाचनम् ... | ३९७ |
| | | दुष्टप्रसवदोषहरं विधानम् ... | ४०० |

| विषयाः | पृष्ठाङ्काः | विषयाः | पृष्ठाङ्काः |
|--------------------------|-------------|---------------------------|-------------|
| निषिद्धाभ्यङ्गदोषहरं | ... | कृष्णचतुर्दशीप्रसूतिदो- | ... |
| विधानम् | ... ४०१ | षहरं वि० | ... ४०२ |
| निषिद्धवारेऽभ्यङ्गेऽदोष- | ... | अमाप्रसूतिदोषहरं विधानम् | ... ४०३ |
| हराणि द्रव्याणि | ... ,, | नष्टानन्तदोरकविघ्नहरं वि० | ... ,, |

इति विधानमालास्थविषयानुक्रमणिका समाप्तिमगात् ।



ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः ।

विधानमाला

श्रीनृसिंहभट्टविरचिता ।

यो धात्वन्तरशास्त्रमर्मचतुरः कारुण्यरत्नाकरः

सौजन्यामृतपूर्णमानससरिच्छ्रीशंभुचित्तः सदा ।

भूपालालिकलालनीयचरणद्वन्द्वस्य सूनुरे-

भूविस्तारियशाः सदा जयति स श्रीविश्वनाथः सुधीः ॥ १ ॥

प्रणम्य लम्बोदरमुत्तमानां संतोषदां सर्वपुराणदृष्टाम् ।

धर्मार्थकामव्यवहारसिद्धयै करोमि शुद्धार्थविधानमालाम् ॥ २ ॥

विधानमालेति ग्रन्थनामधेयम् । तच्चान्वर्थम् । विधानानां मालेव माला धर्-
म्परेत्यर्थः । विधानं विधिः । यद्यपि विधानशब्दे 'करणाधिकरणयौश्च' [पा०
सू० ३ । ३ । ११७] 'कृत्यल्युटो बहुलम्' [पा० सू० ३ । ३ । ११३]
'भावे च' [पा० सू० ४ । ४ । १४४] इत्यादिष्वर्थेषु ल्युट् स्मर्यते । तथैव
'उपसर्गे घोः किः' [पा० सू० ३ । ३ । ९२] 'कर्मण्यधिकरणे च' [पा०
सू० ३ । ३ । ९३] इत्यादिष्वर्थेषु किरपि स्मर्यते । ततश्च विधानविधिशब्दयोः सर्वा-
र्थविषये पर्यायत्वे संभवति तथाऽप्यत्र भावार्थ एव 'विज्ञानमानन्दं ब्रह्म' [बृ० ३ ।
९ । २८] इतिवत्तु नैयायिकाभिमतप्रकृतिप्रत्ययार्थकल्पनातः कल्पनान्तरत्वेन गौरव-
तया वेदान्तिभिर्युद्भाव एवाङ्गीकृतोऽसंभवाभावात् । यथा सति संभवे 'उद्भिदा
यजेत' इत्यादौ सामानाधिकरण्यं निर्वोढुं पूर्वपक्षिणा मत्वर्थलक्षणाऽऽश्रिता ।
सिद्धान्तिना तूद्भिनन्ति पशुफलमिति खनित्रवदव्यव्युत्पत्तिपरित्यागेन लक्षणा-
मनाश्रित्यापि बलिभिदादिकर्मान्तरव्यवच्छेदकनामधेयपक्षाङ्गीकारेण सामाना-
धिकरण्यमाश्रितम् । 'सोमेन यजेत' इत्यादौ तु 'अग्निहोत्रं जुहोति' 'दध्ना जुहोति'
इतिवत्पृथगुत्पत्तिवाक्याभावाद्यागं विधायागत्या तस्मिन्नेव वाक्ये सोमोऽपि विधी-
यते । तथा 'अक्षरमम्बरान्तधृतेः' [ब्र० सू० १ । ३ । १०] इतिन्यायेनाक्षरादिषु रूढि-

परित्यज्यापि न क्षरतीत्यक्षरमित्यवयवप्रसिद्धिरङ्गी क्रियत इति तत्र गौरवमेव न्याय्यम् । अत्र तु लाघवेनैव चरितार्थत्वाद्वौरवमन्याय्यम् । यथा महागिरिमहोदधिसहितस्य महाक्षितिलक्षणस्य कार्यस्यैकस्मिन्स्रष्टारि पातरि संहर्तरीश्वरे संभवत्यनेकेश्वरकल्पनायां गौरवस्यान्याय्यत्वालाघवमेव युक्तम् । अतो विधानशब्दे ल्युट्प्रत्ययस्यैव भावार्थत्वान्न करणाद्यर्थपरत्वम् । विधानशब्दो व्याख्यात इदानीं विधानमालाशब्दे समासैकदेशभूतो मालाशब्दो व्याख्यायते । विधानानां माला विधानमाला । ग्रथितानेकद्रव्यसमुदायो मालाशब्देनोच्यते । पुष्पमाला कण्ठमालेत्यादिप्रसिद्धेः । अनेकेषां विधानानां व्यापाररूपत्वेन क्षणिकत्वाद्विधानसंबन्धिमालानुपपत्तेः प्रतिज्ञादोषश्च । अतः केवलावयवशब्दस्य मुख्यार्थासंभवेनावयवा इवावयवा इतिवदुपमेयत्वेन मालेव मालेति व्युत्पाद्य समासः कर्तव्यः । मालेव मालेति व्याख्याने विजातीयत्वाभावादेकस्यैव पदार्थस्योपमानोपमेयत्वाभावः । घट इव घटः, पट इव पट इति तद्विरोधात् । सत्यम् । तथाऽपि मालेव मालेत्यत्र यथा 'श्येनेनाभिचरन्त्यजेत' इत्यत्र श्येनशब्दस्य गुणपरत्वाङ्गीकारेण मत्वर्थलक्षणाभयाच्छेयनशब्दस्य नामधेयपरत्वेन सिद्धान्तिनाऽऽश्रिता वत्यर्थलक्षणा । तत्र पूर्वपक्षिणा वत्यर्थलक्षणाया मत्वर्थलक्षणातो बलीयस्त्वेनैकस्यैवोपमानोपमेयत्वाभावेन च नामधेयपक्षस्य दुर्बलत्व आशङ्किते पुनः सिद्धान्तिना वचनव्यक्तिसमये लक्षणामात्राश्रयणाभावेनाधिकदोषाभावः समर्थः । किं चैकस्योपमानोपमेयभावो 'गगनं गगनाकारम्' इतिवद् घटते तद्वन्मालेव मालेत्युपपद्यते । इति विधानमालाशब्दसमर्थनं यथाकथंचित्कृतं परं तु विधानशब्दार्थस्य करोत्यर्थस्य सर्वत्र चैकरूपत्वान्मालाया अनुपपत्तितो विधानमालाशब्दार्थोऽघटमानोऽप्यनेकद्रव्यदेवतादिकरणसंप्रदानादिकारकसंबन्धभेदाद्विधानानेकत्वस्योपपत्तेश्चोपपद्यते । तर्हीस्मिन्ग्रन्थे साध्यसाधनेतिकर्तव्यतानिरूपणत्रयाणामपि भेदानां विधानशब्दवाच्यत्वे कथं भावार्थ एव ल्युडिति निश्चयः कृतः । सत्यम् । परं तु साधनादीनां कारकाणां क्रियां प्रति प्राधान्यात् पृथक्त्वेन प्रत्येकं विधानशब्दापेक्षा नोररी क्रियते । कर्मण ईप्सिततमत्वात् क्रियापेक्षयाऽप्युद्देश्यत्वेन प्रधानत्वात्कर्मणि ल्युट्प्रत्यये संभवति भावार्थ एव ल्युडिति निश्चयः कथं संपद्यत इति चेत्सत्यम् । कर्मणोऽप्यंशद्वयेन प्राधान्याप्राधान्ये, उद्देश्यत्वेन प्रधानत्वमुपयोगित्वेन कारकत्वादप्रधानत्वम् । तेनाऽऽकारेण कर्मणि कारकशब्दप्रवृत्तिः षट् कारकाणीति नियमः । तस्मादपि भावार्थ-

नियमो घटते । सतीष्वन्यासु विधानमालासु किमर्थमियं विरच्यते । यतः सर्व-
पुराणदृष्टामिति । अत्र पुराणशब्दो रूढिं परित्यज्य ' आचारात्स्मृतिर्वलीयसी '
इत्यनेन न्यायेनावयवप्रसिद्ध्या वेदतदङ्गोपाङ्गस्मृतीतिहासादिषु शास्त्रेषु
प्रवृत्तः । यद्यपि पुराणेषु न दृश्यते तथाऽपि सर्वेषु मिलितेषु दृष्टामिति सर्वपदसा-
र्थक्यम् । तर्हि शुद्धार्थविधानमालामिति पदस्य पत्रे दृष्टत्वात्कथं विधानमाले-
त्येव व्याख्यानम् । नायं दोषः । शुद्धार्थेति पत्रे पदस्यासंक्रान्तः(?) समासीभूत-
स्यापि शुद्धार्थशब्दस्येतरविशेषणापेक्षयाऽत्यन्तान्तरङ्गविशेषणप्रतिपादनत्वविज्ञा-
पनार्थं समक्षित्वम्(समर्थितम्)(?) । किं चानेकेष्वपि निबन्धनेष्वेवं दृश्यते संक्षि-
प्तयुक्त्यन्विततर्कभाषेतिवत् । संतोषदामित्यनेन स्वगुणसामग्र्या निर्दोषरसनानां
शर्करामिव संतोषदात्रीमित्यर्थः । असूयकायानृजवे जनायेत्यनेन हेतुनैत-
द्विपरीतेभ्यो ब्रूयादिति तात्पर्यतो येऽनसूयका ऋजवः, यतस्ते सन्तस्तेषां
संतोषदाम् । अथ वा गुणदोषौ निरीक्ष्य दोषप्रहाणं कृत्वा ये गुर्वादयो वृद्धा
गुणदृष्टयस्ते परोक्षमपरोक्षं वा सर्वैर्ज्ञायमानत्वात्सन्तीति सन्तस्तेषां संतोषदामिति ।
कश्चिदपि पापीयान् 'अग्निहोत्रं जुहुयात्' इति 'स्वर्मांसं भक्षयेत्' इतिवत्संतोषदां
संतोषच्छेत्रीमिति व्याख्यायाच्चर्हि स्वर्गकामेण भीमांसकेन श्रेयसीयसा
अग्नौ हूयते यस्मिन् होमे सोऽग्निहोत्रनामधेयो होम इति होमविशेषः समर्थितो
यथा तथा शुद्धार्थादिशब्दसंनिधानाद्धरिं वन्दे विष्णुं वन्दे न तु दर्दुरमित्यर्थादेव
'तां पार्वतीत्याभिजनेन नाम्ना बन्धुप्रियां बन्धुजनो जुहाव' इत्यत्र द्वेष्-
स्पृष्टार्थां शब्दे चेत्यर्थद्वये संभवत्यपि प्रथमातिक्रमे कारणाभावादिति न्यायेन स्पर्धा-
र्थत्वे निश्चितेऽपि बन्धुप्रियामित्यादिसंनिहितार्थबलेनेह 'उपह्वये श्रियम्' इत्यत्र
च गन्धद्वारामित्याद्यर्थसंनिधानेनैव शब्दार्थता । अतो हरिं जुहावोपह्वयेपदवत्
संतोषवितरणशीलामिति घोरर्पणपरत्वम् । एवंविधे ग्रन्थग्रन्थने को हेतुरिति
प्रश्ने प्रणम्य लम्बोदरमित्युत्तरम् । लम्बोदरमितिलक्षितेन तृप्तत्वेन शास्त्रस्य
मङ्गलपरत्वं ज्ञाप्यते । मङ्गलादीनि मङ्गलमध्यानि मङ्गलान्तानि शास्त्राणि
प्रथन्ते वीरपुरुषाणि भवन्त्यायुष्मत्पुरुषाणि चेति महाभाष्यकारेणोक्तम् ।
'अथ शब्दानुशासनम्' इत्यत्राथशब्दस्य मङ्गलार्थत्वमानन्तर्यार्थत्वं वेति संदेहे
'अथातो धर्मं व्याख्यास्यामः' इत्यत्र धर्मशब्दे मङ्गलार्थे संभवति पुनरप्यथ-
शब्दस्य मङ्गलान्यानन्तर्यार्थत्वं विशेषकैः सूत्रकारकायमनोवाक्कृतनमस्का-
रापेक्षया प्रणम्येत्यादौ नमस्कारग्रन्थे भाष्यत्वप्रदर्शनसमय आनन्तर्यार्थत्वं

दर्शितम् । ‘अथ शब्दानुशासनम्’ इत्यत्रापि परमेश्वरं प्रति सूत्रकारकृतनमस्कारा-
 पेक्षयाऽऽनन्तर्यं कस्माच्च भवेदित्याक्षिप्त उत्तरम् । अत्र भाष्य-
 कारीयोऽथशब्दः सौत्रवृद्धिपदोपलक्ष्यमङ्गलार्थक एव । तर्हि नमस्कारा-
 करणेऽतिष्ठत्वापत्तावुत्तरयति । येनाक्षरसमाम्नायेति प्रणिपातेनैव ‘अइउण्’
 इत्यादिचतुर्दशसूत्रीलक्षिताक्षरसमाम्नायः सूत्रकारेण पूर्वमेवोपलब्धः । पश्चा-
 त्स्वकृत्यापेक्षया ‘वृद्धिरादैच्’ इत्यत्र नमस्कारापेक्षायामतिच्छान्दसत्वं मा-
 भूदिति तदा नमस्कारो न कृत इति ज्ञायते । अथ वा नमस्कारोद्देश्ये परमे-
 श्वरप्रसादे जाते पुनर्नमस्कारानुपपत्तेः । तस्मात्तत्रार्थो वर्ण्यते यत्रेति न्यायेन
 मङ्गलार्थसौत्रपदव्याख्यापरस्याथशब्दस्य भाष्यत्वं पुनरप्याक्षेपपूर्वं समाधत्ते ।
 वृद्धिशब्देन साक्षान्मङ्गलार्थ उच्यते । कथं भाष्यकारेणासंदिग्धशब्दस्य
 शुद्धयर्थस्य संदिग्धार्थेनाथशब्देन व्याख्यानं क्रियते । अपूर्वमेतदाश्चर्यं यद्भाष्य-
 व्याख्यानमेव दुर्घटम् । अत्रोत्तरम् । यद्यपि वृद्धिशब्दस्य साक्षान्मङ्गलपरता
 तथाऽपि संज्ञाविरूपकत्वेनान्यपरत्वमयुक्तम् । अन्यायश्चानेकार्थत्वमिति न्यायात् ।
 अक्षपादमालादिषु त्वगत्याऽनेकार्थत्वमङ्गी क्रियते । अत्र तु गत्यन्तरभावादने-
 कार्थताऽयुक्ता । अत्र समाधत्ते । यद्यपि संज्ञानिरूपकत्वेन वृद्धिशब्दः संज्ञा-
 शब्दः । ‘लघ्वर्थे हि संज्ञाकरणम्’ इति न्यायेन स शब्दः सर्वत्राऽऽदैवौ प्रति-
 पादयन्नापि मङ्गलार्थोऽपि युज्यते । अत्र हेतुमुपन्यस्यति । सर्वत्र ‘अदेङ्गुणः’
 [पा० सू० १ । १ । २] ‘हलोऽनन्तराः संयोगः’ [पा० सू० १ । १ ।
 ७] इत्यादौ संज्ञासूत्रप्रगाथे संज्ञानिरूपणानन्तरं संज्ञानिरूपणम् । अत्र तु
 व्यतिक्रमेण, कारणमेतदेव यन्मङ्गलादिना शास्त्रेण भवितव्यमिति सुतरां
 वृद्धिशब्दस्य मङ्गलार्थत्वे दुर्घटतद्व्याख्यानपरतयाऽथशब्दस्य तदपेक्षया
 सुगमत्वम् । ‘अपृक्त एकाल्पत्ययः’ [पा० सू० १ । २ । ४१] इत्यत्र
 सूत्रकारस्यानामधेयत्वं संभाव्यते । ग्रन्थारम्भे त्वनामधेयत्वाभावाद्व्यतिक्रम-
 लिङ्गेन मङ्गलार्थत्वम् । तद्वदेव लम्बोदरमिति मङ्गलपरपदम् । मङ्गलाचरणं
 चाऽऽरब्धं कार्यपरिपन्थिविघ्नविनाशार्थम् । ‘लम्बोदरश्च’ ‘विघ्ननाशो गणाधिपः’
 इति ‘द्वादशैतानि’ इति ‘विद्यारम्भे विवाहे’ इति ‘विघ्नस्तस्य न जायते’ इति च
 विघ्नविनाशकं लम्बोदर इति नामधेयम् । तस्मादादौ मङ्गलार्थमेव प्रयुक्तम् ।
 आक्षिपति—प्रणम्यपदस्य ग्रन्थारम्भे विद्यमानत्वात्कथं लम्बोदरमित्यत्र
 मङ्गलादित्वम् । सत्यम् । परं तु नमस्काराचरणानन्तरं नमस्कार्यनामधेयल-
 क्षिततृप्तिगुणसंभावनया मङ्गलादित्वमेव । अभिधेयं सप्रयोजनमाह—‘धर्मार्थ-
 कामव्यवहारसिद्ध्यै’ इति । ‘तादर्थ्ये चतुर्थी’ इति न्यायेन प्रयोजनं

कथ्यते । यथा काव्यप्रकाशे ' काव्यं यशसेऽर्थकृते ' इति । यदुद्दिश्य प्रवर्तते पुरुषस्तत्प्रयोजनं यमर्थमधिकृत्य प्रवर्तते तत्प्रयोजनम् । ' यद्वृत्तयोगः प्राथम्यम् ' इत्याद्युद्देशलक्षणमिति । धर्मं वाऽर्थं कामं बोद्दिश्य पुरुषः प्रवृत्तो दृश्यते । तस्माद्धर्मार्थकामानां प्रयोजनरूपत्वम् । यद्यपि ' धर्मादिष्वनियम इष्यते ' इती-
ष्टिरस्ति तथाऽपि कृच्छ्रादिजन्यस्य धर्मस्यानपेक्षितार्थस्यानन्याधीनत्वात्प्राथ-
म्यमिति तीष्टिस्त्वर्थकामविषया भवेत् । तदर्थकामपरपुरुषापेक्षया वस्तुवृत्त्याऽर्थस्यैव
धर्मानन्तर्यम् । अर्थानर्थयोः कामाकामयोर्धर्माधर्ममूलत्वे समाने कथमर्थस्यैव
धर्मानन्तर्यम् । सत्यम् । तथाऽपि, अर्थस्तु केवलं कामवद्धर्मस्य कार्यमेवेति
नास्ति । धर्मं प्रत्यपि कारणत्वेन दृष्टत्वात् । तस्माद्धर्मार्थकामेति क्रमद्वन्द्वो
घटते । एषां त्रयाणां व्यवहारः प्रवृत्तिलक्षणस्तस्य सिद्धयै प्राप्त्यै । स च
प्रवृत्तिलक्षणो व्यवहारः कचिद्रागतः । कचिदागमतः । तत्र शास्त्रविरोधे
गुह्यशर्करादिभक्षणादौ ' अनिषिद्धसुखत्यागी पशुरेव ' इति न्यायेन रागजोऽपि
व्यवहारो न दुष्टः । शास्त्रविरोधे तु पलाण्डुगृञ्जनादिभक्षणादौ रागजो दुष्ट एव ।
अत्र त्वागमतो यो व्यवहारस्तस्यैव सिद्ध्या इत्यर्थः । एकानि कर्माणि केवलं
धर्मपराणि पुराणश्रवणादीनि । एकान्यर्थपराणि गजाश्वादिशान्त्यादीनि ।
एकानि कामपराणि विजयादशमीबलिदिनविधानादीनि । एतेषामेवानन्तभेद-
भिन्नत्वाभित्यनैमित्तिककाम्यकाम्यैकदेशनित्यनित्यैकदेशकाम्यनैमित्तिकनित्य-
नैमित्तिकनित्यनैमित्तिकैकदेशनित्यनित्यैकदेशनैमित्तिकनैमित्तिककाम्यकाम्य-
नैमित्तिकनैमित्तिकैकदेशकाम्यकाम्यैकदेशनैमित्तिकनित्यनैमित्तिकैकदेशनित्य-
काम्यादिद्वारा कर्मणामनन्तत्वम् । यथाऽऽकृत्यधिकरणपूर्वपक्षसमये किं जाति-
र्वाच्या व्यक्तिर्वोभयसंबन्धः समुदायो वा लिङ्गं कारकं वा संख्या वा व्यक्ति-
विशिष्टा जातिर्वा जातिविशिष्टा व्यक्तिर्वा जातिसंबन्धो वा जातिसमुदायो
वा जातिविशिष्टः संबन्धो वा संबन्धविशिष्टा जातिर्वा जातिविशिष्टसमुदायो
वा समुदायविशिष्टा जातिर्वा जातिविशिष्टं कारकं कारकविशिष्टा जातिर्वा
जातिविशिष्टा संख्या वा संख्याविशिष्टा जातिर्वा जातिविशिष्टं लिङ्गं वा
लिङ्गविशिष्टा जातिर्वेतीत्यादिपक्षाणामनन्तत्वम् । एते पक्षा अनन्तत्वे
दृष्टान्तिता नोपयोगित्वे सिद्धान्ते जातेरेवाभिधेयत्वादितरेषामुपलक्षणीयत्वात् ।
दार्ष्टान्तिकपक्षाणामपि शास्त्रबलेन सूक्ष्मदृष्ट्या संभवादुपयोगित्वम् ।
तत्र च नित्यानि ' यावज्जीवमग्निहोत्रं जुहुयात् ' इत्यादीनि । नैमित्तिकानि
' भिक्षे जुहोति ' ' स्कन्ने जुहोति ' इत्यादीनि । काम्यानि ' ज्योतिष्ठोमेन

स्वर्गकामो यजेत ' इत्यादीनि । जन्माष्टम्यादीनि नित्यकाम्यैकदेशानि, अकरणे प्रत्यवायश्रवणात्फलश्रवणाच्च । एवमनन्तत्वात्कर्मणां प्रज्ञाबलेन स्वयमेवोद्यत्वम् । येषां प्रतिपादकवाक्ये कामिपदसंबन्धस्तानि काम्यान्येव । येषामकरणे प्रत्यवायस्तानि नित्यान्येव । येषां नियतदेशकालत्वाभावस्तानि ग्रहणादीनि नैमित्तिकान्येव । पुत्रजन्मसमयेऽनुष्ठीयमानानि तानि नैमित्तिककाम्यानि । काम्यनित्यैकदेशान्यपरपक्षश्राद्धादीन्येवं कर्मणामनन्तत्वम् । एतेष्वेव शान्तिकर्षाष्टिकसंज्ञकानि तानि विशेषतो निरूप्यन्ते । गर्भाधानादीनामनिरूपणे कारणमाह । गृह्यसूत्रादिग्रन्थेषु ग्रथितत्वान्निरूपणे वृथोक्तिलक्षणो दोष एव न गुणः । तस्माच्छान्तिकर्षाष्टिकानि प्रत्येकं वर्णोपयोगीनि संकरजोपयोगीनि सर्वजनचमत्कारकाणीति कर्माणि निरूप्यन्ते । करोमीति प्रकृतिप्रत्ययार्थयोर्मध्ये प्रत्ययार्थस्य प्रधानत्वात् । भावनारूपत्वे च क्रियमाणत्वं मालाया एव तस्मादित्युपलभ्यते । यथा पुष्पमालाग्रन्थितुर्मालामेव प्रति कर्तृत्वम् । न च पुष्पाणि प्रत्येवं ममानेकशास्त्रदृष्टग्रन्थसंग्रहकर्तृत्वमेव न तु ग्रन्थकर्तृत्वमेषां ग्रन्थानां पौरुषेयाणां महर्षिभिर्ग्रथितत्वात् । अपौरुषेयाणां तु का कथा । अन्यथा विश्वादर्शादिवत् प्रतिकुञ्चकानि भवेयुः । यद्यार्पाण्यपि मदीयानीति योऽभिदध्यात् तेन मूर्खवद्भोत्रप्रश्नोत्तरवत्स्ववचनविघात एव कृतः स्यात् । तस्माद्वयं धर्मसंग्रहकारा एव । तत्राप्यसंगतसंगतिकाराः । ताश्च संगतयः षट्—आक्षेपिकी, आपवादिकी, प्रत्युदाहरणलक्षणा, बुद्धिस्थानलक्षणा, आतिदेशिकी, प्रासङ्गिकी चेति । इमाः स्वविषयपरा यथायथमुपयोज्यन्त इति तात्पर्यार्थपरिशुद्धिः सर्वत्र ज्ञातव्या ।

तत्राऽऽदौ पुष्पवर्तीविधानं निरूप्यते ।

प्रथमर्तो दृश्यमानं रजः साध्वसाध्विति विविच्यासाधुनः प्रतिकारः कथ्यते बराहपुराणात्—

प्रथमर्तो द्वितीये वा शुभाशुभनिरीक्षणम् ।

कर्तव्यं ज्ञातृभिः सम्यग्धर्मशास्त्रविचारतः ॥ १ ॥

शुभाय श्वेतवस्त्रादद्या रोगिणी रक्तवाससा ।

नीलाम्बरधरा नारी विधवा जायते ध्रुवम् ॥ २ ॥

भोगिनी पीतवस्त्रा च दृढवस्त्रा पतिव्रता ।

दुर्भगा शीर्णवस्त्रा च सुभगा क्षौमवस्त्रिणी ॥ ३ ॥

आलोहिते भवेद्वन्ध्या श्वेतवर्णे च पुत्रिणी ।
 कृष्णे न (तु) विधवा नारी रजस्ये पुत्र (वं तु) लक्षणम् ॥ ४ ॥
 ऊढा संवत्सरार्धे च मासे पक्षे तथा खलु ।
 रजस्तु दृश्यते स्त्रीणां सर्वदैवाशुभावहम् ॥ ५ ॥
 चैत्रे मासि विशेषेण वैधव्यं लभते ध्रुवम् ।
 वैशाखे बहुपुत्रा स्याज्ज्येष्ठे रोगावृता भवेत् ॥ ६ ॥
 आषाढे मृत्प्रजा * प्रोक्ता श्रावणे धनिनी भवेत् ।
 भाद्रे तु दुर्भगा क्लीबा ह्यश्विने च तपस्विनी ॥ ७ ॥
 कार्तिके निर्धना बाला मार्गशीर्षे बहुप्रजा ।
 पौषे स्यात्पौश्वली नारी माघे पुत्रसुखान्विता ॥ ८ ॥
 फाल्गुने सर्वसंपन्ना प्रथमर्तुफलं स्मृतम् ।
 आदित्ये विधवा नारी सोमे दैन्यमवाप्नुयात् ॥ ९ ॥
 मङ्गले ह्यात्मघाताय कल्पते नात्र संशयः ।
 बुधे च धनिनी प्रोक्ता गुरौ भर्तुः सुखप्रदा ॥ १० ॥
 कन्यापुत्रप्रसूर्वारे भार्गवस्य न संशयः ।
 पौश्वल्यकारिणी मन्देऽन्यमते भर्तुरग्रदः ॥ ११ ॥
 वैधव्यदा च प्रतिपद् द्वितीया पुत्रवर्धिनी ।
 सौभाग्यदा तृतीया च चतुर्थी सुखनाशिनी ॥ १२ ॥
 पञ्चमी सुभगा चैव षष्ठी संततिनाशिनी ।
 सप्तमी धननाशाय पुत्रदा सौख्यदाऽष्टमी ॥ १३ ॥
 नवमी क्लेशदात्री स्याद्दशमी च सुखप्रदा ।
 एकादश्यर्थनाशाय द्वादशी रतिवर्धिनी ॥ १४ ॥
 त्रयोदशी शुभा ज्ञेया दुर्भगा च चतुर्दशी ।
 पौर्णमासी त्वमावास्या दुःखसंभोगवर्धिनी ॥ १५ ॥
 प्रातःकाले रजः स्त्रीणां प्रथमं शोकवर्धनम् ।

* ' मृद् प्राणत्यागे ' इति पाणिनिस्मृत्युक्तमृद्धातोः क्तिप्प्रत्यये तुक् च कृते
 ' मृत् ' इति प्रयोगस्य कथंचिदुपपादयितुं शक्यत्वेन प्राणवियोगाश्रया प्रजा यस्या इत्यर्था-
 विगोधे छन्दोनुरोधे च सति मृत्प्राप्तेति यथास्थितमेव साधिति प्रतीयते । साध्वसाधु वा साधुभिर्वि-
 चारणीयम् ।

१ ख. °हम् । आयतौ विधवा नारी प्रतिपद्यावृताऽसृजा । चै° । २ ख. °न्दे म्रियते भर्तुरग्रतः ।
 वे° ।

संगवे सुखसंतानं मध्याह्ने धनसंततिः ॥ १६ ॥
 अपराह्ने धनाप्राप्तिः सायाह्ने मध्यमं फलम् ।
 पूर्वरत्रे सुखायालं मध्यरात्रे धनक्षयः ॥ १७ ॥
 पररात्रेऽर्थनाशः स्यात्प्रथमर्तुफलं स्मृतम् ।
 गृहमध्ये सुखावाप्तिर्गृहद्वारे वियोगिनी ॥ १८ ॥
 शय्यास्था सुखदा भूमावनेकापत्यसंततिः ।
 पुरन्ध्रया दृश्यते यत्तु रजः स्त्रीणां सुखाय तत् ॥ १९ ॥
 विश्वस्तया तु यद्दृष्टं रजो वैधव्यदं स्मृतम् ।
 रजः पश्यति चेत्कन्या पुमान्वाऽथ सुखं भवेत् ॥ २० ॥
 स्वयं दृष्टं तथा स्त्रीणामात्मघाताय कल्पते ।
 पितृगृहे रजो दैन्यं विवन्ध्या तु स्वके कुले ॥ २१ ॥
 अभिनी सुखदा स्त्रीणां भरणी कामवर्धिनी ।
 कृत्तिका दैन्यदा ज्ञेया रोहिणी सुखदा भवेत् ॥ २२ ॥
 मृगस्तु कामभोगाय सुखदं रुद्रदैवतम् ।
 आदित्यर्क्षं च सुखदं गुरुभं सुखवर्धनम् ॥ २३ ॥
 आश्लेषा सुखनाशाय मघा वैधव्यदा स्मृता ।
 पूर्वा फल्गुनिका पुत्रकन्यकासुखवर्धिनी ॥ २४ ॥
 उत्तरा सार्धनाशाय हस्तः पुत्रविवर्धनः ।
 चित्रा विचित्रतनुतां कुरुते नात्र संशयः ॥ २५ ॥
 स्वाती शुभाय नारीणां विशाखा सुखनाशिनी ।
 अनुराधाऽर्थभोगाय ज्येष्ठा भर्तुर्वियोगदा ॥ २६ ॥
 शुभं चाप्यशुभं मूलं पूर्वाषाढाऽर्थनाशिनी ।
 सुखदाऽप्युत्तगण्डा श्रवणं सुखवर्धनम् ॥ २७ ॥
 धनिष्ठापञ्चकं स्त्रीणां प्रथमतो सुखप्रदम् ।
 तिथिरेकगुणा प्रोक्ता नक्षत्रं च चतुर्गुणम् ॥ २८ ॥
 वारश्च षड्गुणो ज्ञेयो मासश्चाष्टगुणः स्मृतः ।
 वस्त्रं दशगुणं विशादृशनं च ततोऽधिकम् ॥ २९ ॥
 अशुभं चेद्रजः स्त्रीणां प्रथमतो हि दृश्यते ।
 विधानं तत्र कर्तव्यमरिष्टघ्नं विशेषतः ॥ ३० ॥
 पञ्चमे दिवसे स्नात्वा द्वाभ्यामप्यत्र मङ्गलैः ।
 उष्णैस्तु वारिभिः श्रेष्ठैः पञ्चपल्लवसंयुतैः ॥ ३१ ॥

तिलतैलेन शुद्धेन शुभकल्केन वा पुनः ।
 आह्निकं च विधिं कृत्वा विधानं नूनमारभेत् ॥ ३२ ॥
 शुभाचारसमायुक्तः श्रद्धया परया युतः ।
 स्थण्डिलं च ततः कृत्वा स्वस्तिर्वाच्या द्विजोत्तमैः ॥ ३३ ॥
 अग्निप्रतिष्ठापूर्वं च हवनं तत्र कारयेत् ।
 अष्टोत्तरसहस्रं च जुहुयात्तिलसर्पिषा ॥ ३४ ॥
 प्रधानं पायसं प्रोक्तं सघृतं च सशर्करम् ।
 आ कृष्णेनेतिमन्त्रेण मूर्धानं चेति वा पुनः ॥ ३५ ॥
 सूर्यसूक्तं जपेद्विद्वान्विष्णुसूक्तं च वा पुनः ।
 सूर्यपूजां ततः कुर्यात्करवीरैः सुरक्तकैः ॥ ३६ ॥
 धूपार्थं गुग्गुलं दद्याद्दीपं दद्यात्प्रयत्नतः ।
 वक्त्रेरुत्तरतो विद्वान्स्थापयेत्कदलीं शुभाम् ॥ ३७ ॥
 हेम्नः पञ्चपलाढ्यां च पलस्यापि सुलक्षणाम् ।
 पलार्धेन तदर्धेन तदर्धार्धेन वा पुनः ॥ ३८ ॥
 सुस्तम्भां पञ्चपत्राढ्यां कदलैश्च विराजिताम् ।
 राशौ कृतप्रतिष्ठां तु तण्डुलानां नृपोत्तम ॥ ३९ ॥
 तण्डुलानां परिमाणमाढकानां चतुष्टयम् ।
 दद्यात्तां विप्रवर्याय सवस्त्रां च सदक्षिणाम् ॥
 अलंकृताय विदुषे श्रोत्रियाय कुटुम्बिने ॥ ४० ॥

तत्र मन्त्रः—

सुपत्रे सुभगे देवि रम्भे भास्करवल्लभे ।
 रक्ष मां रजसो दोषाद्दुष्टस्यास्य विगर्हितात् ॥ ४१ ॥
 कदल्यै कामदायिन्यै मेधायै गिरिजे नमः ।
 रम्भायै नवसारायै स जीव शरदः शतम् ॥ ४२ ॥
 दानेन तव देवेशि सविता विश्वतोमुखः ।
 प्रीतो भवतु मे सद्यो दोषं हरतु दुष्करम् ॥ ४३ ॥
 इति दानमन्त्रः । ततस्त्वाचार्यप्रार्थना—
 आचार्य त्वं महाभाग महादोषविनाशन ।
 दानस्यास्य प्रभावेण रजोदोषाच्च पाहि माम् ॥ ४४ ॥

इत्याचार्यप्रार्थना ।

ततोऽभिषेचनं कार्यं दंपत्योश्च विशेषतः ।

वेदविज्ञथो धनं देयं यथाशक्त्या(क्ति) च तर्पणम् ॥ ४५ ॥

यस्मिन्वाससि तद्दृष्टं रजो दुष्टं भयावहम् ।

तद्दासो यत्नतस्त्याज्यं ततः शान्तिकरं भवेत् ॥ ४६ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां प्रथमर्तौ

रजोदोषहरं पुष्पवतीविधानम् ।

अथ विकृतप्रसवजनितविघ्नशान्तिविधानम् ।

यद्यपि रजोदोषो निराकृतस्तथाऽपि रजःसमये निषिद्धाचरणनिमित्तविकृत्या-
द्युत्पत्तिस्त्वापस्तम्बीयविश्वरूपप्रपाठकप्रोक्तन्यायेन संभवति । तद्विधानम्—

विकृताङ्गानि जायन्ते त्वपत्यानि नृपोत्तम ।

यानि यानि महाबाहो तच्छृणुष्व विधानतः ॥ १ ॥

हीनाङ्गन्यधिकाङ्गानि सदन्तानि विशेषतः ।

उत्पन्नान्येव पश्यन्ति प्रवदन्ति हसन्ति च ॥ २ ॥

सकूर्चानि च जायन्ते पित्रोर्मृत्युं दिशन्ति च ।

सर्पव्याघ्रवृकादीनां रूपैर्नानाविधैर्नृप ॥ ३ ॥

जायन्ते प्राणिनां गर्भा महाभयविधायकाः ।

उत्पद्यन्ते विलीयन्ते कालेनैकेन देहिनः ॥ ४ ॥

तज्जन्मभयनाशाय विधानं कथ्यते मया ।

यस्या उदरसंभूता दृश्यते विकृतिर्नृप ॥ ५ ॥

दशाहादूर्ध्वमुद्विग्नाः स्लपनीयाः शुभैर्जलैः ।

जनयित्री च राजेन्द्र जनकश्च विशेषतः ॥ ६ ॥

सकुल्या अपि मनुजाः शुक्लमाल्यानुलेपनाः ।

शुक्लाम्बरधराश्चापि श्लक्ष्णवाचः प्रयत्नतः ॥ ७ ॥

कृताङ्गिकस्तु कर्ता च विदधीत विधानकम् ।

सदनस्योत्तरे भागे स्थण्डिलं तत्र कारयेत् ॥ ८ ॥

वाचयित्वा द्विजान्स्वस्ति पीठे पूज्या यमाकृतिः ।

कालायसमयी चण्डी महिषोपरि संस्थिता ॥ ९ ॥

नव्येन वस्त्रयुग्मेण वेष्टिता च विशेषतः ।

चतुर्भुजा पिङ्गकेशा पिङ्गश्रुविलोचना ॥ १० ॥

कर्णिकारभवैः पुष्पैः पूजिता सुमनोहरा ।
 वामहस्ते गदा पूज्या दक्षिणे कालदण्डकैः ॥
 ऊर्ध्ववामे हला पूज्या तथा खड्गश्च दक्षिणे ॥ ११ ॥
 यम प्रेतसख श्राद्धदेव देव महामते ।
 कालदण्डधर श्रीमन्वैवस्वत नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥

इति षोडशोपचारपूजाऽनेनैव मन्त्रेण कर्तव्या ।

ततश्चार्घ्यं प्रतिष्ठाप्य हवनं कारयेद्बुधः ।
 तिलाज्यतण्डुलास्तत्र प्रधानं समुदाहृतम् ॥ १३ ॥
 तेनैव स्विष्टकृज्ज्ञेयं प्रायश्चित्तं तु सर्पिषा ।
 कृणुष्व पेतिमन्त्रेण जुहुयाच्च सहस्रकम् ॥ १४ ॥
 रक्षोघ्नांश्च जपेन्मन्त्राञ्छं न इत्यपि शान्तये ।
 ततो दीपबलिं कुर्याद्धर्मराजस्य तुष्टये ॥ १५ ॥
 समाप्य विधिवद्धोमं दानं तत्र समारभेत् ।
 नीलाम्बरवृतं चण्डमहिषं यमवाहनम् ॥ १६ ॥
 आचार्याय ततो दद्यात्सखङ्गं च सदक्षिणम् ।
 पुष्पमालावृताङ्गं च स्वर्णशृङ्गं मनोरमम् ॥ १७ ॥
 ताम्रपृष्ठं रौप्यखुरं रत्नपुच्छं सचामरम् ।
 दक्षिणार्थं सुवर्णं च दद्याद्धर्मस्य तुष्टिदम् ॥
 संपूज्य विधिवद्विप्रं वस्त्रालंकारभूषणैः ॥ १८ ॥

तत्र दानमन्त्रः—

यमवाह नमस्तुभ्यमकालमरणापह ।
 लुलाय तव दानेन प्रीयतां मे परेतराद् ॥ १९ ॥
 सदक्षिणं महिषं संपाद्य ततः श्रेयःसंपादनपूर्वकमृत्तिकूपूजा ।
 ततोऽभिषेको विकृते मातापित्रोः सगोत्रयोः ॥

ततश्चाऽऽचार्याय यममूर्तिप्रतिपादनं तत्र मन्त्रः—

यमोऽसि पुण्यरूपोऽसि पुण्यमूर्तिर्निरामयः ।
 दानेन तव देवेश विघ्ना नश्यन्तु मे प्रभो ॥ २० ॥

इति यममूर्तिप्रतिपादनम् । ततश्च यथाशक्ति ब्राह्मणतर्पणम् ।

एवं कृते विधाने तु विघ्ना नश्यन्ति भूरिशः ।
 विकृतप्रसवोद्भूता नात्र कार्या विचारणा ॥ २१ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां विकृतप्रसवज-
 नितविघ्नशान्तिविधानम् ।

अथ यमलोत्पत्तिविधानम् ।

करचरणायन्यथात्वे विधानमस्तु यमलस्य तु विकृतत्वाभावाद्वैकृतिकादन्य-
 द्विधानं कथ्यते तदपि काशीखण्डे शौनकसूतसंवादे—

त्रिविधा यमलोत्पत्तिर्जायते योषितामिह ।
 सुतौ च सुतकन्ये च कन्ये एव तथा पुनः ॥ १ ॥
 एकलिङ्गनै विनाशाय द्विलिङ्गनै मध्यमौ स्मृतौ ।
 पित्रोर्विरोधिनौ ज्ञेयौ तत्र शान्तिर्विधीयते ॥ २ ॥
 हेममूर्ती विधातव्ये दत्तयोश्च द्विजोत्तम ।
 पलेन वा तदर्धेन तदर्धार्धेन वा पुनः ॥ ३ ॥
 ब्रह्मवृक्षस्य पत्रे च स्थापयेद्रक्तवाससि ।
 स्वस्तिके तण्डुलानां च न्यस्ते पीठे द्विजोत्तम ॥ ४ ॥
 पूजयेद्रक्तपुष्पैश्च चन्दनेनानुलेपयेत् ।
 दशाङ्गेनैव धूपेन धूपयेत्प्रयतः पुमान् ॥ ५ ॥
 दीपैर्नीराजयेच्चैव नैवेद्यं परिकल्पयेत् ।
 यस्मै त्वं सुकृते मन्त्रेणाक्षतैरर्चयेत्ततः ॥ ६ ॥
 अनेनैव तु मन्त्रेण होमं कुर्यादतन्द्रितः ।
 अष्टोत्तरसहस्रं च पायसेनै ससर्पिषा ॥ ७ ॥
 शान्तिपाठं जपेद्विद्वान्सूर्यसूक्तं जपेत्ततः ।
 विष्णुसूक्तं तथा गाथां वैश्वदेवं जपेद्बुधः ॥ ८ ॥
 अश्वदानं ततो दद्यादाचार्याय कुटुम्बिने ।
 तयोर्मूर्तिः प्रदातव्या यजमानेन धीमता ॥ ९ ॥

तत्र दानमन्त्रः—

अश्वरूपौ महाबाहू अश्विनौ दिव्यचक्षुषौ ।
 अनेन वाजिदानेन प्रीयेतां मे यशस्विनौ ॥ १० ॥

इति वाजिदानमन्त्रः ।

१ क. 'ति श्रीमत्पद्मपुराणमतं वि' । २ क. 'घनाशनं वि' । ३ ख. 'त्रो विघ्नकरो हे' ।
 ४ ख. 'न च स' । ५ ख. 'क्तं जपेद्वा' । ६ ख. 'देवीं ज' ।

आचार्यः प्रथमो वेधा विष्णुस्तु सविता भगः ।
दक्षमूर्तिप्रदानेन प्रीयतामश्विनौ भगः ॥ ११ ॥

इति मूर्तिप्रतिपादनम् ।

ततोऽभिषेचनं कार्यं दंपत्योर्विधिवद्भुधैः ।
आचार्यान्भोजयेत्पश्चादक्षिणाभिश्च तोषयेत् ॥
सालंकारैश्च वस्त्रैश्च प्रार्थयेद्वचनैः शुभैः ॥ १२ ॥
एवं कृते विधाने च यमलोत्पत्तिशान्तिकम् ।
जायते नात्र संदेहः सत्यमेतद्वीमि ते ॥ १३ ॥

इति काशीखण्डे शौनकसूतमतम् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमा-
लायां यमलोत्पत्तिविधानम् ।

— — —

अथ समाननक्षत्रजननविधानम् ।

यदा पितृनक्षत्रसमाननक्षत्रे जन्माथ वा ज्येष्ठापत्यनक्षत्रसमाननक्षत्रे जन्म
भवति शिशोस्तदा शान्तिकविधानं कर्तव्यम् । अत्रापि संगतिः पूर्ववत् । यदि
विधानं न क्रियते तदा पूर्वस्य विघ्नो जायते तत्परिहरणार्थं विधानमुक्तं पद्म-
पुराण उमामहेश्वरसंवादे—

ईश्वर उवाच—

समानभौ यदा देवि पितापुत्रौ च सोदरौ ।
भगिन्यौ वा स्वसा बन्धुस्तदा पूर्वस्य नाशनम् ॥ १ ॥
विधानं तस्य कर्तव्यं जन्मनक्षत्रपूजनम् ।
नक्षत्रदेवता पूज्या त्वधिप्रत्यधिपूर्वकम् ॥ २ ॥
यस्य ऋक्षस्य यद्द्रव्यं दक्षिणाविधिमन्त्रणम् ।
तत्र तस्य विधातव्यमृक्षदैवततुष्टये ॥ ३ ॥
गृहोक्तेन विधानेन हवनं तत्र कारयेत् ।
भक्त्या हरिहरौ देवौ (यौ) स्वर्णरौप्यमयौ शुभौ ॥ ४ ॥

तत्र मूर्तिदानमन्त्रः—

विविधस्यास्य देवेश पितरौ विश्वतोमुखौ ।

प्रीयेतां मूर्तिदानेन देवौ हरिहराबुधौ ॥ ५ ॥

इति दानमन्त्रः ।

दानं होमविधेः पश्चाद्दानं दत्त्वाऽभिषेचनम् ।

अभिषेचनपूजाऽत्र विप्रपूजा स्मृता शिवे ॥ ६ ॥

ततोऽभिगम्य गोविन्दं शूलिनश्च निकेतनम् ।

तूर्याणां च निनादेन जयघोषेण पार्वति ॥ ७ ॥

पूजाविधिं समाप्यैवं सर्वोपस्करसंयुतम् ।

प्रार्थयेद्देवदेवेशौ लक्ष्मीशैलसुतेश्वरौ ॥ ८ ॥

दण्डवत्प्रणिपातेन वन्दनीयौ पुनः पुनः ।

ततः स्वगृहमागत्य ब्राह्मणान्भोजयेत्सुधीः ॥ ९ ॥

तोषयेद्दक्षिणादानैर्यथाशक्ति वरानने ।

एवं कृते विधाने तु विघ्नशान्तिर्भवेद्ध्रुवम् ॥

तुष्टिदं पुष्टिदं नृणां विधानं चेति सुन्दरि ॥ १० ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां पद्मपुरा-
णोक्तं समाननक्षत्रजन्मजनितविघ्नविनाशनविधानम् ।

अथ मूलविधानम् ।

पितृभ्रातृसंबन्धिदुर्वृत्तनक्षत्रविधानानन्तरं स्वभावतो दुष्टनक्षत्रविधानस्य
बुद्धिस्थतया मूलादेरानन्तर्यम् । मूलनक्षत्रोत्पन्नस्य शिशोर्जनन्या जनकस्य च
स्नानं विधातव्यम् । तत्र द्रव्याणि—कलशः शतच्छिद्रः । अन्ये चत्वारः कलशाः ।
हिरण्यस्य मूलं कर्तव्यं शक्त्यनुसारम् । त्र्यहृतं वस्त्रं पञ्च रत्नानि च ।

हीरको मौक्तिकं चैवं विद्रुमः पुष्परागकम् ।

गोमेदः पञ्चमः शक्त्या रत्नानि कथितानि च ॥

ततः—प्रातरेव सितैः पिष्टैः कलिकतैस्तिलसर्षपैः ।

स्नायातां दंपती तत्र सशिशू हृष्टमानसौ ॥

ततः संबन्धमुच्चार्य स्वस्तिवाचनं कृत्वाऽग्रेरीशानभागे स्वस्तिकमण्डले
तण्डुलमये कलशान्संस्थाप्य प्रथमे सप्त मृत्तिका नद्युभयतस्तटाकाभ्यां गोशृङ्गो-
त्कृतभूमेर्दर्भमूलमृत्तिका बल्मीकाद्गदाच्चतुष्पथाज्जलस्थानादश्वस्थानादश्वत्थ-
मूलाद्वा मृत्तिकाः । द्वितीयकलशे पञ्चगव्यं निक्षिपेत् । तृतीये सप्त धान्यानि

निक्षिपेत् । पञ्चगव्यं सर्वोषधीश्च चतुर्थे ता वक्ष्यमाणाः । पञ्चरत्नानि पञ्चमे । सप्त-
धान्यानीह यान्युक्तानि तानि वक्ष्यन्ते—व्रीहिगोधूमतिलमाषमुद्गप्रियंगु-
ययाः । पञ्चरत्नान्युक्तान्याह—हीरको मौक्तिकं प्रवालं माणिक्यं वैदूर्यमिति ।
न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थाश्चूतः पुक्ष्पश्च पञ्चमः । एते पञ्चपल्लावाः । चत्वारस्तु तैः
पूर्णाः कार्याः । जलं निक्षिप्य वस्त्रैः संवेष्ट्य चतुर्भिर्ब्राह्मणैश्चतुरस्तान्कलशा-
न्गृहीत्वोत्क्षिप्य ततस्तं शतच्छिद्रं प्रस्थाप्य तत्रत्यमुदकं शतच्छिद्रे प्रक्षे-
प्तव्यम् । तत्र मन्त्राः—पावमानीभिः पञ्चभिः, समुद्रज्येष्ठेतिचतुर्भिः,
आपश्च, देवस्य त्वा, इमं मे वरुण, आपो हि ष्ठा मयोभुवः । ततो वेदादिभिः
शतच्छिद्रकलशे शतोषधीः प्रस्थाप्य प्रथमे घटे मृत्तिका, द्वितीयं पञ्चग-
व्येन, तृतीयं सप्तधान्यैश्चतुर्थं रत्नैरिति चतसृभिर्धाराभिर्मण्डलादैशानभागे
भद्रपीठ उपविष्टानां शिशुजनकजननीनां ततो ह्याचार्यः शतच्छिद्रं कलशं
गृहीत्वा स्नपनं कुर्यात् ।

तत्र मन्त्राः—

सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ये च सिद्धाः पुरातनाः ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च साध्याश्च समरुद्रणाः ॥ १ ॥
आदित्या वसवो रुद्रा अश्विनौ च भिषग्वरौ ।
अदितिर्देवमाता च स्वाहा सिद्धिः सरस्वती ॥ २ ॥
कीर्तिर्लक्ष्मीर्गुतिः श्रीश्च सिनीवाली कुहूस्तथा ।
दितिश्च सुरसा चैव कद्रूश्च विनता तथा ॥ ३ ॥
देवपत्न्यस्तथैवोक्ता देवमातर एव च ।
सर्वास्त्वामभिषिञ्चन्तु शुभाश्चाप्सरसां गणाः ॥ ४ ॥
भक्षत्राणि मुहूर्ताश्च अहोरात्राणि संधयः ।
संवत्सरदिनेशाश्च कलाः काष्ठाः क्षणा लवाः ॥ ५ ॥
सर्वे त्वामभिषिञ्चन्तु कालस्यावयवाः शुभाः ।
वैमानिकाश्च सर्वे वै मरुद्भिः सहिताः शुभाः ॥ ६ ॥
वानप्रस्था द्विजाः श्रेष्ठास्तथा वैखानसाः शुभाः ।
सप्तैव ऋषयश्चैव सदाराः सुहृद्व्रताः ॥ ७ ॥
मरीचिरत्रिश्चयवनः पुलस्त्यः क्रतुरङ्गिराः ।
भृगुः सनत्कुमारश्च सनकश्च सनन्दनः ॥ ८ ॥
सनातनश्च दक्षश्च योगी ब्रह्मर्षयोऽमलाः ।

जात्रालिः कश्यपो जिष्णुर्विष्णुश्चैव सनातनः ॥ ९ ॥
 दुर्वासाश्च ऋषिश्रेष्ठः कण्वः कात्यायनस्तथा ।
 मार्कण्डेयो दीर्घतमाः शुनःशेषः सुलोचनः ॥ १० ॥
 वसिष्ठश्च महातेजा विश्वामित्रः पराशरः ।
 द्वैपायनो महाबुद्धिर्देवराजो धनंजयः ॥ ११ ॥
 एते चान्ये च मुनयो वेदव्रतपरायणाः ।
 सशिष्यास्त्वाऽभिषिञ्चन्तु सदाराश्च महाव्रताः ॥ १२ ॥
 पर्वतास्तरवो बल्लयः पुण्यान्यायतनानि च ।
 ऐरावतादयो नागास्तुरगेशास्तुरंगमाः ॥ १३ ॥
 सुरधेनुमुखा गावः सरितः सागरास्तथा ।
 वाहनानि च देवानां सर्वेषामायुधानि च ॥ १४ ॥
 अग्नयः पितरस्तारा जीमूताश्च दिशो दश ।
 एते चान्ये च बहवः पुण्याः संपरिकीर्तिताः ॥ १५ ॥
 तोयैस्त्वामभिषिञ्चन्तु सर्वोत्पातनिबर्हणैः ।
 कल्याणं च प्रकुर्वन्तु आयुरारोग्यमेव च ॥ १६ ॥
 यथाऽभिषिक्तो मघवान्स्वर्गराज्यमवाप्तवान् ।
 अवाप शमनः स्वाम्यं दक्षिणस्या दिशो महत् ॥ १७ ॥
 वरुणो जलनाथत्वं धनं प्राप धनाधिपः ।
 सगरः पृथिवीशत्वं तथा चान्ये महीभृतः ॥ १८ ॥

ततः स्वस्तिकमण्डलमध्ये सर्वौषधीपूर्णे शतच्छिद्रसमीपे सौवर्णमूलयुते निर्ऋ-
 तिपुरुषमूर्तिं द्वितीये घटे वस्त्रोपरि पूजयेत् ।

चतुर्भुजं महाकायं प्रेतवाहं महाभयम् ।
 शक्तिपाशासिखट्वाङ्गसहितं पूजयेत्सुधीः ॥ १९ ॥
 जलपूर्णे घटे विद्वान्वंशपात्रे मनोरमे ।
 विधाय तत्र तं देवं यातुधानं चतुर्भुजम् ॥ २० ॥
 गन्धपुष्पौक्षतैः सर्वैरुपचारैस्तु पूजयेत् ।
 आमिषं चैव नैवेद्यमुचितं जातिधर्मतः ॥ २१ ॥
 ताम्बूलं च ततो दद्यादक्षिणां शक्तितस्तथा ।
 एवं कृते विधाने च होमं चापि विशेषवित् ॥ २२ ॥

१ ख. °द्विरैरावतधनंजयौ । २ क. अथाऽऽय श' । ३ ख. °गादिकैः स° । ४ ख. ९४
 कृत्वा विधानं च होमं चापि विशेषतः । ति° ।

तिलाज्यं च चरुश्चापि प्रधानश्चापि कीर्तितः ।
 कृणुष्व पाजः प्रसितिं मन्त्रः प्रोक्तो मनीषिभिः ॥ २३ ॥
 जाते तु हवनै विद्वानभिषेकं समारभेत् ।
 सुस्नातयोस्तु दंपत्योः पुरस्कृत्य शिशुं तथा ॥ २४ ॥
 पट्टे निधापयेद्धीमानभिषेकं समाचरेत् ।
 अभिषेके तु संजाते पूर्वोक्तविधिना ततः ॥ २५ ॥
 नवेन कम्बलेनैव दंपती च समावृतौ ।
 अभिषेके शुभे सर्म्यग्बालं तं च परित्यजेत् ॥ २६ ॥
 आचार्यस्तु महाभागः पूजनीयः प्रयत्नतः ।
 वस्त्रयुग्मेण संवेष्ट्य भूषणानि समर्पयेत् ॥ २७ ॥
 गां च दद्यात्सुशीलां च सवत्सां च पयस्विनीम् ।
 कस्मैचिद्ब्राह्मणायाऽऽशु कम्बलं तु प्रदापयेत् ॥ २८ ॥
 धान्येन सहितं विद्वानायसं च समर्पयेत् ।
 मूर्तिं तां च सवस्त्रां च समूलां पात्रसंयुताम् ॥
 हृष्टपुष्टमना भूत्वा ह्याचार्याय निवेदयेत् ॥ २९ ॥

तत्र दानमन्त्रः—

देव त्वं निर्ऋतिः पुण्यः पुण्यमूर्तिर्निरामयः ।
 मूलसंभवजं दोषं प्रशामय मम प्रभो ॥ ३० ॥
 इति संप्रार्थ्य देवं तमाचार्याय निवेदयेत् ।
 एवं कृत्वा विधानं च ब्राह्मणान्भोजयेच्छुचीन् ॥ ३१ ॥
 प्रसाद्य दक्षिणादानैर्नमस्कारैर्मुहुर्मुहुः ।
 एवं कृते विधानेऽस्मिन्दंपत्योः सहबालयोः ॥ ३२ ॥
 निर्विघ्नं जायते नूनं कर्ता च श्रद्धयाऽन्वितः ।
 नन्दते सुखसंतानैः श्रियं प्राप्नोत्यनामयाम् ॥ ३३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां गृह्योक्तं मूलविधानम् ।

अथात आश्लेषाविधानम् ।

नागप्रतिकृतिं कुर्यात्सौवर्णीं पलमानतः ।

१ ख. °धानं परिको° । २ ख. °र्तितम् । ३ ख. °ने पश्चाद्भि° । ४ ख. °माचरेत् ।
 ५ ख. तदा । ६ ख. म्यक्कम्बलं तं प° ।

अथ वा शक्तिः कुर्याद्वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥ १ ॥

मूले यत्तु विधानं स्यात्तत्समं सर्पदैवते ।

कद्रुद्राय प्रचेतस इति मन्त्रो विशेषतः ॥ २ ॥

नैवेद्ये ह्यभिषं नास्ति पूजा दानकृतिः समा ।

अयुतं हवनं त्वत्र तिलैः साज्यैः प्रधानकैः ॥ ३ ॥

ब्रह्मवृक्षस्य समिधः शतमष्टोत्तरं शुभाः ।

शुभा इति द्वादशाङ्गुलीमिताः साग्रा अवक्रा अव्रणाः सत्वचः । अन्य-
त्सर्वं मूलविधानवत् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचिताया विधानमालायां गृहोक्तमाश्लेषाविधानम् ।

अथ गण्डान्तविधानम् ।

गण्डान्तं त्रिविधं ज्ञेयं तिथिलग्नसंज्ञकम् ।

विधानमुच्यते तत्र त्रितयेऽपि समासतः ॥ १ ॥

तथा च श्रीपतिः—

मध्ये पूर्णानन्दयोर्नाडिके द्वे स्याद्गण्डान्तं कीटहयोस्तथैका ।

कोदण्डादौ वृथिकान्ते झयान्ते मेपस्याऽऽदौ सर्वकार्येष्वनिष्टम् ॥ २ ॥

गण्डान्तं तदिति ख्यातं रेवतीदस्त्रयोर्नृप ।

मुदूर्तद्वितयं दुष्टं शुभकार्ये विवर्जयेत् ॥ ३ ॥

गण्डान्तेऽस्मिन्यदा जन्म बालकस्य कदाचन ।

नैव(तदा) भूयाद्विपरीतेष्वपि दुःखस्य भाजनम् ॥ ४ ॥

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शास्त्रदृष्टेन कर्मणा ।

गण्डान्ते यानि ऋक्षाणि तत्र तेषां च देवताः ॥ ५ ॥

उत्पन्नं डिम्भकं यस्मिन्नक्षत्रे तस्य देवता ।

पूजनीया प्रयत्नेन मन्त्रैस्तद्विज्ञसंज्ञकः ॥

विधानं सर्वसामान्यमभिषेकादिकं तथा ॥ ६ ॥

अथ होमः—

मूले नैऋतिदैवत्ये चरुहोमः प्रकृत्यते ।

रक्षसे च प्रधानाय जुहुयाच्छतमष्ट वा ॥ ७ ॥

तत्र मन्त्रः । मोषुणः काण्वो घोरो निर्ऋतिर्गायत्री चरुहोमे विनियोगः । तत आज्येनान्या देवताः । ब्रह्मजज्ञानं गौतमो वामदेवो ब्रह्मा त्रिष्टुप् । ब्रह्मजज्ञानमिति ब्रह्मणे सभिधो ब्रह्मवृक्षस्याष्टोत्तरशतं साज्यम् (ज्याः ।) । इयम्बकं मि (मै) त्रावरुणो (णि) व (र्व) सिष्टो रुद्रोऽनुष्टुप् । इयम्बकाय । इदं विष्णुर्मेधातिथिः काण्वो विष्णुर्गायत्री । केवलाज्येन विष्णवे । प्रजापते प्राजापत्यो हिरण्यगर्भः प्रजापतिस्त्रिष्टुप् । आज्येन प्रजापतये । अथ तिलाज्येन । नाममन्त्राः । ॐ अग्नये स्वाहा । ॐ सोमाय स्वाहा ! ॐ पवनाय स्वाहा । ॐ मरुताय स्वाहा । ॐ अन्तकाय स्वाहा । सर्वद्रव्यैः स्विष्टकृत् । शान्तिकृज्जपः । ‘ त्रातारमिन्द्रं ’ ‘ त्वं नो अग्ने ’ ‘ सुगं नः पन्थाम् ’ ‘ असुन्वन्तं ’ ‘ तत्त्वा यामि ’ ‘ आनो नियुद्धिः ’ ‘ वयं सोम ’ ‘ तमीशानं ’ ‘ नमस्ते रुद्र मन्यवे ’ ‘ स्योना पृथिवि ’ ‘ इमं मे ’ ‘ समुद्राय त्वा ’ ‘ ब्रह्मजज्ञानम् ’ इति शान्तिजपः । मूलज्येष्ठागण्डान्ते हवने विशेषः । इन्द्रनिर्ऋती प्रधानदेवते चर्वाज्यसमिद्धिः प्रत्येकमष्टोत्तरशतं जुहुयात् । इन्द्रश्रेष्ठानि गृत्समद इन्द्रस्त्रिष्टुप् । इन्द्राय । निर्ऋतिमन्त्रः पूर्वोक्त एव । प्रागुक्तं हवनं शान्तिपाठश्च । पौष्णाश्विन्योः । पूषाणमश्विनौ चर्वाज्यसमिद्धिः प्रधानदेवतायजनम् । तत्र मन्त्रौ । संपूषन्नित्यस्य काण्वो घोरः पूषा गायत्री । पूष्णे । अश्विनावर्तिर्गौतमो राहुगणोऽश्विनावुष्णिक् । अश्विभ्याम् । शेषं पूर्ववत् । सार्षपैत्रगण्डान्ते चरुसमिद्धिराज्येन प्रत्येकमष्टोत्तरशतं जुहुयात् । आर्यगौः सार्षपराज्ञी सर्पा गायत्री । सर्पेभ्यः । उपप्लु (हू) ताः पितरो यौम्यायनः शङ्खः पितरस्त्रिष्टुप् । पितृभ्यः । शेषं पूर्ववत् । शान्तिपाठः । तथैवाऽऽश्लेषायामार्यगौरिति चर्वाज्यसमिद्धिः प्रत्येकमष्टोत्तरशतं जुहुयात् । शेषं हवनं शान्तिपाठश्च मूलविधानवत् । अत्र सर्वत्र स्नानादनन्तरं हवनसमये नवग्रहमखः कार्यः । पश्चादाचार्यं पूजयेत् । वस्त्रयुग्मेणालंकारैः पूजितां सौवर्णीं मूर्तिं दद्यात् । पणनक्षत्राणि गण्डान्तसंज्ञानि । तेषां नक्षत्राणां या अधिदेवतास्तासां मूर्तयस्तासां दानं यथाशक्ति धान्यं च देयम् । आचार्यप्रमुखेभ्यो ब्राह्मणेभ्यः सुवर्णशतमानं दक्षिणाशतमानमिति पलं सौवर्णमेव भवति । ततः सर्वे विप्रा हवनकर्तारः स्नपनकर्तारश्च दक्षिणाभिः संताप्याः । ततो ब्राह्मणभोजनम् । ततः सर्वे लोकाः शालश्रवणपूर्वकं गण्डान्तदेवताप्रीतये संतोष्याः । अनेन विधानेन तदपत्यं पितुर्दर्शनयोग्यं चिरायुश्च भवति । एतद्विधानं मूल आश्लेषायां गण्डान्ते च ग्रहारिष्टे च ज्ञातव्यम् । अथ शतौषधयः कथ्यन्ते—

अधःपुष्पी १ शङ्खपुष्पी २ मयूरस्य शिखा ३ तथा ।

ज्येष्ठी ४ च काकजङ्घा ५ च कुमारी ६ जीरकद्वयम् ७-८ ॥ १ ॥

अपामार्गो ९ भृङ्गराजो १० लक्ष्मणा ११ श्वेतलक्ष्मणा १२ ।

जाती १३ दूर्वा १४ तथा व्याघ्री १५ पत्रको १६ ऽर्कश्च १७ रोध्रकम् १८॥

शमी १९ काशश्च २० बिल्वश्च २१ विष्णुक्रान्ता २२ कपाटिका २३ ।

नकुली २४ चन्दनं २५ चैव रक्तचन्दनमेव च २६ ॥ ३ ॥

जटामांसी २७ च मूर्वा २८ च वालकोऽथ २९ शिवा ३० मता ।

प्रस्तरी ३१ तुलसी ३२ चैव ब्राह्मी ३३ लाङ्गलिका ३४ तथा ॥ ४ ॥

कुन्दश्च ३५ देवकुन्दश्च ३६ प्रियंगु ३७ रमृतं ३८ तथा ।

सर्पपा ३९ जलवृक्षश्च ४० गन्धारी ४१ चेन्द्रवल्लभा ४२ ॥ ५ ॥

तेजस्विनी ४३ च भूपाली ४४ दन्तिका ४५ कदली ४६ तथा ।

सहदेवी ४७ तथा वश्या ४८ तथा लोकप्रियंकरी ४९ ॥ ६ ॥

उमा ५० निशा ५१ घना ५२ विश्वा ५३ सिन्धुवारा ५४ सरस्वती ५५ ।

शङ्खिनी ५६ पद्मिनी ५७ योषा ५८ ललिता ५९ भूतवारिणी ६० ॥ ७ ॥

निर्जरा ६१ निर्गमा ६२ राज्या ६३ रोहिणी ६४ शतमूलिका ६५ ।

जीवन्ती ६६ विजया ६७ रामा ६८ पिप्पली ६९ च कपर्दिनी ७० ॥ ८ ॥

मरूबकः ७१ सुरारीशा ७२ शतपत्रा ७३ प्रभञ्जनी ७४ ।

त्रिसंधिका ७५ प्रियालुस्तु ७६ सागराह्वा ७७ करञ्जिका ७८ ॥ ९ ॥

पुष्पा ७९ न्यग्रोधमूली ८० च तुम्बरी ८१ कुशला ८२ सती ८३ ॥

जानकी ८४ करहा ८५ क्षेमा ८६ शिमाऽ८७ जार्जी ८८ कृपावती ८९ ॥

विडङ्गी ९० विमली ९१ नीली ९२ घण्टा ९३ च गिरिकर्णिका ९४ ॥ ११ ॥

रामणी ९५ रमणा ९६ भङ्गी ९७ कलाङ्गी ९८ काश्मरी ९९ शता १०० ॥

या ओषधीरिति मन्त्रस्याऽऽथर्वणभिषगृषिः सर्वोषधीदेवताऽनुष्टुप्छन्द ओष-
धीप्रक्षेपणे विनियोगः । या ओषधीः ।

इति शतौषधयः ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां मूलाश्लेषा-
रेवतीज्येष्ठाश्विनीमघागण्डान्तविधानम् ।

अथ सूतिकास्तन्यवर्धनविधानम् ।

शिशुरक्षारत्ने—

सूतिकायाः स्तनक्षीरमकस्मात्क्षीयते यदि ।
 विधानमेतत्कर्तव्यं यद्वक्ष्यामि निबोध तत् ॥ १ ॥
 रेवतीग्रहमामन्त्र्य पूजयेत्प्रयतः शुचिः ।
 ब्रह्मवृक्षस्य पीठे च न्यसेन्नव्याम्बरे सुधीः ॥ २ ॥
 कृष्णधत्तूरपुष्पैस्तु धूपैः कृष्णागरोः शुभैः ।
 धूपयेद्दीपदानेन ग्रहं नीराजयेत्तथा ॥ ३ ॥
 रक्ततण्डुलभक्तेन गुडयुक्तेन चैव हि ।
 महिषीसर्पिषा चैव पूरिकाः पाचयेत्सुधीः ॥ ४ ॥
 सुधाफलानि नैवेद्यं पायसं च विशेषतः ।
 सकर्पूरं च ताम्बूलं सलवङ्गं च दापयेत् ॥ ५ ॥
 सुगन्धं चन्दनं तत्र ध्वजान्सप्त समाहरेत् ।
 छत्रमेकं तथा कार्यं पीतवर्णं हरिद्रया ॥ ६ ॥
 खर्जूरीनारिकेलानि यथाशक्त्या(क्ति) निदा(धा)पयेत् ।
 रूप्यं वा हेम वा तत्र बलिपात्रे निधापयेत् ॥ ७ ॥
 होमं च विधिवत्कृत्वा जुहुयात्तिलसर्पिषा ।
 अष्टोत्तरसहस्रं च तथैवाष्टाधिकं शतम् ॥ ८ ॥
 जुहुयात्प्रयतस्तत्र मन्त्रात्रक्षोनिवारणान् ।
 जपेच्छान्तिं द्विजैः सार्धं शं न इत्यादिमन्त्रवित् ॥ ९ ॥
 यत्प्रधानं हविस्तेन प्रोक्तं वै स्विष्टकृद्बुधैः ।
 एवं समाप्य विधिवद्धवनं मन्त्रविद्विजः ॥ १० ॥
 प्रार्थ्य भक्त्या ग्रहं धीमात्रेवतीनामधेयकम् ।
 दद्याद्विप्राय मेधावी ग्रहं तं दक्षिणायुतम् ॥
 सपीठं च सवस्त्रं च नैवेद्यं चैव सर्वशः ॥ ११ ॥

तत्र दानमन्त्रः—

नमस्ते भगवन्देव रेवतीग्रह शोभन ।
 ग्रहेश तव दानेन स्तन्यं भवतु मे सदा ॥ १२ ॥

इति रेवतीग्रहदानमन्त्रः ।

ततः समुद्रज्येष्ठा इत्यभिषेकं समाचरेत् । तत आचार्यब्रह्मत्विक्पूजनं
 पश्चाद्ब्राह्मणभोजनम् । भुक्तेषु विप्रेषु तदुच्छिष्टेन गतक्षीरायाः स्तनावालिप्य
 कमारीमूलकन्देन हरिद्रायुक्तेन स्तनद्वयमालिम्पेत् ।

एवं कृते विधाने तु बहुक्षीरं प्रजायते ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां कर्मविपाकोक्तं
सूतिकास्तन्यवर्धनविधानम् ।

अथ बालग्रहपीडाशमनम् ।

मैलुगिविरचिते कर्मविपाके प्रोक्तं तदुच्यते । तत्रोर्ध्वकेशग्रहो नाम बालकं गृह्णाति कदाचिदपि युवानं वृद्धं च । तस्याऽऽर्द्धं लिङ्गं प्रवक्ष्यामि यं प्राणिनं स बाधते तस्याङ्गो स्फोटो जायन्ते । तत्र कृच्छ्रचान्द्रायणं प्रथमं प्रायश्चित्तं कुर्यात् । ततश्चरुघृते रौद्रेण सूक्तेन जुहुयाद्व्याहृतिभिश्च । शक्त्या हिरण्यं दद्यात् । ततो बलिविधानम् । तच्चाऽऽह—स्थण्डिलात्समन्ततो दीपाष्टौकपालानुद्दिश्य घृताक्तवर्तिप्रज्वलिताग्निदध्यात् । पञ्च दीपान्ग्रहपीठाग्रतो निदध्यात् । द्वावन्यौ क्षेत्रपालमुद्दिश्य स्थण्डिलादक्षिणतो निदध्यात् । उत्तरतो नव दीपान्दुर्गामुद्दिश्य निदध्यात् । ईशानदिशि रुद्रानुद्दिश्यैकादश दीपान्निदध्यात् । ते च रुद्रा वीरभद्रादयः प्रसिद्धाः । पूर्वतो ह्यादित्यानुद्दिश्य द्वादश दीपान्निदध्यात् । उत्तरतो वसूनुद्दिश्याष्टौ निदध्यात् । पुनः स्थण्डिलस्य परितः सप्तविंशतिं दीपान्नक्षत्राण्युद्दिश्य निदध्यात् । द्वौ दीपौ गङ्गायमुने उद्दिश्य स्थण्डिलस्य पश्चिमतो निदध्यात् । पञ्च दीपान्गणेशमुद्दिश्य स्थण्डिलस्यैशान्यां निदध्यात् । षोडश दीपांश्चन्द्रमुद्दिश्य निदध्यात् । यस्यै यस्यै देवतायै बलिपूजा क्रियते तल्लिङ्गान्मन्त्रानुच्चारयेत् ।

अपूपा मुष्टिका मुद्रा भक्तो दधियुतः शुभः ।

मुद्रशब्देन चणकगोधूमयावनालघुगरिका लोकभाषया प्रसिद्धाः । आर्द्र-
तण्डुलपिष्टं हरिद्राकल्केन युक्तं कृत्वा तेन स्थानानि विधायापूयादि सर्वं तत्र
निधापयेत् ।

पायसं सघृतं तक्रं कदलानि तथैव च ।

कलशे प्रक्षिपेद्विद्वान्गन्धपुष्पाक्षतावृते ॥ १ ॥

जलं च ताम्रपात्रेण किञ्चित्कुम्भे प्रतिक्षिपेत् ।

मन्त्रेण मन्त्रितं तं तु निक्षिपेच्च चतुष्पथे ॥ २ ॥

तत्र मन्त्रः—

ॐ जहि कुरु कुरु कुशलं गृहाण बलिं स्वाहा ।

इति बलिनिक्षेपमन्त्रः ।

ततः परेऽहनि ब्राह्मणभोजनं यथाशक्ति कर्तव्यम् ।

एवं कृते विधाने तु बालपीडा विनश्यति ।

सुखं विवर्धते सम्यक्शिशोर्नात्र विचारणा ॥ ३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायामूर्ध्व-
केशग्रहबालग्रहपीडाशमनविधानम् ।

अथ विवृताक्षग्रहपीडाशमनविधानम् ।

प्रथमं ज्वरोऽभिजायते । ततश्च हस्तयोः पादयोश्च स्फोटो जायन्ते विषूचिका च भवति वाधिर्यं च जायते । तत्राऽऽदौ चान्द्रायणं कुर्यात् । पुरुषसूक्तेन ताम्रपात्रेण सहस्रवारं शिवस्य स्नपनं कुर्यात् । यत्र विष्णुप्रतिमा तत्र शाल-
ग्रामशिलायां वा सहस्रदलैः शतपत्रैर्वा देवस्य पूजा विधातव्या । ततश्च सहस्र-
नामस्तोत्रं जपेत् । घृतदधिपायसक्षीरपट्टिकापूपपूर्णं कलशं किञ्चिद्धिरण्यसहितं
वस्त्रेणाऽऽवेष्ट्य गन्धादिभिरलंकृत्य तं कुम्भं चतुष्पथे पूर्वेण मन्त्रेण मन्त्रितं
निक्षिपेत् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां मैलुगिकमविषाकोक्तं
विवृताक्षग्रहपीडाशमनविधानम् ।

अथ नवग्रहपीडाशमनविधानम् ।

सखितपस्विस्वामिसंबन्धिस्त्रीगामिणं नवग्रहः संक्रमते ।

तस्य लिङ्गं प्रवक्ष्यामि प्राणिनां हितकाम्यया ॥

मेढ्रे च दाहो भवति तस्य स्फोटोऽभिजायते ॥ १ ॥

अधमानि (आध्मानी) जायन्ते (ते) नयनरोगी च भवति । स्त्री चेत्तदा पूर्वं य
उद्दिष्टास्तेषु व्यभिचारिणीत्यं पीड्यते । तत्र प्रायश्चित्तम् । कृच्छ्रद्वयं प्राजापत्यं
कृच्छ्रं कृच्छ्रातिकृच्छ्रं चान्द्रायणं समस्तव्यस्तव्याधितारतम्येन कुर्यात् ।
धेनुदानविधिना प्रत्यक्षां धेनुं दद्यात् । निष्कद्वादशकं हंसं दद्यात् । कूष्माण्ड-
होमं पुरुषसूक्तं हिरण्यधेनुं च दद्यात् । तथा हि—

पलेन सुकृतां राजन्धेनुं स्वर्णमयीं शुभाम् ॥

सवत्सां वस्त्रसंवीतां दद्याद्विघ्नोपशान्तये ॥ १ ॥

विप्राय परिशीलाय श्रोत्रियाय कुटुम्बिने ।

कृतज्ञाय च भक्ताय तीर्थसेवापराय च ॥ २ ॥

तीर्थं मातापित्रोश्चरणचतुष्टयम् । ततश्च यथाशक्ति ब्राह्मणभोजनं कुर्यात् ।

शक्तिशब्देन राजा चेदयुतं ब्राह्मणान्भोजयेत् । इतरो धनाढ्यश्चेत्सहस्रं भोजयेत् ।
निष्किंचनश्चेच्छतं वा विंशतिं वा भोजयेत्, बलिं च निक्षिपेत् ।

पञ्चखाद्यैश्च रत्नैश्च पूर्णं कुम्भं सधूपकम् ।

अक्षतैश्चन्दनैर्युक्तं कुसुमैश्च मनोरमैः ॥ ३ ॥

निक्षिपेन्मध्यरात्रे च शस्त्रपाणिश्चतुष्पथे ।

वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण मन्त्रितं कलशं शुचिः ॥ ४ ॥

निक्षिपेन्निर्भयो धीमाञ्जले वा सरितो हृदे ।

धीमानिति पञ्चाक्षरमन्त्रवित् । जल इति तडागादिजले । सरितो हृदे महा-
नदीहृदे । तत्र मन्त्रः—

नवग्रह महाबाहो सर्वग्रहनिवारण ।

बलिं गृहाण निर्विघ्नं रोगिणं कुरु सत्त्वरम् ॥ ५ ॥

इति बलिनिक्षेपमन्त्रः ।

एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ।

आयुर्विवर्धते तस्य विधानं यः समाचरेत् ॥ ६ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां मैलुगिकर्मविपाकोक्तं
नवग्रहपीडाशमनविधानम् ।

अथ वायसग्रहविधानम् ।

देवद्विजक्षेत्रतडागवल्मीकादिषु विष्टामोचकं वायसो नाम ग्रहो गृह्णाति ।
तत्क्षणादाध्मानज्वरी, अरुचिमान्पाददाही च जायते । तत्र विधानम्—स्वस्ति-
वाचनपूर्वकं हवनं कार्यम् । अग्निमुखपूर्वकं व्याहृतिभिर्जुहुयात् । श्वेतकृष्णपी-
तवर्णैर्वस्त्रैरावेष्ट्य कलशं पञ्चखाद्येन पूर्णं कुम्भं कृत्वा गन्धपुष्पाक्षतैः समभ्यर्च्य
प्रदोषे चतुष्पथे बलिं निक्षिपेन्मन्त्रेणानेन—ॐ घं घं घः ॐ फद्स्वाहा ।
वायसबलिरेष प्रकल्पितः । तत्क्षणादेवाऽऽरोग्यं भवति ।

एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ।

आयुर्विवर्धते तस्य विधानं यः समाचरेत् ॥ १ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां

कर्मविपाकोक्तं वायसग्रहविधानम् ।

अथ महाजिह्वाग्रहपीडाशमनविधानम् ।

मुसलोलूखलशूर्पाण्यायुधानि च पादेन लङ्घयति तं जिह्वाग्रहो नाम गृह्णाति तस्मादास्यशोपोऽभिजायते । गद्गद्वाग्जिह्वात्रणी जायते । कफवाज्जायते तत्र विधानम्—त्रिरात्रोपवासं कुर्यात् । व्याहृतिभिराज्येन जुहुयात् । उदुत्यमिति सूक्तं जपेत् । अष्टोत्तरसहस्रं गायत्रीजपं कुर्यात् । अन्नं घृतबहुलं दद्यात् । सर्वशाखिभ्यो विप्रेभ्यो दक्षिणां दद्यात् । आमिषं मत्स्यानां तिलपिष्टमपक्वं मत्स्यान् सुरारुधिरसूपशाकान्गन्धान्पुष्पाणि चन्दनमक्षतांश्च बल्यर्थे वंशपात्रे निधाञ्चतुष्पथे निक्षिपेत् । मध्यरात्रे पूर्वेण बीजत्रयेण मन्त्रयित्वा ग्रहनाम समुच्चार्य चतुर्थ्यन्तं स्वाहाकारेण निक्षिपेत् । तत्क्षणादेवाऽऽरोग्यं जायते ।

एवं कृते विधाने च विघ्नराशिः प्रशाम्यति ।

आयुर्विवर्धते तस्य विधानं यः समाचरेत् ॥ १ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां मैत्रुगिरुर्म-
विपाकोक्तं महाजिह्वाग्रहपीडाशमनविधानम् ।

अथ क्षेत्रपालग्रहपीडाशमनविधानम् ।

देवतानिन्दया क्षेत्रपालो नाम ग्रहो गृह्णाति तेन गृहीतो मुखपाकी ज्वरी ब्रण्णी भवति । ततस्तद्देवताभिषेकं कुर्यात् । पञ्चामृतैः सुगुणैः पूजां कुर्यात् । क्षेत्रस्य पतिनेति सर्वोपचारान्विदध्यात् ।

पञ्चखाद्यं सुरामांसं बल्यर्थे प्रतिपादयेत् ।

यथाशक्ति ब्राह्मणभोजनम् । आगमोद्दिष्टं बडुकस्तोत्रं जपेत् ।

निर्विघ्नो जायते प्राणी विधाने विहिते सति ।

क्षेत्रपालप्रसादेन सुखी भवति मानवः ॥ १ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां क्षेत्रपालग्रहपीडाशमनविधानम् ।

अथ हस्तिपादग्रहपीडाशमनविधानम् ।

यो वस्त्रधान्यादिकमुचितराजविदितमूल्यादधिकं गृह्णाति तं हस्तिपादो नाम ग्रहो गृह्णाति । तत्क्षणादेव बल्मीकव्याधिना पीड्यते । हरिद्रावर्णयनो भवति । तत्र विधानम्—त्रिरात्रमुपवासन्नष्टोत्तरशतं व्याहृतिभिस्तिलाज्येन जुहुयात् ।

शक्त्या हिरण्यं दद्यात् । अन्नं तैलपक्वं तिरुपिष्टं माहिषक्षीरं नव्ये कलशे निधाय
निक्षीये चतुष्पथे निक्षिपेन्मन्त्रेण । सोऽपि मन्त्रः—

बलिं गृहाण भूतेश रोगिणं मुञ्च सत्वरम् ।
प्रीतो भव महाबाहो बलिदानेन सर्वदा ॥ १ ॥
एवं कृते विधाने च रोगमुक्तो नरो भवेत् ।
पुष्टिमांस्तुष्टिमाञ्श्रीमान्हस्तिपादप्रसादतः ॥ २ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां मैलगिकर्मविपा-
कोक्तं हस्तिपादग्रहपीडाशमनविधानम् ।

अथ कर्णग्रहपीडाशमनविधानम् ।

यः प्राणी मातापित्रोर्गुरुगुरुभार्ययोः पितृव्यपितृव्यपत्न्योर्मातुलमातुलान्यो-
र्ज्येष्ठकनिष्ठभ्रातृभातृपत्न्योः सुरतादि शृणोति तं कर्णग्रहो गृह्णाति ।

तस्य चिह्नं प्रवक्ष्यामि कर्णयोरुपजायते ।
आकस्मिकं च बाधिर्यं कर्णपीडा महीयसी ॥ १ ॥
शृणोति चिद्चिटाकारं कर्णग्रहनिपीडनात् ।
वक्ष्ये तस्य प्रतीकारं महाबलिविधानकम् ॥ २ ॥
सुरामांसं तैलपक्वं पञ्चखाद्यं विशेषतः ।
तिलपिष्टं च मूलं च फलपुष्पं तथैव च ॥
चतुष्पथ उषःकाले मन्त्रपूर्वं निधापयेत् ॥ ३ ॥

तत्र मन्त्रः—

गृहाणेमं बलिं देव कर्णारिष्टकर ग्रह ।
आतुरस्य सुखं सिद्धिं प्रयच्छ त्वं महाबल ॥ ४ ॥
एवं कृते विधाने तु सुखसिद्धिः प्रजायते ।
नश्यन्ति कर्णजा रोगाः कर्णग्रहसुपूजनात् ॥ ५ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां कर्णग्रहपीडा-
शमनविधानम् ।

अथ तोलग्रहपीडाशमनविधानम् ।

बन्धुषु दोषं संभावयन्तमुपकर्तुरपकारिणं स्वप्रकृत्या सुकृतविक्रयिणं तोलो
नाम ग्रहो गृह्णाति ।

तस्य लिङ्गं प्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया ।

श्वासः कासो ज्वरश्चैव शिरोर्तिपरिपीडितः ॥

विच्छायो विकलो विग्रो मृतकल्पश्च जायते ॥ १ ॥

तस्य शान्तये कृच्छ्रत्रयं कारयेत् । विष्णोः सहस्राभिषेकं कारयेत् ।
कूष्माण्डेन जुहुयात् । कया नाश्चित्रेति जपेत् । अनेन दधिसक्तुचूर्णरु-
धिरक्षीरापूपसुरागन्धपुष्पवस्त्रादिहिरण्यजलपूर्णकुम्भं निशायां चतुष्पथे बलिं
निदध्यात् ।

तत्र मन्त्रः—

व्याधिं हर महाबाहो महाभयविनाशन ।

प्रसन्नो देवदेवेश विकलं त्राहि रोगिणम् ॥ १ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां तोलग्रहपीडा-
शमनविधानम् ।

अथ स्कन्दग्रहपीडाशमनविधानम् ।

बालकस्यैव पीडायां ग्रहसंचारे बालमादाय या स्त्र्युच्छिष्टा सत्यार्घिं स्पृशति
तं बालकं स्कन्दो नाम ग्रहो गृह्णाति ।

तस्य लिङ्गं प्रवक्ष्यामि बालानां हितकाम्यया ।

पादयोर्हस्तयोश्चापि वायुकोपः प्रजायते ॥ १ ॥

उक्तं च महाभारते—

स्पृशंश्च निकटे बलिं बालमादाय मानवः ।

स गृह्णाति ग्रहस्तं वै स्कन्दो नाम महाबलः ॥

तस्येह पादहस्तेषु विकारो वायुजो भवेत् ॥ २ ॥

स तु क्षीरदधिकृसरापूपतिलपिष्टमुद्गराजमाषनिष्पावपक्वमांससुराकंदलीपूर्ण-
कुम्भं तस्योपरि किञ्चित्प्रमाणं कांस्यपात्रं निधाय वस्त्रद्वयेन संवेष्ट्य रक्तसूत्रेण
कुङ्कुमरक्तादिभिश्च मध्यरात्रे बलिं दद्यात् । विशेषेण दक्षिणस्यां दिशि
ग्रामाद्बहिः ।

तत्र मन्त्रः—

बालभास्करसंकाश रक्तमाल्याम्बरप्रिय ।

प्रगृहीष्व बलिं चेमं पूजोपस्करसंयुतम् ॥ १ ॥

ततश्चाग्निं प्रतिष्ठाप्य जुहुयात्तिलसर्पिषा ।

क्षीरं च सर्पपाञ्चवेताञ्जुहुयात्प्रयतो बुधः ॥

नाममन्त्रेण चैवेह स्वाहान्तं श्रद्धयाऽन्वितः ॥ २ ॥

पश्चाद्बालकस्य रामरक्षास्तोत्रेण रक्षां कृत्वा ततो द्रोणमात्रपक्वान्नपक्वमांस-
दधितिलपिष्टरुधिरहिरण्यरक्तचन्दनवस्त्रगन्धाक्षतादिभिर्वृक्षमूले प्रदोषसमये बलिं
दद्यात् ।

एवं कृते विधाने तु रोगमुक्तः शिशुर्भवेत् ।

स्कन्दग्रहप्रसादेन नात्र कार्या विचारणा ॥ ३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां स्कन्दग्रह-
पीडाशमनविधानम् ।

अथ स्कन्दापस्मारपीडाशमनविधानम् ।

अग्नौ मूत्रपुरीषोत्सर्गकर्तारं स्कन्दापस्मारो नाम ग्रहो गृह्णाति ।

तस्य लिङ्गं प्रवक्ष्यामि बालानां हितकाम्यया ।

व्यथा भवति जिह्वायां फेनश्चैव प्रजायते ॥ १ ॥

अपस्मारिवच्चिह्नं जायते तत्र पूर्वविधाने यद्द्रव्यं समुद्दिष्टं यच्च हवनं तदेव
कुर्यात् । ततश्च शान्तिर्भवति ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां स्कन्दाप-
स्मारपीडाशमनविधानम् ।

अथ निद्रास्कन्दग्रहपीडाशमनविधानम् ।

उच्छिष्टा सती जननी बालमादाय शयने निद्राति गृहीतव्रतेऽवज्ञां करोति
तस्या बालकं निद्रास्कन्दो नाम ग्रहो गृह्णाति ।

तस्य लिङ्गं प्रवक्ष्यामि बालानां हितकाम्यया ।

निद्रास्कन्दस्य संतुष्ट्यै विधानं चात्र कथ्यते ॥ १ ॥

आश्रमानी च ज्वरी चैव श्वासी कासी च जायते ।

पीनसी रक्तनयनो बहुमूत्रो विशेषतः ॥ २ ॥

पुरीषं बहुधा चास्य जायते नात्र संशयः ।

अरुचिश्चैव संतापो दिवा रात्रौ च जायते ॥ ३ ॥

बलिं तस्य प्रवक्ष्यामि येन रोगात्प्रमुच्यते ।

पायसं सर्पिषा युक्तं मांसं कुक्कुटमेषयोः ॥ ४ ॥

सुगन्धानि च पुष्पाणि दशाङ्गं धूपनं तथा ।

वटस्य मूलदेशे तु मध्यरात्रे विनिक्षिपेत् ॥ ५ ॥

विधाय किञ्चित्कनकं सताम्बूलं सदीपकम् ।

निक्षिपेन्नाममन्त्रेण श्रद्धया परया शुचिः ॥ ६ ॥

एवं कृते विधाने च रोगमुक्तो भवेच्छिशुः ।

निद्रास्कन्दप्रसादेन नात्र कार्या विचारणा ॥ ७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां निद्रास्कन्दग्रह-
पीडाशमनविधानम् ।

अथ मेषग्रहपीडाशमनविधानम् ।

मात्रा निर्भर्त्सितस्ताडितो न क्षमापितश्च सन्निद्रां कुरुते तं मेषग्रहो नाम
ग्रहो गृह्णाति ।

तस्य लिङ्गं प्रवक्ष्यामि बालानां हितकाम्यया ।

सर्वाङ्गेषु वायुप्रकोपो भवति ।

नेत्रोन्मीलनं कुरुते मुखे फेनोऽभिजायते ।

निरीक्षितुं न शक्नोति भ्रुवोर्भङ्गोऽभिजायते ॥ १ ॥

तस्य रोगस्योपशान्तये विधानमुद्दिष्टम् । हिरण्यं दद्याच्छ्वेतवस्त्रं च दद्यात् ।
पायसं सक्तुलाजापूगश्च सुगन्धानि पुष्पाणि चन्दनं सर्वं कलशे निधाय
निशीथे शस्त्रपाणिर्बलिं समाहरेदनेन मन्त्रेण—

बलिं गृहाण देवेश विपुश्चामुं च बालकम् ।

स्थापितं तेऽग्रतः सम्यक्छिद्योः शान्तिप्रदो भव ॥ २ ॥

ॐ हुंफट्स्वाहोति बलिं निक्षिपेत् ।

एवं कृते विधाने च रोगमुक्तिः प्रजायते ।

व्याधितस्य शिशोर्नूनं नात्र कार्या विचारणा ॥ ३ ॥

केषांचिन्मतेन तं बलिं ब्राह्मणाय दद्यात् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां मेषग्रहपीडा-
शमनविधानम् ।

अथ शिशुग्रहपीडाशमनविधानम् ।

देषब्राह्मणगोगुर्वाचार्यादीनामवज्ञाकारिणं युवानं वा वृद्धं वा बालकं वा
स्त्रियं तथावयस्कां वा शिशुको नाम ग्रहो गृह्णाति ।

तस्य चिह्नं प्रवक्ष्यामि प्राणिनां हितकाम्यया ।

विधानं चापि वक्ष्यामि येन रोगाद्विमुच्यते ॥ १ ॥

ज्वरश्च प्रथमं तत्र जायते नात्र संशयः ।

अतीसारो भवेत्पश्चादास्यशोषश्च जायते ॥ २ ॥

हस्तयोः पादयोः कम्पो जायते शिशुपीडनात् ।

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यया रोगाद्विमुच्यते ॥ ३ ॥

लाजान्ससर्पिषश्चैव पायसं तण्डुलोद्भवम् ।

कुक्कुटस्य च मेषस्य मांसं रक्तं तथैव च ॥ ४ ॥

रक्तवस्त्रं तथा रक्तचन्दनं रक्तपुष्पकम् ।

सुवर्णं विद्रुमं चैव नव्ये कुम्भे निधापयेत् ॥ ५ ॥

वटमूलसमीपे च कुम्भं तत्र त्रिनिक्षिपेत् ।

पूर्वरात्रे च पूर्वस्यां दिशि मन्त्रेण मन्त्रितम् ॥

बलिमेनं शुचिर्भूत्वा शस्त्रपाणिर्विशेषतः ॥ ६ ॥

तत्र मन्त्रः—

ॐ क्लृं क्लृं क्लृः शिशुकाय स्वाहा, इति ।

एवं कृते विधाने च रोगमुक्तिस्तु जायते ।

शिशुकस्य प्रसादेन नात्र कार्या विचारणा ॥ ७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां

शिशुग्रहपीडाशमनविधानम् ।

अथ महापूतनाग्रहपीडाशमनविधानम् ।

चोरादिसाहसकारिणो न दण्डयत्यदण्ड्यान्दण्डयति यो राजा तं राजानं
राजापत्यं वा राजपत्नीं वा महापूतना नाम ग्रहो गृह्णाति ।

तस्य लिङ्गं प्रवक्ष्यामि नराणां हितकाम्यया ।

वक्ष्ये तस्य प्रतीकारं रोगमुक्तिर्यतो भवेत् ॥ १ ॥

तेन केबलातिसारी भवति । तस्य शान्ताये—

पञ्चस्वाद्यानि चान्नानि हरिद्रासाहितानि च ।
तिलपिष्टं च गन्धं च सुगन्धि कुसुमानि च ॥ २ ॥
निधाय कलशे धीमान्सुवर्णं च विशेषतः ।
वस्त्रेण वेष्टितं कुम्भं तडागान्ते विनिक्षिपेत् ॥
वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण प्रदोषे च विशेषतः ॥ ३ ॥

तत्र मन्त्रः—

नीलाम्बरधरे देवि पूतने विकृतानने ।
व्याधितं मुञ्च राजानं बालकं वा तथा स्त्रियम् ॥
एवं कृते विधाने च रोगशान्तिस्तु जायते ॥ ४ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां महापूतनाग्रह-
पीडाशमनविधानम् ।

अथ रेवतीग्रहपीडाशमनविधानम् ।

संध्याकाले मुक्तकेशमुच्छिष्टं शयने रेवतीग्रहः संक्रमते ।
तस्य लिङ्गं प्रवक्ष्यामि नराणां हितकाम्यया ।
आस्यशोषश्च दाहश्च सर्वाङ्गे कम्प एव च ॥ १ ॥
कृष्णवर्णो भवेन्नूनं रोगी नात्र विचारणा ।
घृतं लाजांश्च मांसं च कौक्कुटं मेपजं तथा ॥ २ ॥
रक्तवस्त्रं च रक्तं च रक्तचन्दनमेव च ।
नूतने कलशे हेम निदध्यात्प्रयतः शुचिः ॥ ३ ॥
शमीमूलेऽथ वा मूले वटस्य निशि दक्षिणे ।
प्रदेशे निक्षिपेद्धीमान्कृत्वा मन्त्रेण मन्त्रितम् ॥ ४ ॥

तत्र मन्त्रः—

चित्राम्बरधरे देवि चित्रमालयानुलेपने ।
रोगान्मुञ्च महाभागे गृहाण बलिमुत्तमम् ॥
एवं कृते विधाने च रोगशान्तिस्तु जायते ॥ ५ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां रेवतीग्रहपीडाशमनविधानम् ।

अथोर्ध्वपूतनाग्रहपीडाशमनविधानम् ।

विचलोभाद्भयाद्वाऽपि श्राद्धानि न करोति योऽधिकारी पितृणां तं नरमूर्ध्व-
पूतनाग्रहः संक्रमते ।

तस्य चिह्नं प्रवक्ष्यामि नराणां हितकाम्यया ।

अक्षिरोगी ज्वरी कासी जागरी जायते नरः ॥ १ ॥

निद्राति वासरे सम्यक्क्षीतार्तिपरिपीडितः ।

बलिं सम्यक्च वक्ष्यामि येन शान्तिस्तु जायते ॥ २ ॥

समांसान्नरुधिरगन्धवस्त्रहिरण्यपूर्णकुम्भं स्नुहिवृक्षमूले प्रदोषे मन्त्रेणानेन बलिं
दद्यात् ।

तत्र मन्त्रः—

त्वमूर्ध्वपूतने देवि गृहाण बलिमुत्तमम् ।

शिशुं विकारान्मुञ्चाद्य दुर्गे दुर्गातिहारिणि ॥ ३ ॥

एवं कृते विधाने च व्याधिमुक्तः शिशुर्भवेत् ।

शिशुर्वा तरुणो वृद्धो नात्र कार्या विचारणा ॥ ४ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायामूर्ध्वपूतनाग्रहपीडा-
शमनविधानम् ।

अथ शकुनीग्रहपीडाशमनविधानम् ।

पितृमातृगुरुस्वामिनो विनाऽन्येषामुच्छिष्टभोजनं देवालये मूत्रं पूरीषं निष्ठीवनं
च कुरुते तं शकुनी नाम ग्रहो गृह्णाति ।

तस्य लिङ्गं प्रवक्ष्यामि नराणां हितकाम्यया ।

मुखे ग्रणी च कण्ठे च गुदे चैव विशेषतः ॥ १ ॥

अतीसारी ज्वरी चैव कृष्णश्चापि प्रजायते ।

पैष्ठी सुरा तथा चान्नं मांसं मेघसमुद्भवम् ॥ २ ॥

तिलपिष्टं हरिद्रां च हिरण्यं चन्दनं शुभम् ।

निधातानि नव्ये च कलशे च निधापयेत् ॥ ३ ॥

कुम्भं तं सरितस्तीरे गवां गोष्ठे शिवालये ।

भैरवालयमुद्दिश्य स्थापयेत्प्रयतः शुचिः ॥ ४ ॥

मन्त्रेणानेन दैवज्ञो बलिं दद्यात्प्रयत्नतः ।

प्रगृह्णीष्व बलिं चेमं शकुनि त्वं महाबले ॥ ५ ॥

शिशुं विकारान्मुञ्चाद्य शोभने कामरूपिणि ।

एवं कृते विधाने च रोगमुक्तिश्च जायते ॥ ६ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शकुनीग्रहपीडा-
शमनविधानम् ।

अथ द्वितीयरेवतीग्रहपीडाशमनविधानम् ।

कुटुम्बार्थव्यतिरेके स्त्रीधनेन जीवति वृद्धो वा तरुणो वा बालो वा तं
द्वितीयरेवती नाम ग्रहो गृह्णाति ।

तस्य लिङ्गं प्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया ।

मूत्रविष्टाविलिप्ताङ्गो दुर्गन्धिर्जायते यथा ॥ १ ॥

तथैव मूत्रविष्टालेपं विना दुर्गन्धिरुपजायते । हरिद्रावर्णाः स्फोटाः सर्वाङ्गेषु
जायन्ते । एतदुपशान्तये पूर्वमेव बलिं दद्यात्तेनैव मन्त्रेण ।

एवं कृते विधाने च रोगमुक्तिस्तु जायते ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां द्वितीयरेवतीग्रह-
पीडाशमनविधानम् ।

अथ शुष्करेवतीग्रहपीडाशमनविधानम् ।

भूमौ पतितं प्रमादेन पर्यङ्कगन्मञ्चकादपि । मातुश्चापि पितुश्चापि तं बालं
शुष्करेवती नाम ग्रहो गृह्णाति ।

तस्य लिङ्गं प्रवक्ष्यामि प्रथमं जायते ज्वरः ।

आध्मानी हृद्गही चैव जठरान्त्रनिपीडनम् ॥ १ ॥

तस्योपशान्तये मुद्गश्वेततण्डुलभोजनम् ।

सुगन्धीन्यपि पुष्पाणि धूपश्च सरलोद्भवः ॥ २ ॥

शुष्काम्रमूले मन्त्रेणानेन बलिं दद्यात्—

करालवदने घोरे देवि घोरातिनाशिनि ।

इमं बलिं गृहाण त्वं व्याधिमुक्तं शिशुं कुरु ॥ ३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां

शुष्करेवतीग्रहपीडाशमनविधानम् ।

अथासत्पूतनाग्रहपीडाशमनविधानम् ।

अक्षालितचरणो योऽस्ति तं बालं वृद्धं युवानं वाऽसत्पूतना नाम ग्रहो गृह्णाति ।

तस्य लिङ्गं प्रवक्ष्यामि धर्ममार्गमनुस्मरन् ।

अर्बुदी देहकम्पी रात्रौ निद्राविरहितो दिवास्वापी भवति ।

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि नराणां हितकाम्यया ।

तिलपिष्टं तैलपक्वान्नं च सुगन्धीनि च द्रव्याणि सुगन्धिकुसुमानि च कुम्भे हिरण्यं निधाय बलिं दद्याच्च मन्त्रतः । बाह्याली(लिन्द)स्थाने प्रदोषसमये निदध्यात् ।

तत्र मन्त्रः—

नीलाम्बरधरे देवि पूतने विकृतानने ।

शिशुं विकारान्मुञ्चाद्य गृहाण बलिमुत्तमम् ॥

एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ॥ १ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालाया-

मसत्पूतनाग्रहपीडाशमनविधानम् ।

अथ गर्भिणीप्रथममासपीडाशमनविधानम् ।

तत्र बालरक्षाप्रसङ्गेन गर्भिणीगर्भरक्षार्थं मासविशेषोऽभिधीयते । शिशु-
रक्षारत्ने प्रजापतिं समुद्दिश्य देवो बलिः ।

श्वेतवस्त्रं पायसं च गव्यं क्षीरं तथा घृतम् ।

श्वेतच्छत्रं चन्दनं च सरत्नं चाङ्गुलीयकम् ॥ १ ॥

कुम्भे निधाय देवो वै बलिर्धूपसुधूपितः ।

दीपैर्नाराजितश्चापि ताम्बूलेन समन्वितः ॥

हिरण्यसहितः शक्त्या गवां दोहे निधापयेत् ॥ २ ॥

तत्र मन्त्रः—

एहोहि भगवन्ब्रह्मन्प्रजाकर्तः प्रजापते ।

परिगृहाण च बलिं सापत्यां रक्षे गर्भिणीम् ॥ ३ ॥

इति प्रथमे मासि गर्भिणीगर्भरक्षणबलिः ।

अथ प्रथममासि गर्भवेदनाहरमौषधम् ।

नारायणीयटीकायामपोक्षितार्थद्योतिन्याम्—प्रथममासे गर्भवेदना जायते तदा

पञ्चकोशीरतगरं समभागितमुदकेन पिष्ट्वा क्षीरेण सह णययेत् ।

तथा च क्रियाकालगुणोत्तरे—

यदि स्यात्प्रथमे मासि गर्भिण्या गर्भवेदना ।

नीलोत्पलं सनालं च शृङ्गाटककसेरुकम् ॥ १ ॥

शीततोयेन पिष्ट्वा तु क्षीरेणाऽऽलोडय तत्पिबेत् ।

एवं न पतते* गर्भः स च शूलः प्रशाम्यति ॥ २ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शिशुरक्षारत्नोक्तं
गर्भिणीप्रथममासपीडाहरमौषधम् ।

अथ द्वितीयमासे गर्भरक्षार्थं देयो बलिः ।

समुद्दिश्याश्विनौ देवौ देयो मन्त्रेण मन्त्रितः ।

दध्यन्नं पायसं लाजाः पिण्याकः कुसुमानि च ॥ १ ॥

गन्धश्च धूपो दीपश्च वस्त्रेणाऽऽवेष्टितो घटः ।

हेम्ना युतश्च शालायाः समीपे निक्षिपेद्वलिम् ॥ २ ॥

क्रियाकालगुणोत्तरे—

सुगन्धपुष्पवस्त्राणि कृष्णा च गिरिकर्णिका ।

नीलोत्पलान्यलाभे वेद्युत्पलानि समाहरेत् ॥

गोदोहस्थानमालक्ष्य निक्षिपेत्प्रयतः शुचिः ॥ ३ ॥

तत्र मन्त्रः—

भगवन्तौ प्रगृहीतां प्रभावन्तौ बलिं त्विमम् ।

सैरूपौ देवभिषजौ रक्षतां गर्भिणीमिमाम् ॥ ४ ॥

इति द्वितीयमासे गर्भरक्षार्थं देयो बलिः ।

अथ द्वितीयमासि गर्भरक्षाकरमौषधम् ।

नारायणीयटीकायामपेक्षितार्थद्योतिन्याम्—

शालूकमुत्पलं नीलं कसेरु शृङ्गवेरकम् ।

समांस(श)मुदकैः पिष्ट्वा क्षीरेणाऽऽलोडय तत्पिबेत् ॥ १ ॥

* ' पतते ' इत्यत्राऽऽर्षत्वाच्छन्दोनुरोधाच्च व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदं ब्राहि मामितिबद्धो-
द्भवम् ।

अत्रोदकानां बहुवचनस्य कारणमाह—यदि संतापो दारुणो वर्तते तदा शीतं मध्यमस्तदा कवोष्णं वातश्लेष्मभावे सति तदोष्णमिति ।

क्रियाकालगुणोत्तरे—

द्वितीये मासि त्वथ चेद्वर्धे भवति वेदना ।

तगरं कुङ्कुमं बिल्वं कर्पूरेण समन्वितम् ॥ १ ॥

अजाक्षीरेण तत्पिष्ट्वा क्षीरेणाऽऽलोडय तत्पिबेत् ।

एवं न पतते गर्भः सर्वशूलः प्रशाम्यति ॥ २ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शिशुरक्षा-
रत्नोक्तं द्वितीयमासि गर्भरक्षाकरमौषधम् ।

— — —

अथ तृतीये मासि गर्भिणीगर्भवेदनायां बलिः ।

शिशुरक्षारत्ने—

गर्भिणीगर्भरक्षार्थं बलिर्मासे तृतीयके ।

रुद्रानेकादशोद्दिश्य देयो मन्त्रेण मन्त्रितः ॥ १ ॥

घृतमन्नं च लाजाश्च ध्वजः श्वेतश्च चन्दनम् ।

श्वेतवस्त्राणि पुष्पं च श्वेतं धूपप्रदीपकौ ॥ २ ॥

श्वेतानि चम्पकान्याशु विघ्नशान्तिकराणि तु ।

एतत्सर्वं समाहृत्य कलशे संनिधापयेत् ॥

ई(ऐ)शान्यां दिशि रात्रौ च निक्षिपेत्प्रयतः शुचिः ॥ ३ ॥

निशायां गोदोहवेलायामित्यर्थः । क्रियाकालगुणोत्तरे यत्र बलिर्निक्षेप-
णीयस्तज्जलाशयस्थानमिति ज्ञातव्यम् ।

तत्र मन्त्रः—

महादेवः शिवो रुद्रः शंकरो नीललोहितः ।

ईशानो विजयो भौमो देवदेवो भवोद्भवः ॥ १ ॥

कपाली शंभुरीशानो रुद्रै(न इत्ये)कादश मूर्तयः ।

रुद्रा एकादश प्रोक्ताः प्रगृहीत बलिं त्विम् ॥ २ ॥

युष्माकं तेजसा वृद्ध्या नित्यं रक्षया तु गर्भिणी ।

यूयमत्रैव बुद्ध्या तु नित्यं रक्षत गर्भिणीम् ॥ ३ ॥

इति मन्त्रेण देयो बलिः ।

— — —

अथ तृतीये मासि गर्भिणीगर्भरक्षार्थमौषधम् ।
नारायणीयटीकायामपेक्षितार्थद्योतिन्याम् । तृतीये मासि—
पद्मं च चन्दनं तोयं तगरं समभागितम् ।
पूर्ववद्वारिणा पिष्टुं क्षीरेणाऽऽलोडय तत्पिबेत् ॥ १ ॥

क्रियाकालगुणोत्तरे—

तृतीये मासि गर्भिण्या गर्भे भवति वेदना ।
पद्मकं चन्दनं चैव बालकं पद्मनालकम् ॥ १ ॥
पिष्ट्वा शीतेन तोयेन क्षीरेणाऽऽलोडय तत्पिबेत् ।
एवं न पतते गर्भः स च शूलः प्रशाम्यति ॥ २ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां तृतीयमासे
गर्भिणीगर्भरक्षार्थमौषधम् ।

अथ चतुर्थे मासि गर्भिणीगर्भवेदनाहरमौषधं बलिश्च ।

नारायणीयटीकायामपेक्षितार्थद्योतिन्याम्—

क्षीरं च कदलीमूलमुत्पलं बालकं तथा ।
आलोडय समभागेन पिबेद्रोगोपशान्तये ॥ १ ॥

क्रियाकालगुणोत्तरे—

चतुर्थे मासि गर्भिण्या गर्भे भवति वेदना ।
उशीरं कदलीमूलं पद्मनालं सशर्करम् ॥ १ ॥
शीततोयेन पिष्ट्वा च पिबेत्क्षीरेण संयुतम् ।
एवं न *पतते गर्भः स च शूलः प्रशाम्यति ॥ २ ॥
बलिर्मासि तृतीये च प्रोक्तोऽसौ च चतुर्थके ।
कुर्यात्प्रयत्नतो विद्वान्नात्र कार्या विचारणा ॥ ३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शिशुरक्षारत्नोक्तं
चतुर्थे मासि वेदनाहर्षौषधकथनं बालिविधानं च ।

* आहि मामितिबदार्थः पदव्यत्ययश्छन्दोऽनुरोधाद्बोद्धव्यः ।

अथ पञ्चमे मासि गर्भिणीगर्भरक्षार्थं देयो बलिः ।

कर्मविपाकसमुच्चये—

गर्भिणीगर्भरक्षार्थं पञ्चमे मासि वै बलिः ।
 विनायकं समुद्दिश्य देयः संयतचेतसा ॥ १ ॥
 विनायकं गोमयेन कुर्यात्पिष्टेन वा पुनः ।
 चतुरस्रे स्थण्डिले च स्थापयेत्तं गणाधिपम् ॥ २ ॥
 अभ्यर्च्य गन्धपुष्पैश्च बलिं तत्पुरतः क्षिपेत् ।
 सरितः पुलिने वाऽथ पर्वताग्रे च वा तले ॥ ३ ॥
 छायामाश्रित्य वृक्षस्य कस्यचिच्छयेनकं विना ।
 तत्र तं सुप्रतिष्ठाप्य गणराजं कृताकृतिम् ॥ ४ ॥
 अन्नं पक्वं तथाऽपक्वं मांसं पक्वमपक्वकम् ।
 पायसं च मधुद्राक्षागुडक्षीरफलानि च ॥ ५ ॥
 कदलीफलपिण्डालुमधुकानि च मूलकम् ।
 लड्डुकान्नारिकेलं च कन्दमूलानि सर्षपान् ॥ ६ ॥
 सर्वधान्यानि लाजांश्च वरान्नं तिलपिष्टकम् ।
 इक्षुं च तद्रसं चैव माध्वीं पैष्टीं तथा सुराम् ॥ ७ ॥
 गौडीं चैव विशेषेण धूपदीपौ तथाविधौ ।

तथाविधशब्देन यः कश्चिद्धूपः स मये(त्रे)नाभ्यक्त इत्यर्थः ।

क्रियाकालगुणोत्तरे—

पक्वापके च मांसे च मत्स्याश्चापि विशेषतः ।
 पाटलीसहकाराणां मूलं मधुसमुद्भवम् ॥ १ ॥
 अन्येषां पादपानां च बिल्वादीनां च मूलकम् ।

बिल्वादिशब्देन दशमूली प्रसिद्धा ।

एतत्सर्वं समाहृत्य वंशपात्रे मनोरमे ।

मनोरम इति पञ्चवर्णैश्चित्रितेऽभ्रकादिरचनाविशेषैर्मण्डिते ।

तत्र मन्त्रः—

एकदन्ताम्बिकापुत्र त्रिनेत्र गणनायक ।

रक्ताम्बरधर श्रीमन्त्रक्तमाल्यानुलेपन ॥ १ ॥

स्कन्दप्रिय महाबाहो पाशहस्त नमोऽस्तु ते ।
 प्रगृह्णीष्व बलिं चेमां सापत्यां रक्ष गर्भिणीम् ॥ २ ॥
 बलिप्रदायकं मर्त्यमायुषा चाभिवर्धय ।
 अलक्ष्मीनामकं पापं मम सद्यो विनाशय ॥ ३ ॥
 एवं मन्त्रं समुच्चार्य सगदा गर्भिणी बली(सा बाला गर्भिणी सदा) ।
 नमस्कुर्यात्प्रयत्नेन संप्राथ्यं च पुनः पुनः ॥ ४ ॥
 येन मन्त्रेण गर्भिणी नमस्करोति स एष मन्त्रः—
 वक्रतुण्ड महावीर्य महाभाग महाबल ।
 शिरसा त्वामहं वन्दे सापत्यां रक्ष मां सदा ॥ ५ ॥
 इति गणेशनमस्कारः ।
 इति बलिं दत्त्वा रक्षामन्त्रं पठेत् । तथा हि—
 अयं बलिर्मया देव त्वदर्थे प्रतिपादितः ।
 रक्षेमं शिशुमानन्दरूप शैलसुतात्मज ॥ ६ ॥
 इति पञ्चममासे गर्भिणीगर्भरक्षार्थं देयो बलिः ।

अथ पञ्चममासे गर्भिणीगर्भवेदनाहरमौषधम् ।

नारायणीयटीकायामपेक्षितार्थोतिन्याम्—

पञ्चमे मासि गर्भिण्यां गर्भे चेद्वेदना भवेत् ।
 तन्निवारकमेवाऽऽशु भेषजं कथ्यते मया ॥ १ ॥
 नीलोत्पलं मृणालं च कोलीक्षीरं तथैव च ।
 केसरं पद्मकं चैव तोयेनाऽऽलोडय तत्पिबेत् ॥ २ ॥

क्रियाकालगुणोत्तरे—

अथास्याः पञ्चमे मासे गर्भे भवति वेदना ।
 नीलोत्पलं सनालं च पद्मकेसरसंयुतम् ॥ १ ॥
 अजाक्षीरेण तत्पिष्ट्वा तोयेनाऽऽलोडय तत्पिबेत् ।

अत्र योगे कोलीक्षीरमेव मुख्यं तत्पुनः केषांचित्सेव्यं केषांचिन्न सेव्यं
 तस्मादजाक्षीरम् ।

एवं न पतते गर्भः स च रोगः प्रशाम्यति ॥ २ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां पञ्चमे मासि गर्भिण्या
 गर्भवेदनाहरमौषधं शिशुरक्षारत्नोक्तं विधानं च ।

अथ षष्ठे मासि गर्भिणीगर्भरक्षार्थं देयो बलिः ।

कर्मविपाकसमुच्चये—

गर्भिणीगर्भरक्षार्थं षष्ठे मासि तथा बलिः ।

वसूनष्टौ समुद्दिश्य देयो मन्त्रेण मन्त्रितः ॥ १ ॥

घृतान्नं च हरि[द्रा]कं खण्डं लाजाश्च पायसम् ।

पीतवर्णानि पुष्पाणि तथा नीलोत्पलानि च ॥

सकाञ्चनः पूर्णकुम्भः सर्वं नद्यास्तटे क्षिपेत् ॥ २ ॥

पूर्णकुम्भः स जलेन पूर्ण इति । अत्र मन्त्रः—

प्रभासः पावकः सोमः प्रत्यूषो मारुतोऽनलः ।

धरो ध्रुव इति ह्येते वसवोऽष्टौ प्रकीर्तिताः ॥

प्रगृह्णन्तु बलिं चेमां सर्वे रक्षन्तु गर्भिणीम् ॥ ३ ॥

इति षष्ठे मासि देयो बलिः ।

अथ षष्ठे मासि गर्भवेदनाहरमौषधम् ।

नारायणीयटीकायामपेक्षितार्थद्योतिन्याम्—षष्ठे चैलामृद्वीकोत्पलकेसरं पिबेत् ।

क्रियाकालगुणोत्तरे—

अथास्या मासि षष्ठे तु गर्भे भवति वेदना ।

पिप्पलीबीजमूले च सोत्पले च सकेसरे ॥ १ ॥

शीततोयेन पिष्ट्वा तु क्षीरेणाऽऽलोड्य तत्पिबेत् ।

एवं न पतते गर्भः स च शूलः प्रशाम्यति ॥ २ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां षष्ठे मासि

गर्भिण्या गर्भवेदनाहरमौषधं सविधानम् ।

अथ सप्तमे मासि गर्भिणीगर्भरक्षार्थं देयो बलिः ।

अथ सप्तमे मासि गर्भवेदनाहरं विधानम् । एतावांस्तु विशेषः । षष्ठे च वसवो देवाः । अत्र स्कन्दो देवता । अत एव बलिदाने मन्त्रभेदः । बलिसमुदायः पूर्वं एव ।

तत्र मन्त्रः—

स्कन्द षण्मुख देवेश शिवप्रीतिविवर्धन ।

प्रगृहीष्व बलिं चेमां सापत्यां रक्ष गर्भिणीम् ॥ १ ॥

बलिक्षेपस्थानं नदीतटम् ।

इति सप्तमे मासि देयोबलिः ।

अथ सप्तमे मासि गर्भवेदनाहरमौषधम् ।

नारायणीयटीकायामपेक्षितार्थोतिन्याम्—सप्तमे कपित्थत्वक्फलमूलशर्करा-
लाजाश्च वेणुशर्करा । सर्वे समांशं कृत्वा वारिणा निष्पीड्य दातव्यम् ।

क्रियाकालगुणोत्तरे—

अथास्याः सप्तमे मासे गर्भे भवति वेदना ।

कपित्थत्वक्च शालूकं शर्करायुक्तमञ्जसा ॥ १ ॥

अञ्जसेति शर्करा समभागा ।

शीततोयेन पिष्ट्वा तु क्षीरेणाऽऽलोड्य तत्पिबेत् ॥

एवं न पतते गर्भः स च रोगः प्रशाम्यति ॥ २ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शिशुरक्षारत्नोक्तं
सप्तमे मासि गर्भवेदनाहरभेषजविधानम् ।

(अथ गर्भिण्या अष्टमे मासि ससत्वमहिषीदानविधिः ।

एवं गुणविशिष्टे पुण्यदेशे पुण्यकाले च ममोदरमध्यस्थे गर्भे औत्सुक्यगतिवैक-
ल्यशैथिल्यपवनग्रहवरू(दुरु)क्तिवाक्स्खलननेत्रभ्रान्तिरुज(गु)ग्रत्वालस्यस्वरस्प-
न्दस्वरभेदानिच्छाङ्गस्पन्दवैवर्ण्यग्रान्धिलत्वोन्मादादयो ये दोषास्तथा मम प्रमा-
दादशुचित्वात्क्रियालोपादसत्यभाषणादशुद्धभूमिक्रमणाद्ब्रह्मणस्यावलोकनात्प्रदो-
षादौ स्नानादपवित्रस्य भक्षणाद्ये दोषाः कर्मजा अकर्मजा वा समुत्पन्नास्तेषां संशो-
धनार्थं तथोदरस्थस्य गर्भस्याऽऽयुरारोग्यैश्वर्यादिसकलमनोरथसिद्ध्यर्थं गर्भवे-
दनापरिहारार्थं श्रीयमदेवताप्रीत्यर्थं ससत्वमहिषीदानमहं करिष्ये । तदङ्ग-
स्वस्तिवाचनं प्रतिग्रहीतृवरणपूजनं महिषीपूजनं च करिष्ये । इति प्रयोगं विधाय
स्वस्तिवाचनं प्रतिग्रहीतृपूजनं च कुर्यात् । तत्र प्राङ्मुखो दाता प्रतिग्रहीतुरुदङ्मु-
खस्य वरणं निष्पाद्य यथासंभववस्त्रगन्धस्रङ्मुद्रिकादिना विप्रसमीपे प्रार्थये-
दनेन मन्त्रेण—

मनसे(ई)प्सितशु(सि)द्धयर्थं गृहाणेमां द्विजोत्तम ।

मया दत्तां सदासौख्यसंतानफलदाविनीम् ॥ १ ॥

ततः प्रतिग्रहीत्रा (त्रे) मां [प्रतिगृह्णामीति] महिषीसमीपे वक्तव्यम् ।

ततो महिषीपूजनम् । प्राङ्मुखां महिषीं संस्थाप्य पुष्पचन्दनवस्त्राद्यैस्तामलंकृत्य
संपूज्य च प्रार्थयेत् ।

तत्र मन्त्रः—

इन्द्रादिलोकपालानां [पूज्या] या महिषी शुभा ।

महिषीदानमाहात्म्यश्रोतुर्मे सर्वकामदा ॥ २ ॥

धर्मराजस्य साहाय्ये यस्याः पुत्रः प्रतिष्ठितः ।

महिषासुरजननी साऽस्तु मे सर्वकामदा ॥ ३ ॥

इति महिषीं संप्रार्थ्य प्रतिग्रहीतृहस्ते शिवा आपः सन्तु इत्यादिकं विधाया-
मुकसगोत्रायेत्यादिकं चोच्चार्य स्वदक्षिणहस्ते पुष्पाक्षतयुक्तमुदकं गृहीत्वैनं प्रयोगं
पठेत् । इमां महिषीं प्रथमोद्गमगर्भयुक्तां सवस्त्रां सालंकृतां (कारां) यथोपस्कर-
सहितां धर्मदैवतां मदीयोदरस्थगर्भस्य सर्वोपद्रवदोषविनाशनार्थं गुणवत्संतान-
प्राप्त्यर्थं सत्पुत्रसुखकामा तुभ्यमहं संप्रददे [तेन] भगवान् धर्मः प्रीयताम् । मे
वाञ्छितार्थसिद्धिरस्तु ।

उदरस्थस्य गर्भस्य ये दोषोपद्रवाः स्मृताः ।

तेषां निरसनार्थाय दत्तेयं महिषी मया ॥ ४ ॥

गृहाणेमां द्विजश्रेष्ठ सुखसिद्धिप्रदायिनीम् ।

दानेनानेन सकलं यथोक्तं फलमस्तु मे ॥ ५ ॥

तत्सन्न मम । देवस्य त्वेत्यादि जपेत् । धर्माय देवायेमां महिषीं प्रतिगृह्णा-
मीति पठित्वा को ददातीति जपेत् । ततो दक्षिणादानम् । प्रथमगर्भयुक्ता
द्विवस्त्रयुक्ता सालंकारा । ते चालंकाराः । सुवर्णशृङ्गी सुवर्णतिलकसुवर्णघण्टायुक्ता
क्षम्रदोहन [पात्र] युता । पिण्डकप्रस्थप्रदा (मा) न (ण) सप्तधान्यानि । ब्राह्मणाय वस्त्र-
त्रयकञ्चुकोष्णीषप्रावरणानि । कर्ममात्रालंकाराः । मालाद्वयम् । रक्तचन्दना-
नुलेपनं च । फलानि चत्वारि । दक्षिणा दानानुसारतः । पादुकाप्रदानम् ।

इत्यष्टमे मासि महिषीदानविधिः ।)

अथाष्टमे मासि गर्भिण्या गर्भरक्षायं देयो बलिः ।

कर्मविपाकसमुच्चये—

गर्भिणीगर्भरक्षार्थं बलिर्नास्ते न (ऽथ) चाष्टमे ।

दुर्गामुद्दिश्य दातव्यो ह्येवं कुर्वन्न सीदति ॥ १ ॥

बलिदानप्रकारमाह—

सगुडं पायसं लाजास्तृणधान्यौदनं घृतम् ।

अपूपाः कृसराश्चैव माहिषं दधि मूलकम् ॥ २ ॥
 माषा निष्पावका मुद्राः श्यामाकाः कुसुमानि च ।
 नीलोत्पलानि च तथा पूर्णकुम्भः सकाञ्चनः ॥
 एतत्क्षिपेन्नदीतीरे मन्त्रेणानेन संयतः ॥ ३ ॥

ग्रन्थान्तरे तु विशेषमाह—

गिरौ वा सरितस्तीरे देवस्थाने तडागके ।
 राजमार्गे द्रुमाधस्तो बलिमेनं विनिक्षिपेत् ॥ ४ ॥

तत्र मन्त्रः—

कात्यायानि महादेवि ज्येष्ठे वन्द्ये निशाप्रिये ।
 दुर्गे देवि महाकालि सिंहशार्दूलवाहने ॥ ५ ॥
 धनुष्वङ्गधरे देवि दृष्टदैत्यविनाशिनि ।
 नदीशैलप्रिये देवि कुमारि सुभगे शिवे ॥ ६ ॥
 अष्टहस्ते चतुर्वक्त्रे पिङ्गले शुकनासिके ।
 प्रगृह्णीष्व बलिं चेभं सापत्यां रक्ष गर्भिणीम् ॥ ७ ॥
 इत्यष्टमे मासि गर्भिण्या गर्भरक्षार्थं देयो बलिः ।

अथाष्टमे मासि गर्भिणीगर्भवेदनाहरमौषधम् ।

नारायणीयटीकायामपेक्षितार्थोतिन्याम्—

अष्टमे मासि विज्ञेयं धान्यं केसरकं तथा ।
 शालूकमुत्पलं चैव तथा च गजपिप्पली ॥
 निष्कवाध्य सितया सर्वं देयं रोगोपशान्तये ॥ १ ॥

क्रियाकालगुणोत्तरे—

अथास्यास्त्वष्टमे मासि गर्भे भवति वेदना ।
 पद्मकं गजकृष्णा च धान्यमुत्पलकं तथा ॥ २ ॥
 शीततोयेन पिष्ट्वा तु क्षीरेणाऽऽलोडय तत्पिबेत् ।
 एवं न पतते गर्भः स च रोगः प्रशाम्यति ॥ ३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां कर्मविपाक-
 समुच्चयोक्तमष्टमे मासि गर्भिण्या गर्भवेदनाहर-
 भेषजविधानम् ।

अथ नवमे मासि गर्भिणीगर्भरक्षार्थं देयो बलिः ।

कर्मविपाकसमुच्चये—

गर्भिण्या गर्भरक्षार्थं मासेऽथ नवमे बलिः ।

देयः स्यान्मातृकोदेशस्ततः स्याद्रोगमुक्तिदः ॥ १ ॥

बलिस्वरूपमाह—

दध्योदनं च लाजाश्च मुद्रान्नं च पुनर्दधि ।

कृसरश्च तथा श्वेतपङ्कजानि च चन्दनम् ॥ २ ॥

शतपत्राणि पुष्पाणि तथाऽन्यानि शुभानि च ।

धूपो वस्त्रं हिरण्यं च पूर्णकुम्भस्तथैव च ॥ ३ ॥

बलिमन्त्रमाह—

प्रगृहीत बलिं चेमं मया दत्तं च मातरः ।

यूयं रक्षन्तु संतुष्टाः सापत्यां गर्भिणीमिमाम् ॥ ४ ॥

बलिक्षेपश्चतुष्पथे ।

इति नवमे मासि गर्भिणीगर्भरक्षार्थं देयो बलिः ।

—————

अथ नवमे मासि गर्भिणीगर्भवेदनाहरमौषधम् ।

नारायणीयटीकायामपेक्षितार्थद्योतिन्याम्—

नवमे मासि काकोलीपलाशस्य तु बीजकम् ।

एरण्डमूलसंयुक्तं पिष्ट्वा तोयेन संयतः ॥ १ ॥

कृत्वा तु मोदकं धात्रीफलमानं विशेषतः ।

जीर्णाग्ने भक्षितश्चैव हरेद्गर्भव्यां ध्रुवम् ॥ २ ॥

क्रियाकालगुणोत्तरे—

अथास्या नवमे मासि गर्भे भवति वेदना ।

पलाशबीजं काकोलीमूलं स्यात्पौष्करं तथा ॥ ३ ॥

सोशीरं सोदकं कृत्वा जीर्णाग्ने भोजयेद्ध्रुवम् ।

एवं न पतते गर्भः स च शूलः प्रशाम्यति ॥ ४ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शिशुरक्षारत्नोक्तं नव-
मे मासि गर्भवेदनाहरभेषजविधानम् ।

—————

अथ दशमे मासि गर्भिणीगर्भरक्षार्थं देयो बलिः ।

कर्मविपाकसंग्रहे—

गर्भिणीगर्भरक्षार्थं मासे च दशमे बलिः ।

उद्दिश्य निर्ऋतिं देवं बलिर्देयस्तु मन्त्रिणा (तः) ॥ १ ॥

तत्र बलिप्रकारमाह—

पक्कान्नं कृसरो (रं) लाजाः (जान्) पक्कपक्कफलं तथा ।

इक्षूणां निक्षिपेत्तत्र रक्षो(सं) मन्त्रेण मन्त्रकृ(वि) त् ॥ २ ॥

कृष्णगन्धं कृष्णवस्त्रं कृष्णानि कुसुमानि च ।

धूपो दीपश्च नैवेद्यं बलये संप्रदीयते ॥ ३ ॥

नीलोत्पलानि कुम्भान्ते (न्तः) सजलानि विनिक्षिपेत् ।

दक्षिणाशां प्रति तथा नीत्वा तत्र विनिक्षिपेत् ॥ ४ ॥

तत्र मन्त्रः—

ॐ हं हां हीं हं स्वाहा ।

बालतन्त्रे च कुक्कुटाचार्यमतेऽपि भोजराजमते च सर्वत्र संमतताऽस्य मन्त्रस्य ।

बलिं गृहाण रक्षस्त्वं मया दत्तं (ते) प्रतिपादितम् ।

बलिं [त] मवलोकय(स्व) सापत्यां रक्ष गर्भिणीम् ॥ ५ ॥

मिर्विघ्नं कुरु कुरु गर्भपीडनात् ।

प्रेतासन महाबाहो कुमुदेत्तवत(भरव)प्रिय ।

प्रगृहीष्व बलिं चेमां सापत्यां रक्ष गर्भिणीम् ॥ ६ ॥

अत्र बलौ ब्राह्मणैर्विर्वर्जनीयस्तैरिक्षुरंसोऽक्षेपणीयः ।

इति दशमे मासि गर्भरक्षार्थं देयो बलिः ।

अथ दशमे मासि गर्भवेदनाहरमौषधम् ।

नारायणीयटीकायामपेक्षितार्थद्योतिन्याम्—दशमे काश्मीरोत्पलं मधुकं ससितं तण्डुलेन पिष्ट्वा [क्षीरेणा]ऽऽलोड्य तत्पिबेत् ।

क्रियाकालगुणोत्तरे—

अथास्या दशमे मासि गर्भे भवति वेदना ।

शर्करा चोत्पलं चैव मधुकं मुद्गमेव च ॥ १ ॥

शीततोयेन पिष्ट्वा च क्षीरेणाऽऽलोढ्य तत्पिबेत् ।
 एवं न पतते गर्भः स च शूलः प्रशाम्यति ॥ २ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शिशुरक्षारत्नोक्तं दशमे
 मासि गर्भिणीगर्भवेदनाहरभेषजविधानम् ।

अथैकादशे मासि गर्भिणीगर्भरक्षार्थं देयो बलिः ।

कर्मविपाकसंग्रहे—

गर्भिणीगर्भरक्षार्थं मासि चैकादशे बलिः ।
 वासुदेवं समुद्दिश्य देयो नात्र विचारणा ॥ १ ॥
 पायसापूपपिष्टं च गुडो लाजाश्च सक्तवः ।

पिष्टशब्देन पिष्टान्नम् ।

श्यामो ध्वजस्तथा धूपः श्यामं च चन्दनं स्मृतम् ॥ २ ॥
 श्यामं चन्दनं कृष्णागरु । श्यामो धूपः प्रियंगुः । श्यामानि च नीलोत्पला-
 नीत्यर्थः । तदभावे श्यामानि मोगराणि कदम्बपुष्पाणि । श्यामले कलशे निधाय
 सर्वं निक्षिपेत् । जले मूले बोधिद्रुमस्य वा वृन्दावनतले वाऽपि विनिक्षिपेत् ।
 तत्र प्रयतो भूत्वाऽमुं मन्त्रमुच्चारयेत् ।

पाञ्चजन्यप्रभाव्यक्त कौस्तुभद्योतिताङ्गक ।
 प्रगृहीष्व बलिं चेमं सापत्यां रक्ष गर्भिणीम् ॥ ३ ॥
 इत्येकादशे मासि गर्भिणीगर्भरक्षार्थं देयो बलिः ।

अथैकादशे मासि गर्भवेदनाहरमौषधम् ।

दशमे मासि यदुक्तं गर्भवेदनाहरमौषधं तदेवैकादशे मासि देयमिति ।

क्रियाकालगुणोत्तरे—

तैतथैकादशे मासि गर्भे भवति वेदना ।
 पद्मोत्पलं च मधुकं तालकेनापि संयुतम् ॥ १ ॥
 शीततोयेन पिष्ट्वा तु क्षीरेणाऽऽलोढ्य तत्पिबेत् ।
 एवं न पतते गर्भः स च शूलः प्रशाम्यति ॥ २ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शिशुरक्षारत्नोक्त-
 मेकादशे मासि गर्भवेदनाहरभेषजविधानम् ।

अथ द्वादशे मासि गर्भिणीगर्भरक्षार्थं देयो बालिः* ।

अथ [च] द्वादशे मासि गर्भे भवति वेदना ।

पद्मं शृङ्गारकं चैव चोत्पलं च सनालकम् ॥ १ ॥

शीततोयेन पिष्ट्वा तु क्षीरेणाऽऽलोड्य तत्पिबेत् ।

एवं न पतते गर्भः स च शूलः प्रशाम्यति ॥ २ ॥

अत्र सर्वत्र व्यावृत्तक्षीरशब्देन गोक्षीरमुच्यते तच्चापक्वमेव । यदाऽपक्वाभाव-
स्तदा पक्वं निर्वाप्य सितया सह प्रयोगे देयम् । गोक्षीरस्याप्यभावो यदा तदा
कृष्णाजाक्षीरं ज्ञातव्यम् । पथ्यं क्षीरौदनम् (नः) ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शिशुरक्षारत्नोक्तं
द्वादशमासे गर्भवेदनाहरभेषजविधानम् ।

अथ सुखप्रसवोपायः ।

नारायणीयटीकायामपेक्षितार्थद्योतिन्याम्—

करङ्गीभूतगोमूर्धा सूतकीभवनोपरि ।

तत्काले निहितो नार्याः सुखप्रसवकारकः ॥ १ ॥

करङ्गीभूतगोमूर्धाऽस्थिमात्रावशिष्टं गोमस्तकमिति ।

तथाच—

उपोदक्यास्तु मूलानि तैलयुक्तानि कारयेत् ।

योनेः प्रलेपो दातव्यः सुखप्रसवकारकः ॥ २ ॥

अन्यच्च—

अपामार्गस्य मूलानि पाठां चैव विशेषतः ।

पेषयेदारनालेन तेन योनिः प्रलिप्यते ॥

तदेव पाययेद्धीमान्सुखप्रसवहेतवे ॥ ३ ॥

अन्यच्च—

वंशस्य निम्बस्य च संप्रदिष्टा त्वक्संप्रयुक्ता तुलसीरसाढ्या ।

मूला प्रधाना नु (तु) कपित्थपत्रं करञ्जबीजं च समस्तमेतत् ॥ ४ ॥

अजापयःसंयुतमेव पथ्यं घृतं च तैलेन युतं समांसं (शं)म् ।

योनिप्रलेपं विदधीत तेन तच्चापि पेयं खलु सौख्यसिद्धयै ॥ ५ ॥

* अत्र देयो बलिर्इत्युक्त्वाऽग्रेऽथादिपिबेदित्यन्तश्लोकेनौषधविधानाद्बालिविधानग्रन्थस्युद्धृतं
इत्यनुपीयते ।

गर्भे मृतं चा(तश्चा)र्भकमे(क ए)ति सम्यग्द्वारं च योनेर्न करोति दुःखम् ।
एवं विधानं न करोति जानन्स भ्रूणहा नात्र विचारणीयम् ॥ ६ ॥

तत्र योनिलेपनमन्त्रः—

हिमवदुत्तरे पार्श्वे शबरी नाम यक्षिणी ।

तस्या नूपुरशब्देन विशल्या भवतु(साऽस्तु)गर्भिणी ॥ स्वाहा ॥ ७ ॥
इति मन्त्रः ।

* (प्रमन्दिने पितुमदर्चता वचो यः कृष्णगर्भा निरहन्मृजिष्वना ।

अवस्यवो वृषणं वज्रदक्षिणं मरुत्वन्तं सरुयाय हवामहे ।

इति पानीयं मन्त्रयित्वा पाययेत् ।)

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां पृथ्वीमल्लकृतशिशुर-
क्षारत्नोक्तसुखप्रसवोपायविधानम् ।

अथ प्रसङ्गेन लुब्धजातकोक्तानि बाल-

रक्षोपयोगीनि द्वादश विधानानि ।

तत्र श्रीस्कन्दसूर्यसंवादे विमोचिनीपीडाशमनविधानम् ।

सूर्य उवाच—

केन कर्मविपाकेन बालानां जायते व्यथा ।

जातमात्राणि बालानि कर्म किं परिकुर्वते ॥ १ ॥

आहारश्चैव निद्रा च रुदितं हास्यमेव च ।

स्वाभाविकं त्विदं देव कर्म चैषां षडानन ॥ २ ॥

कर्मणस्त्वस्य करणात्कथं पापं प्रजायते ।

पापं विना कथं व्याधिः पीडयत्यखिलाञ्छिशून् ॥ ३ ॥

तेषां कर्मफलं किं च मातापित्रोस्तु कर्मजम् ।

जन्मनः समयस्याथ तन्ममाऽऽचक्ष्व सुव्रत ॥ ४ ॥

श्रीस्कन्द उवाच—

येन कर्मविपाकेन शिशूनां जायते गदः ।

तत्सर्वं कथयिष्यामि पृच्छतस्ते दिवाकर ॥ ५ ॥

लङ्कणायां रावणो नाम पौलस्त्यो राक्षसेश्वरः ।

* धनुश्चिह्नान्तर्गतो ग्रन्थः ख. पुस्तके नास्ति ।

स्वसारस्तस्य वीरस्य द्वादशाऽऽसन्महाबलाः ॥ ६ ॥
 ताभिः कृतं तपो घोरं सर्वलोकभयप्रदम् ।
 पीडितं ताभिरखिलं जगत्तीव्रतपोबलात् ॥ ७ ॥
 रुद्रस्त्वाराधितस्ताभिस्तपसा तीव्रतेजसा ।
 प्रसन्नोऽभूत्तदा देवस्ताभ्य एवं वरं ददौ ॥ ८ ॥

रुद्र उवाच—

वरदोऽहं वरार्हाभ्यो* युष्मभ्यं रजनीवराः+ ।
 ताभिर्वृतं तदा भक्ष्यं बालानां देहसंभवम् ॥ ९ ॥
 वसामृङ्मांसमेदोस्थिमज्जाशुक्रात्मकं रवे ।
 देहि देवेभ्य सर्वे भो जीवतामेव शंकर ॥ १० ॥
 तच्छ्रुत्वा वचनं तासां चुकोप परमेश्वरः ।
 ब्रह्मवंशसमुद्भूतास्तपोवृत्तिपरायणाः ॥ ११ ॥
 तत्कथं बालघाताय चेतो वः परिवर्तते ।
 सर्वलोकमतं देयं प्रार्थितं तु मनीषिभिः ॥ १२ ॥

राक्षस्य ऊचुः—

यदि प्रसन्नो भगवान्ददात्यस्मत्प्रियं शिवः ।
 सर्वेषामपि बालानां मेदसा तृप्तिरेव नः ॥ १३ ॥

रुद्र उवाच—

या स्त्री निशामुखेऽश्राति बालं स्पृशति भुञ्जती ।
 प्रसूतिसमयेऽभ्यङ्गं न करोति प्रमादतः ॥ १४ ॥
 नग्ना निद्राति रात्रौ वा निष्पन्नसुरता सती ।
 तस्या बालं दिनैर्मासैर्वर्षैरपि विशेषतः ॥ १५ ॥
 आद्ये तु दिवसे मासे वर्षे वाऽपि विमोचिनी ।
 गृह्णातु मत्प्रसादेन ज्वराद्यैर्वेदनाचयैः ॥ १६ ॥
 द्वितीये मोहिनी नाम सुनन्दा तु तृतीयके ।
 चतुर्थे पूतना नाम पञ्चमे ह्यासुरी तथा ॥ १७ ॥

* वरेऽभीष्टवरणेऽर्हा योग्या इत्यर्थः । + वरशब्दोऽभीष्टवाची । वराऽभीष्टा प्रियेत्यर्थः ।
 बहुव्रीहिसमासः । आहिताग्न्यादित्वाद्वाजदन्तादित्वाद्वा वरशब्दस्य परनिपातः । ख. पुस्तकस्थपाठे
 तु रजनीचर्य इति भाव्यम् । स च ऋन्दोविहृद् इति कृत्वाऽयमेवाऽऽदृत इति ध्येयम् ।

षष्ठे तु रेवती देवी बालं गृह्णातु सत्वरम् ।
 सप्तमे शक्रुनी नाम त्वष्टमे च पिशाचिका ॥ १८ ॥
 नवमे पाशिनी देवी शिशुं गृह्णातु सत्वरम् ।
 महामारी तु दशमे कालिका तु ततः परम् ॥ १९ ॥
 द्वादशे भामिनी देवी पीडाकरणतत्परा ।
 यूयमेवं कुरुध्वं भोः पीडां बालकविग्रहे ॥ २० ॥
 आत्मनो दिवसे मासे वर्षे चापि पृथक्पृथक् ।
 निमित्ते सति राक्षस्यः शुचौ तु न कदाचन ॥ २१ ॥
 शुष्मभ्यं बलिदानं ये विदधत्यखिलं परम् ।
 गृहीतमपि बालं तं संतुष्टाः परिमुञ्चत ॥ २२ ॥
 इति लब्धवराः सर्वाः पीडयन्ति शिशून्हि ताः ।
 दिनमासाब्दमानेन नात्र कार्या विचारणा ॥ २३ ॥
 प्रथमे दिवसे मासे वर्षे देवी विमोचिनी ।
 तस्यास्तु जायते पीडा शिशूनां तीव्रवेदना ॥ २४ ॥
 ज्वरस्तु प्रथमं तावन्नेत्ररोगस्ततः परम् ।
 न गृह्णाति स्तनं डिम्भो वान्तिरात्यन्तिकी भवेत् ॥ २५ ॥
 मुष्टिं बध्नाति वेगेन दन्तान्दन्तैर्दशत्यलम् ।
 इत्थं प्रजायते पीडा विमोचिन्या दिवाकर ॥ २६ ॥
 तस्याः पूजां प्रवक्ष्यामि बालानां शान्तिकारिणीम् ।
 करवीरस्य पुष्पाणि चन्दनं रक्तपूर्वकम् ॥ २७ ॥
 धूपस्तु शिवनिर्माल्यं साज्यं बिल्वदलं स्मृतम् ।
 दीपास्तु पञ्च विज्ञेयास्तथा पञ्चैव पोलिकाः ॥ २८ ॥
 मुष्टिकाः पञ्च विज्ञेया ध्वजाः पञ्च सुपीतकाः ।
 ताम्बूलवीटिकाः पञ्च पूगी(ग) फलसमन्विताः ॥ २९ ॥
 रक्ततण्डुलभक्तस्तु प्रोक्तः साज्यगुडस्तथा ।
 शरावे नूवने प्राज्ञ निधेयं सर्वमेव तत् ॥ ३० ॥
 ततस्तु पुत्तलीं कुर्यान्नद्या उभयतो मृदः ।
 निदध्यात्तत्र तां धीमान्पीतवस्त्रसमावृताम् ॥ ३१ ॥
 पीतसूत्रोपवीतां तां पूजयेद्भक्तिमान्नरः ।

पूर्वोक्तैरेव संभारैर्गन्धधूपादिभिर्बुधः ॥ ३२ ॥
वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण प्रार्थयेत्तां समाहितः ।

तत्र मन्त्रः—

ॐ नमो भक्तवत्सले विमोचिनि स्वाहा ।

एवं मन्त्रं समुच्चार्य सर्वां पूजां प्रकल्पयेत् ॥ ३३ ॥

केषांचिन्मत एकस्मिञ्छरावे तां पुत्तलीं निधायान्यस्मिञ्छरावे गन्धादिता-
म्बूलान्तः संभारो निधीयते । तत्र ब्रह्मयामल उक्तम् । एक एव यदा
भवति तदा पुत्तलीं शराव आदौ निधाय तस्याः पुरतस्तत्सर्वं निक्षिप्य
तत्रैवोपचारान्विधाय पञ्च पल्लवानेकीकृत्य बालकाङ्गेभ्यः सर्वं निःसार्य सोद-
कांस्ततस्तु पुनर्नीराजनं विधाय तत्सर्वं नेता नयतु सकम्बलः सशस्त्रो
मन्त्रमुच्चारयन् । ते च पल्लवाः—

जम्बवाम्रोदुम्बराश्वत्थवटानां पल्लवास्तथा ।

सर्वाङ्गेभ्यः समुत्तार्य पीडा बालस्य संव्रजेत् ॥ ३४ ॥

इत्थं रात्रित्रये कुर्याद्विधानं सुसमाहितः ।

ग्रामादुत्तरतो नीत्वा पूर्वरात्रे विचक्षणः ॥ ३५ ॥

तस्मिन्स्थाने जपेन्मन्त्रं बालानां शान्तिहेतवे ।

एवं प्रशान्तिमायाति शिशुपीडा न संशयः ॥ ३६ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां मार्कण्डेयपुराणे
लुब्धजातकोक्तं प्रथमदिवसमासाब्दजनितविमोचिनी-
पीडाशमनविधानम् ।

अथ मोहिनीपीडाशमनविधानम् ।

स्कन्द उवाच—

द्वितीये दिवसे मासे वर्षे चैव प्रभाकर ।

मोहिनी नाम देव्यत्र कुरुते पीडनं शिशोः ॥ १ ॥

ज्वरं नेत्ररुजं कासं श्वासं चैव विशेषतः ।

छर्दनं ग्रहणीं द्वेषं जनयत्यनिशं शिशोः ॥ २ ॥

तत्र शान्तिविधानं च प्रवक्ष्यामि समासतः ।

मालतीकुसुमैः पूजा चन्दनं मलयोज्ज्वलम् ॥ ३ ॥

कुङ्कुमं केशरं दिव्यं कर्पूरं सुविलेपनम् ।
 दिव्यभक्तिसमाचारा दशाङ्गं धूपनं तथा ॥ ४ ॥
 नैवेद्यं पूर्ववदेयं तथैव पल्लवक्रिया ।
 पूर्ववत्पुत्तलीं कृत्वा शरावे संनिवेशयेत् ॥
 वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण कुर्यात्सर्वमतन्द्रितः ॥ ५ ॥

तत्र मन्त्रः—

सर्वेश्वरि सर्वजनप्रियंकरि त्राहि त्राहि जगत्सर्वम् ॐ नमो भगवति स्वाहा ।
 इत्यनेन हि मन्त्रेण सर्वं कृत्वा विधानकम् ।
 रात्रित्रये विधातव्यं पश्चिमे ग्रामनो बहिः ॥
 प्रथमे यामिनीयामे कृतं भवति सौख्यदम् ॥ ६ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां लुब्धजातकोक्तं
 द्वितीयदिवसमासवर्षजनितमोहिनीपीडाशमनविधानम् ।

अथ सुनन्दापीडाशमनविधानम् ।

स्कन्द उवाच—

तृतीये दिवसे मासे वर्षे शृणु विधिं रवे ।
 सुनन्दा नाम देव्यत्र बालानां भयदा भवेत् ॥ १ ॥
 अवस्थां कुरुते घोरां सुनन्दा चैव भामिनी ।
 हृद्रोगच्छर्दनं श्वासो ज्वरेण सह जायते ॥ २ ॥
 आकुञ्चयति मात्राणि शिशून्रोगादहर्निशम् ।
 इत्थं संजायते पीडा सुनन्दाकोपसंभवा ॥ ३ ॥
 तस्याः शान्तिविधानं तु प्रवक्ष्यामि समासतः ।
 शतपत्राणि पुष्पाणि चन्दनस्यानुलेपनम् ॥ ४ ॥
 हरिद्राकुङ्कुमं नागकेशरं बालकान्वितम् ।
 गन्धार्थं धूपनं दद्याद्गुलं चातिशोभनम् ॥ ५ ॥
 घृताक्तं खदिराङ्गारैः संप्रताप्य विशेषतः ।
 पूर्ववत्पुत्तलीं कृत्वा शरावे संनिवेशयेत् ॥ ६ ॥
 प्रसूतित्रयशालीनामोदनः सर्पिषाऽन्वितः ।
 दीपकाः पोलिकाः पञ्च तावन्तो मुष्टिकाः स्मृताः ॥ ७ ॥

ध्वजाः पञ्चैव विज्ञेयाः सहिताः पञ्चपल्लवैः ।
वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण बलिं सर्वं समाहरेत् ॥ ८ ॥

तत्र मन्त्रः—

ॐ नमः सुनन्दायै हुं फट् स्वाहा ।
इत्यनेन प्रकारेण ग्रामात्पूर्वं विनिक्षिपेत् ।
त्रिरात्रं रजनीयामे पूर्वं बालो(धो)पशान्तये ॥ ९ ॥
एवं कृते श्चाने तु व्याधिमात्रं विनश्यति ।
वर्धते दीपवद्बालः शुक्लपक्षाब्जवत्सुखम् ॥ १० ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां तृतीयदिनमा-
साब्दजनितसुनन्दापीडाशमनविधानम् ।

— . — . — . —
अथ पूतनापीडाशमनविधानम् ।

स्कन्द उवाच—

चतुर्थे दिवसे मासे वर्षे चैव विभाकर ।
पूतना नाम देव्यत्र पीडां प्रकुरुते शिशोः ॥ १ ॥
सन्तापो जायते पूर्वमतिसारस्ततः परम् ।
मुष्टिं बध्नाति कम्पश्च वारं वारं प्रजायते ॥ २ ॥
तस्याः शान्तिं प्रवक्ष्यामि पीडाया उष्णदीधिते ।
पूर्ववत्पुत्तलीं कृत्वा शरावे संनिवेशयेत् ॥ ३ ॥
वेष्टयेद्रक्तसूत्रेण कुङ्कुमेनानुलेपयेत् ।
पूजयेद्दौचुरैः पुष्पैर्बब(द)रीपत्रसंयुतैः ॥ ४ ॥
मत्स्यमांसस्य धूपोऽत्र गव्येनाऽऽज्येन संयुतः ।
त्रयो दीपास्त्रिकोणास्तु सार्ज्यवर्त्तिसमन्विताः ॥ ५ ॥
तिस्रस्तु पोलिका ज्ञेया मुष्टयस्तु त्रयस्तथा ।
ध्वजास्त्रयः समाख्याता नात्र कार्या विचारणा ॥ ६ ॥
प्रसृतित्रयमुद्दिष्टं तण्डुलानां प्रभाकर ।
तद्भक्तं सर्पिषा युक्तं शरावे संनिवेशयेत् ॥ ७ ॥
रक्तवस्त्रेण संवेष्टय नमस्कृत्वा(त्य)तु पुत्तलीम् ।
दध्यक्षतसमारोपं विदध्यात्तु समाहितः ॥ ८ ॥
पल्लवैः पञ्चभिर्बालं सर्वाङ्गेषु प्रमार्जयेत् ।

तत्र मन्त्रः—

ॐ नमः पूतने मातर्बलिं पश्य सुशोभने ।
 बालकं मुञ्च वेगेन बलिदानेन हर्षिते ॥ ९ ॥
 इति मन्त्रं समुच्चार्य सर्वं बलिमुपाहरेत् ।
 प्रदोषे क्षणनिर्वृत्ते सप्तसप्ते विधिं शृणु ॥ १० ॥
 दक्षिणां दिशमाश्रित्य निक्षिपेद्वामतो बहिः ।
 एवं कृते बलौ सम्यग्बालकः सुखमाप्नुयात् ॥ ११ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां स्कन्दपुराणोक्तं
 चतुर्थदिवसमासवर्षजनितपूतनापीडाशमनविधानम् ।

अथाऽऽसुरीपीडाशमनविधानम् ।

स्कन्द उवाच—

पश्चमे दिवसे मासे वर्षे चैव प्रभाकर ।
 आसुरी नाम देव्यत्र बालकं बाधते भृशम् ॥ १ ॥
 तत्र चिह्नं प्रवक्ष्यामि बालाङ्गे यत्प्रजायते ।
 ज्वरस्तु प्रथमं पश्चाद्द्रोणो ग्रहणी ततः ॥ २ ॥
 मुष्टिवन्धः प्रलापः स्यादुद्वेगोऽनशनं तथा ।
 शिरोरुग्जायतेऽत्यन्तमेतल्लक्षणकं रवे ॥ ३ ॥
 पूर्ववत्पुत्तलीं कृत्वा पीतसूत्रेण वेष्टयेत् ।
 पीतवासो वसानां तां शरावे संनिवेशयेत् ॥ ४ ॥
 घृताभ्यङ्गने विधेयोऽत्र हरिद्रालेपने कृते ।
 ततः पूजां प्रकुर्वीत कुसुमैः करवीरजैः ॥ ५ ॥
 जपापुष्पैर्बन्धुजीवैस्तथा बालस्य चानघ ।
 चन्दनेनानुलिप्तां तां दिव्यगन्धोपशोभिताम् ॥ ६ ॥
 राजिकासर्षपैर्धूपो घृताक्तोऽत्र प्रशस्यते ।
 दीपकाः सप्त विज्ञेया ध्वजास्तावन्त एव च ॥ ७ ॥
 मुष्टिकाः पोलिकाः सप्त सप्त सौलि (वै मालि) कास्तथा ।
 नैवेद्यार्थं समुद्दिष्टश्चौदनः सघृतो हविः ॥ ८ ॥
 पल्लवैस्तु यथापूर्वं कारयेन्मार्जनं शिशोः ।

मन्त्रमेनं समुच्चार्य त्रिवारं प्रतिपूजने ॥ ९ ॥

तत्र मन्त्रः—

सुकले सुभगे देवि सर्वशत्रुनिवारिणि ।

कुरु शान्तिं शिशोश्चात्र बलिदानेन राक्षसि ॥ १० ॥

इत्युच्चार्य क्षिपेत्पूर्वमध्यरात्रे त्रिवासरम् ।

पश्चिमां दिशमाश्रित्य ग्रामाद्धन्वन्तरे* रवे ॥ ११ ॥

इति धीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां स्कन्दपुराणोक्तं

पञ्चमदिवसमासवर्षजनितासुरीपीडाशमनविधानम् ।

अथ रेवतीपीडाशमनविधानम् ।

स्कन्द उवाच —

अथ पठे च दिवसे मासे वर्षे दिवाकर ।

रेवती नाम देव्यत्र शिशुं गृह्णात्यसंशयम् ॥ १ ॥

आदौ तु जायते पीडा व्रणानां शिशुमूर्धनि ।

ज्वरस्तु मुखशोको(पो)ऽपि तृषा समभिजायते ॥ २ ॥

प्रकम्पन्ते च गात्राणि रुदितं च पुनः पुनः ।

तत्र शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु सूर्य समाहितः ॥ ३ ॥

पूर्ववत्पुत्तलीं कृत्वा शरावे संनिवेशयेत् ।

गङ्गतोयेन संस्नाप्य शुक्लवस्त्रेण वेष्टिताम् ॥ ४ ॥

शुक्लसूत्रेण संवीतां शुक्लमाल्यानुलेपनाम् ।

शुक्लधूपोऽत्र निर्दिष्टो बिल्वपत्रैः सहानघ ॥ ५ ॥

आज्येनाक्तस्तु विश्वात्मन्दीपाः पञ्च प्रकीर्तिताः ।

तावन्तो मुष्टिका ज्ञेयाः पोलिकाभिः समन्विताः ॥ ६ ॥

प्रसृतित्रयमात्राणां त्रीहीणामोदनः स्मृतः ।

दध्ना सह गुडेनाक्तस्ताम्बू^१ञ्च विशेषतः ॥ ७ ॥

ध्वजैश्च पञ्चभिर्युक्तं बलिमेनं (वं) प्रकल्पयेत् ।

वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण प्रक्षिपेच्च समाहितः ॥ ८ ॥

* ' धनेरुस ' इति व्युत्पादितस्य सान्तस्य धनुःशब्दम्यान्तरशब्देन समासे धनुरन्तर इति भाव्यं तथाऽपि आर्षत्वाच्छन्दोनुरोधाच्च शिरोरुवाहव इत्विदुक्कारान्तधनुशब्दमनुमाय यथास्थितप्रयोगः समर्थनीय इति विदुषः प्रार्थये ।

तत्र मन्त्रः—

राक्षसि त्वं महाभागे बालं मुञ्च शुभानने ।
 क्षेमं कुरु जगत्यस्मिच्छोभना भव रेवति ॥ ९ ॥
 इति मन्त्रेण संमन्त्र्य प्रदोषे बलिमाहरेत् ।
 संस्नाप्य बालकं पञ्चपल्लवैः सुसमाहितः ॥ १० ॥
 नगरादुत्तरे देशे रेवतीबलिमाहरेत् ।
 एवं प्रशान्तिमायाति बालपीडा प्रभाकर ॥ ११ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां स्कन्दपुराणोक्तं
 षष्ठदिवसमासवर्षजनितरेवतीपीडाशमनविधानम् ।

अथ शकुनीपीडाशमनविधानम् ।

स्कन्द उवाच—

सप्तमे दिवसे मासे वर्षे चैव दिवाकर ।
 शकुनी नाम देव्यत्र बालं गृह्णाति दारुणा ॥ १ ॥
 ज्वरस्तु प्रथमं तावच्छिरोरोगस्ततः परम् ।
 प्रलापस्त्वतिसारः स्याद्धान्तिरात्यन्तिकी भवेत् ॥ २ ॥
 अक्ष्णोर्निमीलनं चापि गात्रकम्पोऽभिजायते ।
 तत्र शान्तिं प्रवक्ष्यामि शकुनीप्रीतिवर्धिनीम् ॥ ३ ॥
 रक्तचन्दनलिप्ताङ्गीं पूर्ववत्पुत्तलीं कृताम् ।
 यथाकालोद्भवैः पुष्पैः पूजयेद्यत्नतः सुधीः ॥ ४ ॥
 धूपस्तु गुग्गुलुः श्रेयान्दीपाः पञ्च प्रकीर्तिताः ।
 पोलिका मुष्टिकाः पञ्च ध्वजाः पञ्च सुशोभनाः ॥ ५ ॥
 नैवेद्यमोदनः सर्पिःसहितः प्रसृतेर्मतम् ।
 तण्डुलानां सुरश्रेष्ठ मन्त्रपूतं प्रकल्पयेत् ॥ ६ ॥

तत्र मन्त्रः—

ॐ नमः पद्मपत्राक्षि विशालवदने शिवे ।
 संगृह्य बलिमेनं त्वं बालं मुञ्च सुशोभने ॥ ७ ॥
 इत्युच्चार्य ततो धीमान्बलिं निशि समाहरेत् ।
 दक्षिणां दिशमाश्रित्य विधाय पल्लवक्रियां ॥ ८ ॥

एवं कृते विधाने तु त्रिरात्रं सुरसत्तम ।

व्याधिमुक्तो भवेद्बालो नात्र कार्या विचारणा ॥ ९ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां स्कन्दपुराणोक्तं
सप्तमदिवसमासवर्षजनितशकुनीपीडाशमनविधानम् ।

अथ पिशाचिकापीडाशमनविधानम् ।

स्कन्द उवाच—

अथाष्टमे दिने मासे वर्षे देवी पिशाचिका ।

पीडयत्येव बालानि ज्वरच्छर्दिशिरोर्तिभिः ॥ १ ॥

नेत्रपीडाऽङ्गसंकोचो हृद्रोगश्चाभिजायते ।

शृणु तस्य प्रतीकारं येन तुष्येत्पिशाचिका ॥ २ ॥

प्रकुर्याच्च त्रिरात्रेण शान्तिं बालार्तिहारिणीम् ।

पूर्ववत्पुत्तलीं कृत्वा शरावे संनिवेशयेत् ॥ ३ ॥

पञ्चामृतैस्तु संस्नाप्य देवीं तां शिशुना सह ।

चन्दनेनानुलिप्ताङ्गीं श्वेतपुष्पैः प्रपूजयेत् ॥ ४ ॥

ध्वजाः सप्त समाख्यातास्तावत्यः पोलिकाः स्मृताः ।

मुष्टिकाश्चापि विज्ञेया हरिद्राक्ताः शुभाः स्मृताः ॥ ५ ॥

पीतवर्णेन वस्त्रेण सूत्रेणापि सुसंस्कृतम् ।

विजयाचूर्णधूपोऽत्र घृताक्तः संप्रकीर्तितः ॥ ६ ॥

दीपान्सप्त घृतेनैव पूरयित्वा नियोजयेत् ।

प्रसूतित्रयभक्तस्य घृताक्तस्य विशेषतः ॥ ७ ॥

नैवेद्यं कल्पयेद्धीमान्देव्यै तस्यै न संशयः ।

ताम्बूलं च सकर्पूरं भक्तिभावेन दीयते ॥ ८ ॥

शक्त्या च दक्षिणां तत्र देवताप्रीतये रवे ।

वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण सर्वमेव विधीयते ॥ ९ ॥

तत्र मन्त्रः—

ॐ नमः सर्वभूतेशि शोभने त्वं पिशाचिके ।

बलिं चैव पुरस्कृत्य त्वरितं मुञ्च बालकम् ॥ १० ॥

यथाविधानतः कार्या पञ्चपल्लवसत्क्रिया ।

त्रिरात्रं रजनीवक्त्रे पूर्वे ग्रामाद्बहिः क्षिपेत् ॥

एवं कृते विधाने च रोगशान्तिः प्रजायते ॥ ११ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां ब्रह्मयामलोक्तमष्टम-
दिवसमासवर्षजनितपिशाचिकापीडाशमनविधानम् ।

अथ पाशिनीपीडाशमनविधानम् ।

स्कन्द उवाच—

नवमे दिवसे मासे वर्षे चैव प्रभाकर ।

देवता पाशिनी नाम बाधते बालकं भृशम् ॥ १ ॥

तत्र चिह्नं प्रवक्ष्यामि समासेन दिवाकर ।

ज्वरश्छर्दिर्गलोत्पीडा संकोचो नेत्रयोस्तथा ॥ २ ॥

अङ्गुष्ठमध्यमायोगमग्राभ्यां कुरुते भृशम् ।

अन्नत्यागेन संतोषो मुखे गन्धोऽभिजायते ॥ ३ ॥

तत्र शान्तिं प्रवक्ष्यामि पाशिनीप्रीतये रवे ।

पूर्ववत्पुत्तलीं कृत्वा शरावे संनिवेशयेत् ॥ ४ ॥

शुक्लवस्त्रेण संवीतां शुक्लसूत्रेण वेष्टिताम् ।

पूजयेच्छुक्लपुष्पैश्च मन्दाराद्यैः सुगन्धिभिः ॥ ५ ॥

गन्धार्थं घनसारेण युक्तं चन्दनमर्पयेत् ।

दशाङ्गं धूपने धूपं ततो दीपान्प्रकल्पयेत् ॥ ६ ॥

नव वा सप्त वा दीपान्पोलिका वा नवोत्तमाः ।

उत्तमशब्देनाङ्गारपक्का अदग्धा इत्यर्थः ।

तावतो मुष्टिकान्दद्याद्ध्वजाश्चैव विशेषतः ॥ ७ ॥

नवप्रसृतिमानेन तण्डुलौदनमुत्तमम् ।

दध्ना क्षीरेण चाभ्युक्ष्य नैवेद्यं परिकल्पयेत् ॥ ८ ॥

मध्यरात्रत्रये ग्रामपश्चिमे प्रक्षिपेद्बलिम् ।

एतावता विधानेन रोगमुक्तो भवेच्छिशुः ॥

पञ्चानां पल्लवानां तु विदध्यात्पूर्ववत्क्रियाम् ॥ ९ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां ब्रह्मयामलोक्तं
नवममासवर्षजनितपाशिनीपीडाशमनविधानम् ।

अथ महामारीपीडाशमनविधानम् ।

स्कन्द उवाच—

दशमे दिवसे मासे वर्षे चैव दिवाकर ।
 शक्तिरत्र महामारी राक्षसी घोररूपिणी ॥
 मृत्युकल्पं ज्वरं शूलं विदधाति दिवानिशम् ॥ १ ॥
 विष्टम्भं कुरुतेऽत्यन्तं हिकां कासमतिक्षयम् ।
 तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि बालानां हितकाम्यया ॥ २ ॥
 पूर्ववत्पुत्तलीं कृत्वा शरावे संनिवेशयेत् ।
 स्नापयेत्सरितो वाभिश्चन्दनेनानुलेपयेत् ॥ ३ ॥
 पीतवस्त्रेण संवीतां पुष्पमालोपशोभिताम् ।
 दशाङ्गं धूपने धूपं महामार्यै प्रकल्पयेत् ॥ ४ ॥
 दीपास्तु पञ्च विज्ञेयास्तावत्यः क्षीरमुष्टिकाः ।
 पोलिकाः पञ्च वै शस्ता ध्वजाः पञ्च सुशोभनाः ॥ ५ ॥
 संस्कृतं सर्पिषा भक्तं तण्डुलानां च पौष्कलम् ।
 नैवेद्यार्थं न्यसेत्तत्र शरावे सुमनोहरम् ॥ ६ ॥
 ताम्बूलसहितं भानो दक्षिणासहितं तथा ।
 दक्षिणार्थं नवं वस्त्रं रजतं शक्तितोऽपि वा ॥ ७ ॥
 पल्लवैः पञ्चभिर्युक्तं बलिं सर्वं समर्पयेत् ।
 मध्यरात्रात्तमर्वाक्तु बलिं कुर्याद्दिनत्रयम् ॥ ८ ॥
 दक्षिणां दिशमाश्रित्य प्रक्षिपेन्नगराद्बहिः ।
 मन्त्रेणानेन मार्तण्ड वक्ष्यमाणेन ते मया ॥ ९ ॥

तत्र मन्त्रः—

ॐ नमो रक्तवर्णाक्षि रक्तः प्रणिभानने ।
 रक्तोष्ठे रक्तदशने महामारि महाभये ॥ १० ॥
 महाबले महाकाये महाभयनिवारिके ।
 अनेन बलिदानेन तुष्टा भव सुशोभने ॥ ११ ॥
 व्याधिना पीडितं बालं रक्ष(क्षे)[मं]परमेश्वरि ।

इमं मन्त्रं समुच्चार्य सर्वे बलिमुपाहरेत् ॥
 क्षेमाय बालकानां हि नात्र कार्या विचारणा ॥ १२ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां ब्रह्मयामलोक्तं
 दशमदिवसमासवर्षजनितमहामारीपीडाशमन-
 विधानम् ।

अथ कालिकापीडाशमनविधानम् ।

स्कन्द उवाच—

एकादशे दिने मासे वर्षे चापि दिवाकर ।
 कालिका नाम देव्यत्र तत्पीडा जायते शिशोः ॥ १ ॥
 ज्वरस्तु प्रथमं तावद्धृद्रोगस्तदनन्तरम् ।
 मुखशोको(फो) महाम्लानिस्ततः स्याच्चित्तविभ्रमः ॥ २ ॥
 तुदन्ति सर्वगात्राणि वेपन्ते च पुनः पुनः ।
 अवस्था मृत्युकल्पा स्यात्कालिकाकोपसंभवा ॥ ३ ॥
 तत्र शान्तिं प्रवक्ष्यामि बालानां हितकाम्यया ।
 पूर्ववत्पुत्तलीं कृत्वा शरावे संनिवेशयेत् ॥ ४ ॥
 गङ्गातोयेन संस्नाप्य चन्दनेनानुलेपयेत् ।
 करवीरस्य पुष्पैस्तु पूजयेद्द्वैर्वरीदलैः ॥ ५ ॥
 धूपयेत्पुत्रकेशैश्च सर्पनिर्मोकसर्षपैः ।
 वचालशुनैफेनैश्च घृतयुक्तैः ससर्जकैः ॥ ६ ॥
 दीपैस्तु पञ्चभिः सूर्य तैस्तु नीराजयेच्च तम् ।
 नैवेद्यं पायसं क्षीरं षष्टिकांस्तिलमोदकान् ॥ ७ ॥
 अपूपान्मुष्टिकाः पोलीः पञ्च पञ्च प्रकल्पयेत् ।
 ध्वजाश्च पञ्च विज्ञेयाः शरावे सर्वमेव तत् ॥ ८ ॥
 निवेद्य सकलं देव्यै कालिकायै निवेदयेत् ।
 मन्त्रेणानेन सप्ताश्व वक्ष्यमाणेन ते मया ॥ ९ ॥

तत्र मन्त्रः—

ॐ नमो घोररूपायै विकटे घोरदर्शने ।
 त्राहि सर्वजगद्धात्रि बालं मुञ्च बलिप्रिये ॥ १० ॥

एवंविधं विधिं कुर्यात्पूर्ववत्पल्लवाक्रियाम् ।
 एवं कृते विधाने च रोगमुक्तिर्भवेच्छिशोः ॥ ११ ॥
 बालिः प्रदोषसमये ग्रामाद्वक्षिणतो बहिः ।
 निधेयो मन्त्रमुच्चार्य नरेणैव सहेतिना ॥ १२ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां ब्रह्मयामलोक्तमे-
 कादशदिनमासवर्षजनितकालिकापीडाशमनविधानम् ।

अथ भामिनीपीडाशमनविधानम् ।

स्कन्द उवाच—

द्वादशे दिवसे मासे वर्षे चैव दिवाकर ।
 भामिनी नाम देव्यत्र पीडयत्यनिशं शिशुम् ॥ १ ॥
 आदौ ज्वरं प्रकुर्याच्च हृद्रोगं तदनन्तरम् ।
 कासं श्वासमतीसारं प्रलापं जम्भणं तथा ॥ २ ॥
 कम्पन्ते सर्वगात्राणि तथा जाड्यं च नेत्रयोः ।
 इत्थं नानाप्रकारैश्च शिशूनां जायते गदः ॥ ३ ॥
 तत्र शान्तिं प्रवक्ष्यामि बालानां हितकारिणीम् ।
 पूर्ववत्पुत्तलीं कृत्वा शरावे संनिवेशयेत् ॥ ४ ॥
 गन्धपुष्पाक्षता धूपदीपाश्च विविधा मताः ।
 नैवेद्यं विविधं चात्र भामिन्यै परिकल्पयेत् ॥ ५ ॥
 वस्त्रं छत्रं ध्वजं सूत्रमोदनं पयसाऽन्वितम् ।
 अपूपैः पायसं क्षीरं षष्टिकाभिश्च संयुतम् ॥ ६ ॥
 नैवेद्यं कल्पयेद्भक्त्या संध्याकाले निशाग्रुखे ।
 ग्रामादुत्तरतो देशे बहिरेव न संशयः ॥ ७ ॥
 इत्थं पञ्चदिनेष्वेव कर्तव्यं रोगमुक्तये ।
 मन्त्रेणाग्नेन सप्ताश्व मन्त्रयेत्सर्वतो बलिम् ॥ ८ ॥

तत्र मन्त्रः—

बलिं गृहाण बालस्य व्याधीन्संहर संहर ।
 पञ्चवक्त्रप्रसादेन प्रसन्ना भव भामिनि ॥ ९ ॥
 एवं कृते विधाने तु बालकः क्षेममाप्नुयात् ।

इत्थं ते कथितं सूर्य शान्तिकृल्लब्धजातकम् ॥ १० ॥

सूर्य उवाच—

येन पापेन बालानामज्ञानानां गदो भवेत् ।
तत्सर्वं पूर्वमेव त्वमुक्तवानसि षण्मुख ॥ ११ ॥
इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां स्कान्दं
द्वादशदिनमासाब्दजनितभामिनीपीडाशमन-
विधानम् ।

अथ वन्ध्याभिषेकविधानम् ।

नमः सकलकल्याणभाजनाय पिनाकिने ।
नमो लक्ष्मीनिवासाय देवतायै गिरां नमः ॥ १ ॥
प्रलया (हिमान्य) द्विप्रस्थद्युतिनिचयपर्याप्तवपुषे
नमो विघ्नश्रेणीविघटनैपटिष्ठाय महसे ।
जगत्प्रादुर्भावस्थितिलयनिरायासरचना-
विनोदासक्ताय प्रणतफलसिद्धिप्रतिभुवे ॥ २ ॥
यदिन्दिरानाथपुरन्दराग्रैराराधितं भक्तिभरानताङ्गैः ।
श्रीचण्डिकायाश्चरणारविन्दं वन्दामहे तत्कुलदेवतायाः ॥ ३ ॥
प्रकृष्टचलकुण्डलस्तवकघृष्टगण्डस्थलं
महार्हमणिमेखलं मरकताङ्कुरश्यामलम् ।
करोतु करुणां सदा कलितपञ्चपाब्दक्रमा-
न्महः किमपि मोहनं कपटशैशवं शैशवम् ॥ ४ ॥
कान्ते कृतागसि रूपा परुषं ब्रुवाणा
कुण्ठीकृताग्ररसनार्धनियन्त्रणेन ।
मौनेन नूनमधिगच्छति या ददातु
सा पार्वती हरविभक्ततनुः शिवं वः ॥ ५ ॥
तनुते पृथिवीमल्लः सोऽयं बालोऽप्यबालचरितश्रीः ।
जगति हिताय शिशूनां शिशुरक्षारत्नसंज्ञकं ग्रन्थम् ॥ ६ ॥

प्रयोगसारप्रमुखागमेषु प्रोक्तेषु शास्त्रेषु च सुश्रुताद्यैः ।

यदुक्तमेकत्र निबध्यतेऽस्मिन्ग्रन्थे मया तत्खलु बालतन्त्रम् ॥७॥

बालर[क्षा]र्थानि कर्माणि यन्त्राणि चाभिधीयन्ते । तदुच्यते गर्ग(र्भ)को-
शाच्च प्रसवसमये निर्गताः षोडशवर्षपर्यन्तं बालव्यपदेशेन(शं)भजन्ते । गर्भश्च
स्त्रीपुरुषजन्मान्तरदुष्कर्मवशान्तु(न्न) जायते । ये चैवंविधाः पुरुषा याश्च स्त्रियस्ते
सर्वे बन्ध्याव्यपदेशभाजो भवन्ति । अतो बन्ध्यानामपि गर्भसंजननाय बन्ध्या-
भिषेकादिविधिः प्रथममभिधीयते । भविष्योत्तरे—

कार्तिकेय उवाच—

पूर्वमेव त्वया ज्ञातं सन्ति बन्ध्या न हि स्त्रियः ।

दोषैस्तु विविधाकारैर्ग्रहधातुविकारजैः ॥

बन्ध्यात्वं जायते तासां तानाचक्ष्व प्रयत्नतः ॥ १ ॥

स्त्रियः संतानसत्फला इति न्यायेन स्त्रीणां संतानं भाव्यम् । येन येन प्रका-
रेण संतानं भवति तेन तेन प्रकारेण बन्ध्यात्वं हरति स स कर्तव्यः । तथा
हि भारतश्रवणम् । विरजयात्राविधिः । विष्णुश्राद्धम् । इत्यादिप्रकारैः स्त्रियः
संतानं पश्यन्ति । बन्ध्याभिषेकं प्रस्तुतं कथयिष्ये । भविष्योत्तरे—

ईश्वर उवाच—

ग्रहदोषान्प्रवक्ष्यामि शृणु पुत्र यथार्हतः ।

द्वात्रिंशच्च ग्रहाः प्रोक्ता नारीपीडाकराश्च ते ॥ १ ॥

ग्रहाः कौमारिकाश्चान्ये तेऽपि तावन्त एव हि ।

चतुःषष्टिः समाख्याता ग्रहाणां क्रूरकर्मणाम् ॥ २ ॥

चतुःषष्टिसहस्राणि एकैकस्य प्रविस्तरः ।

तेषां मध्ये तु मुख्या ये चतुःषष्टिस्तु नायकाः ॥ ३ ॥

दोषैर्द्वादशभिर्वत्स ग्रहा गृह्णन्तु(न्ति) योषितः ।

पात्रसंकरदोषेण निषिद्धशयनात्तथा ॥ ४ ॥

आसनाच्च निषिद्धाच्च निषिद्धान्नस्य भक्षणात् ।

निषिद्धकालाशनतो निषिद्धाचरणात्तथा ॥ ५ ॥

निषिद्धदेवनमनान्निषिद्धव्रतपूजनात् ।

जारस्य सङ्गदोषेण परवस्त्रविभूषणैः ॥ ६ ॥

लालोच्छिष्टस्य संपर्काद्दीपच्छाया निपेवणात् ।
 केशोदकेन संसिक्ताद्धीनप्रभवयोषिताम् ॥ ७ ॥
 चेटिकादिसमाश्लेषात्पारुष्यात्सर्वजन्तुषु ।
 एतैर्दोषैश्च ते सर्वे ग्रहाः पीडाकराः स्मृताः ॥ ८ ॥
 प्रथमं पुष्पबाधा स्याद्गर्भं गृह्णन्त्यतः परम् ।
 पश्चात्क्षीरं ततो बालं नात्र कार्या विचारणा ॥ ९ ॥
 ग्रहनामानि वक्ष्यामि शबरी रेवती शिवा ।
 सुबला कण्डना चैव पूतकण्डनिका तथा ॥ १० ॥
 गोमुखी च बिडाली च अजा वक्रा च रोचना ।
 कुक्कुटी पिङ्गला नाम मत्स्यनासा तथा परा ॥ १० ॥
 स्कन्दग्रहास्तथा चान्ये सर्वेषां नायकाः स्मृताः ।
 रजनी कुम्भकर्णा च तापसी परमोदनी ॥ १२ ॥
 [परा च] रोदनी चात्र धनदा नकुला तथा ।
 चतुःषष्टिः समाख्याता नामतो बालमातरः ॥ १३ ॥
 अर्जको जम्भको भीम उपस्कन्दश्च पञ्चमः ।
 बालानां पीडकाः सर्वे भ्रमन्ति बलिकाङ्क्षिणः ॥ १४ ॥
 बलिं दद्याद्विधानेन यतो मुञ्चन्ति नान्यथा ।
 चतुरस्रं शुभं क्षेत्रं कारयेत्प्रयतः पुमान् ॥ १५ ॥
 शिल्पविद्धारयेत्सूत्रं भूमिमालक्ष्य शोभनाम् ।
 हस्तैः षोडशभिः प्रोक्तं क्षेत्रं क्षेत्रविचक्षणैः ॥ १६ ॥
 तत्रान्तरे प्रकर्तव्या नव कोष्ठाः सुशोभनाः ।
 कोष्ठे कोष्ठे च सेनानीरेकैकं पद्ममालिखेत् ॥ १७ ॥
 अन्ये द्वे पङ्क्तौ वत्सं संलिखेत्क्षेत्रतो बहिः ।
 अन्ये द्वे पङ्क्तौ धीमान्क्षेत्रमध्ये च षण्मुख ॥ १८ ॥
 क्षेत्रस्य पूर्वतश्चक्रं षोडशारं समालिखेत् ।
 पश्चिमे संलिखेत्पद्ममष्टपत्रं सितं शुभम् ॥ १९ ॥
 सकेसरं सनालं च सपरागं मनोहरम् ।
 क्षेत्रस्य दक्षिणे पार्श्वे भैरवीं मूर्तिमालिखेत् ॥ २० ॥

उत्तरे संलिखेद्रीमाञ्छुभां मूर्तिं हनूमतः ।
 कोष्ठेषु नवसु श्रीमान्प्रोक्तान्यञ्जानि यानि मे(ते) ॥ २१ ॥
 तत्र तत्र लिखेद्दुर्गा नव चैताः पृथक्पृथक् ।
 तासां नामानि वक्ष्यामि दुर्गाणां शृणु नन्दन ॥ २२ ॥
 महालक्ष्मीं न्यसेत्पूर्वे चण्डिकां वह्निकोष्ठके ।
 क्रौञ्चीं तु दक्षिणे कोष्ठे नैर्ऋते भ्रामरीं लिखेत् ॥ २३ ॥
 पश्चिमे पाशिनीं चैव वायव्ये मृगवाहिनीम् ।
 कौबेरीमुत्तरे कोष्ठे जम्बुकां शिवकोष्ठके ॥ २४ ॥
 मध्ये तु संलिखेद्दार्त्रीं चतुर्वक्त्रां चतुर्भुजाम् ।
 मरालवाहनां देवीं लोकानां हितकारिणीम् ॥ २५ ॥
 पद्मान्तरे लिखेद्दुर्गां कुङ्कुमेन सुशोभनाम् ।
 द्वे पद्मे क्षेत्रमध्ये च ये प्रोक्ते ते मया पुरा ॥ २६ ॥
 नाम्नी तु संलिखेत्तत्र दंपत्योः सुसमाहितः ।
 द्वे बाह्ये पङ्कजे क्षेत्रात्तत्र गङ्गाद्वयं लिखेत् ॥ २७ ॥
 क्षेत्रस्य पूर्वचक्रस्य षोडशारस्य षण्मुख ।
 कलाः षोडश चन्द्रस्य तत्र तत्र समालिखेत् ॥ २८ ॥
 पश्चिमेऽष्टदले देवानिन्द्राद्यान्संलिखेत्क्रमात् ।
 गन्धपुष्पाक्षताधूपैर्दीपैर्नैवेद्यसंचयैः ॥ २९ ॥
 सर्वेषां मध्यदेशे तु पूजयेन्मां समाहितः ।
 पार्वतीसहितं धीमान्वन्ध्यादोषनिवर्हणम् ॥ ३० ॥
 परितः क्षेत्रतः पूज्या रेवत्यादिग्रहाः क्रमात् ।
 एवं क्षेत्राकृतिं कृत्वा सोपवासः शुचित्रतः ॥
 पूजयेन्नाममन्त्रैश्च सर्वास्तांश्च पृथक्पृथक् ॥ ३१ ॥

अत्र बन्ध्याभिषेककालं वक्ष्यामि—

पातनिर्मुक्तकाले तु स्नानं कुर्याच्छुभेऽहनि ॥

तच्चाऽऽह—

त्रिषू(ऋ)त्तरासु[च]रेवत्यां प्राजापत्ये पुनर्वसौ ।
 अश्विन्यामथ पुष्ये च मैत्रे वारे शुभे रवौ ॥

तिथौ शुभे च संशोध्य बलं चन्द्रमसस्तथा ॥ ३२ ॥

अथाभिषेकस्थानानि वक्ष्ये—

मातृस्थाने गृहे वाऽपि त्रिपथे च चतुष्पथे ।

जीर्णकूपे तडागे च नदीनां संगमेषु च ॥

एकवृक्षे श्मशाने वा देवतायतनेऽपि वा ॥ ३३ ॥

अथ स्त्रीतिथिनियमः—

अष्टम्यां राजपत्नीं तु मध्याह्ने^३ स्नापयेत्ततः ।

पुत्रकामां गवां तीर्थे विप्रपत्नीं तु संगमे^३ ॥ ३४ ॥

मातुः स्थाने तु दौर्भाग्यां श्मशाने मृतवालकाम् ।

काकवन्ध्यां जीर्णकूपे वन्ध्यां पुष्करिणीषु च ॥ ३५ ॥

अभिचारकरीं नारीं पुरुषं गतरेतसम् ।

स्नापयेच्च प्रयत्नेन शिवस्याऽऽयतने शुभे ॥ ३६ ॥

शुभं बीजवतः क्षेत्रमिति न्यायेन गतरेताः पुमानपि स्नपनीयः । तत्र स्नपनविधिः—

अत्रणा नूतनाः कुम्भा नव कार्याः सुशोभनाः ।

प्रक्षालयेत्तु तांस्तोयैर्गाङ्गैः सर्वान्समाहितः ॥ ३७ ॥

तण्डुलोपरि संस्थाप्य चन्दनेनानुलेपयेत् ।

सर्वेषु तेषु कुम्भेषु पल्लवान्परियोजयेत् ॥ ३८ ॥

ते च पल्लवाः—

चूतोदुम्बरयज्ञाङ्गन्यग्रोधाश्वत्थसंभवाः ।

पल्लवाः सर्वकार्येषु कार्यसिद्धिविधायकाः ॥ ३९ ॥

हिरण्याक्षतदूर्वाश्च ओषध्यः पञ्च वै मृदः ।

एकस्मिन्कलशे सर्वं निधेयं वारिणा सह ॥ ४० ॥

द्वितीये पञ्च गव्यानि चन्दनं च तृतीयके ।

चतुर्थे हेमरजते पञ्चमे सर्वमौषधम् ॥ ४१ ॥

षष्ठे तीर्थाम्बु संन्यस्य सप्तमे सर्वधान्यकम् ।

अष्टमे फलपुष्पाणि नवमे मां च विन्यसेत् ॥ ४२ ॥

मामिति शिवनामाक्षराणि संलिख्य भूर्जपत्रादिषु विन्यसेन्मातृकामाक्षरैः सह ।

अनेन विधिना मन्त्री त्वभिषेकं प्रकल्पयेत् ।
 एवं कृते विधाने च बन्ध्याऽपत्यमवाप्नुयात् ॥ ४३ ॥
 अवीजी बीजमाप्नोति स्त्री वाऽथ पुरुषोऽपि वा ।
 अभिचारकृतं दोषं विधिरेष प्रशाम्यति * ॥ ४४ ॥
 अनेनैव प्रयोगेण मन्त्रपूतेन सुव्रत ।
 दुर्भगा सुभगा वाऽपि कन्या प्राप्नोति संततिम् ॥ ४५ ॥
 दैवाभिश्चोपसृष्टास्तु (देवीभिश्चोपसृष्टानां) बालानां ग्रहपीडने ।
 क्रियामेतां नरः कुर्यात्साधकस्तु यशस्करीम् ॥ ४६ ॥
 सभार्यो दक्षिणां दद्यान्नगरं वाऽथ हाटकम् ।
 हस्त्यश्वरथयानं वा मुकुटं कुण्डले तथा ॥ ४७ ॥
 धेनधान्यं हिरण्यानि यैस्तु संतुष्यते+ गुरुः ।
 तेन तुष्टेन तुष्यन्ति देवता मातरो ग्रहाः ॥ ४८ ॥

अथाभिषेकाभिधमन्त्रः—ॐ रौं हौं सौं वौषट् । मुख्याभिषेकमन्त्रोऽयम् ।
 ततश्च 'समुद्रज्येष्ठा' इत्यादिसर्वमन्त्रैरभिषेकविधिः । निर्वीजस्य पत्युः । ॐ सां
 फट् रौं स्वाहा ।

सर्षपैरक्षतैर्वाऽपि देहे संताडयेत्स्त्रियम् ।
 पुरुषं वा ग्रहग्रस्तं गृहीतं वा शिशुं तथा ॥
 एवं कृते विधाने तु नारी बन्ध्या प्रसूयते ॥ ४९ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 भविष्योत्तरोक्तं बन्ध्याभिषेकविधानम् ।

अथ घटिकास्नानम् ।

ईश्वर उवाच—

शृणु षण्मुख तत्त्वेन स्नानं घटिकया परम् ।
 धारयन्ति च ये वत्स घटिकां देवनिर्मिताम् ॥ १ ॥

* 'शशाम वृष्ट्याऽपि विना दवाग्निः' इति महाकविप्रयोगानुरोधान्नाशार्थकशमधातोरकर्मकत्वेऽपि
 ण्यर्थमन्तर्भाव्य प्रशमयतीत्यर्थकत्वेन सकर्मकत्वम् । तदुक्तं भट्टदीक्षितैः कौमुद्यां क्षि क्षये अकर्मकः ।
 अन्तर्भावितण्यर्थस्तु सकर्मक इति । + 'कश्चिद्यतति सिद्धये' इतिवदार्षः पदव्यत्ययः स्वीकार्य-
 श्छन्दोनुरोधात् ।

तेषामर्थश्च कामश्च सौभाग्यं वृद्धिरेव च ।
 पूर्ववन्मण्डलं कृत्वा गौरीं तत्र प्रपूजयेत् ॥ २ ॥
 पुत्र वित्तानुसारेण विधिना परिपूजयेत् ।
 ऐशान्यां दिशि संस्थाप्य घटिकां मधुपूरिताम् ॥ ३ ॥
 पुष्पमालोपशोभाढ्यां रक्तसूत्रेण वेष्टिताम् ।
 हिरण्यं निक्षिपेत्तत्र न रिक्तां स्थापयेद्बुधः ॥ ४ ॥
 वस्त्रेण च समावृत्य गन्धं तत्रैव निक्षिपेत् ।
 कुङ्कुमागरुकर्पूरचन्दनेनानुलेपयेत् ॥ ५ ॥
 उशीरं चन्दनं मुस्तापुत्रकेश(कन्दा)शतौषधीः ।
 तथा चाऽऽमलकान्दूर्वाः क्षिपेद्दोरोचनां बुधः ॥ ६ ॥
 शतमष्टोत्तरं कृत्वा गौर्या वै मूलविग्रया ।
 अभिमन्त्र्य घटीगौरीं लिङ्गमन्त्रेण वै सुधीः ॥ ७ ॥
 शताष्टाधिकमव्यग्रो घटिकामभिमन्त्रयेत् ।
 ततोऽभिषेकं कुर्याद्वै योषितो वा नरस्य वा ॥ ८ ॥
 अभिषिक्ता भवेन्नारी नरश्च विधिवद्बुधः ।
 अपुत्रो लभते पुत्रं जीवद्बुधो भवेद्बुधवम् ॥ ९ ॥
 एतदेव विधानं तु यदि कुर्याच्च गुर्विणी ।
 पुत्रं प्रसूयते सा तु महावीर्यपराक्रमम् ॥ १० ॥
 राजा विजयमाप्नोति एतत्कृत्वा च संगरे ।
 या च रूपवती कन्या वरं न लभते यदा ॥ ११ ॥
 साऽप्यनेन विधानेन रूपवन्तं नरं लभेत् ।
 येन येन हि भावेन घटिकां कारयेन्नरः ॥ १२ ॥
 तस्य तस्य हि भावस्य फलमाप्नोत्यसंशयम् ।
 यत्ते चोक्तमथो किञ्चित्संक्षेपेण षडानन ॥ १३ ॥
 तत्सर्वं मूलमाश्रित्य त्वेनेनैव तु कारयेत् ।

मूलमाश्रित्य यच्चोक्तं तन्मूलमन्त्रेणेत्यर्थः ।

घटिकायाः परं श्रेयो नास्ति नास्ति षडानन ॥ १४ ॥
 धर्मार्थकाममोक्षेषु घटिकास्नानमुत्तमम् ।
 घटिकां धारयेद्यस्तु नरः प्राप्नोति वाञ्छितम् ॥ १५ ॥

अपुत्रो लभते पुत्रं निर्धनो लभते धनम् ।
 प्रधानपुरुषो बुद्धिं पतिं प्राप्नोत्यभर्तृका ॥ १६ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां भविष्योत्तरोक्तं
 घटिकास्नानविधानम् ।

अथ रुद्रस्नानम् ।

भविष्योत्तरे कृष्णयुधिष्ठिरसंवादे—

युधिष्ठिर उवाच—

रुद्रस्नानं विधानेन कथयस्व जनार्दन ।
 सर्वविघ्नोपशमनं सर्वशान्तिकरं परम् ॥ १ ॥

श्रीकृष्ण उवाच—

शृणु पार्थ प्रवक्ष्यामि रुद्रस्नानविधानकम् ।
 कुमारं रुद्रतनयं सर्वज्ञं परमेश्वरम् ॥
 अगस्त्यो मुनिशार्दूलः सुखासीनमुवाच ह ॥ २ ॥

अगस्त्य उवाच—

सर्वज्ञोऽसि कुमार त्वं प्रसादाच्छंकरस्य च ।
 स्नानं रुद्रविधानेन ब्रूहि कस्य कथं भवेत् ॥ ३ ॥

स्कन्द उवाच—

मृतवत्सा तु या नारी दुर्भगा ऋतुवर्जिता ।
 या सूते कन्यका बन्ध्या स्नानमासां विधीयते ॥ ४ ॥
 अष्टम्यां वा चतुर्दश्यामुपवासपरायणः ।
 ऋतुशुद्धौ चतुर्थेऽह्नि प्राप्ते सूर्यदिने तथा ॥ ५ ॥
 नद्योश्च संगमे कुर्यान्महानद्योर्विशेषतः ।
 शिवालये गवां गोष्ठे विविक्ते वा गृहाङ्गणे ॥ ६ ॥
 आहिताग्निं द्विजं शान्तं धर्मज्ञं सत्यवादिनम् ।
 स्नानार्थं प्रार्थयेदेनं निपुणं रुद्रकर्मणि ॥ ७ ॥
 ततस्तु मण्डलं कुर्याच्चतुरस्रमुदकप्लवम् ।
 बद्धचम्पकमालं च गोमयेनानुलेपयेत् ॥ ८ ॥

मण्डपभूमिं संमार्जयेदित्यर्थः ।

तन्मध्ये श्वेतरजसा संपूर्णं पद्ममालिखेत् ।
 मध्ये तस्य महादेवं स्थापयेत्कर्णिकोपरि ॥ ९ ॥
 दद्याद्वलेषु नन्यादींश्चतुर्षु विधिपूर्वकम् ।
 मन्दी भद्रो महाकालः कुबेरश्च चतुर्थकः ॥ १० ॥
 इन्द्रादिलोकपालांश्च दलेष्वन्येषु विन्यसेत् ।
 देवीं विनायकं चेति स्थापयेच्चत्र भावतः ॥ ११ ॥
 दत्त्वाऽर्घ्यं गन्धपुष्पं च धूपं दीपं गुडौदनम् ।
 भक्ष्यं नानाविधं दद्यात्फलानि विविधानि च ॥ १२ ॥
 चतुष्कोणेषु कलशाञ्चशृङ्गाररचनाधिकान् ।
 विन्यसेत्तेषु कुम्भेषु सुपुष्पाश्च शतौषधीः* ॥ १३ ॥
 मण्डपस्य चतुर्दिक्षु दद्याद्भूतबलिं ततः ।
 आग्नेय्यां दिशि कर्तव्यं मण्डपस्य समीपतः ॥ १४ ॥
 अग्निकार्यं शुभे कुण्डे पुष्पचैत्रैरलंकृते ।
 लवणं सर्पिषा युक्तं सितया मधुना सह ॥ १५ ॥
 मा नस्तोकेन मन्त्रेण जुहुयात्प्रयतः शुचिः ।
 नवग्रहमखे जात आदौ पश्चादयं विधिः ॥ १६ ॥
 द्वितीयस्याग्निकार्यस्य कर्ता च ब्राह्मणो भवेत् ।
 रुद्रजाप्यकृदाचार्यः सितचन्दनचर्चितः ॥ १७ ॥
 सितवस्त्रपरीताङ्गः सितमाल्यविभूषितः ।
 शोभितः कण्ठसूत्रेण हस्तकर्णविभूषणः ॥ १८ ॥
 मण्डपस्य समीपस्थो जपेद्गुद्रान्विमत्सरः ।
 यावदेकादशगताः (तं) पुनरेव जपेच्च तान् ॥ १९ ॥
 देवमण्डलवत्कार्यं द्वितीयं मण्डलं शुभम् ।
 तस्य मध्ये तु सा नारी श्वेतपुष्पैः समावृता ॥ २० ॥
 श्वेतवस्त्रपरीधाना श्वेतगन्धानुलेपना ।

* दिक्संस्थे संज्ञायामिति नियमाच्छतौषधीरित्यत्र कर्मधारयो दुर्लभस्तथाऽपि शतमवयवा यासां ताः शतावयवा ओषध्य इति मध्यमपदलोपिसमासो बोध्यः । तदेतच्च त्रिलोकनाथेनेत्यत्र रघु-
 वंशटीकायां मल्लिनाथेन व्याख्यातम् ।

सुखासनोपविष्टो य आचार्यो रुद्रजाप्यकृत् ॥ २१ ॥

अभिषिञ्चेत्तथा चैनामर्कपत्रपुटाम्बुना ।

चतुःषष्टिक्रुचैर्नैव रुद्रेणैकादशेन * तु ॥ २२ ॥

शतानि सप्त वर्णानां चतुर्भिरधिकानि तु ।

वर्णानामिति ऋचां चतुःषष्टिक्रुचामेकादशकृत्वः पठितानां च रुद्राणा-
[मित्यर्थः] ।

अच्छिद्रेणेति मन्त्रेण स्नानार्थं विनिवेशयेत् ॥ २३ ॥

अश्वस्थानाद्भजस्थानाद्ब्रह्मीकात्संगमाद्भद्रात् ।

वैश्याङ्गणाद्राजगृहाद्गोष्ठादानीय वै मृदः ॥ २४ ॥

सर्वौषधीरुपानीय नदीतीर्थोदकानि च ।

एतत्संक्षिप्य कलशे शिवसंज्ञे सुपूजिते ॥ २५ ॥

आपादतलकेशान्तं कुक्षिदेशे विशेषतः ।

सर्वाङ्ग (गे) स्नापयेद्भक्त्या सुशीलां कांचिदङ्गनाम् ॥ २६ ॥

रुद्राभिजापकृद्विद्वान्स्नापयेत्कलशोदकैः ।

स(पू)र्वतो दिङ्मुखाग्रस्थैः पश्चाच्च कलशोदकैः ॥ २७ ॥

एवं कृत्वा स्नातकाय दद्याद्गां काञ्चनं तथा ।

होतुरेवात्र निर्दिष्टा दक्षिणा गौः पयस्विनी ॥ २८ ॥

ब्राह्मणानां तथाऽन्येषां स्वशक्त्या मुनिपुंगव ।

गोवस्त्रकाञ्चनादीनि दत्त्वा सर्वानक्षमापयेत् ॥ २९ ॥

कृतेनानेन विप्रेन्द्र रुद्रस्नानेन भामिनी ।

सुभगा कान्तिसंयुक्ता बहुपुत्रा च जायते ॥ ३० ॥

सर्वेष्वपि च मासेषु ब्राह्मणानुमते शुभम् ।

तस्मादवश्यं कर्तव्यं स्त्रिया पुत्रार्थमेव च ॥ ३१ ॥

या स्नानमाचरति रौद्रमतिप्रसिद्धं श्रद्धान्विता द्विजवरानुमते च नारी ।

दोषान्निहत्य सकलांश्च शरीरभाजो भर्तुः प्रिया भवति भारत जीवपुत्रा+ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां भविष्योक्त-

रोक्तं रुद्रस्नानविधानम् ।

* एकादश परिमाणमस्येति इत्युच्यते यथाकथंचिन्निर्वहणीयम् । तदप्यार्षत्वादेवेति बोध्यम् ।

+ जीवतीति जीवः । इगुगधेति कः । ततो बहुवीहिः । जीवत्पुत्रेत्यर्थः ।

अथातो देशनगरग्रामोद्भूतमहाव्याधिपीडाशमनविधानम् ।

यथा सर्वोपद्रवोऽभिजायते राजाऽवज्ञया ब्राह्मणान्द्वेष्टि देवान्न पूजयति गुरुन्म मन्यते प्रजाः पीडयति चेत्तदा सर्वदेशेषु सर्वनगरेषु सर्वग्रामेषु सर्वोपद्रवा जायन्ते । आशु मृत्युकराः कालस्फोटादयो महाव्याधयो भवन्ति । तेषां शान्ति-विधानं ब्रवीमि । तच्चाऽऽह कर्मविपाकसंग्रहे-शिवालयेषु विष्णुगृहेषु शक्तिभैरव-गणाधीश्वरमुख्येषु सर्वेषु देवतायतनेषु सहस्रकलशाभिषेकं कुर्यात् । प्रत्येकं यद्देव-तायतनं तल्लिङ्गैर्मन्त्रैस्तिलाज्यद्रव्येणायुतहोमं कुर्यात् । प्रत्येकं यथाविधि जाप्यपूर्वकं गोभूहिरण्यकम्बलकमण्डलुच्छत्रचामरोपानदानानि कुर्यात् । अन्नदानं ब्राह्मणपूर्वकेषु सर्वप्राणिषु कुर्यात् । एतत्सर्वं राजविषयम् । तथा हि सामान्यग्रा-मेषु शक्त्या जपहोमब्राह्मणतर्पणं कुर्यान्महाव्याधिशान्तये ।

तदुक्तं ब्रह्माण्डपुराणे—

ग्रामे चेदद्भुतं यस्मिञ्ज्वरिताः स्युर्यदा नराः ।

प्राणकृच्छ्राणि जायन्ते राजा कुर्यात्तु शान्तिकम् ॥ १ ॥

एवं कृते विधाने तु ग्रामशान्तिर्भवेदिह ।

नश्यन्ति व्याधयः सर्वे सुरायतनपूजनात् ॥ २ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां ब्रह्माण्डपुराणोक्तं
देशनगरग्रामोद्भूतमहाव्याधिपीडाशमनविधानम् ।

अथ जनमारशान्तिः ।

जनमारसमुत्पत्तिं प्रवक्ष्यामि च शान्तिकम् ।

यदा लोभसमाविष्टः पीडनैर्वन्धनैः प्रजाः ॥

क्लेशयत्यनिशं राजा न च धर्मं समाचरेत् ॥ १ ॥

तथा च काशीखण्डे—

साग्रं शतं योजनानां देशः सर्वोऽभिभूयते ।

घोरै राजकृतैर्दोषैः परेषामपि सुव्रत ॥ २ ॥

यदि प्रजा न वश्याः स्युस्तस्य पापपरायणाः ।

क्रोधलोभसमाविष्टाः साध्वाचारविवर्जिताः ॥ ३ ॥

पूज्यन्ते न च वेदज्ञा देवविप्रास्तथा पितृन् (ता) ।

ताः स्वधर्माभिभूताः स्युस्ततो रुद्रः प्रकुप्यति ॥ ४ ॥

अन्तकोऽप्येष भगवान्भूतानां प्रिय एव च ।
कुरुते स विकाराश्च ह्युत्पाताश्च पृथग्विधान् ॥ ५ ॥
ताराग्रहोल्का रु(रौ) द्राश्च राहुकेतूपदर्शनम् ।
उदयास्तमये चन्द्रसूर्यबिम्बविपर्ययः ॥ ६ ॥

विपर्ययशब्देन शीतोष्णविपर्ययः ।

विकारो मृगसिंहानां विद्युत्पातोल्बगानि च ।
भूमिकम्पोऽथ निर्घाताः शीतोष्णानिलविक्रिया ॥ ७ ॥
अतिवृष्टिरनावृष्टिस्तथैवर्तुविपर्ययः ।
गृष्टयो दुग्धहीनाश्च रोगयुक्ता भवन्ति च ॥
एतद्राजकृतं पापं विज्ञेयं नात्र संशयः ॥ ८ ॥

ब्रह्मवैवर्ते—

राजा यः कुरुते पापं ब्रह्महत्यादि दारुणम् ।
वंशजान्हन्ति सहसा स्त्री धं कुरुते भृशम् ॥ ९ ॥
तेन राज्ञा च सा पृथ्वी सनरा क्षयमात्रजेत् ।
कालस्फोटादयो दोषा वैद्याविज्ञातलक्षणाः ॥ १० ॥
प्रभवन्त्यौषधं नैव तन्त्रमन्त्राणि चैव हि ।
आशुमृत्युकराश्चैव शोफा हृद्रोगकारिणः ॥ ११ ॥
रुद्रप्रकोपजास्तस्माज्जनमारोऽभिजायते ।
तस्मात्प्रसादयेद्देवं पार्वतीवल्लभं शिवम् ॥ १२ ॥
गाणपत्येन विधिना ह्यथर्वशिरसा तथा ।
आ (अ)मलेन विधानेन कुर्याद्देवप्रसादनम् ॥ १३ ॥
रुद्रसूक्तं तथा गाथा विष्णुसूक्तं तथैव च ।
वलयुपहारान्विविधाश्चत्वरेषु निवेदयेत् ॥ १४ ॥
* आवाहयित्वा सगणं रुद्रं शैलसुतान्वितम् ।
शिवद्वारे विधिस्त्वेष कार्यो नान्यत्र वै शुभः ॥ १५ ॥
× त्र्यम्बकेण च मन्त्रेण होमं तत्र प्रकल्पयेत् ।
समिधो ब्रह्मवृक्षस्य जुहुयाच्च सहस्रकम् ॥ १६ ॥
साज्यं च पायसं चैव सहस्रं जुहुयात्सुधीः ।

* अत्र त्यज्यमव आर्षः । × त्र्यम्बकरुन्दोऽस्मिन्नस्तीति अर्शोपायश्चा यथाकथंचित्स्थितस्य गतिश्चिन्तनीया ।

सहस्रं विल्वपत्रैश्च त्वविच्छिन्नैर्द्विजोत्तमः ॥ १७ ॥
 जुहुयात्क्षीरषष्ठीभिस्तथा च तिलसर्पिषा ।
 सर्वैः स्विष्टकृतं चैव जपेच्छान्तिं द्विजोत्तमः ॥ १८ ॥
 ततोऽभिषेचनं नृणां सर्वेषामपि कारयेत् ।
 आचार्यब्रह्मऋत्विग्भ्यो ह्येवदानं प्रदापयेत् ॥ १९ ॥
 गामाचार्याय साध्वीं च सवत्सां च पयस्विनीम् ।
 सदक्षिणां सवस्त्रां च सालंकारां सभाजनाम् ॥ २० ॥
 नाम गोत्रं समुच्चार्य प्राङ्मुखाय निवेदयेत् ।
 वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण दाता चैवोत्तरामुखः ॥ २१ ॥

तत्र मन्त्रः—

धेनुस्त्वं पृथिवीरूपा सर्वपापक्षयंकरी(यं कुरु)* ।
 जनस्यास्य च सर्वस्य मृत्युं नाशय शोभने ॥ २२ ॥

इति धेनुदानमन्त्रः ।

सप्त धान्यानि विप्रेभ्यो दद्याद्राजा समाहितः ।
 भूमिदानानि भूरीणि विविधांश्च तुरङ्गमान् ॥ २३ ॥
 दद्याच्छकटदानं च धुर्याभ्यां सनियन्त्रितम् ।
 ततश्च रुद्रसदने गर्भागारं सुसंस्कृतम् ॥ २४ ॥
 दशाङ्गेन च धूमेन धूपयेत्प्रयतः पुमान् ।
 शतपत्रादिपुष्पाणि पूजार्थं प्रतिपादयेत् ॥ २५ ॥
 विलिप्य चन्दनं श्वेतं सकर्पूरं सुसंस्कृतम् ।
 दीपैर्नौराजयेद्देवं नैवेद्यैस्तोपयेच्छिवम् ॥ २६ ॥
 ताम्बूलं दापयेद्विद्वान्द्रविणं कनकादि च ।
 एवं संपूज्य देवेशं प्रार्थयेत्सजतो नृपः ॥ २७ ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

देवदेव महादेव महापापविनाशन ।
 जनमारकृतां पीडां सद्यो नाशय शंकर ॥ २८ ॥
 इति संप्रार्थ्य देवेशं कुर्याच्चैव प्रदक्षिणाः ।
 जपञ्छैवीः स्तुतीर्धोमाञ्छूद्धया परया युतः ॥ २९ ॥
 प्रसादिते ततो रुद्रे जनमारो निवर्तते ।

ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्सहस्रशतसंख्यया ॥ ३० ॥
 रुद्रार्चनं गवां दानं गायत्रीजप उत्तमः ।
 निवारयति विघ्नानां राशिं नात्र विचारणा ॥ ३१ ॥
 शिवपूजां शिवध्यानं शिवाराधनसत्क्रियाम् ।
 ये कुर्वन्ति सदा भक्त्या ते विघ्नान् भजन्ति वै ॥ ३२ ॥
 यो राजा मङ्गलाविष्टो धर्मकीर्तिपरायणः ।
 न भवेत्तस्य राष्ट्रे तु जनमारः कदाचन ॥ ३३ ॥
 उपवासेन भूपालो विधानमिदमाचरेत् ।
 सभार्यसचिवः श्रीमान्सपुत्रः सपुरोहितः ॥ ३४ ॥
 धर्ममङ्गलगीतैश्च नृत्यैश्च विविधैरपि ।
 शृणुयाद्द्वैष्णवाख्यानं हृष्टपुष्टजनावृतः ॥ ३५ ॥

तथा च गर्गवचनम्—

उपोषितो नृपः स्नातः शुक्लवस्त्रसमावृतः ।
 आत्मरक्षाविधानज्ञः शान्तिमेनां समारभेत् ॥ ३६ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां गर्गप्रोक्तं
 जनमारशान्तिविधानम् ।

अथ हनुमत्पताकाविधानम् ।

तथा च गरुडपुराणे रामगरुडसंवादे—

यदा रामस्त्रिकूटाद्रौ नागपाशैस्तु पीडितः ।
 नारदस्य वचः श्रुत्वा सस्मार विनतोऽसुतम् ॥ १ ॥
 तदाऽसौ काश्यपो वीरः समागत्य रणाङ्गणम् ।
 प्रणाममकरोत्तस्मै रामायौभिततेजसे ॥ २ ॥
 निवार्य पन्नगास्त्रं तन्मेघनादसमीरितम् ।
 तुष्टाव रघुवीरं तं ससैन्यं च सलक्ष्मणम् ॥ ३ ॥
 उवाच प्रणिपत्याथ रामभद्रं स्वगेश्वरः ।

गरुड उवाच—

आश्चर्यमिदमत्यन्तं यद्भवानस्मरद्दि माम् ॥ ४ ॥

सति वीरे महारुद्रे सगणेऽत्र हनूमति ।
 सुग्रीवे च नले नीले सुषेणे जाम्बवत्यपि ॥ ५ ॥
 अङ्गदे दधिवक्त्रे च तारे च तरले तथा ।
 मैन्दे सति महावीरे किमत्रास्ति प्रयोजनम् ॥ ६ ॥

राम उवाच—

भवद्भीतिमुपागम्य विद्रुताश्च भुजंगमाः ।
 एतेषु सत्सु वीरेषु किमु(कपि)सैन्यमपीडयन् ॥ ७ ॥

गरुड उवाच—

रामदेव महाबाहो कपीनां चरितं शृणु ।
 आत्मनोऽपि समाविष्टो मा कुरुष्वत्र गर्हणाम् ॥ ८ ॥
 साक्षात्त्वं भगवान्विष्णुर्लक्ष्मीस्तु जनकात्मजा ।
 सौमित्रिः फणिराजोऽयं रुद्राश्च कपयः स्मृताः ॥ ९ ॥
 सुग्रीवो वीरभद्रोऽयं शंभुरेव मतो नलः ।
 विद्धि दाशरथे नूनं गिरिशो नील एव च ॥ १० ॥
 महायशाः सुषेणोऽयं जाम्बवांश्चाप्यजैकपात् ।
 अहिर्बुध्न्योऽङ्गदो वीरो दधिवक्त्रः पिनाकधृक् ॥ ११ ॥
 अपराजित्वयं तारः स्थाणुश्च तरलो मतः ।
 मैन्दो गर्भतनुः साक्षाद्धनुमान्भगवान्स्मृतः ॥ १२ ॥
 अवतेरुर्महारुद्रास्त्वदर्थे रघुनन्दन ।
 अवसन्सर्वदेशेषु नानापर्वतमूर्धसु ॥ १३ ॥
 धृत्वा च कपिरूपाणि* अवतेरुर्महीतले ।
 सर्वेऽपि कपितां प्राप्ताः कारणं तद्वीमि ते ॥ १४ ॥
 पुरा देवासुरैः सिन्धोर्मथिताद्व्याधयोऽभवन् ।
 नानापीडाकराः सर्वे लूताविस्फोटकादयः ॥ १५ ॥
 तैरेव व्याधिभिः सर्वे पीडितं जगतीतलम् ।
 ऋषयोऽपि नृपालाश्च ब्रह्माणं शरणं ययुः ॥ १६ ॥
 ऊचुश्च जगतां नाथं ब्रह्माणं कमलोद्भवम् ।
 × त्राहि त्राहि जगन्नाथ व्याधिभ्यो जगतीतलम् ॥ १७ ॥

* इकोऽसवर्ग इति प्रकृतिभावादसंधिः । × आर्षटनाद्व्यत्ययेन परस्मैपदम् ।

पीडितं दारुणैर्दोषैर्ज्वराद्यैश्च महोल्बणैः ।
 त्रिदोषैर्जर्जरीभूतं विभ्रमैर्व्याकुलीकृतम् ॥ १८ ॥
 औषधानि न सिध्यन्ति मन्त्रयन्त्राणि चैव हि ।
 पीडयन्ति महारोगा मानवान्नाशकारिणः ॥ १९ ॥
 एतत्ते कथितं सर्वं रक्ष तच्चतुरानन ।
 आश्वास्य सकललोकान्निर्ययौ कमलोद्भवः ।
 रुद्रस्थानं महादिव्यं भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणाम् ॥ २० ॥
 रुद्रानानम्य देवेशः प्रोवाच चतुराननः ।
 व्याधीनां चेष्टितं सर्वं रुद्राणां पुरतः सुधीः ॥ २१ ॥
 तच्छ्रुत्वा ब्रह्मणो वाक्यं रुद्रा एकादशामलाः ।
 समाश्वास्य विरिञ्चि ते वीरभद्रादयः सुराः ॥ २२ ॥
 संभूय वानरे वंशे सुग्रीवप्रमुखा इमे ।
 पर्यटन्पर्वताग्राणि मण्डलानि च सर्वशः ॥ २३ ॥
 नादयन्तो जगत्सर्वं भुभुकारैः सुदारुणैः ।
 क्ष्वेडितैः क्रीडितैस्तेषां व्याधयो नाशमाययुः ॥ २४ ॥
 ततस्तु सकलं दृष्ट्वा तिरश्चां चेष्टितं महत् ।
 तुतोप भगवान्ब्रह्मा ददौ तेभ्यो वरान्वहून् ॥ २५ ॥

ब्रह्मोवाच—

युष्मासु कपिमुद्राऽस्तु मृतसंजीविनी कला ।
 आज्ञाऽस्तु सर्वजगति वेगोऽस्तु मनसः समः ॥ २६ ॥
 युष्मान्स्मरन्ति ये मर्त्याः पूजयन्ति भवत्तनूः ।
 पताका त्रिविधाः कृत्वा चित्रतोरणसंयुताः ॥ २७ ॥
 भक्ष्यभोज्यानि खाद्यानि लेह्यं पेयं च सर्वशः ।
 युष्मानुद्दिश्य ये मर्त्या यज्जुह्वति हुताशने ॥ २८ ॥
 हविः पुण्यतमं रुद्रास्तेषां सिद्धा न संशयः ।
 प्रायसेनैव साज्येन तथैव तिलसर्पिषा ॥ २९ ॥
 यजन्ति भवतां वृन्दं ते यान्ति परमं पदम् ।
 पठन्ति रुद्रमखिलं गाथा वैश्वानरीस्तथा ॥ ३० ॥
 मानस्तोकेन (त) इति वा मनो ज्योतिरथापि वा ।

भवतां यजनं त्वत्र गायत्र्या वा प्रकीर्तितम् ॥ ३१ ॥
 एवं ये मानवा लोके विधानं परिकुर्वते ।
 व्याधिमुक्ताः सुखासीनास्ते न यान्ति यमक्षयम् ॥ ३२ ॥

गरुड उवाच—

इति राम पुरावृत्तं कपीनां कथितं मया ।
 एतेषु सर्वरुद्रेषु हनुमान्कपिनायकः ॥ ३३ ॥
 विधानं तत्र कर्तव्यं यत्रास्ति हनुमत्तनुः ।
 गोपुरे हनुमन्मूर्तिः शिलायां च प्रतिष्ठिता ॥ ३४ ॥
 तत्र सर्वं प्रकर्तव्यं विधानं सुरसत्तम ।

राम उवाच—

केन केन प्रकारेण क्रियते कपिपूजनम् ॥ ३५ ॥
 पताकाः कीदृशस्तत्र कति कार्या विहंगमा ।
 हवनं कतिसंख्याकं किं द्रव्यं को जपो भवेत् ॥ ३६ ॥
 किं दानं केन विधिना तन्ममाऽऽचक्ष्व सुव्रत ।

गरुड उवाच—

जनमारे समुत्पन्ने ग्रामे वा पत्तनेऽपि वा ॥ ३७ ॥
 प्रभवत्यौषधं नैव मणिमन्त्रपुरस्किया ।
 विधानं तत्र कर्तव्यमेकादश्यां तिथौ रवौ ॥ ३८ ॥
 प्रातःकाले समुत्थाय कृतशौचो द्विजोत्तमः ।
 स्नात्वा गङ्गाजले पुण्ये तिलामलकसंस्कृतः ॥ ३९ ॥
 एकादश द्विजाञ्छेष्टान्सोपवासान्निमन्त्रयेत् ।
 जागरस्तैस्तु कर्तव्यः सर्वोपस्करसंयुतः ॥ ४० ॥
 आदौ तु मण्डपं कृत्वा सर्वत्रापि सुशोभनम् ।
 पुष्पमण्डपिकां मध्ये मण्डपस्य प्रकल्पयेत् ॥ ४१ ॥
 पञ्चामृतैस्तु स्नपनं रुद्रेभ्यः परिकल्पयेत् ।
 ततस्तु कुसुमैः पूजां शतपत्रादिभिः शुभैः ॥ ४२ ॥
 चन्दनं च सकर्पूरं देयं रुद्रानुलेपने ।
 दशाङ्गं धूपमादद्याद्दीपैर्नीराजयेत्ततः ॥ ४३ ॥
 नैवेद्यं विधिवद्दद्यात्ताम्बूलेनैव संयुतम् ।
 एकादश पताकास्तु पटेषु परिकल्पयेत् ॥ ४४ ॥
 या या यस्मै समुद्दिष्टा पताका च सुशोभना ।

तस्य तस्यैव रूपं तु तस्यामेव प्रकल्पयेत् ॥ ४५ ॥
 एवं कृते विधाने च सपताके सतोरणे ।
 प्रातःकाले तु काकुत्स्थ जागरान्ते द्विजोत्तमाः ॥ ४६ ॥
 कुतस्नाना नदीतोये होमं कुर्युः समाहिताः ।
 पायसेन तु साज्येन तथैव तिलसर्पिषा ॥ ४७ ॥
 अयुतं हवनं कृत्वा पुनः पूजां प्रकल्पयेत् ।
 पताकां हनुमद्द्वारे तस्यैव च निधापयेत् ॥ ४८ ॥
 राजद्वारे च सौग्रीवीं सौषेणीमापणे न्यसेत् ।
 नलनीलपताके तु शिवद्वारे तु विन्यसेत् ॥ ४९ ॥
 यज्ञगेहेऽङ्गदस्यैव तारस्य तरलस्य च ।
 जाम्बवन्मैन्दयोग्रामादक्षिणोत्तरयोर्बहिः ॥ ५० ॥
 दधिवक्त्रपताकां च भैरवस्याऽऽलये न्यसेत् ।
 द्वारदेशे जनानां च रुद्रमूर्तीर्विलेखयेत् ॥ ५१ ॥
 चित्रिताः पञ्चवर्णैश्च ग्रामं सूत्रैश्च वेष्टयेत् ।
 मत्स्यं कारयेद्विद्वान्भक्त्या ब्राह्मणतर्पणम् ॥ ५२ ॥
 दद्याद्वस्त्राणि ऋत्विग्भ्यः सालंकाराणि भूपतिः ।
 छत्राणि करपत्रीश्च पादुकाश्च विशेषतः ॥ ५३ ॥
 धेनुं पयस्विनीं दद्यादाचार्याय सवत्सकाम् ।
 सदक्षिणां सवस्त्रां च सालंकारां गुणान्विताम् ॥ ५४ ॥
 ब्रह्मणे महिषीं दद्यात्तथैव पृथिवीपतिः ।
 अन्येभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च सप्त धान्यानि भूरिशः ॥ ५५ ॥
 लवणं सघृतं देयं तैलं च सगुडं तथा ।
 शय्यादानानि भूरीणि क्षेत्राणि विविधानि च ॥ ५६ ॥
 एतत्कृत्वा विधानं तु राजा क्षेममवाप्नुयात् ।
 रुद्र एवात्र निर्दिष्टो जपः सर्वसुलक्षणः ॥
 अथवा हवनं शस्तं मानस्तोक इति स्फुटम् ॥ ५७ ॥

एतद्धि गुर्जरदेशे प्रसिद्धम् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 हनुमत्पताकाविधानम् ।

अथ गर्गप्रोक्तगोशान्तिविधानम् ।

व्याधयस्तु दश प्रोक्ता गवां वक्ष्यामि तानिह ।

उद्विग्नो हृदयग्राही पतनो मोहनस्तथा ॥ १ ॥

गोलिङ्गः पूतना चैव दारुणः खुरकस्तथा ।

कैलिलो लम्बकर्णश्च कर्णाक्षेपस्तथा परः ॥ २ ॥

एकादशैते* गृष्टीनां व्याधयः परिकीर्तिताः ।

तेषां रूपं समुत्थानं यादृशं तद्वदाम्यहम् ।

शान्तिकर्म च निर्दिष्टं यादृशं तत्र निर्मितम् ॥ ३ ॥

रात्रौ गोष्ठेषु या गावो विव्रसन्ति यद(त)स्ततः ।

उद्विग्नो नाम स व्याधिस्तत्र चैवं प्रजायते ॥ ४ ॥

प्रजायत इति प्रकर्षं दर्शयति भ्रान्तेः ।

अश्रुप्रमोचनं यत्र कुर्वन्ति च चलन्ति च ।

हृद्रोगं तं विजानीयाद्गोषु रोगं विचक्षणः ॥ ५ ॥

शोणितं यत्र कुर्वन्ति पुरीषे मूत्रयन्ति च ।

प्रवेपमानाः स्खलिताः पतनो व्याधिरुच्यते ॥ ६ ॥

हुम्बारवांश्च कुर्वन्ति मण्डलानि तथैव च ।

उत्पतन्ति पतन्त्येव मोहनं तं विदुर्बुधाः ॥ ७ ॥

यासां मूत्रं पुरीषं च क्षौद्रवच्च प्रवर्तते ।

ग्रहं तं पूतनां विद्याद्गोषु रोगं समुत्थितम् ॥ ८ ॥

यदि जिह्वा च निर्भिन्ना गवां चैव प्रजायते ।

तृणग्राहेऽप्यशक्तत्वं विद्यात्तं + च कलिङ्गकम् ॥ ९ ॥

यासां नेत्राणि रक्तानि स्रवन्ति सलिलं बहु ।

मक्षिकाश्च विलीयन्ते तं विद्याद्दारुणं गदम् ॥ १० ॥

* उपक्रमे व्याधयस्तु दशेति प्रतिज्ञाय 'उद्विग्नो हृदयग्राही' इत्यादिना० व्याधिनामान्युक्त्वा 'एकादशैते' इत्युक्तं परिगणनयाऽपि नामान्येकादशेतिपातति तथऽपि कलिलव्यतिरिक्तानां दशानां स्वस्वरूपलक्षणप्रतिपादनादुपक्रमोपसंहारबलेन 'इत्येते दश गृष्टी-नाम्' इत्यपेक्षितमित्यनुमीयते । प्रत्यन्तरदर्शनमन्तरा न निश्चेतुं पारयामः । + उद्विग्न इत्यादिगोरोगप्रतिपादकवाक्ये गोलिङ्ग इति श्रवणात् 'विद्याद्गोलिङ्गकं च तम्' इत्यपेक्षितमिति भाति ।

स्योना पृथिविपूजार्हं पालय त्वमधोदिशम् ॥ ११२ ॥
 संपूज्य बलिपुष्पैस्तु प्रक्रमेण दिगीश्वरान् ।
 तत्र ये स्थापिताः पीठे ग्रहा देवाधिदेवताः ॥ ११३ ॥
 विचिन्त्याः संमुखाः सर्वे मूर्ताश्चैव वरप्रदाः ।
 मृदुभिः शोभनैर्वस्त्रैः परिधाप्याः पृथक्पृथक् ॥ ११४ ॥
 युगैकपाश्च वा सर्वे रुद्रकुम्भयुगैकपाः ।
 श्रीखण्डं भार्गवे चन्द्रे भौमार्के रक्तचन्दनम् ॥ ११५ ॥
 चमसं च बुधे जीवे शेषाणां कुङ्कुमं स्मृतम् ।
 हयारिकुसुमैः सूर्यं कुमुदैः सोममर्चयेत् ॥ ११६ ॥
 क्षितिजं तु जपापुष्पैश्चम्पकैः सोमनन्दनम् ।
 शतपत्रैर्गुरुः पूज्यो जातीपुष्पैस्तु भार्गवः ॥ ११७ ॥
 मल्लिकाकुसुमैः पङ्गुं कुन्दपुष्पैर्विधुंतुदम् ।
 केतुं नानाविधैः पुष्पैर्ऋतुकालोद्भवैः शुभैः ॥ ११८ ॥
 प्रतिष्ठासंभवैर्मन्त्रैः पश्चाद्भूपं प्रदापयेत् ।
 कुन्दुराज्यं रवेर्धूपं तण्डुलाज्यं निशाकरे ॥ ११९ ॥
 सल्लकीधूपमुर्वीजे बुधेऽगरुरुदाहतः ।
 स एव त्रिदशाचार्ये साज्यं बिल्वाङ्कुरं कर्वा ॥ १२० ॥
 गुग्गुलं सूर्यपुत्रे तु राहौ लाक्षा बृदाहता ।
 नखं केतौ समादिष्टं वसवस्त्वेति धूपयेत् ॥ १२१ ॥
 गुडान्नं क्षीरिकासारं दुग्धान्नं दधिभक्तकम् ।
 घृतान्नं कृशरान्माषान्विचित्रान्नं गुडादिभिः ॥ १२२ ॥
 द्राक्षेक्षुपूगनारङ्गजम्बीरं बीजपूरकम् ।
 खर्जूरं नारिकेलं च दाडिमं च यथाक्रमम् ॥ १२३ ॥
 अलाभे यानि भक्ष्याणि फलानि तानि दापयेत् ।
 खेचराणां च ताम्बूलमेकैकस्य प्रदापयेत् ॥ १२४ ॥
 नववर्तियुतो दीपो घृतेन परिपूरितः ।
 ग्रहाणामग्रतः कार्यस्तेजोऽस्येतेन मन्त्रितः ॥ १२५ ॥
 ग्रहदेवाधिदेवाश्च स्थापनीया दिगीश्वराः ।
 प्रतिष्ठालिङ्गमन्त्रैश्च पुनस्तेषां प्रकल्पयेत् ॥ १२६ ॥
 ततः कुण्डं समासाद्य निर्वृत्याग्निक्रियां चरुम् ।

श्रपयित्वा ततो होमः कर्तव्यः खेचरान्प्रातः ॥ १२७ ॥
 आधारावाज्यभार्गाश्च जुहुयात्पञ्चवारुणीम् ।
 हिरण्यस्तूप आ कृष्णेन त्रिष्टुप्सविता मतः ॥ १२८ ॥
 आप्यायस्वे गौतमस्तु गायत्रं सोमदैवतम् ।
 अग्निर्मूर्धा विरूपाक्षो गायत्रं चाग्निदैवतम् ॥ १२९ ॥
 उद्ध्व्यस्व बुधास्त्रिष्टुब्बविश्वेदेवाश्च देवताः ।
 बृहस्पते गृत्समदस्त्रिष्टुब्देवो बृहस्पतिः ॥ १३० ॥
 अन्नादिभिर्भरद्वाजस्त्रिष्टुप्पूपा च देवता ।
 सिन्धुद्वीपस्तु गायत्री आपः शं न इति क्रमात् ॥ १३१ ॥
 प्रक्रान्ते वामदेवस्तु गायत्रं स्याच्छतक्रतुः ।
 केतुं कृण्वन्मधुक्रपिर्गायत्री चेन्द्रदैवतम् ॥ १३२ ॥
 एकैकां च घृतस्याऽऽहुतिमेकैकां चरोस्तथा ।
 मन्त्रे मन्त्रे स्वकीये च दद्याद्देवग्रहान्प्रति ॥ १३३ ॥
 समिदाज्यचरोर्होमः कर्तव्यस्तु क्रमेण तु ।
 समिदर्कमयी सूर्ये पालाशी शशिनस्तथा ॥ १३४ ॥
 खादिरी भूमिपुत्रे च ह्यापामार्गी बुधस्य च ।
 गुरोरश्वत्थजा प्रोक्ता शुक्रस्यौदुम्बरी तथा ॥ १३५ ॥
 शमी प्रोक्ता च मन्दस्य सोमे (राहौ) दूर्वा प्रकीर्तिता ।
 केतोः कुशाः समादिष्टा यज्ञविद्याविशारदैः ॥ १३६ ॥
 अभावे तु प्रकर्तव्याः सर्वा ब्रह्मतरोः शुभाः ।
 या ओषधीरित्यनेन समिधस्त्वार्द्रिका हरेत् ॥ १३७ ॥
 अक्रोधनो गतव्याधिः शुचिः सन्ब्राह्मणोत्तमः ।
 पूर्वदिक्प्रान्ततो वाऽथ सौम्यतो वाऽथ पश्चिमात् ॥ १३८ ॥
 आहरेत्समिधः सर्वा न तु याम्यदिशः सुधीः ।
 हुत्वा पलाशवृक्षस्य समिधो द्विजसत्तमः ॥ १३९ ॥
 सर्वान्कामान्समाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ।
 खादिरी चार्थलाभाय ह्यापामार्गेण रूपवान् ॥ १४० ॥
 अश्वत्थः सर्वकामाणां ददात्यविरतं फलम् ।
 हेमक्षीरस्य समिधः सौभाग्यसुखदा नृणाम् ॥ १४१ ॥

- शमी शमयते पापं दूर्वा ह्यायुर्विवर्धिनी ।
 कुशा धर्मार्थकामानां फलदा नात्र संशयः ॥ १४२ ॥
 रक्षोघ्नास्तु कुशाः काशाः पिशाचगणवारणाः ।
 तस्मात्कुशाः पवित्रास्तु काशास्तेषामलाभतः ॥ १४३ ॥
 कृशा स्थूला च दीर्घा च न्यूना शीर्णा दलीकृता ।
 कीटविद्धा तथा शुष्का वर्जनीया प्रयत्नतः ॥ १४४ ॥
 वक्रा द्विशाखा त्वग्हीना समिन्नेष्टा श्रुतौ स्मृतौ ।
 विशीर्णाऽऽयुष्कष्यं कुर्याद्विदला व्याधिकारिणी ॥ १४५ ॥
 ह्रस्वया मृत्युमाप्नोति वक्रा विघ्नकरी स्मृता ।
 स्थूला हरति वित्तानि कृशायां पापसंचयः ॥ १४६ ॥
 द्विशाखा नेत्ररोगाय कृमिदष्टार्थनाशिनी ।
 द्वेषं वितनुते दीर्घा प्राणघ्नी त्वग्विवर्जिता ॥ १४७ ॥
 शस्ता दशाङ्गुलोपेता द्वादशाङ्गुलिका तथा ।
 रोगहन्त्री मनस्तुष्टिसंपद्भोगविवर्धिनी ॥ १४८ ॥
 प्रजालाभप्रदा पापक्षयदा रोगनाशिनी ।
 आयुर्विवर्धिनी शोकनाशिनी धनदा तथा ॥ १४९ ॥
 अर्कादिसमिधो ज्ञेया विद्वद्भिर्गतमत्सरैः ।
 अष्टोत्तरसहस्रं च शतमष्टाधिकं तथा ॥ १५० ॥
 अष्टाविंशतिमष्टौ वा यजेत्पञ्चामृतप्लुताः ।
 इन्धनैः पूरिते वह्नौ सुसमिद्धे विशेषतः ॥ १५१ ॥
 निर्धूमे लेलिहाने च होतव्याः कर्मसिद्धये ।
 अन्नवृत्रे (अप्रवृद्धे) समिद्धे च जुहुयाद्यो हुताशने ॥ १५२ ॥
 यजमानो भवेदन्धः सौमित्र इति नः श्रुतम् ।
 आ कृष्णेनेति सूर्यस्य इमं देवेति शीतगोः ॥ १५३ ॥
 अग्निर्मूर्धेति भौमस्य उद्गुध्यस्वेति बोधने ।
 * बृहस्पतेति जीवस्य शुक्रस्यान्नात्परिश्रुतेः ॥ १५४ ॥
 शं नो देवी शनेर्मन्त्रः कया नश्चित्र राहवे ।
 केतुं कृण्वन्न केतूनां होममन्त्राः प्रकीर्तिताः ॥ १५५ ॥

* बृहस्पतिशब्दोऽस्मिन्नस्तीति मत्वर्थेऽर्शआद्यचा बृहस्पतो मन्त्र इति स्थितस्य गतिश्चिन्तनी-
 येतिन्यायेन यथाकथंचिद्व्याख्येयम् ।

शेषाणां स्थापने मन्त्रैर्होमो व्याहृतिभिस्तिलैः ।
 अन्नाद्विशेषहोमः स्यादन्ते व्याहृतिरुच्यते ॥ १५६ ॥
 न मुक्तवालो जुहुयान्नानुपातितजानुकः ।
 अनुपातितजानुश्च रक्षसे जुहुयाद्धविः ॥ १५७ ॥
 हूयमाने हुताशे च यदि ज्वालासमुद्भवः ।
 सिद्धिदो यजमानस्य ज्ञेयः प्रीतो मनीषिभिः ॥ १५८ ॥
 सा ज्वाला यदि रक्ता स्यात्कृष्णा चैव विशेषतः ।
 उदिता शत्रुभयदा ऋत्विजां नात्र संशयः ॥ १५९ ॥
 वह्निः प्रदक्षिणावर्तः सशिखो धूमवर्जितः ।
 स्निग्धः सुगन्धिर्गम्भीरश्चिरायुर्होतुरादिशेत् ॥ १६० ॥
 होमान्ते सर्वकृत्यानां दद्यात्पूर्णाहुतिं शुभाम् ।
 अध्वर्युऋत्विक्सहितः पूर्णाहुतिमुपारभेत् ॥ १६१ ॥
 श्रैपर्णी खादिरी दार्वी विकङ्कतसमुद्भवा ।
 बाहुमात्रा प्रकर्तव्या सुग्वा स्याद्धस्तमात्रिका ॥ १६२ ॥
 यस्य काष्ठस्य दर्वा स्यात्तस्यैव स्यात्स्रुवः शुभः ।
 खादिरो हैमदुग्धो वा प्रोक्तो यज्ञस्य कर्मणि ॥ १६३ ॥
 चतुरस्रमुखा दर्वा योनिः स्याच्चतुरङ्गुला ।
 अर्धाङ्गुलसमुच्छ्राया पञ्चाङ्गुलमितानना ॥ १६४ ॥
 हरिणीखुरमाना स्यान्माने त्र्यङ्गुल उच्यते ।
 द्विपक्षः शुभदो ज्ञेयः स्रुवो यज्ञस्य कर्मणि ॥ १६५ ॥
 चन्दनेनानुलिप्ताङ्गौ कृत्वा दर्वास्रुवौ शुभौ ।
 वामहस्ते धृतां दर्वामाज्येनैवाभिघारयेत् ॥ १६६ ॥
 शुक्रज्योत्यनुवाकेन घृतेनाच्छिन्नधारया ।
 निविष्टः प्राङ्मुखः कर्ता शान्तात्मा च हुतानलः ॥ १६७ ॥
 होमान्ते यजमानेन कर्तव्यं ग्रहपूजनम् ।
 यो यस्य विहितो होमः सर्वं तस्य नियोजयेत् ॥ १६८ ॥
 अष्टाधिकसहस्रं च शतमष्टाधिकं तथा ।
 अष्टाविंशतिरेव स्युरष्टौ वा समिधोऽर्कजाः ॥ १६९ ॥
 अर्कतृप्त्यै च होतव्याः पृषदाज्येन संयुताः ।
 समिद्भ्यो द्विगुणं प्रोक्तं पृषदाज्यं मनीषिभिः ॥ १७० ॥

ततस्तु त्रिगुणाः प्रोक्तास्तिला यज्ञविशारदैः ।
 तिलेभ्यश्चाक्षतास्तद्वत्समुद्दिष्टाश्चतुर्गुणाः ॥ १७१ ॥
 ॐकारपूर्वमुच्चार्य मन्त्रं तल्लिङ्गकं शुभम् ।
 ध्यात्वा च भास्करं देवं काश्यपिं च कलिङ्गजम् ॥ १७२ ॥
 सप्तम्यां च समुत्पन्नं विशाखर्क्षसमुद्भवम् ।
 वर्णेन क्षत्रियं विद्याद्भगवन्तं विभावसुम् ॥ १७३ ॥
 आहुत्यन्ते समुच्चार्य चतुर्थ्या ग्रहनामकम् ।
 विशेषणं विशेष्यं च ततस्तु जुहुयात्सुधीः ॥ १७४ ॥
 अत्रिगोत्रसमुद्भूतं यमुनातीरवासिनम् ।
 अष्टम्यां कृत्तिकायां च जातं विद्याद्ब्रह्मं विधुम् ॥ १७५ ॥
 वैश्यवर्णसमुद्भूतं दशाश्वं द्विभुजं तथा ।
 देशे मालवके जातं भारद्वाजकुलोद्भवम् ॥ १७६ ॥
 उज्जयिन्यां समुद्भूतं दशमीतिथिसंभवम् ।
 पूर्वाषाढासमुत्पन्नं क्षत्रियं मङ्गलं विदुः ॥ १७७ ॥
 अत्रिगोत्रसमुद्भूतं चन्द्रजं वैश्यवर्णजम् ।
 गिरिव्रजे समुत्पन्नं देशे मगधसंज्ञके ॥ १७८ ॥
 द्वादश्यां च धनिष्ठायां बुधं सर्वज्ञमुत्तमम् ।
 गोत्रे चाऽऽङ्गिरसे जातं सिन्धुदेशसमुद्भवम् ॥ १७९ ॥
 सिन्धुग्रामे समुद्भूतमेकादश्यां विशेषतः ।
 पूर्वफल्गुनिकृक्षे ब्रह्मवर्णं बृहस्पतिम् ॥ १८० ॥
 देशे भोजकटे जातं विद्याद्गोत्रे भृगुं भृगुम् ।
 नक्षत्रे रेवतीसंज्ञे चतुर्दश्यां समुद्भवम् ॥ १८१ ॥
 वर्णेन ब्राह्मणं श्रेष्ठं दैत्याचार्यं चतुर्भुजम् ।
 कश्यपस्य कुले जातं सूर्यपुत्रं शनैश्वरम् ॥ १८२ ॥
 रेवतिकृक्षजं ज्ञेयं जातं सौराष्ट्रमण्डले ।
 शूद्रवर्णं समुद्भूतं कृष्णवर्णं चतुर्भुजम् ॥ १८३ ॥
 कमण्डल्वक्षमालाधनुष्पाशान्विभ्रतं करैः ।
 चतुर्दश्यां समुद्भूतं कृष्णपक्षे विशेषतः ॥ १८४ ॥
 यमरूपं महाघोरं देवदैत्यनमस्कृतम् ।

पैठीनसकुले जातं देशे बर्बरसंज्ञके ॥ १८५ ॥
 पूर्णिमायां भरण्यां च सिंहिकातनयं विदुः ।
 शूद्रवर्णं महारौद्रं देववंशभयप्रदम् ॥ १८६ ॥
 गोत्रेण जैमिनिं जातं मलये पर्वतोत्तमे ।
 अमायां सर्पदैवत्ये शूद्रवर्णं महाबलम् ॥ १८७ ॥
 केतुं विद्यान्महारौद्रं चन्द्रसूर्यभयप्रदम् ।
 येन केन प्रकारेण सुप्रीतं कारयेद्बुधः ॥ १८८ ॥
 गौरं गौरतनुं रक्तं गौरं गौरं सुप्रीतकम् ।
 कृष्णं कृष्णं च धूम्रं च भास्कारादिग्रहं स्मरेत् ॥ १८९ ॥
 एके वदन्ति केतूनां रूपबाहुल्यमञ्जसा ।
 एक एवास्ति केतुस्तु नानावर्णं वदन्ति तम् ॥ १९० ॥

अथ संकल्पः—

यथासंख्याकेन समित्तिलचर्वाज्यद्रव्यैर्व्याहृतिभिर्ऋग्यजुःसामाथर्वमन्त्रैर्यज-
 मानस्य सपुत्रस्य सकलत्रस्य सान्वयस्य सपशुधनस्य सवृत्तस्य सशीलस्य
 सभृतकस्याऽऽयुरारोग्यसिद्धयर्थमुत्पन्नक्लेशनिवृत्त्यर्थं सर्वकामफलप्राप्त्यर्थं यत्कृतं
 ग्रहहवनमनेन ग्रहहवनेनाऽऽदित्यादिनवग्रहाः सुप्रसन्ना भवन्तु । अनेन ग्रहप्रसा-
 देन यजमानस्य मनोरथाः सफलाः सन्तु । भूतवर्तमानभविष्यत्रिविधाकल्याण-
 विनाशनार्थं लक्ष्मीप्राप्त्यै प्राप्तश्रीपरित्राणार्थं तिथिमुद्घूर्तकरणलग्नाधिदेवताप्री-
 त्यर्थं पूर्वाग्नेयदक्षिणनैर्ऋतपश्चिमवायव्योत्तरैशानोर्ध्वाधो यानि कानि च तीर्थानि
 याः काश्चिद्देवतास्तेषां प्रीणनार्थं जम्बूशाकक्रौञ्चकुशशाल्मलिप्लक्षपुष्करसप्तद्वीपेषु
 प्रसाद्यानि तीर्थानि क्षेत्राणि गङ्गाद्याः सरितः पुण्या नैमिषचम्पकारण्यबदारिका-
 श्रमप्रभृतिपुण्यारण्यानि वाराणसीमुक्तिनगरीश्रीमद्द्वारकाप्रभृतिशैववैष्णवस्था-
 नानि तेषां प्रीणनार्थं सप्त पातालानि मर्यादीकृत्य हाटकेश्वराधोलोकसंस्थितवा-
 सुकिप्रमुखपन्नगकुलप्रीत्यर्थं स्वर्लोकसंस्थितेन्द्रादिदेवतागणगन्धर्वयक्षराक्षस-
 विद्याधरभूतभ्रेतपिशाचवेतालाष्टविधदेवयोनिप्रीत्यर्थं मनुष्यलोकसंस्थितसनकस-
 नन्दनादिप्रीत्यर्थं पितृलोकसंस्थितवसुरुद्रादिप्रीणनार्थं [यत्कृतं हवनं तेनै] ते
 होमाधिष्ठातारोऽग्निवायुसूर्यादियज्ञदेवाः प्रीयन्ताम् ।

आचार्यः प्रथमं पूज्यो गजाश्वरथकाञ्चनैः ।

तोषयित्वा महादानैर्नमस्कृत्य क्षमापयेत् ॥ १९१ ॥

ततस्तु ऋत्विजः पूज्या ग्रहमूर्तिप्रदानतः ।
 वस्त्रालंकारदानेन दक्षिणाभिश्च भूरिशः ॥ १९२ ॥
 यस्मै यस्मै नभोगाय येन येन यथाविधि ।
 कृतं स्याद्धवनं तं तं तस्मै तस्मै प्रदापयेत् ॥ १९३ ॥
 ततस्तु ब्राह्मणाः सर्वे सदस्यत्वेन संस्थिताः ।
 तेऽपि पूज्या यथाविद्यं यथाविभवमात्मनः ॥ १९४ ॥
 रवेर्धेनुं विधोः शङ्खमनङ्वाहं कुजस्य च ।
 हेम झस्य गुरोर्वस्त्रं हयं शुक्रे शनेश्च गाम् ॥ १९५ ॥
 अजं राहोर्विदुस्तज्ज्ञाः केतूनामायसं तथा ।
 सितासिते च गावौ स्तो रक्तोऽनङ्वान्प्रकीर्तितः ॥
 पीतं वस्त्रं हयः श्वेतस्तथैवाजः प्रकीर्तितः ॥ १९६ ॥

तथा च पैठीनसिः—

आदित्याय शुभां धेनुं शङ्खं सोमाय दापयेत् ।
 भौमे रक्तमनङ्वाहं सोमपुत्राय काञ्चनम् ॥ १९७ ॥
 गुरवे वस्त्रयुग्मं च हयं श्वेतं भृगोस्तथा ।
 शनैश्चराय कृष्णां गां राहोश्छागं तथैव च ॥
 केतूनामायसं दद्यात्सर्वेषामपि काञ्चनम् । १९८ ॥

तथा च याज्ञवल्क्यः—

धेनुः शङ्खस्तथाऽनङ्वान्हेम वासो हयः क्रमात् ।
 कृष्णा गौरायसं छागो ह्येता वै दक्षिणाः स्मृताः ॥ १९९ ॥
 हयस्य वृषभस्यापि साम्यं सर्वत्र कल्पयेत् ।
 एतन्मुनिमतं श्रेष्ठं दक्षिणायां पृथक्पृथक् ॥ २०० ॥
 आस्तीर्णवाससा सार्धं पट्टतण्डुलसंयुतम् ।
 ब्रह्मणे यज्ञकृद्दद्याद्यथावित्तं च दक्षिणाम् ॥ २०१ ॥
 आचार्यमृत्विजं यस्तु ब्रह्माणमपि ऋत्विजम् ।
 कुर्वन्नैवाऽऽप्नुयात्तस्य यज्ञस्य सकलं फलम् ॥ २०२ ॥
 विप्राभावे प्रकर्तव्यामृत्विजौ तौ मनीषिभिः ।
 सद्भावे न हि कर्तव्यौ फलच्युतिक्षयान्नृभिः ॥ २०३ ॥
 यज्ञकुण्डात्पश्चिमतो ह्यभिषेकं समाचरेत् ।

आदाय रुद्रकलशं द्विजैः सार्धं ततो गुरुः ॥ २०४ ॥
 पश्चाङ्गरुद्रजाप्येन वशं कुर्यात्सदाशिवम् ।
 ईश्वरो वशगो यस्य तस्य वश्यं जगन्नयम् ॥ २०५ ॥
 उच्चार्य वारुणान्मन्त्राञ्जलमश्वत्थपल्लवैः ।
 उद्धृत्योद्धृत्य संसिञ्चेत्सकलत्रं सपुत्रकम् ॥ २०६ ॥
 आम्रोदुम्बरन्यग्रोधजम्बूदूर्वाः समूलिकाः ।
 सपुष्पाः सकुशाः प्रोक्ता विद्वद्भिरभिषेचने ॥ २०७ ॥
 आपो हि ष्ठेति सूक्तेन मन्त्रैर्वाऽपि त्रिभिस्तथा ।
 पञ्चैन्द्रैर्वारुणैस्तावदिदमापेति वै तथा ॥ २०८ ॥
 समुद्रज्येष्ठामन्त्रैस्तु चतुर्भिरभिषेचयेत् ।
 आप्यायपञ्चनद्येति शिरो मेति च पञ्चभिः ॥ २०९ ॥
 देवस्य त्वात्रिभिः कुर्यादभिषेकं महामतिः ।

तथा पौराणविधिः—

सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः ।
 आयान्तु मम देहस्य दुरितक्षयकारकाः ॥ २१० ॥

इति यजमानः प्रार्थयेत् ।

ततश्च तैर्ब्राह्मणैः पौराणवचनैरभिषेकः कर्तव्यः ।

तथाहि—

शक्रादिदेवताः सर्वा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
 सर्वे त्वामभिषिञ्चन्तु सुरपत्न्योऽमराङ्गनाः ॥ २११ ॥
 नारायणो जगन्नाथो देवः संकर्षणो विभुः ।
 प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च ऋद्धिमिच्छन्तु ते सदा ॥ २१२ ॥
 नारदाद्या ऋषिगणा ये चान्ये च तपोधनाः ।
 भवन्तु यजमानस्य आशीर्वादपरायणाः ॥ २१३ ॥
 इन्द्रो वह्निर्यमश्चैव निर्ऋतिर्वरुणस्तथा ।
 वायुः सोमश्च रुद्राश्च दिक्पालाः पान्तु सर्वदा ॥ २१४ ॥
 वत्सरायनमासाश्च तिथिवाराश्च नाडिकाः ।
 मुहूर्तास्त्वाऽभिषिञ्चन्तु नक्षत्राणां च देवताः ॥ २१५ ॥
 आदित्यश्चन्द्रमा भौमो बुधजीवसितार्कजाः ।
 ग्रहास्त्वामभिषिञ्चन्तु राहुः केतुश्च तर्पिताः ॥ २१६ ॥

आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गणाः ।
 लोकपालाः प्रयच्छन्तु मङ्गलानि दिने दिने ॥ २१७ ॥
 गन्धर्वाः किंनरा यक्षाः सिद्धा विद्याधरास्तथा ।
 अभिषिञ्चन्तु ते सर्वे नद्यः सागरपर्वताः ॥ २१८ ॥
 वेदशास्त्राणि मीमांसे छन्दास्यागमपञ्चकम् ।
 पुराणानि च सर्वाणि सेतिहासानि सर्वतः ॥ २१९ ॥
 गायत्री चैव सावित्री शवी लक्ष्मीः सरस्वती ।
 मृडानी मातरः सर्वा भवन्तु वरदास्तव ॥ २२० ॥
 यमेवं रुद्रकुम्भेण कर्तारमभिषेचयेत् ।
 सर्वान्कामानवाप्नोति यथावद्ब्रह्मपूजनात् ॥ २२१ ॥
 नोपसर्गा न च ध्याधिर्न च प्रियवियोगिता ।
 न दारिद्र्यं न शोकः स्यात्कृत्स्नं ग्रहपूजनम् ॥ २२२ ॥
 विवाहोत्सवयज्ञादौ राज्यप्राप्तौ महीपतिः ।
 यात्रादौ धनवृद्धौ च कुर्याद्ब्रह्मखं बुधः ॥ २२३ ॥
 वित्तशक्तिर्गृहे नास्ति यदि स्याद्ब्रह्मपीडनम् ।
 दत्तं स्वल्पं हि भावेन प्रसन्नास्ते नव ग्रहाः ॥ २२४ ॥

अन्नहीनो दहेद्राष्ट्रं मन्त्रहीनस्तु ऋत्विजः ।
 यजमानमदक्षिण्यो (अदक्षिणो यजमानं) नास्ति यज्ञसमो रिपुः ॥ २२५ ॥
 वेदशास्त्रपुराणेषु होमाग्निस्त्रिविधः स्मृतः ।
 कोटिलक्षायुता ज्ञेयाः सर्वकर्मसु शोभनाः ॥ २२६ ॥
 कोटिहोमे यदा शक्तिर्लक्षे वाऽप्ययुते तथा ।
 प्रतिवर्षं प्रकर्तव्यं हवनं पुष्टिर्व्यनम् ॥ २२७ ॥
 शाखा बाजसनेयी या सर्वसाधारणा मता ।
 तां पुरस्कृत्य मुनिना वसिष्ठेन प्रकाशिता ॥ २२८ ॥
 अध्येतव्या प्रयत्नेन वासिष्ठी शान्तिरुत्तमा ।
 शान्तिकं यः पठेन्नित्यं श्रद्धया यः शृणोति वा ।
 सानकूला ग्रहास्तस्य सर्वकाले भवन्ति हि ॥ २२९ ॥
 यथा समुत्थितं यन्त्रं यत्नेन प्रतिवध्यते ।
 एवं समुत्थितं घोरं सर्वशान्त्या विनश्यति ॥ २३० ॥

यथा बाणप्रहाराणां कवचं वारणं भवेत् ।
 तथा सर्वोपघातानां शान्तिर्भवति वारणम् ॥ २३१ ॥
 बलिं गृह्णन्तु तं देवा आदित्या वसवस्तथा ।
 मरुतश्चाश्विनौ रुद्राः सुपर्णः पन्नगास्तथा ॥ २३२ ॥
 असुरा यातुधानाश्च पिशाचा राक्षसा नगाः ।
 शाकिन्यो यक्षवेताला योगिन्यः पूतना ग्रहाः ॥ २३३ ॥
 जृम्भकाः सिद्धगन्धर्वाः साध्या विद्याधरा नराः ।
 दिक्पाला लोकपालाश्च ये ये विघ्नविनाशकाः ॥ २३४ ॥
 जगतां शान्तिकर्तारो ब्रह्माद्याश्च महर्षयः ।
 मा विघ्नो मा च मे पापं मा सन्तु परिपन्थिनः ॥
 सौम्या भवन्तु सुस्निग्धा भूतप्रेताः सुखावहाः ॥ २३५ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 वसिष्ठोक्तं नवग्रहमखविधानम् ।

अथ सिंहगते सूर्ये गोप्रसवजनितविघ्नहरविधानम् ।

मनुराह—

माघे बुधे च महिषी श्रावणे वडवा दिवा ।
 सिंहे गावः प्रसूयन्ते स्वामिनो मरणं ध्रुवम् ॥ १ ॥
 विधानं तत्र कर्तव्यं नरेण हितमिच्छता ।
 सौरैः सूक्तैः प्रकर्तव्यो होमः सूर्यस्य तुष्टये ॥ २ ॥
 प्रधानं तिलसर्पीपि पायसं शर्करायुतम् ।
 सहस्रं हवनं प्रोक्तं दानान्यष्टौ यथाविधि ॥ ३ ॥
 सहस्रकिरणप्रीत्यै कर्तव्यानि च धीमता ।
 एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ॥ ४ ॥

इदमेव माघे बुधे महिषीप्रसवे श्रावणे दिवा वडवाप्रसवे च विधानं बोध्यम् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां सिंहगते सूर्ये
 गोप्रसवजनितविघ्नहरविधानम् ।

अथानवरतस्वेदनयनस्तुतिकाकमैथुनदर्शनजनित-
विघ्नहरं विधानम् ।

यदि स्युर्विषमे स्थाने मनुष्याणां नभश्चराः ।
शान्तिकं च न कुर्वन्ति न भजन्ति सुरान्द्विजान् ॥ १ ॥
ये ये विघ्नाः प्रजायन्ते तेषां ताञ्छृणु पार्वति ।
दक्षिणं नयनं तेषां स्रवति द्रवते * सदा ॥ २ ॥
निमित्तेभ्य ऋते काकमैथुनं यस्तु पश्यति ।
प्रकृतिर्विकृतिं याति पण्मासान्निधनं भवेत् ॥ ३ ॥
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि सर्वप्राणिहितां शुभाम् ।
वैश्वानरीं शुभां देवि देवानामपि दुर्लभाम् ॥ ४ ॥
दृष्ट्वा काकरतं धीमान्विदध्याच्छान्तिकं तदा ।
स्नात्वा तैलेन शुद्धेन वारिणोष्णेन संगवे ॥ ५ ॥
+ प्रारभेद्धवनं धीमान्वैश्वानरसुतोषकृत् ।
अयुतं वा सहस्रं वा ह्यग्निमीळ इति स्मरेत् ॥ ६ ॥

स्मरेदिति ऋचं जपेत् ।

जुहुयात्तद्वशांशेन पायसेन ससर्पिषा ।
अग्निमीळ इत्यग्नेर्वा लक्षजाप्यं समाचरेत् ॥ ७ ॥
व्याहृतीनां सहस्राणि जुहुयात्पञ्चविंशतिम् ।
होमान्ते महिषीं दद्याद्ब्राह्मणाय सदक्षिणाम् ॥ ८ ॥
तरुणीं रूपसंपन्नां भूरिक्षीरां सुशोभनाम् ।
सवत्सकां यमप्रीत्यै ह्यकालमरणापहाम् ॥ ९ ॥
दत्त्वा तां महिषीं धीमान्ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ।
य एवं कुर्वते देवि विधानं विधिसत्तमाः ॥ १० ॥
तेषां प्रीतोऽनलो देवो हुतः सम्यङ्मनीषिभिः ।
यमस्तु महिषीदानाद्ददाति विपुलं सुखम् ॥ ११ ॥
नारीणां वा नराणां वा दक्षिणं नयनं स्रवेत् ।
विना निदानमर्याणि पण्मासात्तन्मृतिप्रदम् ॥ १२ ॥

* आर्षत्वाद्द्वयत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् । + आर्षत्वाद्द्वयत्ययेन परस्मैपदं ब्राहि मामिति वत् ।

तथैव विग्रहे खेदं विना घर्मः प्रजायते ।
 सोऽपि चेत्सततं नृणामादिशेत्पूर्ववत्फलम् ॥
 तद्विघ्नशमनायाऽऽशु विधानं पूर्ववत्स्मृतम् ॥ १३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायामनवरतस्वेद-
 नयनस्रुतिकाकमैथुनदर्शनजनितविघ्नहरविधानम् ।

अथ काकश्येनादिदुष्टपक्षिस्पृष्ट्यादिजनितविघ्नहरं विधानम् ।

काकश्येनकपोतगृध्रबलाकादिदुष्टपक्षिगणे यः कोऽपि यदा मनुष्यस्य जीवतो
 विग्रहे विलीनो भवति निविष्टो वा भवति तदा तस्य जरस्य नार्या वा षण्मा-
 साभ्यन्तरेण मरणं विनिर्दिशेत् । तेषां मध्ये गृध्रस्तु मासमात्रेण मरणं सूचयति ।
 श्येनस्तु तात्कालिकं मरणं सूचयति । कपोतो दीर्घव्याधिं न तु मरणम् ।
 बलाकः प्रतिष्ठाहानिं करोति । काकस्तु संततिविच्छित्तिं ददाति । एतद्भारते
 विस्तरेण दर्शितम् ।

तत्र शान्तिविधानम्—

गङ्गाजले कृतस्नानो द्विजानाहूय सत्वरः ।
 कृतस्वस्त्ययनो धीमाञ्जपेन्मृत्युंजयं ततः ॥ १ ॥
 शिवालये महास्थाने प्रदीपं दीपयेत्सुधीः ।
 घृतेन तिलतैलेन कौसुम्भेनाथ वा पुनः ॥ २ ॥
 प्रदक्षिणानमस्कारान्प्रकुर्याच्छक्तितस्त्रयहम् ।
 पिप्पलं पूजयेद्धीमान्मूलतस्त्विमन्त्रतः ॥ ३ ॥
 अष्टोत्तरशतं (त) वारान्म (रं म) न्दे कुर्यात्प्रदक्षिणाः ।
 तथा गोगोष्ठमध्यस्थः स्पृशेद्वाः पृष्ठमागतः ॥ ४ ॥
 यथाशक्ति तिलान्दद्याद्वाह्मणाय कुटुम्बिने ।
 नमो रुद्राय भीमाय नीलकण्ठाय वेधसे ॥ ५ ॥
 कपर्दिने सुरेशाय व्योमकेशाय वै नमः ।
 इत्यादिस्तोत्रमालास्तु जपन्नेव दिनत्रयम् ॥ ६ ॥
 शयीत शिवसांनिध्ये शिवध्यानपरायणः ।
 चतुर्थे दिवसे प्राप्ते भोजयेच्छक्तितो द्विजान् ॥ ७ ॥

काकादिमूर्तयः कार्या गौरसर्षपपिष्टतः ।
 छेत्तव्याः कण्ठतः साज्या होतव्या यमतुष्टये ॥ ८ ॥
 यमाय सोममित्याद्यैर्मन्त्रैश्च यमदैवते ।
 एवं कृते विधाने च दुष्पक्षिस्पृष्टिभावितः ॥
 विघ्नो नश्यति मर्त्यस्य सम्यगेतन्निबोधत ॥ ९ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां काकश्येनादिदुष्ट-
 पक्षिस्पृष्ट्यादिजनितविघ्नहरं विधानम् ।

अथ जन्ममासादिपूजाविधानम् ।

निषिद्धं यत्र मासे यत्कर्म पुंसां मनीषिभिः ।
 तन्मास एव कर्तव्यं मासाधीशस्य पूजनम् ॥ १ ॥
 तस्य देवस्य कर्तव्या मूर्तिः स्वर्णमयी शुभा ।
 निष्केण वा तदर्धेन तस्याप्यर्धेन वा पुनः ॥ २ ॥
 ध्यानयुक्तां दृढां श्रेष्ठां निजवाहनशालिनीम् ।
 तल्लिङ्गेनैव मन्त्रेण पूजयेत्प्रयतः पुमान् ॥ ३ ॥

सप्तर्षिमते—

गणेशप्रमुखा देवा दुर्गाद्या मासदेवताः ।
 पूज्यास्तल्लिङ्गकैर्मन्त्रैर्याजयेच्च विशेषतः ॥
 सप्तधान्यमये राशौ स्थापयेत्पट्टमुत्तमम् ॥ ४ ॥

उत्तममिति श्रीपर्णीदेवकाष्ठादिजं तैजसं वा । सप्त धान्यान्याह—

यवाः प्रियंगवो मापा आढक्यध्वणकास्तिलाः ।
 ब्रीहयश्च समुद्दिष्टं धान्यानां सप्तकं बुधैः ॥ ५ ॥
 पट्टस्योपरि विन्यस्य वस्त्रयच्छिन्नमुत्तमम् ।
 तस्योपरि न्यसेन्मूर्तिं शालितण्डुलपङ्कजाम् ॥ ६ ॥
 वस्त्रेणान्येन तां मूर्तिं समन्तात्परिधापयेत् ।
 पूजयेत्कालजैः पुष्पैर्दशाङ्गेनैव धूपयेत् ॥ ७ ॥
 चन्दनेनानुलिप्ताङ्गीं दीपैर्नाराजयेत्ततः ।
 ततस्तु हवनं कार्यं कृत्वा चाग्निमुखं बुधैः ॥ ८ ॥

प्रधानं पायसं तत्र शतमष्टोत्तरं भवेत् ।
 व्याहृतीः कारयेद्विद्वान्यथासंख्यं यथावमु ॥ ९ ॥
 तल्लिङ्गेनैव मन्त्रेण प्रधानं जुहुयाद्बुधः ।
 होमान्ते विधिवत्पूजां तन्मूर्तेः कारयेत्सुधीः ॥ १० ॥
 प्रतिपाद्य ततः श्रेयो होमकर्त्रे यथाविधि ।
 अभिषेकं ततः कुर्यादाचार्यः कर्तुरञ्जसा ॥ ११ ॥
 शान्तिपाठं पठेयुस्ते ये सदस्या द्विजोत्तमाः ।
 आचार्याय ततो दद्याद्दामेकां लक्षणान्विताम् ॥ १२ ॥
 अन्येभ्यो विप्रवर्येभ्यः प्रदद्याद्भूरिदक्षिणाम् ।
 ततस्तु भोजयेच्छक्त्या साधुवाचा क्षमापयेत् ॥ १३ ॥

अत्र मासशब्दो जन्ममासवाचको ज्ञेयः । न तु पौषाषाढौ निषिद्धत्वेन स्मर्तव्यौ ।

जन्ममासे जन्मतिथौ जन्मर्क्षे जन्मलग्नके ।
 विधानं तु प्रयोक्तव्यं विदुषा शान्तिमिच्छता ॥ १४ ॥
 विवाहे व्रतबन्धे च जन्ममासादि वर्जयेत् ।
 एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ॥ १५ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां जन्ममासादि-
पूजाविधानम् ।

अथ मातङ्गिनीपूजाविधानम् ।

भैरव उवाच—

शृणु देवि महागुह्यं मातङ्गिन्याः समुद्भवम् ।
 सुधार्णवे शयानं तं हरिं परमदैवतम् ॥ १ ॥
 रमादेवीसमायुक्तं पुरुषं शेषशायिनम् ।
 तत्र गत्वा महात्मानावुभौ नारदतुम्बुरु ॥ २ ॥
 कृताञ्जलिपूटौ भूत्वा परमेशमपृच्छताम् ।
 नारायण महादेव गीतज्ञानं वद प्रभो ॥ ३ ॥

श्रीनारायण उवाच—

समयेऽस्मिन्मुनी प्राप्तो ह्यहं शंकरपर्वतम् ।
 दृष्टस्तत्र महादेव उमया सहितो मया ॥ ४ ॥
 जयशब्दैरनेकैस्तु प्रोक्तो देवो मया मुनी ।
 रेभे मां शंकरो गौरी रेभे लक्ष्मीं पतिवराम् ॥ ५ ॥
 विचित्रे आसने दत्ते उभयोर्मनपूर्वकम् ।
 आवाभ्यामुपविष्टाभ्यां दृष्टं चित्रमलौकिकम् ॥ ६ ॥
 अन्नराशिर्महादिव्यो नानाव्यञ्जनसंयुतः ।
 मनोहरो महास्वादो विविधास्वादनैर्युतः ॥ ७ ॥
 जा(या)तो दृष्टिपथं राशिरावयोश्चित्रकारिणोः ।
 सामरस्यं तदा जातं भोक्तुमुच्छिष्टमावयोः ॥ ८ ॥
 देवदेव्योस्तदोच्छिष्टमावाभ्यां भक्षितं मुनी ।
 उच्छिष्टं देहे देहीति प्रोक्तः शंभुः सुरेश्वरी ॥ ९ ॥
 दत्तमात्रे तदोच्छिष्टे कुमारी सर्वलक्षणा ।
 आवाभ्यां च समुत्पन्ना दिव्यरूपा कृशोदरी ॥ १० ॥
 साऽप्युवाच शिवं गौरीमुच्छिष्टं * काङ्क्षये हि वाम् ।
 उभाभ्यां दत्तमुच्छिष्टं तस्यै सप्तस्वरैर्युतम् ॥ ११ ॥
 चतुर्विधैश्च वादित्रैः सहितं प्रीतिपूर्वकम् ।
 ऊचतुश्च ततः कन्यां प्रीतिपूर्वं मुहुर्मुहुः ॥ १२ ॥

देवदेव्या ऊचतुः—

त्वां यजन्ति च ये कन्ये जपहोमार्चनादिभिः ।
 तेषां कर्माणि सिध्यन्ति वश्यादीनि न संशयः ॥ १३ ॥
 तदाप्रभृति लोकेषु ख्यातोच्छिष्टा परेश्वरी ।
 अनेकगुणसंयुक्ता साधकानां वरप्रदा ॥ १४ ॥
 गायनं नर्तनं वाद्यं गन्धर्वाणां ददौ शिवा ।
 ननाम तानि संगीते दर्शितानीह नारद ॥ १५ ॥
 तदाप्रभृति नाम्ना सा जातोच्छिष्टा कुमारिका ।
 मातङ्गिनीति विख्याता कल्पितार्थप्रदा नृणाम् ॥ १६ ॥

* काङ्क्षये इति काक्षि काङ्क्षायामिति धातो रामो राज्यनर्चीकरादिति च त्वत्स्वार्थेण च निर्वह्यम् ।

विष्णोस्तु वचनं श्रुत्वा गतौ नारदतुम्बुरु ।
 आर्यादिमातृभिर्युक्तं गिरिं दृष्ट्वा तु सुन्दरम् ॥ १७ ॥
 शुद्धस्फटिकसंकाशं शृङ्गैर्व्याप्तदिगन्तरम् ।
 संपूर्णचन्द्रसदृशं पीयूषकरसंनिभम् ॥ १८ ॥
 दृष्ट्वा शिवगिरिं विप्रौ परं हर्षमवापतुः ।
 ऊचतुश्च गिरीशस्य वर्णनं तौ विचक्षणौ ॥ १९ ॥

नारदतुम्बुरु ऊचतुः—

जय क्षोणीधर श्रीमञ्जैलराज महागिरे ।
 त्वद्दर्शनाद्गतं पापमावयोर्निर्गतं तमः ॥ २० ॥
 इति स्तुत्वा गिरिं तौ तु प्रणम्य च गणेश्वरम् ।
 कैलासशिखरासीनं देवदेवं जगद्गुरुम् ॥ २१ ॥
 युक्तं स्कन्देन देवेन सेनेशेन दिवौकसाम् ।
 तौ मुनी तौ समाविष्टौ पप्रच्छतुरुमासुतौ ॥ २२ ॥
 कल्पमुच्छिष्टकन्याया मातङ्गिन्या महामती ।
 ऊचतुश्च ततो देवौ कल्पं प्रति मुनीश्वरौ ॥ २३ ॥
 शृणुतं विप्रवर्यौ तं कल्पमत्यन्तसुन्दरम् ।
 यस्य विज्ञानतः सर्वो भाग्ययुक्तो भवत्यलम् ॥ २४ ॥
 अर्चनं साधनं ध्यानं विनियोगं च सुव्रतौ ।
 उच्छिष्टं तु पदं पूर्वं चाण्डाल्याः शृणुतं शुभम् ॥ २५ ॥
 मातङ्गिनीपदं चान्ते ये स्मरन्ति मनीषिणः ।
 सर्ववशंकरी स्वाहा मन्त्रराजमनुत्तमम् ॥ २६ ॥
 ते यान्ति परमं स्थानं दुःखशोकविवर्जितम् ।
 बालात्रिवीजमाद्यं च मायात्रीजेन संयुतम् ॥
 इमं मन्त्रं महागुह्यमावाभ्यां प्रकटीकृतम् ॥ २७ ॥
 दुग्धेऽग्निलोकानलवर्णयुक्तं न्यासोऽङ्गपट्के विहितः सुविद्यैः ।
 सकृत्कृते न्यासवरे शरीरे सिध्यन्ति कर्माणि च साधकानाम् ॥ २८ ॥
 उच्छिष्टेन बलिं दद्याद्रात्रौ रात्रौ च साधकः ।
 चतुर्दशप्रकारेण बलिं दद्यात्प्रयत्नतः ॥ २९ ॥

ध्येया सुनीलपद्माभा शङ्खकुण्डलधारिणी ।
 चतुर्भुजा चैकवक्त्रा वीणापाशाङ्कुशाभया ॥ ३० ॥
 मुक्ताप्रवालमालाभिर्भूषिताङ्गी समस्वरा ।
 कृष्णांशुका महानीलमयूखाभा शुचिस्मिता ॥ ३१ ॥
 कर्पूरागरुधूपेन धूपितार्द्रकचा शिवा ।
 सर्वलक्षणसंयुक्ता पुष्पमालोपशोभिता ॥ ३२ ॥
 भावयुक्तस्य भक्तस्य भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी ।
 त्रिकोणं पञ्चकोणाष्टदलं षोडशपत्रकम् ॥ ३३ ॥
 चतुरस्रं चतुर्द्वारं वृत्तं व्यायामसंयुतम् ।
 सौवर्णे राजते ताम्रे वाऽथ भूर्जस्य पत्रके ॥ ३४ ॥
 पटे वाऽप्यालिखेद्यन्त्रं समरेखं मनोहरम् ।
 चन्द्रचन्दनकस्तूरीरोचनागरुकुङ्कुमैः ॥ ३५ ॥
 लिखेद्यन्त्रं च देवस्य सृष्टिमागसुखावहम् ।
 ततं च विततं चैव घनं सुषिरमेव च ॥ ३६ ॥
 चतुर्द्वारेषु वाद्यानि पूजयेत्पूर्वतः क्रमात् ।
 चतुर्कं च गणेशं च क्षेत्रपालं च योगिनीम् ॥ ३७ ॥
 आग्नेयादिषु कोणेषु पूजयेत्साधकः मुधीः ।
 पादुकां भावनां चैव प्रथमं पूजयेत्मुधीः ॥ ३८ ॥
 उर्वशीं मेनकां रम्भां वृत्तार्चीं पुञ्जकस्थलाम् ।
 सुकेशीं मञ्जुवोषां च महारङ्गवतीं तथा ॥ ३९ ॥
 यक्षगन्धर्वसिद्धांश्च किन्नरान्गुह्यकांस्तथा ।
 त्रिधात्रगन्पद्मगांश्च तेषां रामा मनोहराः ॥
 षोडशारे महापद्मे पूजयेत्तान्यथाविधि ॥ ४० ॥

अत्र पिशाचा अनुवङ्गेण ज्ञातव्याः । एवं षोडश देवयोनिशक्तयः ।

पूर्वं च कामवाणं तु कन्यायाश्च नमोन्तकम् ।
 पूजयित्वा क्रमं सर्वमनेन विधिना तदा ॥ ४१ ॥
 अणिमा महिमा चैव लघिमा गरिमा तथा ।
 प्राकाम्यं नशिनाऽदृश्यं (तेशिन्वं) पादुका वु(गु)ष्टिका तथा ॥ ४२ ॥

अञ्जनाख्या च सिध्यन्ति पूजितास्त्वष्टपत्रके ।
 अग्रतोऽष्टदले पूज्याः सिद्धयः सिद्धिकाङ्क्षिणा ॥ ४३ ॥
 ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी तथा ।
 वाराही चैव कौबेरी तथा चैन्द्री च चण्डिका ॥ ४४ ॥
 इत्यष्टदलत्रये च शक्तीः संपूजयेत्सुधीः ।
 उन्मादनं रोचनं च ततः संमोहनं शरम् ॥ ४५ ॥
 जारणं मारणं वाणान्पञ्चकोणेषु विन्यसेत् ।
 इच्छा क्रिया ज्ञानशक्तिः पूजितव्यास्त्रिकोणके ॥ ४६ ॥
 रतिः प्रीतिर्मनोभावा त्रिवृत्त्या पूजिताः शुभाः ।
 रागाः श्रीरागमुख्यास्तु निषादाद्यास्तथा स्वराः ॥ ४७ ॥
 रागिण्यश्च लयास्ताला देव्याः पश्चिमतोऽर्चयेत् ।
 गन्धपुष्पादिनैवेद्यैर्यथाविभवविस्तरैः ॥ ४८ ॥
 कुलाचारक्रमात्पूज्या गुरुभक्तिपरायणैः ।
 मौनेनात्र ध्रुवं पूज्या कुमारी सा परेश्वरी ॥ ४९ ॥
 एवं सा पूजिता भक्त्या सर्वकामप्रदा भवेत् ।
 ग्लुं खुं प्लुमिति रत्नानां त्रयेण स्याच्च पूजनम् ॥ ५० ॥

इति पूजनम् ।

काम्यकर्मा(र्म)णि वक्ष्यामि सर्वसिद्धिप्रदानि च (दे तथा) ।
 कुण्डे वा स्थण्डिले वाऽपि विधिहोमः प्रशस्यते ॥ ५१ ॥
 वक्ष्याकर्षणकामार्थं योनिकुण्डे विधीयते ।
 अग्निवक्त्रं ततः कृत्वा यथोक्तविधिना द्विजः ॥ ५२ ॥
 देवीमावाह्य विधिवत्साध्यानां तु कुमारिकाम् ।
 संपूज्य होमयेत्पश्चाद् काम्बरवृतां शिवाम् ॥ ५३ ॥
 रक्ताक्षतां रक्तमालां रक्तचन्दनचर्चिताम् ।
 रक्ताश्वमारकुसुमैर्गुगुलैश्च घृतप्लुतैः ॥ ५४ ॥
 होमयेद्युतं येन राजा वश्यः समौलिकः ।
 मल्लिकार्जुनातिपुंतागैर्होमयेद्भाग्यकामुकः ॥ ५५ ॥
 राज्यार्थी बिल्वपत्रैश्च तथोत्पलसमन्वितैः ।
 श्रीकामः श्वेतपुष्पैश्च चम्पकैर्वाऽपि नारद ॥ ५६ ॥

उत्पलैर्भोगकामार्थी केवलैर्होमयेत्सुधीः ।
 लक्ष्मीपुष्पैस्तथा विद्वान्होमयेद्भोगकामुकः ॥ ५७ ॥
 बकुलैश्च जपापुष्पैः किंशुकैर्वन्धुजीवकैः ।
 सर्ववश्यविधौ विद्वान्होमयेत्प्रयतः शुचिः ॥ ५८ ॥
 आकर्षणपरो विद्वान्मध्वक्तैर्मधुभिर्यजेत् ।
 वाञ्छजुलैः पुष्टिकामस्तु गुडूचीभिर्ज्वर्गार्तिहृत् ॥ ५९ ॥
 आयुष्कामो हि दूर्वाभिर्धनार्थी स्वर्णपुष्पकैः ।
 स्त्रीवश्यार्थी तिलैः साज्यैर्लवणेन समन्वितैः ॥ ६० ॥
 कदम्बकुसुमैर्हुत्वा सर्ववश्यकरो भवेत् ।
 रोचनाकुङ्कुमैर्हुत्वा स्त्रीवश्यं लभते नरः ॥ ६१ ॥
 अन्नार्थी अन्नहोमेन वित्तार्थी शालितण्डुलैः ।
 मधुत्रितयहोमेन सर्ववश्यकरो भवेत् ॥ ६२ ॥
 नन्द्यावर्तैर्यजेद्यस्तु स वाग्विभवमात्रजेत् ।
 लक्ष्म्यर्थी कर्णिकारैस्तु तेजोर्थी किंशुकैर्यजेत् ॥ ६३ ॥
 कपिलाघृतेन वित्तार्थी पुत्रार्थी तत्पयो यजेत् ।
 द्विषामुन्वादकरणे धूस्तूरैर्जुहुयात्सुधीः ॥ ६४ ॥
 विषवल्लीदलैर्निम्बदलैर्निर्गुण्डिकादलैः ।
 दलैः श्रेष्मन्तकस्यापि विभीतकतरोस्तथा ॥ ६५ ॥
 औलूकैर्गृध्रपत्रैश्च तैलाक्तैश्च विशेषतः ।
 नवकोणे तथा कुण्डे वैरिनाशाय होमयेत् ॥ ६६ ॥
 दक्षिणाभिमुखो भूत्वा नग्नो दृष्टिं निमीलयेत् ।
 परोच्चाटनकृद्विद्वान्वायव्याशामुखो भवेत् ॥ ६७ ॥
 तेषां जारणकृच्चैव नैर्ऋत्यभिमुखो भवेत् ।
 मारणार्थी तु द्विषतां वह्निकाष्ठामुखो भवेत् ॥ ६८ ॥
 शान्तिके प्राङ्मुखो भूत्वा स्तम्भने पश्चिमामुखः ।
 उत्तराभिमुखो भूत्वा सर्वकर्माणि कारयेत् ॥ ६९ ॥
 मङ्गलं पौष्टिकं कर्म पूर्वाशास्यः प्रसाधयेत् ।
 आरोग्यार्थी सुखार्थी च सौम्याशाभिमुखो यजेत् ॥ ७० ॥

सगुडं पायसं चैव इक्षुंश्चैव विशेषतः ।
 हुत्वा जयति वित्तार्थी सर्वाणि च न संशयः ॥ ७१ ॥
 अपस्मारविनाशाय पायसं सघृतं यजेत् ।
 मरीचानि सतैलानि कासश्वासातिनाशने ॥ ७२ ॥
 जुहुयात्प्रयतो भूत्वा पूर्वाशास्यस्तु मन्त्रवित् ।
 निर्गुण्डीमूलहोमेन वायुं शमयतेऽञ्जसा ॥ ७३ ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि जीवस्याऽऽकर्षणं परम् ।
 आकृष्ट(ति)त्रितयं कृत्वा जीवन्यासं च कारयेत् ॥ ७४ ॥
 कुलालमृत्तिकारूपं मधूच्छिष्टेन वै परम् ।
 अपरं लवणैव रूपत्रयमुदाहृतम् ॥ ७५ ॥
 यं यं कामयते कामं तं तं सुखमवाप्नुयात् ।
 स्व(सु)रूपं विन्यसेत्कुण्डं सप्ताङ्गुलमधस्ततः ॥ ७६ ॥
 लवणं मेखलायां तु मधूच्छिष्टं तु पूर्वतः ।
 मृन्मयं दक्षिणे कुण्डाग्रोज्यं रूपत्रयं बुधैः ॥ ७७ ॥
 वैरिणां विजये विद्राल्लवणं होमयेत्सुधीः ।
 श्रीकामो वा तथा कुर्याद्धवनं बुद्धिमत्तरः ॥ ७८ ॥
 लवणं मधुनाऽक्तं च रूपं कृत्वा यथाविधि ।
 आरभ्य दक्षिणादङ्घ्रिर्वामपादावसानकम् ॥ ७९ ॥
 पुरुषाणामयं होमः स्त्रीणां चैव विपर्ययात् ।
 सप्तरात्रान्महादेवि लभते मदनातुरा ॥ ८० ॥
 तिष्ठते बन्धकीभावे कन्यासिद्धिरियं स्मृता ।
 लवणं तैलसंयुक्तं निम्बपत्रैः समन्वितम् ॥ ८१ ॥
 आशु सिद्धिकरं बह्वौ हुतं शत्रुविनाशकृत् ।
 हरिद्राचूर्णमिश्रं तु लवणं स्तम्भकारकम् ॥ ८२ ॥
 यच्च सम्यक्परं वस्तु तेन तेन च होमयेत् ।
 पूर्वाह्णे पूर्वरात्रे च सिद्धयर्थं च जपेद्बुधः ॥ ८३ ॥
 मातङ्गिनी तु मध्याह्णे मध्यरात्रेऽथ वा पुनः ।
 कुर्यादुच्चाटनं शत्रोर्लक्षजाप्यान्न संशयः ॥ ८४ ॥
 मुख्यत्वात्तु जपेत्लक्षं दशांशं होममाचरेत् ।
 मान्त्रिकस्य भवेत्सिद्धिः सिद्धो मन्त्रो भवेदिह ॥ ८५ ॥

कन्यापूजा च कर्तव्या गन्धपुष्पान्नसंपदा ।
 आर्याष्टकं जपेद्यस्तु कुमारीतृप्तिहेतवे ॥ ८६ ॥
 मातङ्गिनीप्रसादेन सिद्धो भवति भूतले ।
 यद्यत्साधयते कर्म तत्तत्प्राप्नोत्यसंशयम् ॥ ८७ ॥
 योगिन्यष्टकमेवाऽऽशु पूजयेच्छ्रद्धयाऽन्वितः ।
 ततः स्वयं च भुञ्जीत चैकीकृत्य रसोच्चयम् ॥ ८८ ॥
 मद्यमांसादिर्नैवेद्यैस्तर्पयेत्परमेश्वरीम् ।
 बलिं निवेदयेत्पश्चान्मातङ्गिन्यै वरानने ॥ ८९ ॥
 नमो भगवति श्रींशे मातङ्गिन्यै नमोऽस्तु ते ।
 नमोऽस्तु जगतां धात्र्यै कुमार्यै ते नमो नमः ॥ ९० ॥
 इति स्तुत्वा महादेवीं महादेवस्य बल्लभाम् ।
 मातङ्गिनीप्रसादेनै ह्यङ्गनावलभो भवेत् ॥ ९१ ॥
 इमं बलिं प्रगृहीष्व स्वाहेति प्रयतः पुमान् ।
 मन्त्रमुच्चारयेद्यस्तु सर्वत्र विजयी भवेत् ॥ ९२ ॥
 मातङ्गिनीमहामन्त्रं त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् ।
 सुखोपायेन वश्यं तु प्रोक्तं तव वरानने ॥ ९३ ॥
 त्रिपुरा भैरवी सिद्धिस्तथा त्रिपुरसुन्दरी ।
 राजलक्ष्मीर्महालक्ष्मीस्तथैव भुवनेश्वरी ॥ ९४ ॥
 मातङ्गिनी महामारी बाला च श्यामला तथा ।
 एताः सिंहासनस्थाः स्युर्विद्या इति विदो विदुः ॥ ९५ ॥
 एतासां स्मरणं यस्य मन्त्रपूर्वं दिने दिने ।
 स राजसु भवेन्मान्यो नात्र कार्या विचारणा ॥ ९६ ॥
 एवं तु कथितं भद्रे नारदस्य च धीमतः ।
 मया कारुण्यमनसा तेनासौ सुभगो मुनिः ॥ ९७ ॥
 किं स्याद्यज्ञैः फलं नृणां सहस्रशतदक्षिणैः ।
 यदि मातङ्गिनीकल्पो हृदये परिवर्तते ॥ ९८ ॥

इदं रहस्यं परमं कथनीयं न कस्यचित् ।

भोगमोक्षप्रदं नृणां नात्र कार्या विचारणा ॥ ९९ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां मत्स्यसंहितोक्तं
मातङ्गिनीपूजाविधानम् ।

अथोदकी(क्या)सूतकी(तिका)शुद्धिविधानम् ।

उदकी (क्या) सूतकी (तिका) चैव पीडयमाना ज्वरादिभिः ।

स्नानेऽक्षमा तदा काया स्पृष्ट्वा स्पृष्ट्वा शतप्लुतिः ॥ १ ॥

तथा च वसिष्ठस्मृतौ—

ज्वरार्तिपीडिता नारी सूतकी च तथोदकी (रि उदक्या सूतिका तथा) ।

स्पृष्ट्वा स्पृष्ट्वा शतस्नानैः शुद्धा परकृतैर्भवेत् ॥ २ ॥

शतं भागाः शरीरस्य केशाग्रात्परिकल्पिताः ।

पादाङ्गुल्यवधि प्राज्ञैर्मन्त्रैर्वारुणसंज्ञकैः ॥ ३ ॥

तथा हि—

१ केशाग्रं २ केशमध्यं च ३ केशमूलं च ४ मस्तकम् ।

५ ललाटे ६ भ्रूलते ७ कर्णौ ८ नेत्रे ९ नासापुटे तथा ॥ ४ ॥

ओष्ठौ १० दन्ताश्च ११ चिबुकं १२ रसनाद्वय १३ भेव च ।

कण्ठस्तु १४ स्कन्धयुग्मं १५ च बाहुयुग्मं १६ तथैव च ॥ ५ ॥

कूर्परौ १७ च कराग्रे १८ च तथा वक्षः १९ स्तनद्वयम् ।

२० स्तनयोर्मध्यभागश्च २१ कुक्षिद्वय २२ मतः परम् ॥ ६ ॥

उदरं २३ नाभिदेशस्तु २४ तथा पृष्ठं २५ कटि २६ स्तथा ।

जघनं २७ योनिभाग २८ स्तु ऊरू २९ जानू ३० च सक्थिनी ३१ ॥ ७ ॥

जङ्घे च ३२ गुल्फदेशश्च ३३ पादाङ्गुल्यो ३४ नखानि ३५ च ।

त्रिः कृत्वा संस्पृशेद्विद्वानेकैकं शुद्धिहेतवे ॥ ८ ॥

प्राजापत्यान्पञ्चदश दद्यात्तच्छुद्धिहेतवे ।

ततोऽभिषेचयेन्नारीं गृहीतान्यांशुकां बुधैः ॥

ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्स्मरेद्विषवो महत् ॥ ९ ॥

तथा हि—

सोमः शौचं ददावासां गन्धर्वश्च शुभां गिरम् ।

पावकः सर्वमेध्यत्वं मेध्या वै योपितो ह्यतः ॥ १० ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां वसिष्ठस्मृत्युक्तमुदकी-
(कया)सूतकी(तिका)शुद्धिविधानम् ।

अथ विरजयात्राविधानम् ।

आदित्यपुराणे सूर्य उवाच—

यस्य नास्ति सुतः पुंसो यस्तु पैशाच्यसंयुतः ।

महाग्रहैर्गृहीतात्मा स गच्छेद्विरजं प्रति ॥ १ ॥

तत्र यात्रानियमः—

गन्तव्यं श्वोदिने येन यात्रायै विरजस्य वै ।

आद्ये तु दिवसे तेन भोजनीया द्विजोत्तमाः ॥ २ ॥

लक्ष्मीनारायणप्रीत्यै स्त्रीभिः सार्धं महामते ।

पश्चादग्निधुनान्येव शक्त्या वाऽपि समाहितः ॥ ३ ॥

वस्त्रैस्तु दक्षिणादानैर्यथाविभवमात्मनः ।

निष्पाद्य विधिवद्भक्त्या गृहे भोज्यविधिं सुधीः ॥ ४ ॥

भुञ्जीत च स्वयं पश्चात्ततस्तस्य कुटुम्बिनी ।

समाप्य विधिवत्सांध्यं विधिं सायंतनं सुधीः ॥ ५ ॥

भूमिशय्यां समासाद्य स्त्रिया सार्धं महामते ।

नियमं ब्रह्मचर्यस्य गृहीत्वा दृढमानसः ॥ ६ ॥

प्रातःकाले समुत्थाय दन्तधावनपूर्वकम् ।

प्रातर्विधिं समाप्यैव निर्गच्छेद्विरजं प्रति ॥ ७ ॥

तत्र यात्रानिर्गममन्त्रः—

अद्यप्रभृति यात्रायै गृहीतनियमः स्वयम् ।

दर्शनेच्छुरहं मातः कमले तव पादयोः ॥ ८ ॥

इति कृत्वा विधिं सम्यक्स्वस्तिवाच्य द्विजोत्तमैः ।

हृष्टपुष्टमना वत्स निर्गच्छेत्सुखसिद्धये ॥ ९ ॥

यो येन वर्त्मना याति विरजं तीर्थमुत्तमम् ।
तत्र वर्त्मनि या नद्यो गोदाद्याः सागराम्बुगाः ॥ १० ॥

तास्तु वक्ष्यन्ते—

गौतमी तपती रेवा कृष्णा भीमरथी तथा ।
वर्त्मगा खलु साधूनां नृणां विरजयायिनाम् ॥ ११ ॥
मा(या)त्रा स्नानं प्रकर्तव्यं हेमश्राद्धं यथाविधि ।
विरजं प्राप्य सदृत्तं प्रणिपत्य मुहुर्मुहुः ॥ १२ ॥
दृष्ट्वा गङ्गात्रयं स्नानं पुण्यं कुर्यादतन्द्रितः ।
अमासोमसमायोगे विरजे फलमुत्तमम् ॥ १३ ॥

अथाऽऽदित्यवार उदुम्बरयात्राविधानम्—

आदित्ये सूर्यतीर्थस्य गमनं शस्यते बुधैः ।
ब्राह्मे मुहूर्त उत्थाय स्नात्वा गङ्गात्रयेऽमले ॥ १४ ॥
आगत्य भास्करं तीर्थमुदुम्बरतलं वरम् ।
जलं दृष्ट्वा महापुण्यं देवानामपि दुर्लभम् ॥ १५ ॥
तत्र स्नात्वा महातीर्थे विदध्याज्जलतर्पणम् ।
प्रातर्विधिं समाप्याऽऽशु हिरण्यश्राद्धमारभेत् ॥ १६ ॥
तर्पयित्वा पितृन्देवान्हिरण्याद्यैर्महाधनैः ।
अश्वदानं ततो दद्या(तः कुर्या)द्ब्राह्मणाय सदक्षिणम् ॥ १७ ॥
कलशं स्थापयित्वा तु यज्ञवृक्षस्य दक्षिणे ।
तस्योपरि निधायैव वंशपात्रं मनोरमम् ॥ १८ ॥
तस्योपरि न्यसेदस्त्रमच्छिन्नं च सकुङ्कुमम् ।
स्थापयेत्तत्र देवानां ब्रह्माद्यानां त्रयं शुभम् ॥ १९ ॥
कृत्वा स्वर्णमयं वत्स प्रत्येकं पलसंख्यया ।
तदर्धेन प्रकर्तव्यं यथाविभवमात्मनः ॥ २० ॥
प्रस्नाप्य पयसा दध्ना मधुनाऽऽज्ये(ऽक्ते)न सर्पिषा ।
पूजयेत्प्रयतो विद्वान्गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ २१ ॥
धूपदीपैश्च नैवेद्येस्ताम्बूलैश्च सदक्षिणैः ।
ततो बह्निमुखं कृत्वा जुहुयात्तिलसर्पिषा ॥
एकैकशोऽयुतं विद्वान्मन्त्रैस्तैः पृथक्पृथक् ॥ २२ ॥

ते च मन्त्राः—

ब्रह्म जज्ञानमिति ब्रह्मणे । तद्विष्णोः परमं पदमिति विष्णवे । अस्मे रुद्रा
इति रुद्राय ।

होमान्ते विधिवद्व्याद्धेनुं विद्वान्विरिञ्चये ॥
विष्णवे मेच(मञ्च)कं दद्यात्सोपधानं सदक्षिणम् ॥ २३ ॥
रुद्राय वृषभं दद्यात्सुशीलं च धुरंधरम् ।
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्संपूज्याऽऽचार्यमादरात् ॥ २४ ॥
मूर्तीर्निवेद्य तस्मै ता अन्येभ्यो भूरिदक्षिणाः ।
एवं निष्पाद्य तत्सर्वं प्रार्थयेद्यज्ञपादपम् ॥ २५ ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

हेमक्षीर महाविष्णो चतुरानन शंकर ।
पूजिते त्वयि वृक्षेशे पूजिताः सन्तु देवताः ॥ २६ ॥
कामान्मे सफलान्सर्वान्विधेहि सततं प्रभो ।
इति संप्रार्थ्य वृक्षं तं कृत्वा चैव प्रदक्षिणाम् ॥ २७ ॥
प्रणम्य विधिवद्भक्त्या ह्यागच्छेन्निजमन्दिरम् ।
आगत्य मन्दिरं विद्वान्भुञ्जीत सह भार्यया ॥ २८ ॥

इत्यादित्यवार उदुम्बरयात्राविधानम् ।

अमासोमसमायोगे प्रातरुत्थाय मानवः ।
कृत्वा गङ्गात्रये स्नानं निर्गच्छेद्विरजं प्रति ॥ २९ ॥
यत्र गङ्गात्रयस्यौघो मिश्री भवति निश्चयात् ।
विरजे भाग्यतो नृणां गदाधरसमीपतः ॥ ३० ॥
तत्र स्नानं प्रकुर्वीत महापातकशान्तये ।
निधाय वस्त्रयोर्ग्रन्थि दंपती पुत्रकाम्यया ॥ ३१ ॥
समुच्चार्याऽऽर्द्र(ऽऽत्म)पापानि पश्चात्तापाकुलेन्द्रियौ ।
स्नानं भक्त्या विदध्यातां विरजे तीर्थसत्तमे ॥ ३२ ॥
पिण्डदानं प्रकुर्वीत सुवर्णश्राद्धपूर्वकम् ।
गां प्रदद्याच्छुभां धीमान्विप्रायांहोविमुक्तये ॥ ३३ ॥
ततस्तु बुद्धिमान्गच्छेद्रामतीर्थं शुचिव्रतः ।
तत्र स्नानादिकं कृत्वा पश्येद्रामेश्वरं सुधीः ॥ ३४ ॥

कार्पासकानि वस्त्राणि तथा कर्णावतंसकान् ।
 ब्राह्मणेभ्योऽङ्गना दद्यात्कण्ठसूत्राणि चैव हि ।
 शूर्पाणि विविधान्येवं जानकीप्रीतये सुधीः ॥ ३५ ॥

तत्र मन्त्रः—

रामपत्नि महाभागे पुण्यमूर्ते निरामये ।
 गृहाणेमानि शूर्पाणि मया दत्तानि जानकि ॥ ३६ ॥

इति शूर्पप्रतिपादनमन्त्रः ।

कञ्चुकीवस्त्रयुग्मैश्च तथा कर्णावतंसकैः ।
 कण्ठसूत्रैश्च भूषाभिः प्रीयतां निमिनन्दिनी ॥ ३७ ॥

इति वस्त्रादिसमर्पणमन्त्रः ।

शतं वाऽथ तदर्धं वा तथा वा पञ्चविंशतिः ।
 द्वादश द्वादशार्धं वा तोषयेज्जनकात्मजाम् ॥ ३८ ॥
 ततस्तु भूरिदानानि कृत्वा तत्र महामते ।
 निर्गच्छेद्ब्रह्मितीर्थस्य समीपं श्रद्धयाऽन्वितः ॥ ३९ ॥
 तत्र स्नात्वा जले पुण्ये वैरजे भक्तिसंयुतः ।
 तर्पयित्वा पितृन्सम्यग्जुहुयात्तिलसर्पिषा ॥ ४० ॥
 अग्निं दूतं वेत्यमुना गायत्र्या वा समाहितः ।
 अष्टोत्तरशतं विद्वान्मेपं दद्यात्सदक्षिणम् ॥ ४१ ॥
 मेषालाभे प्रदद्याच्च पट्टमौर्णं द्विजातये ।
 तदभावे यथाशक्ति स्वर्णं दद्यात्समाहितः ॥ ४२ ॥

तत्र दानमन्त्रौ—

मेषवाह महाबाहो सप्तजिह्व सुरेश्वर ।
 प्रीतो भवानल श्रीमन्मेपे दत्ते मया सति ॥ ४३ ॥
 और्णपट्टमनुध्येयं स्वर्णबीजं तव प्रभो ।
 दत्तं गृहाण देवेश पापं संहर सत्त्वरम् ॥ ४४ ॥

इति मेषौर्णपट्टदानमन्त्रौ ।

ततो निर्गम्य गोविन्दवल्लभां कमलां सतीम् ।
 संप्राप्य प्रयतो भूत्वा दण्डवत्प्रणमेन्मुहुः ॥ ४५ ॥
 ततः स्नात्वा जले पुण्ये श्रियो दृष्टिनिपातने ।
 पुष्पाणां प्रकरैर्देवीं कमलां परिपूजयेत् ॥ ४६ ॥

चन्दनेनानुसंलिप्य धूपयेद्धूपसंचयैः ।
 दीपैर्नीराजयेत्पश्चान्नैवेद्यैः परितोषयेत् ॥ ४७ ॥
 कर्पूरसमवेतेन ताम्बूलेन सुतोषयेत् ।
 नव्येन वाससा देवीं कमलां परिधापयेत् ॥ ४८ ॥
 मुहुर्मुहुः प्रणम्यैव वर्णयेत्स्तोत्रसंचयैः ।
 ततस्तु प्रार्थयेद्भक्त्या कृत्वा चैव प्रदक्षिणम् ॥ ४९ ॥
 निर्गत्य स्थानतस्तस्मात्तारातीर्थमनुव्रजेत् ।
 दृष्ट्वा तज्जलकल्लोलं क्षारासृक्पूयसंयुतम् ॥ ५० ॥
 अकुत्सयंस्तु तत्तोयं स्नायाच्छुद्धेन चेतसा ।
 तत्र दद्याद्घृतं तैलं राजतं पारदं तथा ॥ ५१ ॥
 मुक्ताफलानि हीरांश्च विद्रुमांश्च तथैव च ।
 सनत्कुमार शक्त्यैव वित्तशाठ्यं विवर्जयेत् ॥ ५२ ॥
 ततस्तु तत्पयः पीत्वा चुलुकैः सप्तभिः सुधीः ।
 समुच्चरेच्च पापानि यथा लोकः शृणोत्यलम् ॥ ५३ ॥
 यानि चोच्चारितान्याशु विलयं यान्ति तानि वै ।
 तस्मादुत्तरतो गत्वा भार्गवं तीर्थमुत्तमम् ॥ ५४ ॥
 कृतस्नानस्तु ताराख्ये भार्गवे दानमादिशेत् ।
 चामरं व्यजनं छत्रं पादुकाः करपत्रि(यष्टि)काः ॥ ५५ ॥
 वस्त्रयुग्मानि(णि) धौतानि यज्ञसूत्राणि चैव हि ।
 भार्गवं च समुद्दिश्य ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥ ५६ ॥
 ततस्तूत्तरतो देशे देवे सिद्धेश्वरे सुधीः ।
 ताम्रं नागं च विन्यस्य देवमूर्धनि बुद्धिमान् ॥ ५७ ॥
 पूजां प्रकल्पयेद्भक्त्या सप्तधान्यैः सुशोभनाम् ।
 ततो गदाधरं देवमाव्रजेत्प्रयतः पुमान् ॥ ५८ ॥
 गयाश्राद्धं प्रकुर्वीत यथाविधि यथावसु ।
 ततो निर्गत्य विरजालक्ष्मीमानम्य भक्तिमान् ॥ ५९ ॥
 गङ्गात्रये जलं पीत्वा मन्दिरं स्वं समाविशेत् ।
 हेमरौप्यादिदानानि तत्र कुर्याच्च शक्तितः ॥ ६० ॥

तत्र विरजाम्भःपानमन्त्रः—

ये मे कुक्षिगता दोषा ये मे गर्भविमोचकाः ।

ते सर्वे विलयं यान्तु विरजाम्भोनिषेवणात् ॥ ६१ ॥

एवं कृते विधाने च वैरजे विरजा भवेत् ।

सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो ध्रियते च शतं समाः ॥

लभते पुत्रसंपत्तिं सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ ६२ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
विरजयात्राविधानम् ।

अथार्धोदयव्रतविधानम् ।

भगस्त्य उवाच—

भगवंस्त्वत्प्रसादेन श्रुतोऽयं व्रतविस्तरः ।

अर्धोदयं तु मे ब्रूहि दुर्लभं हि चराचरे ॥ १ ॥

जीवितं प्राणिनां पुण्यं यदि तद्वदसि प्रभो ।

कथं कार्यं कृते किं स्यात्फलं कथय षण्मुख ॥ २ ॥

श्रीस्कन्द उवाच—

श्रूयतां पुण्ययोगोऽयं दुर्लभोऽर्धोदयोदयः ।

तिर्यङ्मनुष्यदेवानां दुष्पापः सर्वकामदः ॥ ३ ॥

साधनायां व्यतीपात आदित्ये विष्णुदैवते ।

अर्धोदयः स विख्यातः सहस्रार्कग्रहैः समः ॥ ४ ॥

तथा च—

अमाऽर्कपातश्रवणैर्युक्ता चेत्पौषमाघयोः ।

अर्धोदयः स विज्ञेयः सूर्यपर्वशताधिकः ॥ ५ ॥

पुराकृतं बसिष्ठेन जामदग्न्येन सुव्रत ।

सनकाद्यैर्मनुष्यैश्च बहुभिर्मुनिसत्तमैः ॥ ६ ॥

अन्यैः शतसहस्रैश्च इष्टं भवति कुम्भज ।

व्रतानां यज्ञतीर्थानां फलं येन कृतं भवेत् ॥ ७ ॥

ससागरा धरा चैव सप्तद्वीपसमन्विता ।

दत्ता स्याद्येन तत्सर्वं विधानं विहितं भुवि ॥ ८ ॥

गङ्गायां च प्रयागे च पुष्कराणां त्रये तथा ।

मानसे विष्णुतीर्थे च यत्पुण्यं स्नानदानतः ॥ ९ ॥

अर्धोदयविधानेन लभते तत्फलं नरः ।
 नारी वा पुरुषो वाऽपि दंपती वा समाहितौ ॥ १० ॥
 विधुरो ब्रह्मचारी वा कुर्यादर्धोदयव्रतम् ।
 भश्ममेधायुते पुण्यमिष्टापूर्ते च यद्भवेत् ॥ ११ ॥
 गवां च रक्षणे पुण्यं तदर्धोदयकृलभेत् ।
 वाचि सत्यं गृहे लक्ष्मीं संततिं चानपायिनीम् ॥ १२ ॥
 आयुर्षश्चोभिवृद्धिं च विधानाल्लभते नरः ।
 इन्द्राग्नियमलोकेषु नैर्ऋतस्य पयःपतेः ॥ १३ ॥
 वसेद्वायुकुबेरेश्चभवनेषु विधानतः ।
 कोटिदाप्तेन बेनूनां पूता ये तीर्थवासिनः ॥ १४ ॥
 अर्धोदयविधानस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ।
 भूर्लोकाधिपतित्वेन स्वर्लोकपालनेन यत् ॥ १५ ॥
 फलं प्रोक्तं मुनिव्रातैस्तत्फलं लभते हि सः ।
 ततो हिरण्यगर्भस्य प्रभावात्परमेष्ठिनः ॥ १६ ॥
 अर्धोदयविधानस्य फलं प्राप्नोत्यविच्युतम् ।
 ततो विष्णुः सुव(प)र्णस्य त्रै(स्थस्त्रै)लोकयाधिपतिर्भवेत् ॥
 शङ्खचक्रगदाधारी वनमाली हरिः स्वयम् ॥ १७ ॥

अगस्त्य उवाच—

स्कन्द केन विधानेन कर्तव्यं व्रतमुत्तमम् ।
 अर्धोदयाख्यमुद्देशात्प्रब्रूहि मम पृच्छतः ॥ १८ ॥

श्रीस्कन्द उवाच—

कृते कृतं वसिष्ठेन त्रेतायां रघुणा कृतम् ।
 द्वापरे चर्मराजेन कलौ पूर्णोदयेन च ॥ १९ ॥
 अन्यैर्देवमनुष्यैश्च दानवैर्द्विजसत्तम ।
 कृतमर्धोदयं सम्यक्सर्वकामफलप्रदम् ॥ २० ॥
 माघमासे तु पौषे वा दर्शे सूर्यदिने तथा ।
 श्रवणे च व्यतीपाते कार्यमेतद्व्रतोत्तमम् ॥ २१ ॥
 पूर्वाह्णे संगमे स्नात्वा शुचिर्भूत्वा समाहितः ।

सर्पपापविशुद्ध्यर्थं नियमस्थो भवेन्नरः ॥ २२ ॥

तत्र नियमस्वीकारमन्त्रः—

त्रिदैवतं व्रतं देवाः करिष्ये भुक्तिमुक्तिदम् ।
भवन्तु संनिधौ मेऽद्य त्रयो देवास्त्रयोऽग्नयः ॥ २३ ॥

इति नियमस्वीकारमन्त्रः ।

ब्रह्मविष्णुमहेशानां सुवर्णपलसंख्यया ।
कर्तव्याः प्रतिमा ब्रह्मन्यथाध्यानं प्रयत्नतः ॥ २४ ॥
वित्ताभावे पलार्धेन तदर्धार्धेन वा तथा ।
शतत्रयेण सार्धेन द्रोणानां तिलपर्वतः ॥ २५ ॥
ब्रह्मणे तु प्रकर्तव्यो नात्र कार्या विचारणा ।
कर्तव्यौ विष्णुरुद्राभ्यां गिरी पूर्वोक्तसंख्यया ॥ २६ ॥
श्रद्धयात्रयं ततः कुर्यादुपस्करसमन्वितम् ।
देवानां त्रयमुद्दिश्य शक्तितो भक्तितत्परः ॥ २७ ॥
ब्रह्मविष्णुशिवप्रीत्यै दातव्यं तु गवां त्रयम् ।
हिरण्यभूमिधान्यादिदानं विभवसारतः ॥ २८ ॥
कुर्याच्च भद्रयोपेतो ब्राह्मणेभ्यः प्रयत्नतः ।
मध्याह्ने तु नरः स्नात्वा शुचिर्भूत्वा समाहितः ॥
तिलपर्वतमध्यस्थं पूजयेद्देवतात्रयम् ॥ २९ ॥

आदौ ब्रह्मपूजा—

नमो विश्वसृजे तुभ्यं सत्याय परमेष्ठिने ।
देवाय देवपतये यज्ञानां पतये नमः ॥ ३० ॥
ॐ नमो ब्रह्मणे पादौ स्वर्णगर्भाय वै नमः ।
ऊरू धात्रे नमो जानू जङ्घे च परमेष्ठिने ॥ ३१ ॥
वेधसे च नमो गुह्यं स्तनौ पद्मोद्भवाय च ।
कटिदेशं हंसवाहनाय वक्त्रं तु दक्षिणम् ॥ ३२ ॥
ॐ नमः सामवेदाय पूजयेत्पाश्चिमाननम् ।
नमो ह्यथर्ववेदाय यजुर्वेदाय वै नमः ॥ ३३ ॥
इत्यौत्तराहं पूर्वास्यमृगवेदाय नमो नमः ।
लोकपालास्ततः पूज्याः स्वैः स्वैर्मन्त्रैः प्रयत्नतः ॥ ३४ ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

हिरण्यगर्भं देवेश प्रधानव्यक्तरूपक ।

प्रसादसुमुखो भूत्वा पूजां मे सफलां कुरु ॥ ३५ ॥

इति प्रार्थनामन्त्रः ।

अथ विष्णुपूजा ।

नारायण जगन्नाथ नमस्ते गरुडध्वज ।

पीताम्बर नमस्तुभ्यं जनार्दन नमोऽस्तु ते ॥ ३६ ॥

अनन्ताय नमः पादौ विष्णुरूपाय वै नमः ।

ऊरू नमो मुकुन्दाय जानू जङ्घे नमो नमः ॥ ३७ ॥

गोविन्दायेति गुह्यं तु प्रद्युम्नायेति पूजयेत् ।

पद्मनाभायेति नाभिं चतुर्वक्त्राब्जसंभवाम् ॥ ३८ ॥

भुवनोदरायोदरं वक्षः कौस्तुभवक्षसे ।

चतुर्भुजाय वै बाहूंश्चतुरो वेदरूपकान् ॥ ३९ ॥

विश्वतोवदनायेति वदनं च शिरस्तथा ।

मौलिं सहस्रशीर्षाय केशवाय नमो नमः ॥ ४० ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

आदित्यचन्द्रनयन दिग्वाहो दैत्यसूदन ।

पूजां दत्तां मया भक्त्या गृहाण करुणाकर ॥ ४१ ॥

इति प्रार्थनामन्त्रः ।

अथ महेश्वरपूजा ।

महेश्वर महेशान नमस्ते त्रिपुरान्तक ।

जीमूतकेशाय नमो नमस्ते वृषभध्वज ॥ ४२ ॥

ईशानाय नमः पादौ चन्द्रशेखर ते नमः ।

जङ्घे जानू पशुपतय ऊरू शंकराय वै ॥ ४३ ॥

उमाकान्ताय गुह्यं तु नीललोहित ते नमः ।

नाभिं वा उदरं कृत्तिवाससे ते नमोऽस्त्विति ॥ ४४ ॥

नागोपवीतिने कुक्षी बाहून्भोगियुताय च ।

नीलकण्ठाय कण्ठं तु मुखं पञ्चमुखाय च ॥ ४५ ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

अन्धकारे ह्यमेयात्मन्नमो लोकान्तकारक ।

पूजां दत्तां मया भक्त्या गृहाण वृषभध्वज ॥ ४६ ॥
इति प्रार्थनामन्त्रः ।

इति पूजाक्रमः प्रोक्तो मन्त्रैरेतैः प्रयत्नतः ।
आचार्यं पूजयेद्भक्त्या वस्त्रालंकारभूषणैः ॥ ४७ ॥
हस्तमात्राः कर्णमात्राः पीठं छत्रं कमण्डलुः ।
श्वेतवस्त्रयुगं देयं ब्रह्मणे सर्वमूर्तये ॥ ४८ ॥
पीतवस्त्रयुगं विष्णोर्लोहितं शंकरस्य च ।
पश्चामृतेन स्नपनं पूजनं कुसुमैः स्वकैः ॥ ४९ ॥
ब्रह्माणं पूजयेद्भक्त्या कमलैश्च स्वकैरिति ।
विष्णुं संपूजयेद्धीमांस्तुलसीछदसंचयैः ॥ ५० ॥
शंकरं पूजयेत्पश्चाद्विल्वपत्रैरखण्डितैः ।
तत्कालसंभवैर्दिव्यैः पूजयेत्तु यथाक्रमम् ॥ ५१ ॥
यथाशक्ति तु कर्तव्यं व्रतमेतत्सुदुर्लभम् ।
जीवितं प्राणिनां चैव अनित्यं निश्चितं यतः ॥ ५२ ॥

अथ व्रताङ्गहोमविधिः—

देवतात्रयमुद्दिश्य शास्त्रदृष्टेन कर्मणा ।
रुद्राय विश्वरूपाय प्रजानां पतये नमः ॥ ५३ ॥
अनेनैव तु मन्त्रेण वक्त्रिं संस्थाप्य भक्तितः ।
ततो होमं प्रकुर्वीत यथाविभवसंभवम् ॥ ५४ ॥

अग्नये प्रजापतये स्वाहा । अग्नये विष्णवे स्वाहा । अग्नये रुद्राय स्वाहा ।

ॐकारपूर्वमुच्चार्य मन्त्रमेनं द्विजोत्तमः ।
त्रिदैवतयजिश्चात्र स्वाहान्ता परिकल्पिता ॥ ५५ ॥
होमस्तु चरुणा कार्यो घृताक्तेन द्विजन्मना ।
प्रजापते न त्वदेतानिति होमो विरिञ्चये ॥ ५६ ॥
इदं विष्णुर्विष्णवे च इयम्बकं शूलिने त्विति ।
एतैर्मन्त्रैराज्यहोमः स्वाहान्तैर्नामभिः स्मृतः ॥ ५७ ॥
ततः पूर्णाहुतिः कार्या ब्रह्मणे विष्णवे तथा ।

स्वाहान्ताय च रुद्राय धामन्त इति मन्त्रतः ॥ ५८ ॥
 मन्त्रमेनं पल्लवितं ब्रह्माद्यैर्नामभिः कृतम् ।
 समुच्चार्याऽऽहुतिं दद्याद्वां च होमावसानके ॥ ५९ ॥
 तरुणीं रूपसंपन्नां सुशीलां च पयस्विनीम् ।
 स्वर्णशृङ्गीं रौप्यसुरीं ताम्रपृष्ठां सवत्सकाम् ॥ ६० ॥
 रत्नपुच्छीं तथा वस्त्रघण्टाभरणभूषिताम् ।
 चामरैः पञ्चभिर्युक्तां कांस्यदेहां सदक्षिणाम् ॥ ६१ ॥
 आचार्याय सुशीलाय श्रोत्रियाय कुटुम्बिने ।
 दत्त्वा तां धेनुकां धीमान्सर्वकामानवाप्नुयात् ॥ ६२ ॥
 तेन दत्तं हुतं तप्तमिष्टं यज्ञैः सहस्रशः ।
 अर्धोदयस्य सामर्थ्याद्विधानज्ञो विधानकृत् ॥ ६३ ॥
 पूरितं पायसेनैव साज्येन च सदक्षिणम् ।
 कांस्यपात्रं मुनिश्रेष्ठ दद्याद्विप्राय सुव्रत ॥ ६४ ॥
 सूर्यमुद्दिश्य विप्रर्षे महापापोपशान्तये ।
 एवं कृते विधानेऽस्मिन्सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ ६५ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 स्कन्दपुराणोक्तमर्धोदयव्रतविधानम् ।

अथ कपिलापष्टीविधानम् ।

भविष्यपुराणे कृष्णयुधिष्ठिरसंवादे —

भाद्रे स्कन्दतिथौ कृष्णे रोहिण्यां भौमवासरे ।
 व्यतीपाते महायोगे कपिलापष्टिरु(सा पष्टी कपिलो)च्यते ॥ १ ॥
 षण्णां योगे महापुण्ये नृणां भाग्यानुसारिणी ।
 तदा धर्मस्य सिद्धयर्थं विधानं क्रियते बुधैः ॥ २ ॥
 सूर्यनारायणं देवं स्वर्णमूर्तिं सुलक्षणम् ।
 पलेन कारयेद्धीमांस्तदधार्धिनेन वा पुनः ॥ ३ ॥
 रथं रौप्यमयं कुर्यात्पलैरष्टभिरावृतः ।
 सप्तभिस्तुरगैः सार्धं ध्वजस्तम्भसमन्वितम् ॥ ४ ॥
 तत्र तं विन्यसेद्देवं सूर्यनारायणं प्रभुम् ।

द्विभुजं पद्महस्तं च गरुडाग्रजसारथिम् ॥ ५ ॥
 पुण्यकाले य(त)दा राजन्कृतस्नानो नरोत्तमः ।
 यो वा को वा श्रिया युक्तः कुर्यादेतद्विधानकम् ॥ ६ ॥
 तर्पयित्वा पितृन्देवाञ्श्रद्धया परया युतः ।
 विधानं प्रारभेद्धीमान्सर्वकामप्रसिद्धये ॥ ७ ॥
 स्वस्तिवाचनपूर्वं तु हवनं कारयेद्बुधः ।
 अग्निवक्त्रं ततः कृत्वा तिलाज्यं जुहुयाद्बुधः ॥ ८ ॥
 सहस्रं चैव सावित्र्या प्रधानं चैव तत्स्मृतम् ।
 हुत्वा स्विष्टकृतं सम्यक्प्रायश्चित्तं तु सार्षपा ॥ ९ ॥
 होमादौ पूजितं सूर्यं होमान्ते प्रतिपूजयेत् ।
 पुष्पैः कालोद्भवैर्गन्धैर्लेपयेत्प्रयतः पुमान् ॥ १० ॥
 सकर्पूरेण धूपेन धूपयेत्तदनन्तरम् ।
 दीपैर्नाराजयेत्स्निग्धैर्नैवेद्यैः परितोषयेत् ॥ ११ ॥
 ततो गां कपिलां साध्वीं बहुक्षीरां शुभप्रजाम् ।
 नवाम्रपल्लवाभासां पीतनेत्रां बृहत्स्तनीम् ॥ १२ ॥

शुभप्रजामित्यस्य जीवत्प्रजामव्यङ्गवत्सां चेत्यर्थः ।

समशृङ्गीं शुभारावां सालंकारां सवत्सकाम् ।
 तां गां यत्नेन संपूज्य वस्त्रयुग्मेण वेष्टिताम् ॥ १३ ॥
 दण्डवत्प्रणिपातेन प्रणम्य भक्तितत्परः ।
 आचार्याय सुशीलाय ससुवर्णां प्रदापयेत् ॥ १४ ॥

तत्र दानमन्त्रः—

सर्वदेवमयीं दोग्ध्रीं सर्वलोकमयीं तथा ।
 सर्वलोकनिमित्तं गां सर्वदेवनमस्कृताम् ॥ १५ ॥
 प्रयच्छामि महासत्त्वामक्षय्यां च शुभामिति ।
 प्रीणन्तु सकला देवा धर्मसिद्धिः प्रजायताम् ॥ १६ ॥
 या लक्ष्मीः सर्वभूतानां या च देवे व्यवस्थिता ।
 धेनुरूपेण सा देवी मम पापं व्यपोहतु ॥ १७ ॥

गावो मे अग्रतः सन्वित्याचार्यस्य गोत्रनामान्युच्चार्योद्दङ्मुखो यजमानः
 प्राङ्मुखाय ब्राह्मणाय तां कपिलां दद्यात् । ततः पूर्वपूजितं सूर्यनारायणं विदुषे
 ब्राह्मणाय दद्यात् ।

तत्र दानमन्त्रः—

श्रुमणे जगतां नाथ विश्वात्मन्विश्वतोमुख ।
दानेन तव देवेश मम नश्यतु पातकम् ॥ १८ ॥

इति दानमन्त्रः ।

ततः संपादिते दाने त्वन्येभ्यो दीयतां वसु ।
यथासंख्यं यथावित्तं यथाविधि यथासुखम् ॥ १९ ॥
एवं कृते विधानेऽस्मिन्गृहमागम्य गुव्रत ।
ब्राह्मणान्भोजयेच्छक्त्या ततो भुञ्जीत च स्वयम् ॥ २० ॥
सूर्यपर्वशतान्येवं सोमग्रहसहस्रकम् ।
राजेन्द्र कपिलापष्ठ्याः कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥ २१ ॥
कृत्वा तु कपिलापष्ठीविधानं विधिपूर्वकम् ।
ब्रह्महा मुच्यते पापान्नात्र कार्या विचारणा ॥ २२ ॥
इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
भविष्यपुराणोक्तं कपिलापष्ठीविधानम् ।

अथ सिंहस्थे बृहस्पतौ बृहस्पतिपूजनसहितं गोदा-
वरीयात्राविधानम् ।

ब्रह्माण्डपुराणे ब्रह्मनारदसंवादे नारद उवाच—

ये त्वया प्रापिता देव संसारं भुवि मानवाः ।
तेषामुद्धरणार्थाय तीर्थं किं कल्पितं विभो ॥ १ ॥

श्रीब्रह्मोवाच—

अस्ति विख्यातमतुलं पापाब्धौ तरणं परम् ।
गोदावरीति विख्यातं शंभुना रचितं पुरा ॥ २ ॥
ब्रह्माद्रिशिखराज्जातं तीर्थानामुत्तमोत्तमम् ।
शतयोजनविस्तीर्णं पूर्वसागरगं शुभम् ॥ ३ ॥
ब्रह्महत्यादिपापानां गौतमी क्षयकारिणी ।
दृष्टा सती मुनिश्रेष्ठ प्राणिनां भवयायिनाम् ॥ ४ ॥
गङ्गाद्वारे कुशावर्ते बिल्वके नीलपर्वते ।
स्नात्वा कनखले तीर्थे पुनर्जन्म न लभ्यते ॥ ५ ॥

इति मोक्षतीर्थपञ्चकम् ।

अथ ब्रह्महत्याविनाशनं तीर्थं श्रीगोदावर्यां पञ्चनगरे—

अरुणावरुणयोर्मध्ये यत्र प्राची सरस्वती ।

तत्र स्नात्वा च पीत्वा च ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥ ६ ॥

ततश्च काशीसमं प्रतिष्ठानाख्यं तीर्थम्—

विश्वेशः पिप्पलेशोऽयं गोदेयं किल जाह्नवी ।

प्रतिष्ठानमिदं काशी सिंहस्थे च बृहस्पतौ ॥ ७ ॥

तथा च—

इयम्बके पद्मके चैव गङ्गासागरसंगमे ।

सर्वत्र सुलभा गोदा त्रिषु स्थानेषु दुर्लभा ॥ ८ ॥

अतः कारणात्सर्वपातकनाशेप्सुना सिंहस्थे गुरौ सति गौतमीतीरं गन्तव्यम् ।
तत्राऽऽदौ यात्रामुखप्रयोगः—

अद्य गच्छामि गौतम्या दर्शनेप्सुरतन्द्रितः ।

यात्रानियममासाद्य जपन्नारायणाभिधाम् ॥ ९ ॥

नमो देवि महापुण्ये पुण्यतोयसमन्विते ।

तव यात्रां विधास्यामि प्रसीद गौतमात्मजे ॥ १० ॥ इति ।

ततो दर्शने जातेऽयं मन्त्रः—

मनोवाक्कायजैः पापैर्ग्रस्तो बहुविधैरपि ।

वीक्ष्य मातर्भवेयं त्वां पूतोऽहं देवि गौतमि ॥ ११ ॥

नमो देवि महागङ्गे महादेवस्य बलभे ।

बहति त्वां शिवो मूर्ध्ना गोदावरि नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥

इति नमस्कृत्य गङ्गां प्राप्तः सन्कृताञ्जलिर्भूत्वा गङ्गां प्रणमेत् । तत्र मन्त्रः—

दण्डवत्प्रणिपातेन दृष्ट्वा गोदावरीपयः ।

प्रणमन्त्यसकृद्ये तु ते न यान्ति यमालयम् ॥ १३ ॥

देवि गौतमि पापाब्धौ मग्नं मां त्वं समुद्धर ।

लुठन्तं ते तटे मातः कुरु मोक्षस्य भाजनम् ॥ १४ ॥

इति प्रणिपातमन्त्रः । ततः—

मुण्डनं चोपवासश्च सर्वतीर्थेष्वयं विधिः ।

इतिन्यायेन तीर्थविधिं कृत्वा सिंहस्थवृहस्पतिपूजनमारभेत ।

सौवर्णं त्रिदशाचार्यं कृतं वै पलसंख्यया ।

तण्डुलोपरि विन्यस्ते कलशे स्थापयेद्बुधः ॥ १५ ॥

कुम्भवक्त्रे तु विन्यस्य वंशपात्रं सवस्त्रकम् ।

तत्र तं स्थापयेद्विद्वान्प्रतिष्ठामन्त्रतत्परः ॥ १६ ॥

बार्हस्पत्येन सूक्तेन तोषयेद्देवमन्त्रिणम् ।

*वृहस्पतेतिमन्त्रेण जुहुयात्तिलसर्पिषा ॥ १७ ॥

अष्टोत्तरसहस्रं च शतं चाष्टाधिकं तथा ।

होमान्ते विधिवद्द्यादामेकां च पयस्विनीम् ॥ १८ ॥

जाते नक्ते द्विजैः सार्धं विदध्याज्जागरं बुधः ।

गीतवाद्यैश्च नृत्यैश्च पुराणश्रवणेन च ॥ १९ ॥

शान्तिपाठैरनेकैश्च नीत्वा रात्रिं प्रयत्नतः ।

प्रातःकाले समुत्थाय स्नानं कृत्वा यथाविधि ॥ २० ॥

तर्पयित्वा सुमनसो मुनीन्मनुजसत्तमान् ।

पितृंश्च विधिवद्विद्वान्प्रारभेत्पूजनं पुनः ॥ २१ ॥

मुनिपुष्पैः समभ्यर्च्य चन्दनेनानुलेपयेत् ।

धूपैश्च विविधैर्देवराजाचार्यं च धूपयेत् ॥ २२ ॥

दीपैर्नीराजयेद्भक्त्या नैवेद्यं परितोषयेत् ।

पीतवस्त्रद्वयं तस्मै हर्षयेद्देवमन्त्रिणे ॥ २३ ॥

वृहस्पते प्रथममितिसूक्तं च जपेत्ततः ।

ततस्तु प्रार्थयेन्नाकिगुरुं च श्लक्ष्णया गिरा ॥ २४ ॥

नमस्ते वाग्विलासाय देवाचार्याय धीमते ।

सिंहस्थाय च जीयाय त्रैलोक्यहितकारिणे ॥ २५ ॥

अथ गौतमीप्रार्थनम्—

गोदावरि महाभागे महापापविनाशिनि ।

धर्मार्थकाममोक्षाणां +सुलभे गौतमप्रिये ॥ २६ ॥

* संधिगर्षः । + लभधातोरन्तर्भावित्वर्थः । तर्कतरी पचादित्वादच्प्रत्यये लम्भयित्री प्रापयित्रीत्यर्थः ।

नमस्ते भुवनाधीशे नमस्ते सुरनिम्नगे ।
 ब्रह्मादिशिखरोद्भूते पाहि लोकत्रयं शिवे ॥ २७ ॥
 मज्जन्ति तव तोये ये तवाङ्घ्रीं प्रणमन्ति ये ।
 तान्समुद्धर वेगेन पापाब्धेर्गौतमात्परे ॥ २८ ॥ इति ।

गोदावरीयायिनां नराणां प्रशंसा—

ते धन्या मानवा लोके कुतस्तेषां तु दुष्कृतम् ।
 दृष्ट्वा यैर्गौतमी गङ्गा सिंहस्थे सुरमन्त्रिणि ॥ २९ ॥
 जैनन्यु(नो)पकृतस्येह नोत्तीर्णाः स्युः कदाचन ।
 ते भवन्ति न संदेहो गोदावर्यां तु पिण्डदाः ॥ ३० ॥
 अश्वमेधेन किं पुण्यं किं फलं भृगुसेवनात् ।
 यावन्न क्रियते लोके गोदावर्यां निषेवणम् ॥ ३१ ॥
 ततरतु विधिवद्द्याद्गुरुं हेममयं शुभम् ।
 आचार्याय सुवृत्ताय सर्वोपस्करसंयुतम् ॥ ३२ ॥
 कृताञ्जलिपुटो भूत्वा ह्याचार्यं प्रार्थयेत्सुधीः ।
 दानेन च नमस्कारैर्विनयेन क्षमापयेत् ॥ ३३ ॥
 इति कृत्वा गुरोः पूजां विसृज्याऽऽचार्यसत्तमम् ।
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्भैर्नानाविधैस्तदा ॥ ३४ ॥
 एवं कृते विधाने च पापमुक्तो भवेन्नरः ।
 सर्वान्कामानवाप्नोति नन्दते* पुत्रपौत्रकम् ॥ ३५ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां सिंहस्थे बृहस्पतौ
 बृहस्पतिपूजनसहितं गोदावरीयात्राविधानम् ।

अथ कन्यागते बृहस्पतौ श्रीशैलयात्राविधानम् ।

स्कन्दपुराणे स्कन्दसूर्यसंवादे सूर्य उवाच—

कन्यागते गुरौ स्कन्द कृष्णायां किं विधीयते ।
 श्रीशैले तु विशेषेण तन्ममाऽऽचक्ष्व पृच्छतः ॥ १ ॥

श्रीस्कन्द उवाच—

शृणु भास्करं वक्ष्यामि श्रीशैले यद्विधीयते ।

* आर्षत्वाव्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् ।

विधानं मनुजैः सम्यक्कृष्णायात्रानुयायिभिः ॥ २ ॥
 या गतिर्योगमु(यु)क्तानां मुनीनामूर्ध्वरेतसाम् ।
 सा गतिः सर्वजन्तूनां कृष्णातीरनिवासिनाम् ॥ ३ ॥
 महाचले च वैराटे तथा वेणीसमागमे ।
 करहाटे महातीर्थे कृष्णा भागीरथीसमा ॥ ४ ॥
 कन्यागते सुराचार्ये ये गच्छन्ति रमाचलम् ।
 शिवरात्रौ विशेषेण ते न पश्यन्ति भास्करिम् ॥ ५ ॥

तत्र शिवरात्रौ श्रीपर्वतं गत्वा यत्क्रियते विधानं तद्वक्ष्यते—

चतुर्दश्यां प्रभाते च समुत्थाय समाहितः ।
 स्नायान्नीलसरित्तोये कुर्याद्देवादितर्पणम् ॥ ६ ॥
 कृतक्षौरक्रियः सम्यग्जीवज्जनककादृते ।
 कुर्यात्स्नानविधिं सर्वमुचितं श्रद्धयाऽन्वितः ॥ ७ ॥
 हेमश्राद्धं ततः कुर्याद्दानानि किल भूरिशः ।
 ततो मन्दिरमागत्य श्रीशैलाधिपतेः प्रभोः ॥ ८ ॥
 मण्डपादि त्रिदध्यात्तु तोरणाडम्बराणि च ।
 सायंकाले शिवं पश्येन्मल्लिकार्जुनमादरात् ॥ ९ ॥
 गर्भागारं गिरीशस्य क्षालयेद्गन्धवारिणा ।
 ततस्तु धूपयेद्धूपैर्दीपैर्नीराजयेत्ततः ॥ १० ॥
 ततो बिल्वदलैः पूजैः कर्णिकारसमन्वितैः ।
 पूजयेत्पार्वतीनाथं यावत्स्याच्चेतसो रुचिः ॥ ११ ॥
 पूजान्ते धूपयेद्देवं दीपैर्नीराजयेत्पुनः ।
 नैवेद्यैर्विविधैर्भक्त्या तोषयेत्पार्वतीपतिम् ॥ १२ ॥
 ब्राह्मणेभ्यो धनं दद्याच्छ्रीकृष्णाप्रीतये बुधः ।
 सवत्सां महिषीं दद्यात्सपल्याणं तुरंगमम् ॥ १३ ॥
 धेनूः पयस्विनीर्दद्याच्छक्रं सवृषं तथा ।
 पट्टकूलानि वस्त्राणि भूभिदानं तथैव च ॥ १४ ॥
 प्रियंगूर्ध्वगोधूमान्यावनालांस्तथा तिलान् ।
 एवमादीनि धान्यानि शय्या दीपांश्च दीपिकाः ॥ १५ ॥
 करपत्रीश्च मणिकाञ्जलपूर्णास्तथैव च ।
 फलानि बीजपूराणां कूष्माण्डानि तथैव च ॥ १६ ॥

नारिकेलानि रम्भाणि जम्बीराणि तथैव च ।
 वंशपात्राणि चित्राणि च्छत्राणि विविधानि च ॥ १७ ॥
 राजिकामानमप्यत्र श्रीकृष्णायां प्रदापयेत् ।
 तत्सुमेरुसमं प्रोक्तं नात्र कार्या विचारणा ॥ १८ ॥
 ततः प्रभाते विमले स्नात्वा कृष्णाजले बुधः ।
 ब्राह्मणान्भोजयेच्छ्रेष्ठानन्नैर्नानाविधैः शुभैः ॥ १९ ॥
 कृतप्रणामो देवस्य स्वयं भुञ्जीत भक्तिमान् ।
 पारणान्ते ततस्तिस्त्रो यष्टीर्वेणुमयीः शुभाः ॥ २० ॥
 गृहीयाद्गौरिकं तोयसिक्ताम्बरधरः शुचिः ।
 ततस्तु गृहमागच्छेद्भृतब्रह्मव्रतः पुमान् ॥ २१ ॥
 अन्येऽपि लौकिकाचारा मार्गसेकादयो गृहे ।
 भगिनीप्रमुखा नार्यः कुर्युस्तांस्तद्धिते रताः ॥ २२ ॥
 नारी वा रविवारे तु भस्त्रं पूजयेत्सुरम् ।
 गन्धपुष्पाक्षतादीनि शुभद्रव्याणि चार्पयेत् ॥ २३ ॥
 नैवेद्यं विविधं चैव ताम्बूलं तदनन्तरम् ।
 ततस्तु भोजयेत्लोकान्ब्राह्मणादीञ्छुचित्रतान् ॥ २४ ॥
 ततस्तु स्वयमश्रीयाद्भूमौ शयनमाचरेत् ।
 ततः प्रभाते विमले सोमवारे शुचिव्रतः ॥ २५ ॥
 स्नात्वा तैलेन शुद्धेन नव्यवस्त्रावृतस्तदा ।
 पारिवर्हीश्व मेधावी गृहीयात्पुस्तमाहितः ॥ २६ ॥
 कृतस्वस्त्ययनो गच्छेन्मन्दिरं पार्वतीपतेः ।
 गौरिकं तानि वस्त्राणि यष्टीर्वेणुमयीस्तथा ॥ २७ ॥
 तत्सर्वं विन्यसेत्तत्र वृषभस्य समीपतः ।
 ततोऽवलोकयेद्देवं शंकरं लोकशंकरम् ॥ २८ ॥
 गन्धपुष्पाक्षतादीनि चार्पयेद्भक्तिमान्नरः ।
 प्रार्थयेद्देवशेषं पार्वतीप्राणवल्लभम् ॥ २९ ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

इह जन्मनि देवेश यत्कृतं पातकं मया ।
 तत्सर्वं त्वं महादेव क्षिप्रं नाशय शंकर ॥ ३० ॥

इति प्रार्थयित्वा प्रदक्षिणीकृत्य समन्दिरं व्रजेत् । ततः मुहूर्द्धिः सहैकपङ्क्तौ भुञ्जीत ।

एवं कृते विधाने च कन्यासंस्थे बृहस्पतौ ।
श्रीगिरौ कृष्णवेण्या वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥
सर्वान्कामानवाप्नोति देहान्ते मोक्षमाप्नुयात् ॥ ३१ ॥

तत्र पुराणवचनं केदारखण्डे—

रेतःकुण्डोदकं पीत्वा वाराणस्या मृतो यदा ।
श्रीशैलशिखरं दृष्ट्वा पुनर्जन्म न लभ्यते ॥ ३२ ॥
इति श्रीनृसिंहभट्टविरचिताया विधानमालाया
कन्यागते बृहस्पतौ श्रीशैलयात्राविधानम् ।

अथ कार्तिकेयदर्शनविधानम् ।

पद्मपुराणे—

कार्तिक्या कृत्तिकायोगे शिवयोगसमन्विते ।
यः पश्येत्कृत्तिकापुत्रं स भवेद्ब्रह्मसत्तमः ॥ १ ॥
नीलकुण्डे सुधीः स्नात्वा स्वामिनं योऽवलोकयेत् ।
सप्तजन्मसु विप्रः स्याद्भनाढ्यो वेदपारगः ॥ २ ॥
दृष्ट्वा देवं महासेनं कुशैः पुष्पैः समर्चयेत् ।
चन्दनेनानुसंलिप्य दशाङ्गेनैव धूपयेत् ॥ ३ ॥
दीपैर्नीराजयेद्भक्त्या मयूरमपि पूजयेत् ।
कमण्डलुं ब्रह्मसूत्रमक्षमालां कुशांस्तिलान् ॥
पञ्चोपवीतकान्येव(उपवीतानि च मृदं) समन्त्राणि समर्पयेत् ॥ ४ ॥

तत्र मन्त्राः—

कमण्डलुर्जलापूर्णः स्वर्णगर्भः सुलक्षणः ।
अर्पितस्ते महासेन प्रसन्नोऽनेन मे भव ॥ ५ ॥

इति कमण्डलुसमर्पणमन्त्रः ।

ब्रह्मसूत्रं महादिव्यं प्रीतये ते मयाऽर्पितम् ।
ब्रह्मजन्मास्तु मे देव ब्रह्मसूत्रसमर्पणात् ॥ ६ ॥

इति यज्ञोपवीतसमर्पणमन्त्रः ।

गोमतीतीरसंभूता गोपीवापीसमुद्भवा ।

य(मृ)दर्पिता मया तुभ्यं ब्रह्मजन्माप्तये गुह ॥ ७ ॥

* इति गोपीचन्दनार्पणमन्त्रः ।

उपवीतानि शुभ्राणि पवित्राणि शिवात्मज ।

पुरतस्तेऽर्पयाम्यद्य प्रसादार्थं तव प्रभो ॥ ८ ॥

इति पवित्रारोपणमन्त्रः ।

तिलाः काश्यपसंभूतास्तिलाः पापहराः स्मृताः ।

पादयोरपितास्तेऽद्य सर्वपापापनुत्तये ॥ ९ ॥

इति तिलार्पणमन्त्रः ।

दर्भा ब्रह्ममया विष्णुस्वरूपा रुद्ररूपिणः ।

प्रीत्यर्थं तव देवेश न्यस्ताः पादतले मया ॥ १० ॥

इति दर्भारोपणमन्त्रः ।

अष्टाविंशतिसंख्याकै रुद्राक्षैर्योजिता मया ।

अर्पिता तव हस्ते च गृहाण सुरसैन्यप ॥ ११ ॥

इत्यक्षमालार्पणमन्त्रः ।

सुवर्णमुत्तमं लोके भुक्तिमुक्तिप्रदं तथा ।

अर्पितं तव देवेश दैन्याज्ञानापनुत्तये ॥ १२ ॥

इति सुवर्णार्पणमन्त्रः ।

एतत्कृत्वा समस्तं च प्रणम्य च मुहुर्मुहुः ।

प्रसादतो विनिर्गत्य विधानान्तरमादिशे(चरे)त् ॥ १३ ॥

* कमण्डलुमिन्यादिसमर्पयदित्यन्तश्चाकेन तत्तत्पदार्थसमर्पणं प्रतिज्ञाय तत्र पोरणमन्त्रप्रदर्शनार्थं तत्र मन्त्रा इत्यवतरणं दत्त्वा कमण्डलुर्जलापूर्ण इत्याद्यस्ते ते मन्त्रा उक्ताः । तत्र गोमतीतीरेत्यादिगोपीचन्दनसमर्पणमन्त्रदर्शनात्पवित्रभमर्पणमन्त्रे च संख्याया अनुपादानात्तथाऽग्रे स्वर्णसमर्पणमन्त्रदर्शनाच्च पञ्चोपवीतेत्यादितृतीयचरणस्थानं मृतसुवर्णोपवीतानीतिपाठेन भाव्यमित्यनुमीयते ।

दक्षिणं स्कन्धमारोप्य भागिनेयं तु मातुलः ।
 कुर्यात्प्रदक्षिणास्तिस्त्रस्तूर्यनादसमन्वितः ॥ १४ ॥
 ततोऽवतार्य तं धीमान्स्वस्कन्धाद्भगिनीसुतम् ।
 संपूजयेद्धिरण्यादिसंपद्भिर्भक्तिपूर्वकम् ॥ १५ ॥
 ततो मन्दिरमागत्य स्नायात्तलेन सुव्रतः ।
 ब्राह्मणान्भोजयेद्भूरिधनं तेभ्यः समर्पयेत् ॥ १६ ॥
 एवं कृते विधाने तु सर्वपापहरे शुभे ।
 सप्तजन्मसु विप्रः स्याद्भनाढ्यो वेदपासगः ॥ १७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 कार्तिकेयदर्शनविधानम् ।

अथ ब्रह्मकूर्चविधानम् ।

ब्रह्मशुद्धौ गृहारम्भे सूतके मृतसूतके ।
 यज्ञारम्भे धनप्राप्तौ प्रायश्चित्ते विशेषतः ॥ १ ॥
 रोगमुक्तौ च संपर्के क्षुद्रपापापनुत्तिषु ।
 विदध्याद्ब्रह्मकूर्चं च मासि मांस्यपि वा द्विजः ॥ २ ॥

तत्र ब्रह्मकूर्चलक्षणम्—

दुग्धं दधि घृतं मूत्रं पञ्चमं गोमयं तथा ।
 देहशुद्ध्यर्थमादिष्टं पवित्रं गव्यपञ्चकम् ॥ ३ ॥
 गव्यं तु गोश्च संभूतं क्षीरदध्यादि पञ्चकम् ।
 पृथग्भूतं गवां चैव पञ्चानामिति निश्चयः ॥ ४ ॥
 नवाम्रपल्लवाभा या पीतनेत्रा सुलक्षणा ।
 सा धेनुः कपिला ज्ञेया साक्षाद्विष्णुस्वरूपिणी ॥ ५ ॥
 लाक्षारससमानाभा श्वेतरोम्णी ललाटतः ।
 सा रक्ता कथिता विष्णुस्वरूपा धेनुरुत्तमा ॥ ६ ॥
 या गौः स्फटिकसंकाशा सुस्निग्धा स्निग्धलोचना ।
 सा गौः श्वेता समादिष्टा मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ ७ ॥
 अतसीपुष्पसंकाशा लम्बपीनपयोधरा ।
 सा नीली सुरभिर्ज्ञेया महापापविनाशिनी ॥ ८ ॥

भिन्नाञ्जनसमानाभा पीनोद्धी चारुमस्तका ।

सा कृष्णा कृष्णरूपा च महादोषनिवारिणी ॥ ९ ॥

* कपिलाया घृतं (मूत्रमेकपलं) ग्राह्यमङ्गुष्ठार्धं च गोमयम् ।

क्षीरं सप्तपलं ग्राह्यं दधि त्रिपलमुच्यते ॥ १० ॥

घृतमेकपलं ग्राह्यं पलमेकं कुशोदकम् ।

घृतेन तेजो वीर्यं च घृतमायुर्यशस्करम् ॥

घृतमारोग्यकरणं घृतं रक्षोघ्नमेव च ॥ ११ ॥

नद्यां प्रस्रवणे तीर्थे रहस्ये निर्जने बने ।

यज्ञागारे गवां गोष्ठे देवतायतने तथा ॥ १२ ॥

तत्र स्नात्वा शुचिर्भूत्वा शुक्लवासा जितेन्द्रियः ।

+ गायत्र्या गृह्य गोमूत्रं गन्धद्वारेति गोमयम् ॥

आप्यायस्वेति च क्षीरं दधिक्राव्णोऽथ वै दधि ॥ १३ ॥

तेजोऽसि शुक्ल(क्र)मस्यमृतमसि नामधामासि प्रियं देवानां घृतं देवयजन-
मसीत्याज्यम् । देवस्य त्वेति कुशोदकम् । आपो हि ष्ठा मयोभुव इति त्र्यृचेना-
भिमध्नीयात् ।

पालाशं पात्रपत्रं च ताम्रभाजनमेव च ।

उदुम्बरमयं पात्रं श्रीवृक्षस्याथ वा भवेत् ॥ १४ ॥

सप्तपत्राश्च ये दर्भा अक्षता यवसंयुताः ।

तेषु केषु च संगृह्य पञ्चगव्यं द्विजोत्तमः ॥ १५ ॥

सुवेण जुहुयाद्विद्वांस्तैर्वा यज्ञार्थकोविदः ।

स्वाहाऽग्नये च प्रथमा सोमायेति परा स्मृता ॥ १६ ॥

आहुतिद्वितयं मुख्यं पञ्चगव्ययजौ स्मृतम् ।

मा नस्तोक इदं विष्णुर्गायत्री ब्रह्मजेत्यपि ॥ १७ ॥

* गोमूत्रं ताम्रवर्णायाः श्वेतायाश्चापि गोमयम् ।

पयः काञ्चनवर्णाया नीलायाश्च तथा दधि ॥ १ ॥

घृतं च कृष्णवर्णायाः सर्वं कापिलमेव च ।

अलाभे सर्ववर्णानां पञ्चगव्येष्वयं विधिः ॥ २ ॥

इत्यन्यत्र ।

समग्रस्य तृतीयांशमेतैर्व्याहृतिभिस्तथा ।
 अनले विधिवद्धुत्वा हुतशेषं पिबेन्नरः ॥ १८ ॥
 पञ्चगव्यं महाश्रेष्ठं देवानामपि दुर्लभम् ।
 मासि मासि नरोऽश्रीयात्सर्वपापापनुत्तये ॥ १९ ॥
 अर्धमासे तु योऽश्रीयात्स स्वर्गं प्राप्नुयाद्ध्रुवम् ।
 ब्रह्मलोकमवाप्नोति षष्ठे षष्ठे तु वासरे ॥ २० ॥
 वचस्य(यत्त्वग)स्थितं पापं देहे तिष्ठति वै नृणाम् ।
 ब्रह्मकूर्चो दहेत्सर्वं घृतसिक्त इवानलः ॥ २१ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 ब्रह्मकूर्चविधानम् ।

अथ बालकस्योर्ध्वदन्तोद्गमजनितविघ्नभङ्गविधानम् ।

ब्रह्मयामले—

प्रथमं दन्तनिर्मुक्तिरूर्ध्वा बालस्य चेद्भवेत् ।
 क्लेशाय मातुलस्येह तदा प्रोक्ता मनीषिभिः ॥ १ ॥
 विघ्नभङ्गं प्रवक्ष्यामि विधानं विधिपूर्वकम् ।
 सौवर्णं राजतं वाऽपि ताम्रं कांस्यमयं तथा ॥ २ ॥
 दध्योदनेन पूर्णं तु पात्रं दद्याच्छिशोः करे ।
 समन्त्रं भाजनं दत्त्वा संपश्येन्मातुलः शिशुम् ॥
 सालंकारं सवस्त्रं च शिशुमालिङ्ग्य सादरम् ॥ ३ ॥

तत्र मन्त्रः—

रक्ष मां भागिनेय त्वं रक्ष मे सकलं कुलम् ।
 गृहीत्वा भाजनं सान्नं प्रसन्नो भव मे सदा ॥ ४ ॥
 निर्विघ्नं कुरु कल्याणं निर्विघ्नां च स्वमातरम् ।
 त्वमप्यात्मानमातिष्ठ चिरं जीव मया सह ॥ ५ ॥

इति भाजनदानमन्त्रः ।

ततोऽभिनन्दयेद्विद्वान्भगिनीं भगिनीपतिम् ।
 ज्येष्ठाञ्ज्रेष्ठान्गुरुन्विप्रान्पवित्रानभिवादयेत् ॥ ६ ॥

एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ।
 ऊर्ध्वदन्तोद्गमभवं पापं नश्यति तत्क्षणात् ॥ ७ ॥
 बालकं जननी चैव चिरं जीवति मातुलः ।
 तस्मात्प्रयत्नतो विद्वान्विधानं सम्यगाचरेत् ॥ ८ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां बालकस्यो-
 र्ध्वदन्तोद्गमजनितविघ्नभङ्गविधानम् ।

अथ महानदीमहापूरहरविधानम् ।

ब्रह्मपुराणे ब्रह्मनारदसंवादे नारद उवाच—

निस्तरन्ति कथं लोका गङ्गापूरपरिप्लुताः ।
 तन्ममाऽऽचक्ष्व लोकेश सम्यग्विधिविदां वर ॥ १ ॥

श्रीब्रह्मोवाच—

शृणु नारद वक्ष्यामि विधानं विधिपूर्वकम् ।
 तरन्ति येन मनुजा नदीपूरपरिप्लुताः ॥ २ ॥
 पतिप्रियहिते युक्ता सवीरा सुभगा सती ।
 कर्तव्यं हि तया सम्यग्विधानं विधिपूर्वकम् ॥ ३ ॥
 स्नात्वा तैलेन शुद्धेन शुक्लाम्बरधरा सती ।
 आगत्य सरितस्तीरं दण्डवत्प्रणमेन्नदीम् ॥ ४ ॥
 परिधाय नवं वस्त्रं सकूर्पासकमुत्तमम् ।
 शूर्पे षोडशवन्धे च कर्णपत्रादिकं तथा ॥ ५ ॥
 हरिद्रां कुङ्कुमं चैव जीरकं धान्यकं तथा ।
 लवणं च गुडं चैव तण्डुलान्मधुकं तथा ॥ ६ ॥
 अक्षतांश्चन्दनं चापि चन्द्रं कस्तूरिकां तथा ।
 एतत्सर्वं तु शूर्पस्थं समन्त्रं सरितेऽर्पयेत् ॥ ७ ॥

तत्र मन्त्रमाचार्यः समुच्चारयेत्—

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वतीति अन्यान्यापि वारुणानि सूक्तानि जपेत् ।

कराभ्यां शूर्पमादाय सप्तवारं जलं क्षिपेत् ।

सरितः सरितो मध्ये मन्त्रानुच्चार(न्प्रब्रुव)ती सती ॥ ८ ॥

तत्र पौराणमन्त्राः—

गृहाणाध्यं मया दत्तं गङ्गे त्रिपथगामिनि ।

लोकानुद्धर तीरस्थान्पूरं संहर चाऽऽत्मनः ॥ ९ ॥

इति जपित्वा शूर्पेण जलमध्ये जलं प्रक्षिपेत् । एवं प्रतिमन्त्रं जलमध्ये जलं क्षिपेत् ।

गङ्गे त्वं पुण्यरूपाऽसि सर्वपापविनाशिनी ।

पूरेण ते जगन्ममं समुद्धर समुद्रगे ॥ १० ॥

जीवनं तव लोकानां सुभगं तारणक्षमम् ।

अध्यार्थमर्पितं तुभ्यं गृहाण परमेश्वरि ॥ ११ ॥

अत्युत्कटेन तोयेन सर्वं जगदुपप्लुतम् ।

रक्ष तत्सकलं मातर्बलिदानेन सुव्रते ॥ १२ ॥

स्वर्गे मन्दाकिनी देवी पाताले भोगवत्यसि ।

भागीरथी तु भूलोके गृहाणाध्यं नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥

उत्तुङ्गवीचिवेगेन प्लावितं जगतीतलम् ।

रक्षितुं तत्समस्तं हि पूरं संहर चाऽऽत्मनः ॥ १४ ॥

पुष्पधूपान्वितं सर्वं बलिं तुभ्यं मया हृतम् ।

गृहाण त्वं जगद्धात्रि कृपया रक्ष भूतलम् ॥ १५ ॥

इति सप्त मन्त्रानुच्चार्य सप्तवारं तेन शूर्पेण गङ्गामध्ये गङ्गाजलं प्रक्षिपेत् । तत्सर्वं वस्त्रादिकं गङ्गायां प्रक्षिपेत् । अथ वा तत्स्वरूपिण्यै सुचरित्रायै ब्राह्मण्यै दद्यात् । ततस्तु तां पुरंध्रीं सर्वे जना नमस्कुर्युः ।

कूर्पासकं च वस्त्रं च कर्णपत्रादिकं तथा ।

कृताञ्जलिपुटः सर्वे हर्षयेयुः समञ्जसा ॥ १६ ॥

एवं कृते विधाने तु पूरं संहरति क्षणात् ।

हृष्टपुष्टो जनः सर्वो विधानान्नन्दति ध्रुवम् ॥ १७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां

महानदीमहापूरहरविधानम् ।

अथोत्पन्नस्य बालकस्य माससंवत्सरवृद्धिविधानम् ।

ल(लु)ब्धजातके—

मासः पूर्णो यदा जातो जननाच्च शिशोस्तदा ।
 कार्यं वृद्धिविधानं तु मात्रा बालस्य वृद्धये ॥ १ ॥
 अभ्यज्य बालकं सम्यक्पलवाद्येन वारिणा ।
 दिपैर्नाराजयेद्वस्त्रं नूतनं च समर्पयेत् ॥ २ ॥
 * अपूपान्पूरकान्साज्यान्ब्राह्मणीभ्यः समर्पयेत् ।
 ब्राह्मणान्भोजयेत्सम्यग्बालकायुर्विवृद्धये ॥ ३ ॥
 अस्योत्पन्नस्य बालस्य सम्यगायुर्विवृद्धये ।
 जन्मर्क्षदेवताप्रीत्यै कृत्यं सर्वं समर्पयेत् ॥ ४ ॥
 एवं कृत्वा मासि मासि बालायुर्वृद्धिदं विधिम् ।
 संप्राप्ते द्वादशे मासि विधानान्तरमादिशे(चरे)त् ॥ ५ ॥
 सुदृढाः कारयेत्स्थूलाः सुवृत्ता वंशपेटिकाः ।
 निधाय मोदकादीनां खाद्यानां तत्र संचयम् ॥ ६ ॥
 आच्छाद्य नूतनैर्वस्त्रैः पूर्णा द्वादश पेटिकाः ।
 जीवत्प्रजासु नारीषु प्रतिसंपादयेत्सुधीः ॥ ७ ॥
 प्रत्यब्दं च ततः कुर्यात्समावृद्धिमनुत्तमाम् ।
 संततेः क्षेमवृद्धयर्थं जननी पुत्रवत्सला ॥ ८ ॥
 यदाऽब्दषष्टिरापूर्णा संप्राप्ते जन्मवासरे ।
 स्नात्वा शुद्धेन तैलेन पूजयेद्वत्सराधिपम् ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेच्छक्त्या तेनाऽऽरोग्यमवाप्नुयात् ॥ ९ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायामुत्पन्नस्य
 बालकस्य माससंवत्सरवृद्धिविधानम् ।

अथ मृत्युंजयविधानम् ।

ग्रहपीडामु सर्वासु महागदनिपीडने ।
 वियोगे बान्धवानां च जनमार उपस्थिते ॥ १ ॥
 राज्यभङ्गे धनगलानावपमृत्युविनाशने ।
 अभियोगे समुत्पन्ने मनोधर्मविपर्यये ॥ २ ॥

* आर्षत्वाह्निङ्गव्यत्ययः कृत इति भाति । पूरेकाः साज्यानि इति तु सम्यगेव ।

मृत्युंजयस्य देवस्य विधानं क्रियते बुधैः ।
यदाकदाचित्समये प्राप्ते चन्द्रवले शुभे ॥ ३ ॥
शुभे तिथौ शुभे वारे शुभनक्षत्रसंयुते ।
शुभे योगे शुभे लग्ने शुभग्रहसमीक्षिते ॥ ४ ॥
मृत्युंजयस्य देवस्य विधानं शुभदं स्मृतम् ।
मण्डिते शंकरद्वारि चित्रिते मण्डपान्विते ॥ ५ ॥
दीपस्थानं तु संशोध्य रत्नकम्वलसंयुते ।
ब्राह्मणान्वेदशास्त्रज्ञानाहूय गतमन्सरान् ॥ ६ ॥
स्वस्तिवाचनपूर्वं तु विधानं परमारभेत * ।
प्रारब्धस्य च कार्यस्य सदृशो जप उत्तमः ॥ ७ ॥
ऊनाधिकस्तु कार्याच्च जपो हीनफलः स्मृतः ।
राष्ट्रभङ्गे जनक्लेशे महारोगनिपीडने ॥ ८ ॥
कोटिसंख्यो जपः प्रोक्तो मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ।
सामान्यगदपीडायां दुष्टस्वप्नस्य दर्शने ॥ ९ ॥
मृत्युंजयस्य मन्त्रस्य जपो लक्षमितः शुभः ।
अपमृत्युविनाशाय जपोऽयुतमितः स्मृतः ॥ १० ॥
दुर्वार्ताश्रवणे जाप्यं सुहृदामनृते क्षुते ।
यात्रायामयुतं कार्यं सदृशं वा समाहितैः ॥ ११ ॥
आदावभ्यर्च्य देवेशं शंकरं लोकशंकरम् ।
गर्भागारं जलैर्गङ्गैः क्षालयेच्चन्दनान्वितैः ॥ १२ ॥
दशाङ्गैर्धूपयेद्धूपैः स्नपयेच्छंकरं ततः ।
पञ्चामृतैः समन्त्रैश्च सपुष्पैः साक्षतैः शुभैः ॥ १३ ॥

तत्र पञ्चामृतान्याह—

पयो दधि घृतं गव्यं शर्करा च शुभं मधु ।
आप्यायस्वेति च क्षीरं दधिक्राव्णस्तथा दधि ॥ १४ ॥
तेजोऽसि शुक्रमित्याज्यं मधुवातास्तथा मधु ।
गायत्र्या शर्कराशुद्धिर्जलस्नानं ततः परम् ॥ १५ ॥

* चक्षिडो ङित्करणेनानुदात्तेत्त्वलक्षणात्मनपदस्यानित्यञ्ज्ञापनात्परस्मैपदं कश्चित्तती
तिवद्वोधम् ।

सप्तर्षिमते च—

तैलाभ्यङ्गः शुभः शंभोः सर्वकार्येषु चोत्तमः ।
 यथाविधि विधातव्यः सर्वकेशनिवारणः ॥ १६ ॥
 चन्दनेन सुगन्धेन कुर्याद्देवस्य लेपनम् ।
 स्थावरे पाणिना कार्यं जङ्गमे सकनिष्ठिकम् ॥ १७ ॥
 ततः पुष्पैर्विधातव्या पूजा देवस्य शूलिनः ।
 कालोद्भवैर्यथोद्दिष्टैर्यावत्स्यात्स्वमनोरुचिः ॥ १८ ॥
 दशाङ्गैर्धूपयेत्पश्चाद्धूपैर्नाराजयेत्ततः ।
 दीपिकाभिश्च साज्यैस्तु नैवेद्यैः परितोषयेत् ॥ १९ ॥
 ताम्बूलमर्पयेत्साङ्गं प्रीत्यै देवस्य शूलिनः ।
 न्यस्तवीजाक्षरो मन्त्री स्वदेहावयवेषु च ॥ २० ॥
 रुद्राक्षमालिकाहस्तो जपेच्चिन्तितशंकरम् ।
 यावन्नो जृम्भणं निद्रा शरीरस्यावमर्दनम् ॥ २१ ॥
 जायते मन्त्रिणस्तावदेव स्याज्जप उत्तमः ।
 जपान्ते च पुनः शंभोः प्रतिपूजां तु कारयेत् ॥ २२ ॥
 ततः प्रदक्षिणीकृत्य शंभुं स्वगृहमाव्रजेत् ।
 निर्वर्त्यैवाऽऽह्निकं विद्वान्भुञ्जीयाद्विधिना गृही ॥ २३ ॥
 हविष्यान्नं ससर्पिस्तु सगुडं पायसान्वितम् ।
 भुक्त्वाऽऽचम्य जलैरुष्णैः पुनः शीतैर्जलैस्तथा ॥ २४ ॥
 कृतास्यगुँद्धिः शुचिमाञ्जलीत पृथिवीतले ।
 एवं दिने दिने विद्वान्कृतजाप्यो महामतिः ॥ २५ ॥
 पूर्णसंख्यस्य जाप्यस्य दशांशहवनं मतम् ।
 पायसेन च साज्येन समिद्धिस्तिलसर्पिषा ॥ २६ ॥
 श्रीवृक्षस्य फलैः पत्रैः कमलैः शतपत्रकैः ।
 साज्यैरेव तु खजूरैरन्यैर्यज्ञफलैस्तथा ॥ २७ ॥
 हवनं कारयेद्विद्वान्कृताचार्यार्चनक्रियः ।
 ब्राह्मणान्भोजयेत्सम्यग्दशांशेन यजेस्तथा ॥ २८ ॥
 एवं कृते विधाने च सर्वकामफलं लभेत् ।
 चिन्तितार्थस्य सिद्धिः स्यान्नात्र कार्या विचारणा ॥ २९ ॥
 आराध्य विधिवद्देवं मृत्युंजयमुमापतिम् ।

गतविघ्नो गतक्लेशः सततं सुखमाप्नुयात् ॥ २० ॥

अथ जाप्यलक्षणम्—

अस्य श्रीत्र्यम्बकमन्त्रस्य वसिष्ठ ऋषिः । मृत्युंजयरुद्रो देवता । अनुष्टु-
प्छन्दः । देवदेव्यौ प्रणवौ बीजशक्ती । सर्वकामसिद्धयर्थं जपे विनियोगः ।

अत्र मूलमन्त्रेण करशुद्धिं कृत्वा प्रणवं करतलयोर्विन्यस्य व्याहृत्यादिमन्त्र-
पादचतुष्टयं सर्वं च करयोरङ्गुष्ठादिकनिष्ठिकान्तमङ्गुलिषु विन्यस्य

ॐ त्र्यम्बकं सर्वज्ञाय हृदयाय नमः । ॐ यजामहे तृप्तिरूपाय शिरसे
स्वाहा । ॐ सुगन्धि पुष्टिवर्धनमनादिबोधाय शिखायै वषट् । ॐ उर्वारुकमिव
बन्धनाद्वाज्जिणे वज्रकवचाय हुम् । ॐ मृत्योर्मुक्षीय नित्यमलुप्तमूर्तये नेत्रत्रयाय
वौषट् । ॐ माऽमृतादचिन्त्यानन्तशक्तयेऽस्त्राय फट् । एवं सर्वेण मन्त्रेण व्यापक-
न्यासं कृत्वा देहाङ्गन्यासमारभेत ।

ॐ त्र्यं त्र्यक्षेशाय त्रिनेत्राशक्तिसहिताय शिखायां पादुकां पूजयामि ।
ॐ बं बालार्कतेजसे बालाशक्तिसहिताय शिरसि पादुकां पूजयामि । ॐ कं काला-
न्तकेशाय कल्याणीशक्तिसहिताय ललाटे पादुकां पूजयामि । ॐ यं यज्ञेशाय
यज्ञरूपाशक्तिसहिताय भ्रुवोः पादुकां पूजयामि । ॐ जां जालंधरेशाय
ज्वालामुखीशक्तिसहिताय नेत्रयोः पादुकां पूजयामि । ॐ मं महादेवेशाय
महाशक्तिसहिताय श्रोत्रयोः पादुकां पूजयामि । ॐ हं हाकिनीशाय हिमवती-
शक्तिसहिताय नासिकायां पादुकां पूजयामि । ॐ शुं सुधीशाय सुगन्धाशक्ति-
सहिताय कपोलयोः पादुकां पूजयामि । ॐ गं गङ्गाधरेशाय गम्भीराशक्ति-
सहितायोर्ध्वोष्ठे पादुकां पूजयामि । ॐ धिं धीमहीशाय धीराशक्तिसहितायाध-
रोष्ठे पादुकां पूजयामि । ॐ पुं पुण्डरीकाक्षेशाय पूर्णाशक्तिसहितायोर्ध्वदन्तेषु
पादुकां पूजयामि । ॐ छिं छीवनेशाय छीवना (?) शक्तिसहितायाधोदन्तेषु
पादुकां पूजयामि । ॐ वं वरिष्ठेशाय वरेण्याशक्तिसहिताय जिह्वायां पादुकां
पूजयामि । ॐ र्धं धन्वीशाय ध्वान्ताशक्तिसहिताय हनौ पादुकां पूजयामि ।
ॐ नं नदीस्वामीशाय नादिनीशक्तिसहिताय वक्त्रे पादुकां पूजयामि । ॐ उं
बुद्धि (उमुद्धी)शायोमाशक्तिसहिताय कण्ठे पादुकां पूजयामि । ॐ वां वारुणी-
शाय वामाशक्तिसहिताय स्कन्धयोः पादुकां पूजयामि । ॐ रुं रुद्रेशाय रूप-
वतीशक्तिसहिताय बाह्वोः पादुकां पूजयामि । ॐ कं कान्तीशाय कान्ताश-
क्तिसहिताय हस्तयोः पादुकां पूजयामि । ॐ मिं मीढुष्टमीशाय मङ्गलाश-

क्तिसहिताय वक्षसि पादुकां पूजयामि । ॐ वं वेदवेदेशाय वेदगर्भेशाय वेद-
गर्भाशक्तिसहिताय स्तनयोः पादुकां पूजयामि । ॐ वं वकीशाय वन्दिनीशक्ति-
सहिताय हृदये पादुकां पूजयामि । ॐ धं धर्मीशाय धनुष्मतीशक्तिसहिताय
नाभौ पादुकां पूजयामि । ॐ नान्नाकेश्वरेशाय पुष्टिशक्तिसहिताय कंधरायां
पादुकां पूजयामि । ॐ मं मृत्युंजयेशाय मृत्युनाशिनीशक्तिसहिताय गुह्ये पादुकां
पूजयामि । ॐ त्यां त्यादीशाय त्यादिशक्तिसहिताय पायां पादुकां पूजयामि ।
ॐ मुं मुक्तीशाय मुकुंदाशक्तिसहिताय कट्यां पादुकां पूजयामि । ॐ क्षीं क्षिती-
शाय क्षेमकरीशक्तिसहिताय जान्वोः पादुकां पूजयामि । ॐ यं योगिनीशाय
यन्त्रभेदिनीशक्तिसहितायोर्वोः पादुकां पूजयामि । ॐ मां माङ्गल्येशाय
महर्द्धिशक्तिसहिताय जङ्घयोः पादुकां पूजयामि । ॐ मं मृत्युविनाशनेशाय
मृतवतीशक्तिसहिताय गुल्फयोः पादुकां पूजयामि । ॐ तात्तान्त्रिकेशाय तन्वती-
शक्तिसहिताय पादयोः पादुकां पूजयामि ।

इति वर्णन्यासः ।

ॐ त्र्यम्बकं त्रिपुरान्तकेशाय त्रिलोक्याशक्तिसहिताय शिरसि पादुकां
पूजयामि । ॐ यजा यज्ञपतीशाय स्वाहाशक्तिसहिताय ललाटे पादुकां पूज-
यामि । ॐ महे महत्तत्त्वेशाय मायाशक्तिसहिताय श्रोत्रयोः पादुकां पूजयामि ।
ॐ सुं सुखीशाय सुरुचिशक्तिसहिताय चक्षुषोः पादुकां पूजयामि । ॐ गन्धि
गगनेशाय गगनाशक्तिसहिताय नासिकायां पादुकां पूजयामि । ॐ पुष्टिं पुरु-
षेशाय पुन्दरीशक्तिसहिताय वक्त्रे पादुकां पूजयामि । ॐ वर्धनं वरदेशाय
वशं करणीशक्तिसहिताय बाह्वोः पादुकां पूजयामि । ॐ उर्वा, उमाव-
तीशायोर्ध्वरेतःशक्तिसहिताय हृदये पादुकां पूजयामि । ॐ रुक् रूपवतीशाय
रुक्मशक्तिसहिताय कुक्षयोः पादुकां पूजयामि । ॐ मित्र मित्रेशाय मित्रिकाश-
क्तिसहिताय नाभौ पादुकां पूजयामि । ॐ बन्धनाद्बालचन्द्रमौलीशाय बर्बरी-
शक्तिसहिताय कट्यां पादुकां पूजयामि । ॐ मृत्योर्मन्त्रीशाय मन्त्रशक्तिसहि-
ताय गुह्ये पादुकां पूजयामि । ॐ मुक्षीय मुक्तिकरीशाय मुक्तिशक्तिसहिताय
जान्वोः पादुकां पूजयामि । ॐ मा महाकालेशाय महाशक्तिसहिताय जङ्घयोः
पादुकां पूजयामि । ॐ [अ] मृतादमृतेशायामृताशक्तिसहिताय पादयोः पादुकां
पूजयामि ।

इति पा(प)दन्यासः ।

ॐ त्र्यम्बकं भवेशाय भूक्ति(ति) शक्तिसहितायाऽऽधारे पादुकां पूजयामि ।
 ॐ यजामहे सर्वेशाय शर्वाणीशक्तिसहिताय स्वाधिष्ठाने पादुकां पूजयामि ।
 ॐ सुगन्धि रुद्रेशाय विभुषा(त्व) शक्तिसहिताय मणिपूरे पादुकां पूजयामि ।
 ॐ पुष्टिवर्धनं पुरुषवरदेशाय वंशवर्धनीशक्तिसहितायानाहते पादुकां पूजयामि ।
 ॐ उर्वारुकमिवोग्रेशायोग्राशक्तिसहिताय विशुद्धे पादुकां पूजयामि । ॐ बन्ध-
 नान्महादेवेशाय मानवीशक्तिसहितायाऽऽज्ञायां पादुकां पूजयामि । ॐ मृत्यो-
 र्मुक्षीय भीमेशाय भद्रकालीशक्तिसहिताय ब्रह्मरन्ध्रे पादुकां पूजयामि । ॐ
 माऽमृतादीशानेशायेश्वरीशक्तिसहिताय सहस्रदले पादुकां पूजयामि ।

इति वाक्यन्यासः ।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे त्र्यम्बकेशायाम्बिकाशक्तिसहिताय पूर्ववक्त्रे पादुकां
 पूजयामि । ॐ सुगन्धि पुष्टिवर्धनं मृत्युञ्जयेशाय वामाशक्तिसहिताय दक्षिण-
 वक्त्रे पादुकां पूजयामि । ॐ उर्वारुकमिव बन्धनान्महादेवाय भीमाशक्तिसहिताय
 पश्चिमवक्त्रे पादुकां पूजयामि । ॐ मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतान्संजीवनेशाय रौद्रीश-
 क्तिसहितायोत्तरवक्त्रे पादुकां पूजयामि ।

इति चरणन्यासः ।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनं महेशाय गौरीशक्तिसहिताय दक्षि-
 णपार्श्वे पादुकां पूजयामि । ॐ उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृताच्छां-
 भवीशाय व्यापिनीशक्तिसहिताय वामपार्श्वे पादुकां पूजयामि ।

इत्यर्धचर्चन्यासः ।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनम् ।
 उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ॥

सर्वारूपेशायानारूपाशक्तिसहिताय सर्वशरीरे पादुकां पूजयामि ।

इति समग्रचर्चन्यासः ।

एवं पङ्क्तिविधेहाङ्गन्यासं कृत्वा पङ्क्त्यन्यासमारभेत ।

ॐ नमो भगवते त्र्यम्बकाय शूलपाणिने हृदयाय नमः । ॐ नमो भगवते
 रुद्रायामृतमूर्तये मां जीवय शिरसे स्वाहा । ॐ नमो भगवते रुद्राय चन्द्रशिरसे
 जटिने शिखायै वषट् । ॐ नमो भगवते त्रिपुरान्तकाय हां हीं हूं कवचाय
 हुम् । ॐ नमो भगवते त्रिलोचनाय ऋग्यजुःसाममन्त्राय नेत्रत्रयाय वौषट् ।

ॐ नमो भगवते वह्नित्रयायं महामृत्युंजय ज्वल ज्वल मां रक्ष रक्षाघोरास्त्राय फट् ।

एवं न्यासादिकं कृत्वा शिवो भूत्वा शिवं यजेत् ।

ततश्चन्द्रमण्डलोपरिवद्धपद्मासनस्थं प्रवहदमृतचन्द्रकलाधरं योगमुद्राबद्धाधरहस्तद्वयममृतपूर्णकलशोत्तरहस्तद्वयं सोमसूर्याग्निलोचनं पिङ्गलजटाजूटं नागभूषितं भक्तानुकम्पिनं रुद्रं ध्यात्वा स्नेहपूर्णेन मनसा पूर्वोक्तेन विधानेनार्चयित्वा शरणं व्रजेत् ।

हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो

द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवल्यं द्वाभ्यां वहन्तं परम् ।

अङ्कन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलाससंस्थं शिवं

स्वच्छा(बद्धा) म्भोजगतं सुचन्द्रमुकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे ॥ ३१ ॥

एवं ध्यानपरो जपं कुर्यात् ।

अथ मतान्तरम् ।

ॐ त्र्यम्बकमितिमन्त्रस्य मैत्रावरुणवसिष्ठ ऋषिः । रुद्रो देवता । अनुष्टुप्छन्दः । त्र्यम्बकमन्त्रजपे विनियोगः ।

अत्र मूलमन्त्रेण करशुद्धिं कृत्वा प्रणवं करतलयोर्विन्यस्य व्यापकन्यासं कुर्यात् । व्याहृत्यादिमन्त्रपादचतुष्टयं सर्वं च करतलयोरङ्गुलीषु विन्यसेत् । ततो देहाङ्गन्यासमारभेत ।

ॐ त्र्यम्बकमिति शिरसि । यजामह इति ललाटे । सुगन्धिमिति मुखे । पुष्टिवर्धनमिति हृदये । उर्वारुकमिति नाभौ । बन्धनादिति कट्याम् । मृत्योरित्यूरुद्वये । मुक्षीयेति जानुद्वये । माऽमृतादिति पादद्वये ।

इति देहाङ्गन्यासं कृत्वा षडङ्गन्यासमारभेत ।

ॐ नमो भगवते त्र्यम्बकाय शूलपाणये हृदयाय नमः । ॐ नमो भगवते रुद्रायामृतमूर्तये मां जीवय शिरसे स्वाहा । ॐ नमो भगवते रुद्राय शिरश्चन्द्राय जटिने शिखायै वषट् । ॐ नमो भगवते त्रिपुरान्तकाय हां हीं हूं कवचाय हुम् । ॐ नमो भगवते त्रिलोचनाय ऋग्यजुःसाममन्त्राय नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ नमो भगवते वह्नित्रयाय महामृत्युंजय ज्वल ज्वल रक्ष रक्ष मामघोरास्त्राय फट् । ॐ भूर्भुवः स्वरोमिति दिग्बन्धः ।

ततश्चन्द्रमण्डलोपरिवद्धपञ्चासनं चन्द्रवर्णं स्वदमृतचन्द्रकलाधरं योगमुद्राब-
द्धहस्तद्वयं सोमसूर्याग्निलोचनं—

बद्धपिङ्गजटाजूटं नागाभरणभूषितम् ।
भक्तास्तुकम्पिनं कृत्वाऽभ्यर्चनं शरणं व्रजेत् ॥ ३२ ॥
मृत्युञ्जय महादेव त्राहि मां शरणागतम् ।
जन्ममृत्युजरारोगैः पीडितं कर्मबन्धनैः ॥ ३३ ॥
तावकस्त्वत्स्थितप्राणस्त्वच्चित्तोऽहं सदा मूढ ।
इति विज्ञाप्य देवेशं मन्त्रं त्रैयम्बकं जपेत् ॥ ३४ ॥

ॐ हौं जूं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ—

* त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥
ॐ स्वः, भुवः, भूः ॐ सः, जूं, हौम्, ॐ ।

ॐ ईशानं मूर्ध्नि । तत्पुरुषं मुखे । अघोरं हृदये । वामदेवमूर्ध्वोः । सद्योजातं
पादयोः । ततो जपं कुर्यात् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
मृत्युञ्जयविधानम् ।

अथ रुद्रानुष्ठानविधानम् ।

चतुर्वर्गचिन्तामणौ—

अभिशापे महाव्याधौ महापापविनाशने ।
यज्ञादौ ग्रहपीडायां युद्धयात्रामुखे तथा ॥
अनुष्ठितो नरै रुद्रो रौद्रपीडानिवारणः ॥ १ ॥

* “ अर्थज्ञानं विना कर्म न श्रेयःसाधनं यतः । अर्थज्ञानं साधनीयं द्विजैः श्रेयोरर्थिभिस्ततः ” ॥
इत्यभियुक्तोक्तेर्मन्त्रस्यार्थं प्रदर्शयामः—

त्र्यम्बकमिति । हे भगवन्, त्र्यम्बकं त्रिनेत्रं सुगन्धिं दिव्यसौरभयुक्तं पुष्टिवर्धनं स्वभक्तपालनवर्धकं
त्वां यजामहे । यथोर्वारुकं कर्कश्यादेः फलं पक्वं सद्बन्धनाद्बृन्तान्मुच्यते तथाऽस्मान्मृत्योः सकाशा-
न्मुक्षीय मोचय । अमृतान्मोक्षान्मा मुक्षीय मा मोचय ।

यजामहे त्रिनेत्रं त्वां सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
कर्कश्यादिफलं पक्वं यथा बृन्तात्प्रमुच्यते ॥
तथा मृत्योर्भोचयास्मान्मृतान्मा विमोचय ” इति ।

तत्र विधानक्रमः—

एकादशद्विजातीनां प्रथमं वरणं भवेत् ।
 एकादश्यामिन्दुवारे शुभनक्षत्रसंयुते ॥ २ ॥
 प्रातःकाले समुत्थाय स्नात्वा गङ्गाजले शुभे ।
 प्रातर्विधिं समाप्यैव कालश्रवणपूर्वकम् ॥ ३ ॥
 वरणं कार्यमुद्दिश्य कर्तव्यं नूनमृत्विजाम् ।
 ततस्ते शुचयो विप्रा ह्यागत्य शिवमन्दिरम् ॥ ४ ॥
 अर्चयित्वा शिवं सम्यक्पुष्पैर्नानाविधैः शुभैः ।
 कुर्युः षोडश धीमन्तो ह्युपचारान्पृथक्पृथक् ॥ ५ ॥
 मूलमन्त्रेण शर्वस्य सर्वकामफलेच्छया ।
 ततस्तु दीपमासाद्य जपं कुर्युरतन्द्रिताः ॥ ६ ॥
 रुद्रं विन्यस्य सर्वाङ्गे क्रमादक्षरतो बुधाः ।
 नियमेन जपे सिद्धे कुर्युस्ते यजनं ततः ॥ ७ ॥
 आगमोद्दिष्टमार्गेण समाप्य विधिवद्यजिम् ।
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्दद्यात्तेभ्यश्च दक्षिणाः ॥ ८ ॥
 आचार्यमृत्विजः सर्वास्तोपयेत्कनकादिभिः ।
 एकादश वृषान्दद्यादृत्विग्भ्यस्तु सदक्षिणान् ॥ ९ ॥
 सालंकाराणि वस्त्राणि धान्यानि विविधानि च ।
 एकादशभ्य ऋत्विग्भ्यो दद्याद्रुद्रस्य तुष्टये ॥ १० ॥
 यदि तुष्टो महारुद्रः सिद्धिभिः किं प्रयोजनम् ।
 किं स्यात्तु निधिभिस्तस्य महापद्मादिभिस्तथा ॥ ११ ॥
 कियत्तु पृथिवीस्वाम्यं यज्ञैः किं भूरिदक्षिणैः ।
 तुष्टे सर्वेश्वरे रुद्रे पूजिते च यथाविधि ॥ १२ ॥
 एवंविधे महारुद्रविधाने विहिते सति ।
 अर्द्धो देवमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥ १३ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 रुद्रानुष्ठानविधानम् ।

अथ वृक्षारोपणविधानम् ।

चतुर्वर्गचिन्तामणौ—

अश्वत्थमेकं पिचुमन्दमेकं न्यग्रोधमेकं दश तिनित्तीक्ष्णम् ।

कपित्थबिल्वामलकीत्रयं च पञ्चाश्रवापी नरकं न पश्येत् ॥ १ ॥

तत्र केषांचिदारोपणे सकामता केषांचिदारोपणे निष्कामता । अश्वत्थवट-
निम्बानामारोपणे केवलं निष्कामता । आम्रतिन्तिड्यारोपणे केवलं सकामता ।
कपित्थबिल्वामलकीनां त्रये द्विस्वभावता । इति पुराणमतम् । अन्येषामपि
पुष्पजातीनां वृक्षाणां सकामनिष्कामताऽस्ति ।

वृक्षगुल्मलतानां च पट्विधोत्पत्तिरिष्यते ।

अग्रैर्मूलैश्च शाखाभिः फलैर्वीजैश्च कन्दकैः ॥ २ ॥

अष्टादशप्रकारैश्च भारसंख्या निगद्यते (?) ।

तेष्वष्टादशभारेषु कुञ्जराशन उत्तमः ।

तथैव वटवृक्षः स्यात्पिचुमन्दोऽपि तादृशः ॥ ३ ॥

तत्राश्वत्थजातौ वर्णचतुष्टयमस्ति । तथा हि—

शुक्लपक्षे मधौ मासे यस्य शुक्लदलोद्भवः ।

दृश्यते स द्विजातिः स्याद्वापितुर्मु(द्रुतुर्वैमु)क्तिकारकः ॥ ४ ॥

मध्यावेवासिते पक्षे दृश्यन्ते रक्तपल्लवाः ।

नवीना बोधिवृक्षस्य वापितुर्वि(वप्तुः स्याद्वि)ष्णुलोकदः ॥ ५ ॥

माधवे मासि पीतश्च पल्लवो यस्य दृश्यते ।

सारूप्यं च सिते पक्षे स ददाति च वापितुः (वप्त्रे प्रददाति च) ॥ ६ ॥

वैशाखे कृष्णपक्षे च हरित्पल्लवसंभवः ।

नूतनो दृश्यते यस्य स शूद्रगुण उच्यते ॥ ७ ॥

ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्चत्वार एव च ।

शुक्लो रक्तस्तथा पीतो हरितो जायते क्रमात् ॥ ८ ॥

उप्तो येन वटो भूमौ पुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः ।

संतानैर्नन्दयत्येनं वापितारं (वप्तारं च) न संशयः ॥ ९ ॥

सर्वाङ्गेषु जटा यस्य प्ररोहन्ति च मूलवत् ।

स वटः शंकरः साक्षाद्भुक्तिमुक्तिप्रदो भवेत् ॥ १० ॥

निम्बावरोपणे कर्तुर्गदमुक्तिस्तु जायते ।
 पश्चाङ्गे सेविते निम्बे महाकुष्ठं विलीयते ॥ ११ ॥
 धात्रीकपित्थबिल्वानां रोपणं कीर्तिवर्धनम् ।
 प्रीयते शंकरस्तैस्तु वसुर्नास्त्यत्र संशयः ॥ १२ ॥
 प्रायेण शैशिरे काले वापिते चूतपञ्चके ।
 मङ्गलानि लभेत्कर्ता महापङ्क्तौ महाफलम् ॥ १३ ॥
 राज्यं प्राप्नोत्यविरतं कृतासु बहुपङ्क्तिषु ।
 शिल्पोक्तेन विधानेन नात्र कार्या विचारणा ॥ १४ ॥
 चम्पकाशोकपुंनागजम्बूपाटलिकादिकान् ।
 तरुन्वापयिता श्रीमाञ्जायते पृथिवीपतिः ॥ १५ ॥
 पिप्पलः शंकरद्वरि वटो मार्गे चतुष्पथे ।
 जलाशये गवां गोष्ठे रोषितः सर्वकामदः ॥ १६ ॥
 निम्बश्चतुष्पथे रोप्यः सह बोधिद्रुमेण च ।
 यदा फलति साक्षात्स रुद्ररूपी न संशयः ॥ १७ ॥
 पिप्पलस्य दले तस्य निम्बस्य गलितं फलम् ।
 विदधाति शिवे स्वर्णमर्पितं स्वतुलासमम् ॥ १८ ॥
 प्रदक्षिणप्रक्रमणैः सप्तभिः पिप्पलद्रुमः ।
 अभिवन्द्यः शनेः प्रीत्यै नरैः स्वहितमीप्सुभिः ॥ १९ ॥
 संस्पृश्य शनिवारेऽसौ समालिङ्ग्यः पुनः पुनः ।
 अन्यदा प्रणमेन्नैव संस्पृशेत्तु कदाचन ॥ २० ॥
 अश्वत्थसेवया धेनुस्पर्शनेन समालभेत् ।
 गङ्गास्नानफलं सम्यङ्नात्र कार्या विचारणा ॥ २१ ॥
 आम्राणां वापने यत्तु विधानं क्रियते नरैः ।
 चक्ष्यामि तत्समाप्तेन हिताय प्राणिनामिह ॥ २२ ॥
 कृष्णायां भुवि संरोप्यश्रूतः पल्लवसंनिधौ ।
 उद्याने वाटिकायां च संशोध्य पृथिवीतलम् ॥ २३ ॥
 शानं धृत्वा भुवः सम्यगष्टादशकरान्तरम् ।
 तत्र तं वापयेद्धीमान्फलबाहुल्यलब्धये ॥ २४ ॥
 धात्री स्वद्वारि संयोज्यां कपित्थं तु चतुष्पथे ।
 शिवप्राकारमध्ये तु वापयेच्छ्रीतरुं पुमान् ॥ २५ ॥

निम्ने देशे तिन्तिडीं तु चम्पकं वाटिकान्तरे ।
उदुम्बरः समारोप्य उद्याने वाऽथवा वने ॥ २६ ॥
अन्ये जम्बवादयो वृक्षा नृपोद्याने जलाश्रये ।
आरोप्य विधिवद्धीमाननन्तं फलमश्नुते ॥ २७ ॥

अथ वल्लीविषये विशेषमाह—

वाटिकायां समारोप्या मृद्वीका शिशिरे शुभा ।
अशोकलतिका निम्ने कुल्यारोधसि माधवे ॥ २८ ॥
केचिन्म(षां म) तेन सा रोप्या माधवीमण्डपान्तरे ।
पिप्पली नागवल्ली च मृदुवृक्षतले तथा ॥ २९ ॥
वाटिकाभ्यन्तरे रोप्या खर्जूरी नालिकेरिका ।
वृन्दावने तु तुलसीं ग्रीष्मान्ते परिवापयेत् ॥ ३० ॥
अन्याश्च पुष्पजातीश्च यथाकालं यथाक्षिति ।
एतत्फलं समालोक्य वापयन्ति तरुन्नराः ॥
ते यान्ति ब्रह्मसायुज्यं विधूतीकृतकल्मषाः ॥ ३१ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शिल्पशास्त्रे
भोजकृतवृक्षारोपणविधानम् ।

अथ वृक्षोद्यापनविधानम् ।

चतुर्वर्गचिन्तामणौ—

आरोपितस्य वृक्षस्य कुर्वन्नुद्यापनाविधिम् ।
फलं तु लभते सम्यगन्यथाऽर्धफलं लभेत् ॥ १ ॥

तत्रोद्यापनविधाने विशेषः—

यः काल उदितः सम्यग्विवाहे मुनिपुंगवैः ।
तस्मिन्नेव प्रकर्तव्य उद्यापनविधिस्तरोः ॥ २ ॥
नान्दीश्राद्धं प्रकर्तव्यं पिप्पलोद्यापनाविधौ ।
नवग्रहमखं चाऽऽदौ विदधीत यथावसु ॥ ३ ॥
सहस्रपर्णसंपत्तौ सत्यां बोधितरोर्धुवम् ।
जातकर्मादिकं कुर्याद्भोदानावधिकं ततः ॥ ४ ॥

कार्यमुद्यापनं नूनं विवाहविधिवन्नरैः ।
 प्लक्षशाखां समारोप्य समीपे पिप्पलस्य तु ॥ ५ ॥
 आलवाले जलं क्षिप्त्वा शतकुम्भमितं शुभम् ।
 सा शाखा स च वृक्षश्च वस्त्रयुग्मेण वेष्टितः ॥ ६ ॥
 सेचनीयोऽथ दुग्धेन मधुना सघृतेन च ।
 तयोः शाखामयान्हस्तांश्चतुरः परियोजयेत् ॥ ७ ॥
 त्रिसूत्रेण त्रिवृत्तेन सव्यतस्तौ प्रवेष्टयेत् ।
 ब्रह्मवर्णस्य वृक्षस्य विधिरेष सनातनः ॥ ८ ॥
 क्षत्रियस्य तु वृक्षस्य शरो ग्राह्यः परस्परम् ।
 वैश्यः प्रतोदमादद्यात्तुरीये पल्लवग्रहः ॥ ९ ॥

तथा च याज्ञवल्कीये धर्मशास्त्रे—

पाणिग्राह्यः सवर्णासु गृह्णीयात्क्षत्रियः शरम् ।
 वैश्यः प्रतोदमादद्याद्वेदने त्वग्रजन्मनः ॥ १० ॥
 संयोज्य विधिवत्तौ तु प्लक्षाश्वत्थौ सुवेष्टितौ ।
 कृत्वाऽग्निवदनं सम्यग्जुहुयात्तिलसर्पिणी ।
 प्रधानदेवता ब्रह्मा वृक्षस्यास्य न संशयः ॥ ११ ॥

तत्र मन्त्राः—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया इति ।
 अष्टोत्तरसहस्रं च जुहुयात्तिलसर्पिणी ।
 ततो व्याहृतिभिर्होमं विदध्याच्च यथारुचि ॥
 चरुं साज्यं तु जुहुयाद्विद्वान्स्विष्टकृते* समम् ॥ १२ ॥

सममित्यस्य कोऽर्थः—साज्याश्चरुतिलाः ।

शान्तिपाठं ततो विद्वान्विमैश्च सहितः पठेत् ।
 अग्निपूर्वविभागस्थं ब्रह्माणं पूजितं पुरा ॥ १३ ॥
 स्वर्णमूर्तिफलैः साकं स्वर्णभूषाढसंस्थितम् ।

* तादर्थ्ये चतुर्थी वाच्येति वार्तिकान्तादर्थ्ये चतुर्थ्येषा । तथा च स्विष्टकृत्सिद्धयर्थमित्यर्थः ।
 तदुक्तं भिद्धान्तकौमुद्यां भट्टोजीदीक्षितैर्दिदण्ड्यादिभ्यश्चेति सूत्रे—तादर्थ्ये चतुर्थ्येषा । एषां सिद्धयर्थमिति ।

सवस्त्रं च ततो दद्यादाचार्याय महीयसे ॥ १४ ॥

महीयसे सर्वज्ञायेति ।

धेनुं पयस्विनीं दद्यात्सुशीलां वत्ससंयुताम् ।

ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्दद्यात्तेभ्यश्च दक्षिणाम् ॥ १५ ॥

वृक्षवेष्टनवस्त्रे च ब्राह्मणाय समर्पयेत् ।

नीराजयेत्ततो वृक्षं दृढमूलं समाहितम् ॥ १६ ॥

समाहितं दृढवेदिविराजितमित्यर्थः ।

एवं कृते विधाने च पिप्पलोद्यापनाभिधे ।

समग्रं लभते कर्ता फलमारोपणोद्भवम् ॥ १७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां पिप्पलो-
द्यापनविधानम् ।

अथ वटोद्यापनम् ।

तत्रैवोक्तम्—

न बध्नाति फलं यावद्वापितो वटपादपः ।

तावदुद्यापनं नैव कर्तव्यं हितमिच्छता ॥ १ ॥

जाने फले तदा कार्यो वटस्योद्यापनाविधिः ।

आदौ संवरणं कृत्वा परिसंशोध्य भूतलम् ॥ २ ॥

वृत्तं वा चतुरस्रं वा दृढप्राकारसंवृतम् ।

प्राकारान्तस्ततः कुर्यान्मण्डपं तोरणान्वितम् ॥ ३ ॥

मण्डपाभ्यन्तरे कुर्याद्धोमकुण्डं विचक्षणः ।

प्रयुतस्योचितं सम्यक्सर्वलक्षणसंयुतम् ॥ ४ ॥

ऋत्विजस्तत्र कर्तव्याश्चत्वारः कर्मकोविदाः ।

आचार्यलक्षणोपेतमाचार्यं परिकल्पयेत् ॥ ५ ॥

लब्धवर्णं च कुर्वीत ब्रह्माणं यज्ञकर्मणि ।

स्वस्तिवाच्य द्विजाः सर्वे चतुर्वेदपरायणाः ॥ ६ ॥

आदौ वृता ऋत्विजस्तु कृत्वा वह्निमुखं विदः ।

जुहुयुः पायसं साज्यं गायत्र्या प्रयुतं ततः ॥ ७ ॥

सावित्रीप्रीतये सर्वे ततो व्याहृतिभिर्यजिः ।

प्रधानं पायसं चैव सावित्री दैवतं परम् ॥ ८ ॥

कृत्वा सिष्टकृतं सम्यग्विसृज्य हव्यवाहनम् ।
 पूजितां पूर्वतः पीठे सावित्रीं प्रतिपूजयेत् ॥ ९ ॥
 उपचारैः षोडशभिस्ततः संवरणं तरोः ।
 आरुह्य वेदिकां सम्यक्कुर्यात्स्थण्डिलमुत्तमम् ॥ १० ॥
 अग्निकवचं ततः कुर्याद्ध(कृत्वा ह)वनं तत्र कारयेत् ।
 विवाहविधिवद्धीमांस्ततः संवेष्टयेत्तरुम् ॥ ११ ॥
 त्रिसूत्र्या मन्त्रतः सम्यक्परि त्वा गिर्वणस्त्विति ।
 सुवर्णं दक्षिणां दद्याद्धेनुं दद्यात्पयस्विनीम् ॥ १२ ॥
 नैयग्रोधं फलं दद्यात्सौवर्णं श्रोत्रियाय च ।
 सवत्सां महिषीं दद्यादाचार्याय महीयसे ॥ १३ ॥
 वस्त्रयुग्मं ततो दद्यात्तत्पत्न्यै कञ्चुकादिकम् ।
 कुण्डले हस्तमात्राश्च तत्पत्न्यै कर्णभूषणे ॥ १४ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चान्मिथुनानि च षोडश ।
 वंशपात्राणि तल्लिङ्गैर्मन्त्रस्तोत्रैर्यथाविधि ॥ १५ ॥
 आचार्यं प्रार्थयेत्पश्चात्सम्यक्संश्लक्षण्या गिरा ।
 ततः प्रदक्षिणीकृत्य न्यग्रोधस्य समाहितः ॥ १६ ॥
 सम्यक्फलमवाप्नोति वटस्योद्यापने कृते ।
 यज्ञैः किं बहुभिर्दानैस्तपोभिस्तीर्थसाधनैः ॥
 आरोपिते वटे नृणां साक्षाच्छंकरविग्रहे ॥ १७ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 वृक्षोद्यापनविधानम् ।

अथ तडागादिजलाशयोद्यापनविधानम् ।

भविष्यपुराणे—

देवखाते तडागे च पुष्करिण्यां सरोवरे ।
 वाण्यां कूपे विशेषेण कुर्यादुद्यापनाविधिम् ॥ १ ॥

युधिष्ठिर उवाच—

तरन्ति मनुजाः सम्यक्पतिता भवसागरे ।
 प्रयान्ति तव सायुज्यं तन्ममाऽऽचक्ष्व माधवं ॥ २ ॥

श्रीकृष्ण उवाच—

संसारगहने घोरे पतिता ये शरीरिणः ।
 तेषामुद्धरणार्थाय विधानं चिन्तितं मया ॥ ३ ॥
 तडागो वा सरो वाऽपि देवखातं तथाऽपि वा ।
 दीर्घिका वापिका कूपस्तथा पुष्करिणी शुभा ॥
 कुल्या तु कृत्रिमा कार्या सर्वपापापनुत्तये ॥ ४ ॥

तत्रैतेषां जलाशयानां लक्षणानि वक्ष्ये—

कुल्यामाबध्य पाषाणैर्निम्नां तु निखनेन्महीम् ।
 तत्र यज्जलमातिष्ठेत्स तडागः प्रकीर्तितः ॥ ५ ॥
 जलान्तः शोधयेद्भूमिं तत्र कुर्यात्प्रणालिकाम् ।
 आरोपयेच्च नलिनीः सर्वजात्याः प्रयत्नतः ॥ ६ ॥
 तन्मध्ये रोपयेत्स्तम्भं काष्ठजं वा शिलामयम् ।
 सरस्यारोपयेद्बृक्षान्वाटिकास्तत्र कारयेत् ॥ ७ ॥
 प्रतिष्ठां देवतानां तु सरस्यन्ते नियोजयेत् ।
 सरस्तत्कृत्रिमं विद्याल्लोकानन्त्याय कल्पते ॥ ८ ॥
 लक्षणं देवखातस्य गिरौ यत्परिवर्तते ।
 सहजं कृत्रिमं वाऽपि स्तम्भैस्तु बहुभिर्वृतम् ॥ ९ ॥
 गिरौ वा पथि वा कार्यं शीतलैर्निर्झरैर्युतम् ।
 गम्भीरान्तं सूक्ष्ममुखं सोपानपङ्क्तिशोभितम् ॥
 तद्देवखातमुद्दिष्टं मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ १० ॥
 दीर्घाभिर्दीर्घिका ज्ञेया द्विवक्त्रा निम्नभूतला ।
 शोधिता जलपर्यन्तं दृढपापाणशोभितौ ॥
 सा दीर्घिका विजानीयाल्लोकानन्त्यप्रदा नृणाम् ॥ ११ ॥
 वापिका चतुरास्या स्याद्घटिताश्मसमावृता ।
 मधुहन्तुः समायुक्ता चतुर्विंशतिमूर्तिभिः ॥ १२ ॥
 चराहं कारयेत्तत्र शेषं कूर्मसमाश्रयम् ।
 भूगोलं कोलदेहस्थं समग्रं कारयेत्सुधीः ॥ १३ ॥
 अन्यैस्तु देवलिङ्गैश्च बहुभिः परिशोभिता ।
 पुरे वा पथि वा कार्या तथा देवस्य संनिधौ ॥ १४ ॥
 वाटिकायां नृपोद्याने सा कार्या मुक्तिमीप्सुभिः ।

चतुरास्या द्विवक्त्रा वा त्रिवक्त्रा वा प्रकल्पिता ॥
 सा वापिका समुद्दिष्टा लोकानन्त्यप्रदा नृणाम् ॥ १५ ॥
 कूपस्तु मन्दिरे प्रोक्तो बद्धः सोपानपङ्क्तिभिः ।
 कपाटेन युतो वक्त्रे कूपः स परिकीर्तितः ॥ १६ ॥
 एकवक्त्रा पुष्करिणी सुलभा सर्वदेहिनाम् ।
 जलार्थिनां पशूनां च सुगमा या पदक्रमे ॥
 शिल्पविद्धिः समुद्दिष्टा श्रेष्ठा पुष्करिणीफले ॥ १७ ॥
 पिबेत्पानीयमेका गौस्तृपार्तोऽन्योऽपि कश्चन ।
 कर्तुः स्वर्गफलायाऽऽशु कल्पते किं ततोऽधिकः ॥ १८ ॥
 कुल्यामानीय निम्ने तु तत्रोद्यानं प्रकल्पयेत् ।
 शालतालतमालादिपादपैरुपशोभितम् ॥ १९ ॥
 इक्षून्सवापयेत्तत्र कदलीकन्दसंचयम् ।
 आर्द्रकं च हरिद्रां वा शालीन्सर्वतुसंभवान् ॥ २० ॥
 एतद्विधानं कुल्यायाः कर्तुः कामविवर्धनम् ।
 सहस्रं मानसादीनां सरसां तु चतुष्टयम् ॥ २१ ॥
 कर्ता तेषां मृडानीशो न तत्रोद्यापनाविधिः ।
 विरजाख्यं सरस्तद्वह्निधरं सर उत्तमम् ॥ २२ ॥
 कूपेषु वृषभः श्रेष्ठो न तत्रोद्यापनाविधिः ।
 वापीकूपतडागानां कुर्यादुद्यापनं बुधः ॥ २३ ॥
 आदौ निरीक्ष्य तत्कालं ज्योतिःशास्त्रोदितं शुभम् ।
 जलाश्रयात्पश्चिमतो मण्डपं कारयेद्बुधः ॥ २४ ॥
 संशोध्य भूतलं रम्यं स्थण्डिलं तत्र कारयेत् ।
 वानीरसमिधश्चात्र सहस्रं जुहुयाद्बुधः ॥ २५ ॥
 वरुणो देवता चात्र विदध्यात्कनकस्य तम् ।
 स्थण्डिलात्पूर्वतः पूज्यः पीठे वानीरसंभवे ॥ २६ ॥
 वस्त्रयुग्मे समासीनो मकरोपरिसंस्थितः ।
 पाशं खड्गं तथा खे(धरन्खे)टं तोमरं चोर्ध्वदक्षिणात् ॥ २७ ॥
 हस्तक्रमं विजानीयात्पाशादीनां चतुष्टये ।
 यच्चिद्धि ते तु मन्त्रेण वारुणं हवनं मतम् ॥ २८ ॥

प्रधानं पायसं प्रोक्तं प्रायश्चित्तं तु सर्पिषा ।
 होमान्ते विधिवत्कुर्यात्प्रतिपूजां च पाशिनः ॥ २९ ॥
 आचार्याय ततो दद्यान्महिषीं च पयस्विनीम् ।
 ब्रह्मणे वस्त्रयुग्मं च ऋत्विग्भ्यो भूरिदक्षिणाः ॥ ३० ॥
 मूर्तिमाचार्यवर्याय दद्याद्वस्त्रसमावृताम् ।
 अभिषेकं ततः कुर्याद्वाप्याः कर्तुः समाहितः ॥ ३१ ॥
 मूर्तीनां च कलान्यासं कुर्याद्देवस्य वस्त्रिणः ।
 वराहस्य सशेषस्य सकूर्मस्यापि तत्त्ववित् ॥ ३२ ॥
 तथैव देवखातादिजलाशयविधानकम् ।
 कुर्यात्फलस्य संप्राप्त्यै स्वर्गस्य तु न संशयः ॥ ३३ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्संमानैः परितोषयेत् ।
 एवं कृत्वा तु वाप्यादिजलस्योद्यापनं सुधीः ॥ ३४ ॥
 प्राप्नुयादिन्द्रलोकस्य शाश्वतीं च समीपताम् ।
 यज्ञैः किं बहुभिर्भूष तपोभिर्वा व्रतैस्तथा ॥ ३५ ॥
 एकगोतृप्तिकृत्तोयं यदि भूमौ विधीयते ।
 यथा गङ्गाजलं श्रेष्ठं तडागाम्बु तथाविधम् ॥ ३६ ॥
 क्षुद्रतोयाशये राजन्विद्यते परतोयता ।
 पञ्च पिण्डाननुद्धृत्य न स्नायात्परवारिषु ॥ ३७ ॥

इति क्षुद्रजलाशयेषु विशेषः । तथा च याज्ञवल्क्यः—
 शुचि गोतृप्तिकृत्तोयं प्रकृतिस्थं महीगतम् । इति ।

तथा दानखण्डे—

जलाधारं जगत्सर्वं जलाधारा हि देवताः ।
 तस्माज्जलप्रदानेन प्रीतो भवतु केशवः ॥ ३८ ॥
 इति जलप्रशंसा ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 तडागादिजलाशयोद्यापनविधानम् ।

अथ प्रपाविधानम् ।

भविष्यपुराणे कृष्णयुधिष्ठिरसंवादे । युधिष्ठिर उवाच—

कथं कृष्ण तरन्त्यत्र संसारे पतिता नराः ।
स्वल्पेनैव तु कालेन तथा दानेन शंस मे ॥ १ ॥

श्रीकृष्ण उवाच—

विधानमेकमतुलं सामान्यनरसेवितम् ।
प्रपाख्यं विद्धि राजेन्द्र कथ्यमानं मया शृणु ॥ २ ॥
यस्मिन्पथि जलं नास्ति नास्ति ग्रामः समीपगः ।
प्रपा तत्र प्रकर्तव्या स्वर्गभोगेप्सुभिर्नरैः ॥ ३ ॥
माघमासेऽसिते पक्षे शिवरात्रौ विशेषतः ।
कृत्वा तु मण्डपं रम्यं चतुर्द्वारं सुशोभितम् ॥ ४ ॥
शाला शिलामयी कार्या दृढैः स्तम्भैर्विराजिता ।
एकवक्त्रा द्विवक्त्रा वा पूर्वोत्तरमुखा शुभा ॥ ५ ॥
मार्गाणां सति बाहुल्ये यत्र कुत्र च वर्त्मनि ।
तत्र तां कारयेद्धीमान्मणिकं च निधापयेत् ॥ ६ ॥
दृढग्रावमयं रम्यं मृन्मयं वा समाहितः ।
पूर्वजांस्तु समुद्दिश्य स्वर्गकामोऽथ वाऽऽत्मनः ॥ ७ ॥
प्रावृत्समयपर्यन्तं जलैः स्वच्छैः प्रपूरयेत् ।
यवागूं तक्रसंयुक्तां व्यञ्जनैस्तु समन्विताम् ॥ ८ ॥
अन्यैर्वा बहुभिश्चान्नैः सघृतैश्चैव संयुताम् ।
ताम्बूलं लवणं वाऽपि खट्वा नानाविधास्तथा ॥ ९ ॥
प्रपायां योजयेच्छक्त्या जलं वा केवलं तथा ।
ब्राह्मणार्थं पृथक्पात्रं ब्रह्मचिह्नेन लक्षितम् ॥ १० ॥
स्वस्तिवाचनपूर्वं तु सर्वमेतन्प्रकल्पयेत् ।
एवंविधा प्रपा प्रोक्ता विद्वद्भिर्धर्मकोविदैः ॥ ११ ॥
शिशूनां जननी यद्वत्क्षुत्तृपादरणे क्षमा ।
सर्वेषामपि राजेन्द्र मार्गगाणां तथा प्रपा ॥ १२ ॥
नन्दन्ति पितरस्तस्य तुष्यन्ति कुलदेवताः ।
स्तुवन्ति मनुजास्तं तु येनाध्वनि कृता प्रपा ॥ १३ ॥
क्रतुकोटिशते यत्तु पुण्यं संलभते नरः ।
तथा मन्दिरवीक्षायां प्रपाकृत्तद्वाप्नुयात् ॥ १४ ॥

दुर्भिक्षे ग्रासमात्राच्च ग्रीष्मे बिन्दुसमं जलम् ।
 तुलितं क्रतुलक्षेण द्वयमेतत्ततोऽधिकम् ॥ १५ ॥
 प्रपा तु द्विविधा प्रोक्ता मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ।
 चरा वाऽप्यचरा राजन्सर्वकामविवर्धिनी ॥ १६ ॥
 कावडिस्थेन तोयेन (वीवधेन समाहृत्य) मार्गे यत्प्राप्यते जलम् ।
 मनुजान्विद्धि राजेन्द्र प्रपा सा स्थावरेतरा ॥ १७ ॥
 शालायां मणिके तोयं लोकार्थं यन्निधीयते ।
 सा प्रपा स्थावरा ज्ञेया लोकानन्त्यप्रदायिनी ॥ १८ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 प्रपाविधानम् ।

अथान्नसत्रविधानम् ।

भविष्यपुराणे—

भूपतेः सर्वधर्मार्थं किं पुण्यं वद केशव ।
 सर्वदा क्रियमाणं च सर्वकामसुखास्पदम् ॥ १ ॥

श्रीकृष्ण उवाच—

यदीच्छसि महाराज्यमिहामुत्र महासुखम् !
 तत्प्रयच्छ कुरुश्रेष्ठ स्वन्नसत्रं यथेच्छया ॥ २ ॥
 यो यदिच्छति राजेन्द्र तस्मै तच्च प्रदीयते ।
 अन्नं बहुविधं तद्धि स्वेच्छाभोजनमुच्यते ॥ ३ ॥
 अन्नमेकविधं दत्तं बहुधा वा प्रकल्पितम् ।
 अनन्तसुखदं ज्ञेयं दातुर्नात्र विचारणा ॥ ४ ॥
 कार्तिके वाऽथ माघे वा श्रावणे शुद्धिसंयुते ।
 प्रारभेतान्नसत्रं तु प्रीतये सर्वनाकिनाम् ॥ ५ ॥
 वारिदस्तृप्तिमाप्नोति सुखमक्षयमन्नदः ।
 तिलप्रदः प्रजामिष्टां दीपदश्चक्षुरुत्तमम् ॥ ६ ॥

अनेन प्रकारेणाक्षयसुखप्राप्तिरन्नदानेन भवेत् । यतः कारणादन्नदानेन सर्व-
 मेव घटते तेन कारणेन भूभुजाऽन्नसत्रं विधातव्यम् ।

आहूय ब्राह्मणान् राजा स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ।
 प्रारभेतान्नसत्रं तद्यत्र सौख्यं निरामयम् ॥ ७ ॥
 तीर्थे वाऽपि पुरे वाऽपि तथैव च महापथे ।
 जलाशयसमीपस्थं विदध्यात्सत्रमण्डपम् ॥ ८ ॥
 महानसं समाधाय सर्वोपस्करसंयुतम् ।
 मुसलोलूखलादीनि पाकयन्त्राणि सर्वदा ॥ ९ ॥
 निधापयेद्बहून्याशु तुल्या(लादी)नि समन्ततः ।
 घृतकुम्भांस्तैलकुम्भान्व्यञ्जनानि बहून्पि ॥ १० ॥
 पर्णानि विहितान्येव शाकान्नानाविधांस्तथा ।
 तैलानि भाण्डनिचयं दधिक्षीरघटान्वहून् ॥ ११ ॥
 सूदान्प्रस्थापयेत्तत्र कुशलान्पाककर्मसु ।
 आन्धसिकवधूस्तत्र शुचिचित्तान्निधापयेत् ॥ १२ ॥
 गिरिजानलभीमानां घृतेषु परिशिक्षितान् ।
 सर्वर्तुषु प्रदातव्यमिच्छापूर्यै चतुर्विधम् ॥ १३ ॥
 अन्नं तु तृप्तिपर्यन्तं साधुशब्दसमन्वितम् ।
 आचान्तेभ्यस्ततो दद्यात्ताम्बूलं च सुसंस्कृतम् ॥ १४ ॥
 शय्यां दद्याच्छयालुभ्यः पादशौचं च कारयेत् ।
 एवं यः कुरुते राजा प्राप्नुयात्स सुखं परम् ॥
 सत्रिणः सूतकं नास्ति स्मृतिरेषा सनातनी ॥ १५ ॥

तत्र याज्ञवल्क्यः—

ऋत्विजां दीक्षितानां च यज्ञकर्म प्रकुर्वताम् ।
 सत्रिव्रतिब्रह्मचारिदातृब्रह्मविदां तथा ॥ १६ ॥
 नन्दन्ति पितरस्तस्य कुलानि च पितामहाः ।
 अन्नदोऽस्मत्कुले जात इति संचिन्त्य सर्वदा ॥ १७ ॥
 नित्यं गयायजिस्तस्य नित्यं गङ्गावगाहनम् ।
 नित्यं तुलाप्रदानं च पुंसो नित्यान्नसत्रिणः ॥ १८ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालाया-
 मन्नसत्रविधानम् ।

अथ दत्तकपुत्रविधानम् ।

शौनकस्मृतौ शौनक उवाच—

इदानीं संप्रवक्ष्यामि पुत्रसंग्रहमुत्तमम् ।
 बन्ध्या मृतप्रजा वाऽपि पुत्रार्थं समुपोष्य च ॥ १ ॥
 आधाय विधिवद्वह्निं स्वगृहोक्तेन वर्त्मना ।
 बन्धूनाहूय सर्वास्तु ग्रामस्वामिनमेव च ॥ २ ॥
 वाससी कुण्डले छत्रमुष्णीषं चाङ्गुलीयकम् ।
 दद्यादाचार्यवर्याय संपूज्य द्विजपुंगवान् ॥ ३ ॥
 मधुपर्कं ततो दद्यात्पृथिवीशाय शालिने ।
 पायसं चैव साज्यं च शतसंख्यं तु हावयेत् ॥ ४ ॥

प्रजापते न त्वदिति प्रजापतिमुद्दिश्य जुहुयात्स्विष्टकृतं हुत्वा होमं समाप्य
 दातुः समीपं गत्वा पुत्रं देहीति याचेत ।

समक्षस्थो ददत्तस्मै ये यज्ञेनेति पञ्चभिः ।
 देवस्य त्वेति मन्त्रेण हस्ताभ्यां प्रतिगृह्यं च ॥
 अङ्गदङ्गेत्यृचं जप्त्वा चाऽऽघ्राय शिशुमूर्धनि ॥ ५ ॥

वस्त्रादिभिरलंकृत्य च्छत्रच्छायाविषण्णं कृत्वा ।

नृत्यगीतैश्च वादित्रैः स्वस्तिशब्दैश्च संयुतम् ।
 यस्त्वा हृदेति द्वाभ्यां तु तुभ्यमग्र ऋचैकया ॥ ६ ॥
 सोमो दददित्येताभिः प्रत्यृचं पञ्चभिस्तथा ।
 स्विष्टकृदवशेषं च कृत्वा होमं समापयेत् ॥
 ब्राह्मणानां सपिण्डेषु कर्तव्यः पुत्रसंग्रहः ॥ ७ ॥

तदभावेऽलाभे वाऽसपिण्डस्थोऽपि ।

क्षत्रियाणां स्वजातौ वा गुरुगोत्रे समेऽपि वा ।
 वैश्यानां वैश्यजातौ च दत्तपुत्रविधिः स्मृतः ॥
 शूद्राणां शूद्रजातौ च कर्तव्यः पुत्रसंग्रहः ॥ ८ ॥
 यदि स्यादन्यजातीयं गृहीतमपि नन्दनम् ।
 अंशभाजं न कुर्वीत मन्वादीनां मतं हि तत् ॥ ९ ॥

दौहित्रो भागिनेयश्च शूद्रैस्तु क्रियते सुतः ।
 ब्राह्मणादित्रये नास्ति भागिनेयः सुतः क्वचित् ॥ १० ॥
 नैकपुत्रेण कर्तव्यं पुत्रदानं कदाचन ।
 बहुपुत्रेण कर्तव्यं पुत्रदानं यथाविधि ॥ ११ ॥
 दक्षिणां गुरवे दद्याद्यथाशक्ति द्विजोत्तमः ।
 नृपो राष्ट्राधमेवापि वैश्यो रत्नशतत्रयम् ॥ १२ ॥
 शूद्रः सर्वस्वमेवापि ह्यशक्तस्तु यथावसु ।
 दत्तपुत्रे यदा जाते कदाचित्त्वारसो भवेत् ॥ १३ ॥
 पितुर्वित्तस्य सर्वस्य भवेतां समभागिनौ ।
 अविधाय विधानं यः परिनन्दति नन्दनम् ॥ १४ ॥
 विवाहविधिभाजं तं कुर्यान्न धनभोजनम् ।
 तस्मिञ्जाते सुते दत्ते ह्यकृते च विधानके ॥ १५ ॥
 तत्सुतस्यैव वित्तस्य स स्वामी पितुरञ्जसा ।
 जातेष्वन्येषु पुत्रेषु दत्तपुत्रपरिग्रहात् ॥
 पिता चेद्विभजेद्वित्तं नैर्वासौ ज्येष्ठभाग्यभवेत् ॥ १६ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शौनकोक्तं
 दत्तकपुत्रविधानम् ।

अथ ब्रह्मयामलोक्तं ग्रहणसूतकदोषदूषितौषध—
 मन्त्रदृढीकरणविधानम् ।

यदा कदाचित्समये ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ।
 वेधदोषेण दुष्यन्ति मन्त्रौषधरसक्रियाः ॥ १ ॥
 तृतीये दिवसे चन्द्रग्रहः सूर्यस्य पश्चमे ।
 यदि स्याद्भेषजं मन्त्रं मन्त्रितं निखनेद्भुवि ॥ २ ॥
 क्षुद्रमन्त्रक्रियाः सर्वमौषधं सूत्रयन्त्रितम् ।
 पृथिव्यां ब्रह्मवर्णायां यत्नतो निखनेद्भुधः ॥ ३ ॥

बीजसंख्यां समाम्नायै सूत्रग्रन्थिपरम्पराम् ।
 संप्रोक्ष्य पयसा भूमिं ततस्तिलकुशोदकैः ॥ ४ ॥
 निखनेत्तत्र तां सूत्रग्रन्थिमालां प्रयत्नतः ।
 शरावसंपुटे धृत्वा पूर्वाशासंमुखः शुचिः ॥ ५ ॥
 ततो ह्यष्टग्रहे चन्द्रसूर्ययोः स्पर्श एव च ।
 स्नात्वा खातां सूत्रमालां बीजोच्चारैस्तु मोचयेत् ॥ ६ ॥
 बीजैस्तैर्मार्जनं कृत्वा तर्पणं जलमध्यतः ।
 सहस्रं वा शतं वाऽपि जपो मन्त्रस्य कीर्तितः ॥ ७ ॥
 एवं पृथक्पृथङ्मन्त्रान्संरक्षेद्ब्रह्मसूतकात् ।
 सर्पवृश्चिकनेत्रादिष्टु(त्र)णमन्त्रक्रियौषधम् ॥ ८ ॥
 अभूमिस्थं विधानेन संगोप्यं सिद्धिहेतवे ।
 संगोपिते यदा मन्त्रे द्विगुणं बलमादिशेत् ॥ ९ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां ब्रह्मयामलोक्तं
 ग्रहणसूतकदोषदूषितौषधमन्त्रदृढीकरणविधानम् ।

अथानृतमृतवार्तापरिहरणविधानम् ।

गर्गसंहितायाम्—

दुष्टस्थाने यदा पुंसो भवेत्क्रूरो नभश्चरः ।
 कुलदेव्याः प्रकोपो वा तदा विघ्नः प्रजायते ॥ १ ॥
 मृत एवेति वार्ता स्यात्सर्वदेशे दुरत्यया ।
 विधानं तत्र कर्तव्यं नरेण हितमिच्छता ॥ २ ॥
 आहूय ब्राह्मणान्सर्वांश्चतुर्वेदपरायणान् ।
 स्नात्वा तैलेन शुद्धेन पूजेयत्कुलदेवताः ॥ ३ ॥
 पितृन्तसंतर्प्य विधिवत्स्वस्तिर्वाच्या द्विजोत्तमैः ।
 जुहुयाद्विधिवद्बह्निमिन्द्रप्रीत्यै समाहितः ॥ ४ ॥

१ ख. °भादाय । २ ख. °य तत्र । ३ ख. °ग्रन्थय° । ४ ख. दृष्टे ग्र° । ५ ख. °यग्विधं
 मन्त्रं सं° । ६ ख. °दिब्रह्मा? म° । ७ ख. °माविशे° ।

स्वादिष्ठया मदिष्ठयेति जुहुयादयुतं सुधीः ।
 पायसं सर्पिषा युक्तं प्रधानं द्रव्यमुत्तमम् ॥ ५ ॥
 मूर्तिमिन्द्रस्य हेम्नस्तु पीठे देवतरोः शुभे ।
 पूजितां विधिवद्भक्त्या ह्याचार्याय निवेदयेत् ॥ ६ ॥
 हुते स्विष्टकृते विद्वान्गां प्रदद्यात्पयस्विनीम् ।
 तैलं दद्याद्द्विजातिभ्यो विघ्ननाशाय भूरिशः ॥ ७ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाच्छतं वा शक्त्यपेक्षया ।
 आत्मनस्त्वायसीं मूर्तिं पलैस्तु दशभिः कृताम् ॥
 तैलाभ्यक्तां ततो दद्याद्ब्राह्मणाय सदक्षिणाम् ॥ ८ ॥

तत्रेन्द्रस्य मूर्तिदानमन्त्रौ—

सहस्राक्ष महाबाहो सर्वविघ्नविनाशन ।
 अनेन मूर्तिदानेन सुप्रीतो भव मे सदा ॥ ९ ॥
 अपमृत्युविनाशाय मूर्त्तिमेतां ददाम्यहम् ।
 तुष्टेन मृत्युनाऽनेन पातकं मे व्यपोहतु ॥ १० ॥
 ततः पुण्यस्त्रियो विप्रा वृद्धाश्च गुरवस्तथा ।
 नीराजयन्ति दुर्वार्ताहरणाय पुनः पुनः ॥ ११ ॥

शतं जीव शरदो वर्धमान इत्याशिषं पठेयुः ।

ततोऽभिषेचनं कुर्युर्दुर्वार्तापीडितस्य च ।
 वृद्धान्प्रणमतस्तस्य दद्यादाशीर्वचो द्विजाः ॥ १२ ॥
 ग्रहं तु पूजयेद्दुष्टं प्रणम्य कुलदेवताम् ।
 एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ॥ १३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां गर्गोक्त-
 मनृतमृतवार्ताहरणविधानम् ।

अथ चर्मपात्रशुद्धिविधानम् ।

शङ्खोक्तम्—

चर्मपात्राणि नव्यानि तथा मांसमयानि च ।

पूरितानि घृतेनाऽऽशु शुध्यन्त्येकाह एव तु ॥ १ ॥
 घृतं वा चाथ तैलं वा यावन्निःसरतो मुखात् ।
 चर्मपात्रस्य नव्यस्य तदा शुद्धिस्तु जायते ॥ २ ॥
 तत्तैलं तद्घृतं चैव त्यक्त्वाऽन्यनिक्षिपेद्घृतम् ।
 व्यवहार्यं भवेत्तत्तु दैवे पित्र्ये च कर्मणि ॥ ३ ॥
 जलपात्राणि नव्यानि शल्कलादीनि चैव हि ।
 त्रयोदशदिनैः शुद्धिं चाऽऽप्नुवन्ति मृदादिभिः ॥ ४ ॥
 मृद्गस्मत्वक्फलैः शुद्धिर्भवेत्त्रिभिस्त्रिभिर्दिनैः ।
 उद्धृत्य सर्षपैः पात्रं व्यवहारं (यं) द्विजातिभिः ॥ ५ ॥

तत्र क्रमः—

स्थूले वा लघुनि ज्ञेया शुद्धिः पात्रे च चर्मणः ।
 मृदादिभिश्च कल्कैश्च वासरैश्च त्रिभिस्त्रिभिः ॥ ६ ॥
 निक्षिपेन्मृत्तिकां कृष्णां सजलां वासरत्रये ।
 ततश्च भस्म तावच्च ततः सप्तत्वचस्त्र्यहम् ॥ ७ ॥
 अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षन्यग्रोधास्रशिवास्तथा ।
 जम्बूश्च चर्मणः शुद्धौ विदलस्य प्रकीर्तिताः ॥ ८ ॥
 यदा कदाचिद्भिन्नैस्तु(नं तु)पात्रं शुद्धं तु चर्मणः ।
 संधितं सर्षपैः शुध्येद्दिनेनैकेन सत्वरम् ॥ ९ ॥
 शुद्धपात्रं दिने यस्मिन्क्षालयेत्सरितो जलैः ।
 तेनाम्बु प्रक्षिपेन्मूले बोधिवृक्षस्य * बुद्धिमान् ॥ १० ॥
 वृषभेशनयोर्मध्ये कुर्यान्मार्जनमादरात् ।
 ततस्तु तुलसीमूले प्रक्षिपेद्द्वारि भूरि च ॥ ११ ॥
 (ततस्तु ब्राह्मणागारे मणिके वारि भूरिच । +)
 ततः शुद्धं भवेत्पात्रं चर्मणो नात्र संशयः ॥ १२ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 शङ्खोक्तं चर्मपात्रशुद्धिविधानम् ।

* अश्वत्थवृक्षस्येत्यर्थः । + धनुर्भित्तितगम्यः ख. पुस्तके नास्ति ।

अथ शिवपूजाविधानम् ।

शिवरहस्ये नन्दिकार्त्तिकेयसंवादे । कार्त्तिकेय उवाच—

नन्दिन्नश्येत्कथं पीडा प्राणिनां रोगसंभवा ।
स्वल्पेन वाऽथ पुण्येन तन्ममाऽऽचक्ष्व सुव्रत ॥ १ ॥

नन्दिकेश्वर उवाच—

यदि प्रसन्नो देवेशः शंकरस्त्रिविलोचनः ।
अन्नपूजादिभिः सर्वैरुपचारैर्मनोरमैः ॥ २ ॥
तदा नश्यन्ति सर्वेऽपि व्याधयो देहिनां स्फुटम् ।
पित्तज्वरे समुत्पन्ने शिवं संस्त्राप्य वारिभिः ॥ ३ ॥
आदौ पञ्चामृते जाते स्नपयेत्पार्वतीपतेः(तिम्) ।
ततश्च शीतलैर्वाभिर्गाङ्गेयैश्चैव चन्दनैः ॥ ४ ॥
स्नपयेत्पार्वतीनाथं ततो धूपैश्च धूपयेत् ।
तदोऽन्नानां प्रकर्तव्या पूजा चित्तप्रमोहिनी ॥ ५ ॥
मण्डकैः परिधिः कार्यः पिण्डकोपरितः समः ।
तस्याभ्यन्तरतः सम्यक्तथैव मोदकान्न्यसेत् ॥ ६ ॥
ततश्च पूरिकाः स्वच्छा फेणिकास्तदनन्तरम् ।
ततश्च वटकास्त्रिगुणान्दद्यात्प्रोक्तांस्ततस्ततः ॥ ७ ॥
ततस्तु मणिपात्रादौ यत्नाद्भक्तं नियोजयेत् ।
तस्याभ्यन्तरतो योज्यं पायसं सितया सह ॥ ८ ॥
अष्टोत्तरशतं दीपान्घृतपूर्णान्नियोजयेत् ।
सकपूरांस्तु ज्वलितानासमन्तात्पटानन ॥ ९ ॥
ततस्तु कुसुमैः पूजा प्रकर्तव्या मनीषिभिः ।
ततो ध्वजादिकं सर्वं विदध्याच्छिवतुष्टये ॥ १० ॥
शंकरं प्रार्थयेत्पश्चाद्दण्डवत्प्रणमेन्मुहुः ।
ततः प्रदक्षिणीकृत्य कृताञ्जलिपुटः शुचिः ॥
प्रार्थयेद्देवदेवेशं शंकरं लोकशंकरम् ॥ ११ ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

जगतीनाथ देवेश त्राहि मां शरणागतम् ।
 अनया पूजया विघ्नं त्राहि मां हर मे हर ॥ १२ ॥
 इति प्रार्थयित्वा स्वमन्दिरं गत्वा व्याधितमभिषेचयेत् ।
 यथा अ(ह्म)न्नमयी पूजा तथा घान्यमयी स्मृता ॥ १३ ॥
 तथा वस्त्रमयी ज्ञेया नानारत्नमयी तथा ।
 घनसारमयी पूजा तथा कास्तूरिकी मता ॥
 सर्वासामप्यभावे च पूजा पुष्पमयी शुभा ॥ १४ ॥

तत्र पुष्पविशेषो यत्र कुत्रचित्पुराणान्तरे कालविशेषेण दर्शितः ।
 एवं कृते विधाने तु विघ्नः कोऽपि न जायते ।
 हिन्यन्ते व्याधयः सर्वे पूजनात्पार्वतीपतेः ॥ १५ ॥
 शिवालयोऽनास्ति यत्र नास्ति त्रिण्वादिमन्दिरम् ।
 जङ्गमेऽपि विधातव्या पूजा पूजाविचक्षणैः ॥ १६ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शिवरहस्योक्तं
 सर्वगदनिवारणशिवपूजाविधानम् ।

अथ वृषोत्सर्गविधानम् ।

काशीखण्डे—

एष्टव्या बहवः पुत्रा यद्येकोऽपि गयां व्रजेत् ।
 गौरीं वाऽप्युद्धहेत्कन्यां नीलं वा वृषमुत्सृजेत् ॥ १ ॥

तत्र नीलवृषस्य लक्षणमाह—

लोहितो यस्तु सर्वाङ्गे मुखे पुच्छे च पाण्डुरः ।
 त्रिहायणोऽक्षतो गर्वी स नीलो वृष उच्यते ॥ २ ॥

यस्मिन्यस्मिन्विषये च वृष उत्सृज्यते तानाह—

गङ्गायां च कुरुक्षेत्रे प्रयागे पुष्करे तथा ।
 गोदावर्यां च सिंहस्थे सुराचार्ये च मानसे ॥ ३ ॥
 इत्यादिषु च तीर्थेषु वृषोत्सर्गो विधीयते ।
 एकादशे च दिवसे मातापित्रोः क्षयेऽहनि ॥ ४ ॥

तत्र विशेषः श्राद्धसमुच्चये गङ्गाधरभट्टविरचिते—

पतिवत्स्त्रीक्षयेऽनङ्गवान्नोत्सृज्यो बुद्धिर्मन्नरैः ।

स प्रेतत्वहरो यस्मात्तन्नास्ति पतिवत्स्त्रियाः ॥ ५ ॥

+ [तथा च ब्रह्मवैवर्ते—

गयापिण्डे वृषोत्सर्गे कुरुक्षेत्रे च तर्पणे ।

गौरीकन्याविवाहे च पितृणामक्षया गतिः ॥ ६ ॥

तथा च स्मृत्यन्तरे—

अपि पुत्रवती नारी भर्तुरग्रे मृता यदि ।

वृषोत्सर्गे न कुर्वीत गां दद्यात्तु पयस्विनीम्] ॥ ७ ॥

तत्र विधानक्रमः—

कृत्वा स्नानं नदीतोये समाप्याऽऽह्निकमञ्जसा ।

स्वस्तिर्वाच्या द्विजैः सर्वैः स्थण्डिलं चैव कारयेत् ॥ ८ ॥

स्थालीपाकविधानेन कृत्वा च हवनं द्विजः ।

पायसेन प्रधानेन कृत्वा स्विष्टकृतं बुधः ॥ ९ ॥

विसृज्य विधिवद्वाह्निं विवाहविधिवद्भृशम् ।

उक्षाणं तर्णकां नद्यां प्रस्नाप्य शीतलैर्जलैः ॥ १० ॥

उर्भा संयोजयेन्मन्त्रैर्वैवाह्यैर्मन्त्रकोविदः ।

वस्त्रैरावेष्टयेत्पश्चादक्षतैरभिमन्त्रयेत् ॥ ११ ॥

हरिद्रा कुङ्कुमं दूर्वा दधि धान्यं च जीरकम् ।

गोरोचनं शतौषधयो हरितालं मनःशिला ॥ १२ ॥

कलशे निहिताः सम्यगभिषेके क्षमाः शुभाः ।

अभिषिच्य ततस्ताभिरुक्षाणं तर्णकामपि ॥ १३ ॥

शीतोष्णेन जलेनैव स्वगृहोक्तेन कर्मणा ।

सदक्षिणां तर्णकां तु दत्त्वा वृषभमुत्सृजेत् ॥ १४ ॥

+ धनुश्चिह्नितग्रन्थो नास्ति ख. पुस्तके ।

१ ख. 'सन्तरेः' । २ ख. 'दीतीरे स' । ३ ख. 'णं तर्णकीच' । ४ ख. 'चनशतोषधयो' ।

५ ख. 'तर्पकीम्' । ६ ख. 'षमु' ।

सव्ये कटिदेशे चक्रं चन्दनेन वा कुङ्कुमेन वा संलिख्य दक्षिणे कटिदेशे
त्रिशूलं संलिख्य विसृजेत् । ततो यजमान इति पठेत्—

भो भो वृष सुखं तिष्ठ सुखं गच्छ सुखमद्धि तृणं पानीयं पिव गवां पृष्ठैतः
सन्स्वेच्छया क्रीडन्विचर संरक्षास्मत्कुलम् । पुनीहि पितृनस्माकमवतु त्वां महे-
श्वरः । हरिस्त्वां जीवयतु ।

नासावेधं च युग्यत्वं यः करिष्यति तेऽनघ ।

षष्टिवर्षसहस्राणि कृमिभुक्स भविष्यति ॥ १५ ॥

इति पठेत् ।

शृङ्गयोश्चामरे बद्ध्वा कण्ठे घण्टां सुनादिताम् ।

किङ्किणीयुक्तसर्वाङ्गो रण नूपुरमण्डितः ॥ १६ ॥

एवं नेपथ्ययुक्ताङ्गो विभोक्तव्यो गवां पतिः ।

स तु मुक्तो लसद्देहो यत्र कुत्र च गच्छति ॥ १७ ॥

पितृणां तीर्थयात्रा स्याद्यजमानस्य केवला ।

स पिबेद्यत्र पानीयं वृषराड्बलदर्पितः ॥ १८ ॥

पिबन्ति पितरः कर्तुर्जाह्नवीतोयमेव तत् ।

मूत्रं करोति गोस्वाभी पुरीषं यत्र कुत्रचित् ॥ १९ ॥

पुरोडाशसमं विद्यादश्वमेधशताधिकम् ।

शृङ्गाभ्यां च खुराभ्यां च दर्पादुत्किरति क्षितिम् ॥ २० ॥

तद्रजः सकलं प्रोक्तं गयावर्जनवद्बुधैः ।

लाङ्गूलचालनाद्वायुः खे सर्पति सुशीतलः ॥ २१ ॥

पितृणां देहजां ग्लानिं पितृलोके व्यपोहति ।

नन्दन्ति पितरस्तस्य वस(द)न्ति च पितामहाः ॥ २२ ॥

उत्स्रष्टा वृषभस्यैवमस्मद्गोत्रसमुद्भवः ।

पुष्करस्य शतं यात्रा वाराणस्यां शतत्रयम् ॥ २३ ॥

गोदावर्याः सहस्रं च वृषोत्सर्गसमं त्रयम् ।

महालयं गयाश्राद्धं(द्धो)दधिस्नानं(ने) हयक्रतुः ॥ २४ ॥

[* वृषोत्सर्गस्य पुण्यस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ।

* धनुश्चिह्नितो भागः ख. पुस्तके नास्ति ।

१ ख. °ष्ठगः स° । २ ख. ग्लानीं पि° ।

वृषोत्सृष्टा गयाश्राद्धदाता च (स्य दाता) दुहितुः क्षितेः ॥
उद्धरेत्सप्तगोत्रस्थान्दश पूर्वान्दशापरान् ॥ २५ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
काशीखण्डोक्तं वृषोत्सर्गविधानम् ।

अथ नारायणबलिविधानम् ।

दाल्भ्य उवाच—

भगवन्ब्राह्मणाः केचिदपमृत्युवशं गताः ।
कथं तेषां भवेन्मार्गः किं स्थानं का गतिर्भवेत् ॥ १ ॥
कथं श्राद्धं भवेत्तेषां विधानं च विधीयते ।
त्वत्तोऽहं श्रोतुमिच्छामि ब्रूहि त्वं परमेश्वर ॥ २ ॥

श्रीविष्णुरुवाच—

साधु साधु महाप्राज्ञ कृता पृच्छा गरीयसी ।
ब्रह्मचर्याश्रमादीनां द्विजानामपमृत्युता ॥ ३ ॥
तेषां मार्गो गतिः स्थानं विधानं च विधीयते ।
शस्त्रघातमृता ये च सलिले वा कदाचन ॥ ४ ॥
हयैर्वा ताडिता ये च गोवृषैः कुञ्जरैस्तथा ।
वृक्षेभ्यः पतिता ये च मृता ये च चतुष्पथे ॥ ५ ॥
व्याघ्रैः सर्पैर्वराहैश्च भक्षिताः श्वापदैस्तथा ।
कुष्ठव्याधिमृता ये च मञ्चकोपरि ये मृताः ॥ ६ ॥
तूलिकायां मृता ये च कम्बलोपरि ये मृताः ।
गोघ्नश्च ब्रह्महा यश्च तथा स्त्रीवालघातकाः ॥ ७ ॥
वर्णसंकरकर्तारो ब्रह्मसूत्रविवर्जिताः ।
ब्राह्मणानां गुरुणां च तथा ये लिङ्गभेदकाः ॥ ८ ॥
जलाग्निबन्धनभ्रष्टास्तथैवाऽऽत्मप्रहंसकाः ।
विषं यैर्भक्षितं विप्रैः प्रेतसंस्कारलोपकाः ॥ ९ ॥
संतानरहिता ये च क्षयरोगेण ये मृताः ।
कण्ठे ग्रौसविलग्नाश्च विष्टिविद्युन्निपातिताः ॥ १० ॥

हता ये करकाघातैः शीतपातैर्मृताश्च ये ।
 अनाहारमृता ये च मार्गश्रमनिपीडिताः ॥ ११ ॥
 स्वलनान्मरणं प्राप्ताः शूलारोपणतो हताः ।
 विषाग्निना मृता ये च मृताः कण्टकपीडनैः ॥ १२ ॥
 एकादशाहे वृषोत्सर्गादिश्राद्धविवर्जिताः ।
 देशान्तरमृता भ्रष्टा अग्निदाहादिवर्जिताः ॥ १३ ॥
 एतैश्चान्यैश्च बहुभिर्भ्रियन्ते चापमृत्युभिः ।
 अपमृत्युमृतानां च स्थानं दाल्भ्य हि तच्छृणु ॥ १४ ॥
 गच्छन्ति नरके घोरे पूयशोणितसंकुले ।
 बहुचञ्चुस्वगाकीर्णे लोहकण्टकदुर्गमे ॥ १५ ॥
 अधोमुखाश्च तिष्ठन्ति नराः पापसमाकुलाः ।
 न तेषां कारयेदाद्यं सूतकं नोदकक्रियाः ॥ १६ ॥
 विधानं न तथोक्तं न क्रियामूर्ध्वाभिधां तथा ।
 अन्त्येष्टिं कारयेत्क्षिप्रं षण्मासाभ्यन्तरेषु च ॥ १७ ॥
 कर्तव्यं मणिसंस्तारं शुभतीर्थं समाश्रयेत् ।
 गङ्गायां यमुनायां च पुष्करे नैमिषे तथा ॥ १८ ॥
 कुरुक्षेत्रे सरस्वत्यां तीर्थेऽन्यस्मिञ्शुभेऽपि वा ।
 नद्यामब्धौ तडागे वा संगमे निर्झरेऽपि वा ॥ १९ ॥
 दाल्भ्य वै जलपूर्णे च हृदे वा विमले जले ।
 वापीकूपे (वापीकूले) गवां गोष्ठे कुण्डे वा प्रतिमाश्रये ॥
 मन्नाम्ना कारयेदाद्यं बलिं नारायणं शुभम् ॥ २० ॥

दाल्भ्य उवाच—

विप्रस्यार्थे त्वया देव कथिता या बलिक्रिया ।
 शेषा वर्णाः कथं विष्णो न यान्ति नरकं ध्रुवम् ॥ २१ ॥

विष्णुरुवाच—

चातुर्वर्ण्येन कर्तव्यो बलिर्नारायणाभिधः ।
 विधानं पूर्ववर्णस्य दाहोऽग्नेन क्रमेण तु ॥ २२ ॥
 षण्मासाद्ब्राह्मणे दाहस्त्रिमासात्क्षत्रिये स्मृतः ।
 अर्यस्यार्धेन मासेन सद्यः शूद्रैर्विधीयते ॥ २३ ॥

यद्यग्निहोत्रिणो मृत्युर्जायते निन्त्र एव च ।
 त्रिभिर्मासैस्त्रिभिः पक्षैर्न तु षाण्मासिकोऽवाधिः ॥ २४ ॥
 अग्निहोत्रविनाशस्य भयेन मुनिपुंगव ।
 धेनूनां दशकं दत्त्वा सद्य एव विधीयते ॥ २५ ॥
 यत्फलं कथ्यते यज्ञे कन्यायज्ञशतत्रये ।
 तत्फलं प्राप्नुयान्मर्त्यः कुर्वन्नारायणं बलिम् ॥ २६ ॥
 नारायणं बलिं सम्यग्यः करोति मृतस्य च ।
 प्रेतश्चापि च कर्ता च उभौ तौ फलभागिनौ ॥ २७ ॥
 न तच्छ्रेयोऽग्निहोत्रेण ह्यग्निष्टोमादिभिर्मखैः ।
 अपमृत्युविनष्टानां नारायणबलिः शुभः ॥ २८ ॥
 अकृत्वैवं बलिं विष्णोर्योऽनङ्गाहं प्रमुञ्चति ।
 सर्वमूर्ध्वकृतं चापि नोपतिष्ठति तस्य तत् ॥ २९ ॥
 पुत्रो वा बन्धुपुत्रो वा पौत्रो वा बन्धुरेव च ।
 स्वगोत्रो वाऽर्थभागी च कुर्यान्नारायणं बलिम् ॥ ३० ॥
 शिष्यो वा ऋणहर्ता वा भार्या वा भगिनी तथा ।
 जामाता दुहिता वाऽपि कुर्यान्नारायणं बलिम् ॥ ३१ ॥
 एतेऽधिकारिणो मोहान्न कुर्वन्ति बलिं मम ।
 सर्वे तिष्ठन्ति नरके प्रेतेन सह दारुणे ॥ ३२ ॥
 यद्येतत्क्रियते विष्णोर्बलिसंज्ञं विधानकम् ।
 यथावित्तं यथाकालं लोकानन्त्याय कल्पते ॥ ३३ ॥
 सौम्यमृत्युफलं तस्य यस्यैषा क्रियते क्रिया ।
 ब्रह्मलोकप्रदा ज्ञेया यावदाभूतसंप्लवम् ॥ ३४ ॥

दालभ्य उवाच—

केन देव विधानेन कार्यो नारायणो बलिः ।
 किं तत्र तर्पणं श्राद्धं कस्योद्देशो विधीयते ॥ ३५ ॥

विष्णुरुवाच—

पूर्वं मे तर्पणं भक्त्या मन्त्रैः पौराणवैदिकैः ।
 सर्वौषध्यक्षतैर्मिश्रैर्विष्णूद्देशेन कारयेत् ॥ ३६ ॥
 तर्पणं पुरुषस्यैव सूक्तेन च विधीयते ।
 दक्षिणाभिमुखो भूत्वा प्रेतमोक्षप्रदं स्मरन् ॥ ३७ ॥

अथ प्रतिकूलविधानम् ।

तथा च स्मृतिः—

कृते वाङ्निश्चये पश्चान्मृत्युर्मर्त्यस्य कस्यचित् ।

तदा तु शान्तिकं कार्यं गृह्यसूत्रविधानतः ॥ १ ॥

यदा कृते निश्चये वाङ्मये मङ्गले क्षयदिव्यभौमान्तरिक्षोत्पातस्तदा शान्तिकं गृह्यसूत्रोक्तं कुर्याद्यमं च पूजयेन्मङ्गलार्थं ।

निश्चये जायमाने तु यस्मिन्वंशे क्षयो भवेत् ।

तद्वंशवर्धनार्थं [तु] विधानं शौनकोऽब्रवीत् ॥ २ ॥

अथ प्रतिकूलनिर्णयः ।

तत्र गर्गः—

कृते वाङ्निश्चये पश्चान्मृत्युर्मर्त्यस्य कस्यचित् ।

तदा न मङ्गलं कुर्यात्कृते वैधव्यमाप्नुयात् ॥ ३ ॥

मेधातिथौ—

वधूवरार्थं घटिते सुनिश्चये वरस्य गेहे त्वय कन्यकायाः ।

मृतिर्यदि स्यान्मनुजस्य कस्यचित्तदा न कार्यं खलु जातु मङ्गलम् ॥ ४ ॥

स्मृतिचन्द्रिकायाम्—

कृते वाङ्निश्चये पश्चान्मृत्युर्मर्त्यस्य गोत्रिणः ।

तदा न मङ्गलं कार्यं नारीवैधव्यदं यतः ॥ ५ ॥

भृगुसंहितायाम्—

वाग्दानानन्तरं यत्र कुलयोः कस्यचिन्मृतिः ।

तदोद्वाहो नैव कार्यः स्वपक्षक्षयदो यतः ॥ ६ ॥

वृद्धशौनकः—

वरवध्वोः पिता माता पितृव्यश्च सहोदरः ।

एतेषां प्रतिकूलं चेन्महाविघ्नप्रदं हि तत् ॥ ७ ॥

१ ख. तन्मङ्गलं न कर्तव्यं नारीवैधव्यशङ्कया । २ ख. निश्चिते ।

वाग्दानानन्तरं यत्र कुलयोः कस्यचिन्मृतिः ।
तदा संवत्सरादूर्ध्वं विवाहः शुभदो भवेत् ॥ ८ ॥

स्मृतिरत्नावल्याम्—

पितुरब्दमिहाऽऽशौचं षण्मासं मातुरेव च ।
मासत्रयं च भार्यायास्तदर्धं स्वसृ(भ्रातृ)पुत्रयोः ॥ ९ ॥
अन्येषां तु सपिण्डानामाशौचं माससंमितम् ।
तदन्ते शान्तिकं कृत्वा ततो लग्नं विधीयते ॥ १० ॥

ज्योतिष्पकाशे—

प्रतिकूलेऽपि कर्तव्यो विवाहो मासमन्तरा ।
शान्तिं विधाय गां दत्त्वा वाग्दानादि चरेत्पुनः ॥ ११ ॥

स्मृत्यन्तरे—

दंपत्योः पितरौ भ्राता सापत्नश्च सहोदरः ।
पितृव्यस्तादृशश्चैव पितामह(हः)पितामही ॥ १२ ॥
कृते वाङ्निश्चये पश्चान्मृतो भवति मानवः ।
एषां मध्ये तु यः कश्चित्प्रतिकूलं तदुच्यते ॥ १३ ॥
प्रतिकूले तु संजाते विवाहं नैव कारयेत् ।
नारी वैधव्यमाप्नोति ह्यन्यथा कारयेद्यदि ॥ १४ ॥
अतो दोषविनाशार्थं शान्तिं कुर्याद्विचक्षणः ।
पुण्येऽङ्गि विप्रकथिते कृत्वा पुण्याहवाचनम् ॥ १५ ॥
पूजयेत्प्रयतो देवान्यथाशक्ति हिरण्मयान् ।
श्रियं हरिं शिवां शंभुं मृत्युं संपूजयेत्ततः ॥ १६ ॥
श्रीसूक्तेन श्रियं विष्णुमिदं विष्णुस्तु इत्यपि ।
गौरीर्मिमायेति शिवां त्र्यम्बकेन(ण) महेश्वरम् ॥ १७ ॥
परं मृत्योस्तु मन्त्रेण मृत्युं संपूजयेत्ततः ।
वासांसि गन्धपुष्पाढ्यानुपचारान्प्रकल्पयेत् ॥ १८ ॥
अथाऽऽज्यभागपर्यन्तमुपलेपादि पूर्ववत् ।
दूर्वातिलाज्यचरुणा हुनेदष्टोत्तरं शतम् ॥ १९ ॥

भूः स्वाहा मृत्युर्नश्यतु सुखाय वर्धतामिति ।
 एवं व्याहृतिभिर्हुत्वा घृतेन तु विचक्षणः ॥ २० ॥
 स्विष्टकृदिध्मसंधानं प्रायश्चित्ताहुतीस्तथा ।
 एवं समाप्य होमं तु दद्याद्विप्राय दक्षिणाम् ॥ २१ ॥
 गोहिरण्यं च वासांसि दत्त्वा ह्यस्मात्प्रमुच्यते ।
 तदाऽरिष्टप्रशमनं विधानं क्रियते बुधैः ॥ २२ ॥
 ऐश्वर्यकीर्तिजननं पुत्रपौत्रप्रवर्धनम् ।
 सर्वमृत्युमतिक्रम्य दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥ २३ ॥

तत्र दानमन्त्रः—

नारायण नमस्तुभ्यं वेदाधार धराधर ।
 प्रतिकूलभवं दोषं विनाशय विधानतः ॥ २४ ॥

इति मन्त्रेण नारायणमूर्तिदानम् ।

क्षीरार्णवसमुद्भूते सर्वविघ्नोपशान्तये ।
 स्वमूर्तिदानसंतुष्टे प्रतिकूलभयं हर ॥ २५ ॥

इति लक्ष्मीमूर्तिदानमन्त्रः ।

वासोभिर्गन्धपुष्पाद्यैरुपचारैः प्रपूजयेत् ।
 कृत्वा विधानं गां दत्त्वा वाग्दानादि चरेत्पुनः ॥ २६ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 प्रतिकूलविधानम् ।

अथ वसन्तपूजाविधानम् ।

कार्तिक्यां पूर्णिमायां तु द्वादश्यां वा समाहितः ।
 ब्राह्मणैः सह भूपालो विधानं च समारभेत् ॥ १ ॥
 कृताभ्यङ्गस्ततो राजा शुक्लमाल्यानुलेपनः ।
 शुक्लाम्बरधरो धीमान्पुत्रपौत्रैः समावृतः ॥ २ ॥
 आवाह्य ब्राह्मणान्सर्वान्क्षत्रियादिपुरोद्भवान् ।
 मण्डलं कारयेच्छ्रीमत्षोडशारं पुरोधसा ॥ ३ ॥

चतुरस्रं द्वितीयं च चतुःषष्टिप्रकोष्ठकम् ।
 अष्टकर्णिकमन्यत्तु मण्डलं कारयेत्सुधीः ॥ ४ ॥
 मण्डपाभ्यन्तरे चान्यं मण्डपं तु सुलक्षणम् ।
 ईक्षणं(मण्डलं) यावनालानां पुष्पमण्डपिकान्वितम् ॥ ५ ॥
 वस्त्रैः परिवृतं सम्यङ्नानावर्णैः सुलक्षणैः ।
 दक्षिणोत्तरतः सम्यक्कारयेन्मण्डलानि च ॥ ६ ॥
 षोडशारं चतुःषष्टि तथाऽष्टकर्णिकाभिधम् ।
 क्रमेण पूजयेत्तानि मण्डलानि नृपोत्तमः ॥ ७ ॥
 मण्डले प्रथमे कोष्ठे ईशान्यादिक्रमेण तु ।
 अष्टपङ्क्तिषु पुष्पैस्तु मातृकाः पूजयेत्क्रमात् ॥ ८ ॥
 सावित्रीं वाह्वीं क्रौञ्चीं कौबेरीं मारुतीं तथा ।
 गाणेशीं पान्नगीं सौरीं पूजयेत्क्रमशस्त्विमाः ॥ ९ ॥
 मात्स्यीं कौर्मीं च हांसीं च सैन्दीं व्याघ्रीं च वारुणीम् ।
 गौरीं वृषभवक्त्रां च पूज्याः पङ्क्तिक्रमादिमाः ॥ १० ॥
 जाह्नवीं गौतमीं कृष्णां नर्मदां च सरस्वतीम् ।
 भीमां तार्पीं च भद्रां च पूजयेत्क्रमशस्त्विमाः ॥ ११ ॥
 पाशिनीं शक्तिहस्तां च भ्रामरीं महिषासनाम् ।
 गदिनीं शूलिनीं चण्डीं शङ्खिनीं च प्रपूजयेत् ॥ १२ ॥
 लक्ष्मीं सरस्वतीं कालीं धात्रीं कान्तारवासिनीम् ।
 जम्बुकां पद्मिनीं पद्मां मालतीं पूजयेत्क्रमात् ॥ १३ ॥
 धैवजिनीं बर्बरीं वालां चापिनीं चपलां ध्रुवाम् ।
 पुष्पितां पुष्पमालाढ्यां पूजयेन्मातृकाः क्रमात् ॥ १४ ॥
 एवं संपूज्य विधिवच्चतुःषष्टिं तु मातृकाः ।
 षोडशारे च भद्रे च पूजयेद्रागदेवताः ॥ १५ ॥
 श्रीरागं च वसन्तं च पञ्चमं भैरवं तथा ।
 नारायणं नटाख्यं च मेघरागं च पूजयेत् ॥ १६ ॥
 समित्रांश्च सभार्यांश्च पूजयेत्प्रयतो नृपः ।
 दिगीशान्पूजयेत्पश्चादारास्वपि दशस्वपि ॥ १७ ॥

१ ख. °भरकां च । २ ख. जम्बूकां । ३ ख. ज्वलनीं । ४ ख. °रीं वालां । ५ क.
 तयोः । ६ ख. °राजं च° ।

आदौ ध्यानं स्तुतिः पश्चादावाहनमतः परम् ।
ततस्तु प्रार्थनं तेषां ततः पूजा विधीयते ॥ १८ ॥

तत्र ध्यानविधिः—

हेमचम्पकवर्णाभं हेमकेयूरभूषणम् ।
हेमवर्णाम्बरधरं ध्यायेच्छ्रीरागमादरात् ॥ १९ ॥

ततः स्तुतिः—किं दानैः क्रतुभिः पुण्यैः श्रीकण्ठस्तुष्यति प्रभुः ।
ऋतौ श्रीरागगीतैस्तु नादलुब्धो यतः शिवः ॥ २० ॥

अथाऽऽवाहनम्—

एहि श्रीराग रागेश भद्रेऽस्मिन्संनिधिं कुरु ।
वसन्तदेवसाहाय्ये पूजां गृह्य नमोऽस्तु ते ॥ २१ ॥
मूलमन्त्रेण सर्वास्तु विख्याताञ्जगतीतले ।
सर्वेषामेव रागाणां यो रागः स तु केशवः ॥ २२ ॥
मृगभोगी(गि) शिशून्सर्वान्सुविद्या जगतीतले ।
पुष्पाति रागरूपेण तस्माद्रागो हि केशवः ॥ २३ ॥

ततश्च वसन्तध्यानम्—

नवान्नतरुमूलस्थस्तप्तहाटकसंनिभः ।
पुष्पमालावृतः सम्यग्ध्येयः स्यात्कुसुमाकरः ॥ २४ ॥

तत आवाहनम्—

हिताय सर्वजगतां सुखाय सुखिनां सताम् ।
आहूतोऽसि मया देव वसन्त वनराजिप ॥ २५ ॥
चम्पकाशोकपुंनागनागकेसरपाटलैः ।
नवान्नपल्लवस्निग्धैर्लक्षितः कुसुमाकरः ॥ २६ ॥
प्रार्थनीयोऽसि देवेश पूजनीयोऽसि भूभृताम् ।
फाल्गुने कार्तिके वाऽपि पूर्णिमायां निशामुखे ॥ २७ ॥
पूजिते त्वयि पुष्पेश पूजिताः स्युः सुरोत्तमाः ।
अतस्त्वां पूजयाम्यद्य वसन्त मदनप्रिय ॥ २८ ॥
श्रीरागप्रमुखा रागा निषादप्रमुखाः स्वराः ।
कलाश्च काकलीमुख्याः पूजिताः सन्तु चाद्य मे ॥ २९ ॥

विश्वावसुमुखाः सर्वे गन्धर्वाः किंनरास्तथा ।

पूजिताः सन्तु मे चाद्य वसन्त त्वयि पूजिते ॥ ३० ॥

अथ कुसुमाञ्जल्यर्पणम्—

चम्पकाशोकपुंनागमालतीमोगराणि च ।

मरुबको दमनकस्त्वदर्धे चार्पितो मया ॥ ३१ ॥

गन्धं मलयजं देव मृगनाभिसमान्वितम् ।

वसन्त तव भोगार्थं मया दत्तं गृहाण तम् ॥ ३२ ॥

आज्यं च वर्तिसंयुक्तं कर्पूरेण समन्वितम् ।

वसन्त तव तुष्ट्यर्थमार्तिक्यं प्रतिगृह्यताम् ॥ ३३ ॥

सोपस्करं महादिव्यं घृतेन च समन्वितम् ।

भक्ष्यभोज्यादिसंयुक्तं नेवैद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥ ३४ ॥

ततः प्रेम्नास्तिः—

वसन्तपूजनं श्रेष्ठं सर्वविघ्नोपशान्तिदम् ।

तुष्टिदं पुष्टिदं लोके श्रेयो भवति देहिनाम् ॥ ३५ ॥

आदौ पञ्चमध्यानम्—

तप्तकार्तस्वराभासं हेमकेयूरकुण्डलम् ।

बाणचापधरं देवं पञ्चमं ध्यायतामिह ॥ ३६ ॥

सत्कण्ठकण्ठकुहरप्रतिनादवादप्रेङ्खोलितप्रियतरप्रतिकाकलीकम् ।

सिद्धाङ्गनाकरतलाहृतयन्त्रवीणागीतं प्रियं सुरवरैः खलु पञ्चमं तम् ॥ ३७ ॥

अथाऽऽवाहनम्—

एहि पञ्चम रागेन्द्र भद्रेऽस्मिन्संनिधिं कुरु ।

गृहाण गन्धपुष्पादि बलिं चैव मया हृतम् ॥ ३८ ॥

अनेनैव प्रकारेण पञ्चमो ह्युपचर्यते ।

ते न यान्ति यमस्थानं नन्दन्ति सुरसंसदि ॥ ३९ ॥

अथ भैरवध्यानम्—

खङ्गचर्मधरं स्निग्धं चूतपल्लवसंनिभम् ।

केयूरकुण्डलधरं भैरवं ध्यायतां हृदि ॥ ४० ॥

अथाऽऽवाहनम्—

एहि भैरव रागेऽक्ष देवदानववल्लभ ।
विधेहि संनिधिं चात्र प्रसन्नो भव मे सदा ॥ ४१ ॥
अनेनैव प्रकारेण पूजां कुर्यात्प्रयत्नतः ।
मूढमन्त्रेण गन्धादि नैवेद्यान्तं प्रकल्पयेत् ॥ ४२ ॥

तत्र प्रार्थना—

वसन्तपूजने चास्मिंस्त्वमाहूतोऽसि रागप ।
कुरु शान्तिं जगत्यास्मिन्विघ्नान्नाशय नः सदा ॥ ४३ ॥

ततस्तु मेघरागध्यानम्—

नृत्यन्मयूरच्छददक्षदृष्टिः करे दधानशङ्खुरिकामुदाराम् ।
केयूरमुद्राङ्कितबाहुदण्डः स मेघरागः कथितो मुनीन्द्रैः ॥ ४४ ॥

इति मेघरागध्यानम् ।

आर्षवचनम्—एवंविधं मेघरागं चिन्तयामीति ध्यानं कृत्वा पश्चादावाहनम् ।

एहि रागाधिप क्षिप्रं भद्रेऽस्मिन्संनिधिं कुरु ।
पृथ्वीजीवितहेतुस्त्वं मेघराग कृपां कुरु ॥ १ ॥

इत्यावाहनम् ।

ततस्तु षोडशोपचारसहितां पूजां कुर्यात् ।

ततश्च नटनारायणध्यानम्—

अङ्गुरवचक्रगदापद्मधरं देवं चतुर्भुजम् ।
नटनारायणं रागं चिन्तयामि इति प्रभुम् ॥ १ ॥

इति ध्यानम् ।

अथाऽऽवाहनम्—

एहि रागेन्द्र त्वरितं गृहाणेमां सपर्ययाम् (सपर्यां च गृहाण मे) ।
पूजिते त्वयि देवानां गणः स्यात् पूजितो मया ॥ २ ॥

इत्यावाहनम् । ततश्च पूजादि सर्वं कार्यम्—

एवं ध्यानपरा पूजा रागाणां विहिता क्रमात् ।
भूयात्सुखप्रदा नृणां वसन्तस्यार्चनं शुभम् ॥ १ ॥
एवं सर्वेषु रागेषु पूजितेषु नराधिपैः ।
ऋतुराजस्ततः पूज्यो ध्यानावाहनपूर्वकम् ॥ २ ॥

तत्र ऋतुराजस्य ध्यानम्—

नवाभ्रपल्लवाभासं मुक्ताभरणभूषितम् ।

सचूतमञ्जरीहस्तमृतुराजं विचिन्तयेत् ॥ ३ ॥

इति ऋतुराजस्य ध्यानम् ।

अथाऽऽवाहनम्—

ऋतुराज समागच्छ मण्डलेऽत्र स्थिरो भव ।

पूजिते त्वयि सर्वं हि विश्वं स्यात्पूजितं मया ॥ ४ ॥

इत्यावाहनम् । ततः पूजा—

चूतपल्लवमन्दारशतपत्रमरूबकैः ।

कल्लारैः कुमुदैः पद्मैः पूजयेत्कुसुमाकरम् ॥ १ ॥

अष्टकणिकमध्ये तु परिसंस्थाप्य तं विभुम् ।

ऋतुराजं सहाध्यक्षैः स्वर्गस्य च यथाक्रमम् ॥ २ ॥

मन्त्रैस्तलिङ्गकैर्वाऽपि नाममन्त्रैः पृथक्पृथक् ।

चन्दनाक्षतदूर्वाभिरन्यैर्वा मङ्गलोच्चयैः ॥ ३ ॥

अर्चयित्वा हि तं रागं स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ।

ततस्तु पूजयेद्विप्रानाचार्यप्रमुखाञ्छुचीन् ॥ ४ ॥

गोभिर्वस्त्रैः सुवर्णादिधातुभिर्वाणकादिभिः ।

धान्यैर्नानाविधैः क्षेत्रैः सैस्यवृद्धिपरैस्तथा ॥ ५ ॥

सपल्याणैस्तुरङ्गैश्च गोणीपृष्ठैर्धुरंधरैः ।

कस्तूरीवीणकैः स्वच्छैर्घनसारकरण्डकैः ॥ ६ ॥

उशीरतालवृन्तैश्च चामरैः सुमनोरमैः ।

अग्नैर्नानाविधैर्वस्तुसंचयैः पूजयेद्द्विजान् ॥ ७ ॥

ततो बन्दिजनव्रातान्नटांश्चैव कुशीलवान् ।

तोपयेद्वस्त्रमाल्यैश्च पङ्कवन्धवधिरादिकान् ॥ ८ ॥

एवं यः कुरुते राजा वसन्तस्य प्रपूजनम् ।

तस्य राष्ट्रे भवेत्क्षेमं धनधान्यसमाकुलम् ॥

नन्दते पृथिवी सर्वा सर्वसंपत्समन्विता ॥ ९ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां चतुर्वर्ग-

चिन्तामणौ हेमाद्रिप्रोक्तं वसन्तपूजनम् ।

अथ कार्तिकदीपोत्सवविधानम् ।

तथा च विष्णुधर्मोत्तरे—

वैष्णवानां परो धर्मः कार्तिके मासि सुव्रतः ।

सर्वस्वं दीयते भक्त्या विप्रेभ्यो विधिपूर्वकम् ॥ १ ॥

तथा च योगियाज्ञवल्क्यः—

अहो मासस्य षण्णां वा तथा संवत्सरस्य च ।

अर्थानां संचयं कुर्यात्कृतमाश्वयुजि त्यजेत् ॥ २ ॥ इति ।

यदि सर्वस्वं दातुं शक्तिर्नास्त्यर्थागमाभावाद्यवरोधे सति तदाऽऽश्विनशुद्धपूर्णि-
मामारभ्य हरिजागरमहोत्सवं कार्तिकीपूर्णिमापर्यन्तं कृत्वा पश्चात्पूर्णिमायां
रात्रौ प्रथमयामे दीपदानं कुर्यात् । “ दीपश्चक्षुरुत्तमम् ” इति स्मृतिवचनन्या-
येन विष्णुगृहे शिवालये तुलसीवृन्दावने बिल्वतरुमूले वा दीपप्रज्वालनं कुर्यात् ।

तत्र मतान्तरम्—

यस्मिन्गृहे यावन्तो मनुष्यास्तावतो दीपान्प्रज्वालयेत् । उच्चतरं स्तम्भं स-
मारोप्य तस्योपरि दीपभाजनं कृत्वा घृतेन तैलेन वा पूर्णं कृत्वा स्थूलतरां
वर्तिं नियोज्य प्रज्वाल्य श्रीलक्ष्मीनृसिंहौ प्रीयेतामिति संकल्पं कुर्यात् । यथा-
शक्ति ब्राह्मणतर्पणं कुर्यात् । ततश्च त्रिपुरवधप्राप्तजयश्रीशिवप्रीत्यर्थं दीपदानमहं
करिष्ये इति संकल्पं कुर्यात् ।

एवं कृते विधाने च प्रदीपोत्सवसंज्ञके ।

निर्विघ्नं जायते राष्ट्रं वर्धन्ते सुखसंपदः ॥ ३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां विष्णु-
धर्मोक्तं हरिजागरपूर्वकं दीपोत्सवविधानम् ।

अथ माघमासपुराणोक्तं दीपसप्तमीविधानम् ।

आदित्यपुराणे—

माघमासे सप्तापन्ने शुक्लपक्षे तु सप्तमी ।

तत्र नीराजनं कुर्याद्भवेदीपैस्तु सप्तभिः ॥ १ ॥

प्रातःकाले शुचिर्भूत्वा स्नात्वा गङ्गाजले शुभे ।
 ततो नीराजयेद्भक्त्या सहस्रांशुं नभोगतम् ॥ २ ॥
 दण्डवत्प्रणिपातैश्च स्तोत्रैः सर्वैर्मनोरमैः ।
 शुक्लाम्बरधरः श्रीमाञ्जुलमाल्यानुलेपनः ॥ ३ ॥
 अक्षतैरर्चयेद्देवं सप्तसप्तिं विभावसुम् ।

ततो नीराजनमन्त्रः—

जय सूर्य जयाऽऽदित्य जय भानो जय प्रभो ।
 मया नीराजितोऽस्यद्य क्षेमं कुरु जगत्पते ॥ ४ ॥

इति नीराजनमन्त्रः ।

आदित्यहृदयादीनि जपेत्स्तोत्राणि यत्नतः ।
 प्रणम्य भास्करं पश्चात्सानन्दो गृहमाव्रजेत् ॥ ५ ॥
 स्थण्डिले रङ्गमालाभिः सुस्निग्धे सद्नाङ्गणे ।
 पुनस्तत्रापि कर्तव्यं सूर्यनीराजनं बुधैः ॥ ६ ॥
 शक्त्या तु भोजयेद्विप्रान्प्रणिपातैः क्षमापयेत् ।
 एवं कृते विधाने च प्रसन्नः सविता भवेत् ॥ ७ ॥
 पुष्टिदं तुष्टिदं लोके पापक्षयकरं परम् ।
 सर्वान्कामान्ददात्याशु कर्तृणां नात्र संशयः ॥ ८ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालाया-
 मादित्यपुराणोक्तं दीपसप्तमीविधानम् ।

अथ होलिकाविधानम् ।

भविष्योत्तरे—

पुरा कृतयुगस्याऽऽदौ राक्षसोऽभून्मरुधकः ।
 सुता तस्य महाघोरा होलिका नाम राक्षसी ॥ १ ॥
 तस्या विधानमन्युग्रं कार्यमुल्बणनाशनम् ।
 फाल्गुने मासि संप्राप्ते शुक्लपक्षे सुखास्पदे ॥ २ ॥
 पञ्चमीप्रमुखास्तत्र तिथयोऽनन्तपुण्यदाः ।

दश स्युः शोभनास्तासु काष्ठस्तेयं विधीयते ॥ ३ ॥
 अपत्यैर्वाऽथ वृद्धैर्वा युवभिर्वा दिनात्यये ।
 प्राप्तायां पूर्णिमायां तु कुर्यात्तत्काष्ठदीपनम् ॥ ४ ॥
 भद्राकरणमुलङ्घ्य दीपयेत्काष्ठसंचयम् ।
 स्नात्वा राजा शुचिर्भूत्वा स्वस्तिवाचनतत्परः ॥ ५ ॥
 दत्त्वा दानानि भूरीणि दीपयेद्दोलिकाचितिम् ।
 ग्रामाद्बहिश्च मध्ये वा तूर्यनादसमन्वितम् ॥ ६ ॥

तत्र दीपनमन्त्रः—

प्रदीपयेऽद्य ते घोरां चितिं राक्षससत्तमे ।
 हिताय सर्वजगतां प्रीतये पार्वतीपतेः ॥ ७ ॥
 ततोऽभ्युक्ष्य चितिं सर्वां साज्येन पयसा सुधीः ।
 गन्धपुष्पैः समभ्यर्च्य कृत्वा चैव प्रदक्षिणम् ॥ ८ ॥
 नारिकेलानि दिव्यानि बीजपूरफलानि च ।
 द्राक्षेक्षुकदलादीनि फलानि च समर्पयेत् ॥ ९ ॥
 अर्चयित्वाऽक्षतै रक्तैः कुङ्कुमेन सुसंस्कृतैः ।
 गीतैर्वाद्यैस्तथा नृत्यै रात्रिः सा नीयते नरैः ॥ १० ॥
 प्रभातसमये जाते स्नात्वा गाङ्गे तु वारिणि ।
 होलिकाचयनं प्राप्य भस्म तत्परिवन्द्यते ॥ ११ ॥
 शदनं करतालीनां कुर्याच्चैव परस्परम् ।
 गीयते देवगान्धारे वसन्ते देवकीर्तनम् ॥ १२ ॥
 होलिकादाहजं भस्मरजो मूर्ध्नि सुधार्यते ।
 भस्मोद्धूलितसर्वाङ्गाः क्ष्वेदनैकपरायणाः ॥ १३ ॥
 प्रतारणैकनिपुणा हासोत्सवरभेषवः ।
 सिन्दूरोद्धूलनं कुर्युरन्यद्रविणसंपदा ॥ १४ ॥
 पलाशकुसुमोद्धूतशुभवारिप्रसेचनम् ।
 विधीयते मिथो लोके वसन्तप्रीतये ध्रुवम् ॥ १५ ॥
 द्वितीया च तृतीया च चतुर्थी पञ्चमी तथा ।

षष्ठी च सप्तमी चैव सेवने तिथयः स्मृताः ॥ १६ ॥
 जलेन वाऽथ तैलेन दध्ना च पयसाऽपि वा ।
 इक्षूणां च रसेनैव वसन्तस्य प्रसेचनम् ॥ १७ ॥
 आदौ देवेषु कर्तव्यं ततो विप्रेषु बन्धुषु ।
 कर्तव्यं भूमिपालेन सुखसंभोगवृद्धये ॥ १८ ॥
 निर्लज्जा मानरहिता गतेष्या गतसाध्वसाः ।
 क्रीडेयुः सकला लोका वसन्तस्योत्सवं प्रति ॥ १९ ॥
 निवृत्ते चोत्सवे तस्मिन्गुरुप्रमुखतो द्विजान् ।
 संपूजयेन्महीपालो वस्त्रालंकारभूषणैः ॥ २० ॥
 वन्दिनश्चारणाध्यक्षान्नटतश्च कुशीलवान् ।
 इन्द्रजालकलाभिज्ञांस्तोषयेद्धनसंचयैः ॥ २१ ॥
 एवं कृते विधाने च होलिकायाः प्रयत्नतः ।
 प्रसन्ना जायते सा तु त्रैलोक्यसुखदा भवेत् ॥ २२ ॥
 आख्यानमेतद्धोलायाः पुराणे परिचक्षते ।
 तुष्टिदा पुष्टिदा लोके विधाने विहिते सति ॥ २३ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 भविष्यपुराणोक्तं होलिकाविधानम् ।

अथ चैत्रशुद्धप्रतिपद्विधानानि ।

तन्नाऽऽदौ काकपिण्डपरीक्षाविधानं गर्गसंहितायाम्—

फाल्गुने मासि दर्शस्य मध्यरात्रे पुराद्वहिः ।
 धन्वन्तराणि संवीक्ष्य पञ्चाशत्तरुसंनिधौ ॥ १ ॥
 भूमिं संशोध्य यत्नेन निखनेत्कुडिलादिभिः ।
 कण्टकास्थिशरावाणां खण्डकानि बहिः क्षिपेत् ॥ २ ॥
 प्रसिञ्चेत्सारितस्तोयैः सरस्यादिभवैरापि ।
 ततः संमार्जनं कृत्वा धूपयेद्धूपसंचयैः ॥ ३ ॥
 आलिप्य चन्दनैर्दिव्यैः पुष्पाणि विकिरेत्ततः ।
 महाफणिमहाभोगद्विधारकृतालये ॥
 प्रसन्ना भव मातस्त्वं कुरु चाग्र्य जनप्रियम् ॥ ४ ॥

इत्यनेन मन्त्रेण गन्धपुष्पादि विधाय “ पृथिव त्वया धृता लोकाः ” इति प्रातःकालावधि पठन्पूर्वाभिमुखो निषण्णो वर्तेत । ततः प्रातरेवारुणोदयवेलायां दध्योदनपिण्डपञ्चकं सव्यञ्जनं पूर्वादिक्रमेणोत्तरपर्यन्तं निदध्यात् । “ दधि-
क्राव्णो अकारिषम् ” इति स्तोकं दधि पिण्डोपरि निधापयेत् । ततो दिक्क्रमेण-
न्द्रयमवरुणकुबेरेभ्यश्चतुरः पिण्डांस्तल्लिङ्गैर्मन्त्रैर्नाममन्त्रैश्च चतुर्ध्या समर्पयेत् ।
नमोन्तमुच्चार्य ततश्च पञ्चमं पिण्डं ब्रह्मणे समर्पयेत् । ततस्तां पिण्डभूमिं प्रणिपत्य
धन्वन्तरसप्तकं भूम्यन्तरं व्रजेत् । तदनन्तरं काकागमनं निरीक्षेत । यस्मादि-
ग्विभागादागच्छति वायसः, कंचित्पिण्डं गृह्णाति, साशङ्कं निःशङ्कं वा
तदवलोकनीयम् । शब्दायमानो मौनी वा किं वा ग्रासमात्रं परिगृह्णान्यं काकं
पश्यति यां यां चेष्टां कुरुते तदनुरूपं फलमादिशेत् । यतो दिग्विभागादागच्छति
तस्मिन्दिग्विभागे दुर्भिक्षं सूचयति । यद्विग्देशस्थं पिण्डमश्नाति तस्मिन्देशे
सुभिक्षं सूचयति । अन्यान्समाहूय तैः सह पिण्डमश्नाति तदाऽत्यन्तं सुभिक्षं
सूचयति । मौनेनास्ति तदा सुभिक्षे सति पुनर्दस्युभयमादिशति । साशङ्कं समश्नाति
तदा तस्मिन्नेव देशे स्थाने स्थाने सुभिक्षं (दुर्भिक्षं) सूचयति । [निःशङ्कं सम-
श्नाति तदा] स्थाने स्थाने दुर्भिक्षं (सुभिक्षं) सूचयति । अपरेण गृहीतमन्नं बला-
दाहृत्य भक्षयति तदा राजभयमादिशति । तस्मिन्नेव वर्णविशेषोऽस्ति ।
शुभ्रकण्ठः काको ब्राह्मणस्तस्य फलं त्रिभिर्मासैः । मयूरकण्ठः क्षत्रिय-
स्तस्य फलं षड्भिर्मासैः । शिखाकारं मस्तकं यस्य स वैश्यस्तस्य फलं
नवभिर्मासैः । कृष्णकण्ठः काकः शूद्रस्तस्य फलं वर्षेण भवति । पञ्चानां
पिण्डानां मध्ये ब्रह्मस्थानं गतं पिण्डं चेद्गृह्णाति तदा सर्वदेशे सुभिक्षं जायते । यस्य
वर्णस्य काको मध्यमं पिण्डं गृह्णाति तस्यैव वर्णस्य क्षेमं विदधाति । * [पिण्डं
गृहीत्वा यां दिशमनुधावति तस्यां दिशि स्वमाससंख्यया महर्घं विदधाति ।
तद्विषयमने तात्कालिकमेव विधानम्—

पायसं शर्करापूपपुरिकाक्षीरषष्टिकाः ।

एवमादीनि चान्नानि निक्षिपेत्काकभुक्तये ॥ ५ ॥

आदिशब्देन घृतमा(मां)समुद्दिष्टम् । चेत्पिण्डमात्रमपि न गृह्णाति तदा तत्र सर्वत्र
जनवारं दिशति तदा सर्वैरन्नैर्नमूर्तिं कृत्वा काकेभ्यो भूतेभ्यः श्वेभ्यो निद-

* धनुश्चिह्नान्तर्गतो भागो नास्ति. ख. पुस्तके

१ ख. °कं निर्भयं वा । २ ख. °मत्ति तं । ३ ख. °भयं दि° । ४ ख. °स्ति कृष्णकण्ठो ।
५ ख. °तैः । क्षामक° । ६ ख. °ण जायते प° । ७ ख. °नस्थं पि° ।

ध्यात् । श्वाण्डालपतितभूतवायसगृहे (ग्रह)राक्षसयक्षभैरववेतालपिशाचेभ्यो बलिं
विदधाति मन्त्रेण ।

एवं कृते विधाने च विघ्ना नश्यन्ति तत्क्षणात् ।

नन्दते जगति (जगत्यां नन्दते) लोको नाश्र कार्या विचारणा] ॥६॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
काकपिण्डपरीक्षाविधानम् ।

अथ क्षिप्तधान्यपरिक्षाविधानम् ।

(+ ततश्चैत्रमासि प्रतिपत्तिर्धौ विधानमन्यदस्ति ।)

फाल्गुनस्यामावास्यायां दिनात्ययसमये द्वाप्रान्पूर्व उत्तरे वा पूर्वस्मिन्नेव
भूमिमाने समस्थले भूमिशुद्धिं विधाय धान्यसंख्ययाऽवटान्कृत्वा
तेष्ववटेषु गोमयेन संमार्जनं कृत्वा गन्धपुष्पादिकानुपचारान्विदध्यात् ।
एकस्मिन्नेकस्मिन्नवटे शतं शतं धान्यकणान्निक्षिपेत् । द्वादश द्वादशावटा
एकैकस्य धान्यस्य कर्तव्याः । द्व्यङ्गुलं त्र्यङ्गुलं चतुरङ्गुलं वाऽवटा-
न्तरं कार्यम् । एवं धान्यमितावटपङ्क्तयो भवन्ति । ततः कणेषु
निक्षिप्तेषु मासाधिदेवताः षोडशोपचारैरुपचर्या(रे)त् । ततश्चाऽऽर्कपत्रैः प्रच्छाद्य
प्रदक्षिणं कृत्वा गृहं संव्रजेत् । पश्चात्प्रातःकाले समुत्थाय कृतस्नानाद्याह्निकः
समागत्य पुनस्तेषामवटानामर्चनं कृत्वाऽर्कपत्राणि निःसार्यावटगर्भानवलोकयेत् ।
तत्र धान्यकणानां न्यूनाधिक्यं (कन्वं) संवलोक्य तस्मिन्स्मिन्मासि तादृशमेव
फलमादिशेत् । यस्मिन्मासि यस्य धान्यस्य न्यूनता भवति तस्य मासस्याधिदेव-
ताप्रीतये ब्राह्मणतर्पणं कुर्यात् । एकस्य विद्वद्ब्राह्मणस्य द्वारदेशे शक्त्या धान्य-
राशिं दद्यात् । तस्याप्यभावे स्वे स्वे द्वारदेशे सर्वधान्यपूजां कृत्वा मासपर्यन्तम-
न्तिकेभ्यो भिक्षुकेभ्यः स्तोकं स्तोकं देयम् ।

एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां सर्वधान्यजिज्ञा-
सान्वयं विधानम् ।

+ धनुश्चिह्नान्तर्गतमविकम् ।

अथ चैत्रशुद्धप्रतिपद्वायुपरीक्षाविधानम् ।

चैत्रमासि ग्रामात्पूर्वे पश्चिमे वा दक्षिणोत्तरयोः समस्थले देशे संमार्जनं कृत्वा तस्य संमार्जितस्य मण्डलस्य चतुर्दिक्षु चतस्रः पताकाः समुच्छ्रित्य तासां मध्ये स्थण्डिलं कृत्वाऽग्निमुखं विधाय गणपतिदुर्गाक्षेत्राधिपतिपूर्वकमष्टलोकपालप्रीतये साज्येन पायसेन हवनं कुर्यात् । मन्त्रैस्तु तल्लिङ्गकैः प्रत्येकमष्टोत्तर-
शतम् । तदे(तेनै)व स्विष्टकृतम् । ततो हवने कृते वायुप्रार्थनां कुर्यात् ।

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

एशात्मन्सर्वभूतानां कुरङ्गपतिवाहन ।

समादिश फलं चास्मिन्वत्सरे हि सदागते ॥ १ ॥

इत्यावाह्य(ति प्रार्थ्य) पवनं प्रणम्य क्षणमात्रं तिष्ठेत् । यावत्सूर्यस्य दर्शनम् । के(केपां)चिन्मतेनोदयात्षोडश पलानि परीक्षेत । ततस्तु यद्विग्विभागाद्वायुराग-
च्छति तदवलोकनीयम् ।

सुभिक्षं जनमारं च सुराज्यं धनमूढताम् ।

बहुतोयं जनं हर्षं संतोषं तनुते क्रमात् ॥ २ ॥

अन्यच्च—

पूर्ववायुर्धनोत्कर्षं वह्निवायुर्जनक्षयम् ।

दाक्षिणः पशुमारं च नैर्ऋतो धनहानिकृत् ॥ ३ ॥

पाश्चिमो मेघवृद्धिं च वायव्यो री(व्यस्त्वी)तिर्मादिशेत् ॥

औत्तरो धान्यलाभाय रुद्रवायुर्धनप्रदः ॥ ४ ॥

अनयोर्द्वयोर्वचनयोर्मध्ये द्वितीयस्यार्थः प्रायो घटते ।

सार्धपौरुषमानेन पताकोच्छ्राय उच्यते ।

तासां कम्पाद्विजानीयात्फलमेतन्महीपतिः ॥ ५ ॥

होमधूमशिखायां च प्रेक्षणीयः प्रभञ्जनः ।

एवं कुर्वन्महीनाथो न कुत्रापि च सीदति ॥ ६ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां

गर्गोक्तं वायुपरीक्षाविधानम् ।

अथ वत्सराधिपतिपूजाविधानम् ।

यश्चैत्रशुद्धप्रतिपदिनवारो नृपो हि सः ।
 तस्य पूजा विधातव्या पताकातोरणादिभिः ॥ १ ॥
 प्रतिगृहं ध्वजाकर्म शक्त्या ब्राह्मणतर्पणम् ।
 निरीक्षणं च कर्तव्यं शकुनानां शुभेप्सुभिः ॥ २ ॥
 रघुवंशमहाकाव्ये श्रीमद्भागवते तथा ।
 सप्तशत्यां स्तुतौ देव्या उपश्रुतिकृतौ तथा ॥
 कर्तव्या शकुनेच्छा च समाफलविशुद्धये ॥ ३ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 वत्सराधिपतिपूजाविधानम् ।

अथ दमनकारोपणविधानम् ।

भविष्योत्तरे—

चैत्रे मासि सिते पक्षे चतुर्थी नवमी तथा ।
 दशमी द्वादशी चैव तथैव च त्रयोदशी ॥ १ ॥
 चतुर्दशी पञ्चदशी श्रेष्ठा दमनकार्पणे ।
 चतुर्थी गणनाथस्य दुर्गाया नवमी तथा ॥ २ ॥
 विष्णोस्तु दशमी पुण्या तस्यैव द्वादशी शुभा ।
 त्रयोदशीश्वरस्यैव श्रेष्ठाऽरण्यनिवासिनः ॥ ३ ॥
 भैरवस्यैकवीराया ज्ञेया भूता फलप्रदा ।
 पूर्णिमा सर्वदेवानां पुण्या दमनकार्पणे ॥ ४ ॥

तत्र विधानम्—

कारुहस्तागतः श्रेष्ठः प्रोक्तो दमनको बुधैः ।
 आनीय मन्दिरं स्नात्वा कृत्वा गन्धादिपूजनम् ॥ ५ ॥
 अर्पयेत्सर्वदेवेभ्यो यथाकालं यथाविधि ।
 ध्यानमावाहनं पूजां तथैव च विसर्जनम् ॥
 कृत्वाऽर्पयेद्दमनकं देवेभ्यः सुसमाहितः ॥ ६ ॥

१ ख. °बंशे म° । २ ख. चैत्रमा° । ३ क. °मीदिने । °द° । ४ ख. तथैव । ५ ख. भूतफ° । ६ ख. °हस्तग° । ७ ख. °यातिथि° ।

तत्राऽऽवाहनम्—

एहि दैत्यकुलश्रेष्ठ चैत्रपर्वणि मानद ।

अर्पिते त्वयि देवेभ्यः कृत्यं भवतु मे शुभम् ॥ ७ ॥

इति दमनकावाहनम् ।

मुस्निग्धपल्लवाभासं मयूखवरवाहनम् ।

चिन्तयामि सदानन्दं शुचिं दमनकं हृदि ॥ ८ ॥

इति ध्यानम् ।

पूजयामि सुमैः स्वच्छैस्त्वामद्यासुरसूदन ।

पूजितेन त्वया सर्वान्पूजयामि सुरोत्तमान् ॥ ९ ॥

इति मन्त्रेण पूजितं दमनकं पुष्पमण्डपिकामध्यस्थहिन्दोलक उपवेशितेभ्यो देवेभ्यः समर्पयेत् । ततो गन्धपुष्पादि दत्त्वा गुर्वादीनभ्यर्च्य च विसर्जयेत् ।

तत्र विसर्जनमन्त्रः—

गच्छ गच्छासुरश्रेष्ठ यथास्थानं महानते ।

अर्पिते त्वयि देवेभ्यो जगदस्तु निरामयम् ॥ १० ॥

इति विसर्जनमन्त्रः ।

हिन्दोलविसर्जनं जङ्गमानामेव । स्यादराणामुभयासंभवात् । केषांचिन्मते यावद्वसन्तर्तु । अथवा कृतयुगादिपर्यन्तमथवाऽपराष्टमीतिथिपर्यन्तं विसर्जनं न कर्तव्यं देशान्तरव्यवहितपित्रादिपूजनार्थप्रतीक्षार्थम् । यदि पित्रादिसंनिधानं भवेत्तदा तत्पूजनानन्तरमेव विसर्जनं कार्यम् ।

देवतानां गुरुणां च पूजायाः क्रम ईदृशः ।

पञ्चस्वायतनेष्वेव प्रधानं प्रथमं स्मृतम् ॥ ११ ॥

पश्चात्तरतमत्वेन स्वरुच्या वाऽपि पूजनम् ।

यवानां (पश्चानां) मन्त्रराजानां किंतु कुर्यादुपासकैः ॥ १२ ॥

आवृत्त्यावर्तितं मन्त्रैर्देवतामादितौ यजेत् । (?)

आदौ पिता ततो माताऽऽचार्यश्चगुरमातुलाः ॥ १३ ॥

पितृमातृष्वसारश्च ज्यायांसो भ्रातरस्तथा ।

एतत्प्रभृतयः श्रेष्ठाः प्रपूज्या योपितो नराः ॥ १४ ॥

पितृसाम्यात्पितृव्याणां पूजा स्यात्पितृपूजने ।

महामन्त्रोपदेष्टा चेत्पितृवत्पूजने स्मृतः ॥ १५ ॥

सर्वेषां चैव पूज्यानां श्रेष्ठौ च पितरौ यतः ।

एते मान्या यथापूर्वमेभ्यो माता गरीयसी ॥ १६ ॥

अथवा—

गुरवः पञ्च सर्वेषामेभ्यो माता गरीयसी ।

इत्यादिवाक्यपर्यालोचनयाऽऽदौ मातुरेव पूजाप्राप्तिः । तदयुक्तम् । यथा ग्राम्यारण्यपशुभ्यो जलतिलपयसां पूर्वोक्तनिन्दापूर्वकमहिंसापादकत्वेनाजाक्षीरेण जुहोतीत्यजाक्षीरविधिनाऽपेक्षिता स्तुतिस्तथा मातृपूजाविधावितरनिन्दया प्राश्नस्त्यं न तु पितुरधिकत्वम् । कुतः । पितुस्तस्या अपि पूज्यत्वात् । पूज्यस्य पूज्यः पूज्यतरः पितामहो मातामहो वा । पूज्यतरस्य पूज्यः पूज्यतमः प्रपितामहो मातामहपितामहौ (मातामहो) वा यथा तेषां पूजनात्पितृपूजनं [न] गुरुतमं गुरुक्रमन्यायेन तथा पितरि स्वरूपेण गुरुत्वं मातृपूज्यत्वेन गुरुतरत्वं ज्येष्ठ-भ्रातृपूज्यत्वेन गुरुतर (म) त्वम् । तस्मादादौ पितृपूजनमेव देवतागुरु-पूजनानन्तरम् । यथाशक्ति तिलाज्यहोमं कुर्यात् । यथाशक्ति दक्षिणादानम् । ततो ब्राह्मणकुमारिकाराधनं यथाशक्ति । एतद्वमनकविधानं भविष्योत्तरोक्तम् । सांख्यायनेऽस्ति । हेमाद्रिपण्डितोक्ते चतुर्वर्गचिन्तामणावप्यस्ति ।

कृते दमनकस्यास्मिन्विधाने नरपुंगवैः ।

सर्वत्र विजयप्राप्तिर्भवेन्नात्र विचारणा ॥ १७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां

भविष्योत्तरोक्तं दमनकारोपणविधानम् ।

अथ भावुकामहोत्सवविधानम् ।

वैशाखे कृष्णपक्षे स्यादष्टमी तिथिरुत्तमा ।

नवमी दशमी तद्वत्तिथिरकादशी शुभा ॥ १ ॥

द्वादशी तत्परा चैव भूताऽमा च विशेषतः ।

ज्येष्ठस्याऽऽद्या शुभा तद्वत्सूत मातृमहोत्सवे ॥ २ ॥

सूतकं विद्यते चात्र लोकस्य सकलस्य च ।

धनिष्ठापञ्चके यद्यद्वर्जनीयं शुभेषुभिः ॥ ३ ॥

तथैवाष्टासु तिथिषु वर्जनीयं प्रयत्नतः ।
विवाहमङ्गलादीनि कुर्यात्कर्माणि मानवः ॥
श्राद्धादि सकलं कार्यं नात्र कार्या विचारणा ॥ ४ ॥

तत्र विधानक्रमः—

प्रातःकालेऽष्टमीं प्राप्य समाहूय द्विजोत्तमम् ।
पूजयेद्विधिवद्भक्त्या वस्त्रारोपणपूर्वकम् ॥ ५ ॥
प्रस्थाप्य तं समभ्यर्च्य नवम्यां कारयेत्परम् ।
विधानं भूभुजां सम्यग्ब्राह्मणैः सह चापरैः ॥ ६ ॥
हस्ते कङ्कणमावध्य कुलालस्य महीपतिः ।
ग्रामादा(द्या)यं समस्तं च तस्मै दद्याद्दिनाष्टके ॥ ७ ॥
एतदेव विधानं तु नवम्यां क्रियते बुधैः ।
दशम्यां प्रातरेवं हि दीपनिर्याणमुत्तमम् ॥ ८ ॥
विदध्यात्सन्ननस्तस्य कुलालस्योग्रसंयुतम् ।
सर्वधान्यमयो दीपः पञ्चवर्तिसमन्वितः ॥
शरावसंपुटे न्यस्तः सद्घृतापूरितः शुभः ॥ ९ ॥

सद्घृतं सद्यस्तप्तमिति ।

भावुकामूर्तिमानीय तत्र तं परिपूजयेत् ।
ततश्च ब्राह्मणागारं नीयते भूपतेस्ततः ॥ १० ॥
ततः सचिवमुख्यानां सन्नानि प्रतिनीयते ।
यत्र यत्राऽऽगतो दीपस्तत्र तत्र प्रपूज्यते ॥ ११ ॥
समानीय पुनः सन्न कुलालस्य विशेषतः ।
शिव्यस्थं तत्र तं कृत्वा रात्रिशेषस्तु नीयते ॥ १२ ॥
एकादश्यां तिथौ रात्रौ कुर्याज्जागरणं जनः ।
स्वेषु स्वेषु गृहेष्वेव यावच्चोदेति भास्करः ॥ १३ ॥
उदिते भास्करे पश्चान्निर्याणं कुलपस्य च ।
काष्ठस्य कुलपं कृत्वा संवाह्य च कुमारकैः ॥
नरैरितस्ततो नीत्वा वृक्षोपरि परिक्षिपेत् ॥ १४ ॥

इत्येकादश्यां विधानम् ।

द्वादश्यामुल्लेख्यं तु कंचिदेकं विनिर्णयेत् ।

शाखाप्रावृतसर्वाङ्गं काञ्चिदेकां नितम्बिनीम् ॥ १५ ॥
 नटयित्वा नरं कञ्चित्द्रूपसहितं तथा ।
 क्रीडते ग्राममध्ये तु उल्लको दैत्यपुंगवः ॥ १६ ॥
 योधयित्वा ततः सार्धं नूनमञ्जूकयाऽसुरः ।
 विधातव्यो मृतो दैत्य उल्लको युधि पातितः ॥ १७ ॥
 शान्तमस्तु जगत्सर्वं धर्मवृद्धिस्तु जायताम् ।
 विवर्धतां श्रुतेर्मागो गवां वृद्धिस्तु जायताम् ॥ १८ ॥
 वर्धन्तां चैव दातारो धर्मशीलाः पतिव्रताः ।
 सुखमसबता लोके जायतां योषितामपि ॥ १९ ॥
 सर्वे च सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः ।
 सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिदुःखमाप्नुयात् ॥ २० ॥
 पठेयुरिति सर्वेऽपि उल्लोकं निहतं सति ।
 एवं विधानं कर्तव्यं द्वादश्यां मध्यवासरे ॥
 त्रयोदश्यां च त्वपरं मल्लयुद्धं विधीयते ॥ २१ ॥

पुराणवचनात्—

मल्लयुद्धं त्रयोदश्यां चतुर्दश्यां च योगिनीः ।
 अमाया च विशेषेण गान्धारीपूजनं शुभम् ॥ २२ ॥
 अमां विना यजिर्देव्या रोहिण्यां क्रियते जनैः ।
 नै तां गृह्णाति सा देवी प्रधानत्वं तिथेर्यतः ॥ २३ ॥

ततस्त्रयोदश्यामेव मल्लयुद्धम् । तत्र मल्लचतुष्टयं कर्तव्यम् । नगरे विपिने
 चतुष्पथे चतुरः स्तम्भान्समारोप्य तत्र रङ्गावतारं कुर्यात् । स्तम्भमूले सर्व-
 धान्यैः परिपूर्णानि सज्जलानि भाण्डानि विन्यसेत् । तत्समीपे चतुरः
 पटान्निधाय तेषु पटेषु मल्लाभिनयकारिणो नगान्विनियेशयेत् । तेषु मल्लेषु
 निविष्टेषु कश्चित्पौरः शिरसि धृतजलपूर्णकलशो मल्लन्पञ्चधारः पदे पदे स्वल्-
 न्सन्सतूर्यनिनादो घनगर्जितकारी सह पौरजनै रङ्गं समायातैस्तैर्मल्लैः सह
 नियुद्धं कुर्यात् । तेषु परस्परं च कुर्युः । शिरस्थं कलशं स्फोटयेत् । स्तम्भ-
 मूलस्थानपि कुम्भान्स्फोटयेत् । तत्कलशस्थं धान्यमञ्चयं जलं यत्र निम्नाभि-
 मुखं धावति तत्र तत्र वारिणि कानि धान्यान्यग्रेसराणि कानि मध्यस्थानि

१ ख. 'तु उल्लको । २ 'स्तु वर्धताम् । ३ ख. 'द्धं प्रवर्तते । ४ क. 'श्रमं वि' ।
 ५ ख. 'न तां' ।

कानि पश्चिमानि रङ्गाद्बहिर्न धावन्ति तत्सर्वं समालोकनीयम् । समालोच्य तादृशं फलं वक्तव्यम् । तच्चाऽऽह—अग्रधान्यान्यग्रत एव यान्ति तदा महत्सुभिक्षम् । अनेनैव प्रकारेण यत्स्वभावं धान्यमग्रे धावति तद्बहुतरं भविष्यतीति ज्ञातव्यम् । ततः सानन्दाः स्वान्स्वान्गृहान्गच्छेयुः । ततश्चतुर्दश्यां सायंकाले अञ्जुकीभूय सर्वेऽपि पुमांसो गृहीतशस्त्रास्त्रसंपदः ‘ उदयोऽस्तु, उदयोऽस्तु ’ इति ग्राममध्ये ग्रामं प्रदक्षिणीकृत्य किञ्चित्स्थानान्तरं व्रजेयुः । तत्र काञ्चिदेकां कुम्भकारेणाऽऽनीतां कृत्रिमनारीस्वरूपिणीं भावुकास्वरूपिणीं भावुकां पटान्तरैऽभिनिषण्णां कृत्वा सर्वे पौगास्तत्र तृणमयं पुरुषं तस्या भावुकास्वरूपिण्या देव्या हस्ताक्षतास्तन्मस्तके क्षेपयित्वा ततस्तं तृणपुरुषं दहेयुः । ततस्तु सानन्दाः पुनः पुरमाव्रजेयुः । उदकं संस्पृश्य स्वान्स्वान्गृहान्प्रजेयुश्च । यत्र यत्र गच्छन्ति तत्र तत्र पाद्यपूजापूर्वकानुपचारान्कारयेयुः । एवं भूतदिने नक्तवेलायां योगिनीविधानम् । ततस्तस्मिन्नेव नक्तेऽपरविधानम् ।

शिशुः काष्ठमयस्तत्र कर्तव्यः शिल्पिभिर्दृढः ।

इति क्षीरवृक्षस्य काष्ठस्य यस्य कस्यचिदेवं ज्ञातव्यम् ।

हरिद्राक्तं न्यसेत्तस्यो गान्धार्याः पुरतः सुधीः ।

प्रजास्ताः कन्यका देव्या भूतमातुः सुलक्षणाः ॥ २४ ॥

त्रिपुरा भैरवी देवी त्रिशूलवरधारिणी ।

इत्युच्चार्य जनाः सर्वे प्रातःकाले समाहिताः ॥ २५ ॥

ततस्तु पुरजा लोका नरा नार्यः सवालकाः ।

कम्बलोत्तरधारिण्यो हिरिकङ्कणकास्तथा ॥ २६ ॥

सूत्रत्रिवृत्तरष्टोत्तरशतगुणमयं हस्तकङ्कणं हिरीति निगद्यते ।

कुठारान्कण्ठतः कृत्वा व्रजेयुः शरणं हि ताम् ॥

प्रदक्षिणप्रक्रमणैः स्तोत्रैर्नानाविधैस्तथा ॥ २७ ॥

पुष्पैर्नानाविधैर्देवीं पूजयेयुः प्रयत्नतः ।

ततस्तु मण्डलं देव्याः पूरकैर्मण्डकैस्तथा ॥ २८ ॥

आच्छाद्य विधिवद्भक्त्या घटिकाः स्फोटयेत्ततः ।

नैवेद्यं निविधं देव्यै भावुकायै समर्पयेत् ॥ २९ ॥

१ ख. अञ्जुकीभू° । २ ख. °स्तुह° । ३ ख. °रे निविधं कृ° । ४ ख. °स्या गान्धार्या° ।

५ ख. कस्या कटि° । ६ ख. भावका° ।

ततः संप्रार्थ्य देवीं तां गच्छेयुर्निजमन्दिरम् ।
 सखीं तिलकभालां तां निम्बदामधरास्तथा ॥
 रात्रौ जागरणं कुर्युरात्तशस्त्राः शुचिव्रताः ॥ ३० ॥

शुचिव्रता ब्रह्मचर्ययुक्ता इत्यर्थः ।

जपेद्वेतालनामानि पवित्राणि मुहुर्मुहुः ।
 मध्यरात्रे ततः कुर्युर्युद्धाभासं परस्परम् ॥ ३१ ॥
 हन्यतां हन्यतां शीघ्रं प्रहरं दैत्यपुंगवम् ।
 हतो दैत्यो हतो दैत्य इति ब्रूयुर्दुदायुवाः ॥ ३२ ॥
 तस्मिन्नेव तु समये शिख्यस्थो दीपदैत्यराट् ।
 स च्छेत्तव्योऽस्त्रवर्गेण बहुधा कारयेद्धतम् ॥ ३३ ॥
 हते च प्रहरे दीपे निहते च सुदारुणे ।
 नर्तनं च मिथः कुर्युस्त्रिपुरानिहने कृते ॥ ३४ ॥
 ततः प्रभातसमये चौर्यमारोप्य केषुचित् ।
 सीरेषु च समारोप्य विदध्यात्क्ष्वेडनं बहु ॥ ३५ ॥
 सीरारोपणकाले च भूतमातुः प्रियंकरम् ।
 कल्पयेयुस्तु नैवेद्यं स्त्रियः शुभसुतान्विताः ॥ ३६ ॥
 एवं कृते विधाने च कल्पयेयू रणोल्बणम् ।
 तच्चापि कृत्रिमं स्फीतं प्रहारे जर्जरीकृतम् ॥ ३७ ॥
 शकटोपरि विन्यस्य नयेयुः पुरतो बहिः ।
 ततस्तान्सीरपृष्ठस्थान्बवा(न्धर्पि)तान्स्तेयिनो जनान् ॥ ३८ ॥
 आनयेयुर्वहिर्ग्रामान्यसेयुर्वृषचर्मणि ।
 शिखास्त्वादाय तेषां तु ततः कुर्युर्विसर्जनम् ॥ ३९ ॥
 तेऽपि चौराः शिरस्तस्य रजन्यां निहतस्य च ।
 दग्धाः (ग्ध्वा) स्नानाय गच्छेयुः सह तैः पुरसंभवैः ॥ ४० ॥
 कृतस्नानाः पुरं प्राप्य त्वभिवाद्य शिवात्मजाम् ।
 भावुकां जगतां धात्रीं प्रार्थयेयुर्वरान्बहून् ॥ ४१ ॥
 जयं देहि यशो देहि देहि सौभाग्यमुत्तमम् ।
 देहि पुत्रांश्च पौत्रांश्च देहि सर्वार्थसंपदः ॥ ४२ ॥

देहि वृद्धिं गवां शश्वत्ससस्यां मेदिनीं कुरु ।
 सुभिक्षं चास्तु सर्वत्र वाणिज्यं माऽस्तु निष्फलम् ॥ ४३ ॥
 मार्गे च गच्छतां नृणां मा सन्तु परिपन्थिनः ।
 जलं धान्यं तृणं वासो रसाः शाका धनानि च ॥ ४४ ॥
 बहूनि सन्तु लोकेषु न कश्चित्सीदतां जनः ।
 अन्नं बहुतरं चास्तु दाने चाऽऽस्तिक्यमुत्तमम् ॥ ४५ ॥
 संतोषः सर्वदा चास्तु त्वत्प्रसादाच्छिवात्मजे ।
 एवं ये कुर्वते लोका विधानं प्रतिवत्सरम् ॥ ४६ ॥
 ते न पश्यन्ति दारिद्र्यं भोक्तारः सुखसंपदाम् ।
 एतत्समस्तमाख्यानं पुराणे परिगीयते ॥
 पवित्रं सुरसं श्राव्यं लोकानां हितवर्धनम् ॥ ४७ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 पद्मपुराणोक्तं भावु ऋामहोत्सवविधानम् ।

अथ शीलाषष्ठीविधानयुक्तं नागपञ्चमीविधानम् ।

तथा च भविष्योत्तरे—

श्रावणे मासि पञ्चम्यां सिते पक्षे विधीयते ।
 विधानं नागदेवानां शीलाषष्ठ्यास्ततः परम् ॥ १ ॥
 मुहूर्तद्वितये नागः शेषः स्कन्दो हि दृश्यते ।
 सा नागपञ्चमी पूज्या गणराजयुताऽशुभा ॥ २ ॥
 प्रातःकाले सदा षष्ठी पूज्या च युवतीजनैः ।
 अपराह्णे सदा नूनं वैधव्याय च पूज्यते (कल्पते) ॥ ३ ॥

इति स्मृतिचिन्तामणिः ।

नागास्तु मृन्मया ज्ञेया आलेख्याः कुङ्कुमेन वा ।
 चन्दनेनाथवा लेख्यास्तदभावे हरिद्रया ॥ ४ ॥
 आलेख्याः सदनेष्वेव स्वस्मिन्स्वस्मिन्मनीषिभिः ।
 मृन्मयास्तु विधातव्यास्ते पूज्याः पुरवासिनाम् ॥ ५ ॥

कर्तारो नापिकास्तेषां यत्र कुत्राऽऽस्पदे शुभे ।
 गङ्गावारिणि सुस्नातैर्द्विजाद्यैः पुरवासिभिः ॥ ६ ॥
 संस्नाप्य पयसा पूर्वं मन्त्रैस्तलिङ्गकैर्ध्रुवम् ।
 दध्ना च सर्पिषा चैव मधुना सितया तथा ॥ ७ ॥
 ततो गङ्गाजलेनैव ततो गन्धं समर्पयेत् ।
 पूजयेत्कुसुमैर्दिव्यैरयामार्गेण दूर्वया ॥ ८ ॥
 विल्वपत्रैश्च बहुभिर्दशाङ्गैर्नैव धूपयेत् ।
 दीपैर्नीराजयेत्पश्चान्नैवेद्यं तु समर्पयेत् ॥ ९ ॥
 ताम्बूलं क्रमुकैर्युक्तं सकपूरं समर्पयेत् ।
 ततश्च प्रार्थयेन्नागान्वासुकिप्रमुखोज्ज्व ॥ १० ॥
 नमामि वासुकिं नागं नमि तं तक्षकं विभुम् ।
 नमामि शङ्खं नागेन्द्रं कुमुदं प्रणमाम्यहम् ॥ ११ ॥
 अनन्तं भुजगं श्रेष्ठं नमि कर्कोटकं विभुम् ।
 पद्मं नमामि नागेन्द्रं पुण्डरीकं नमाम्यहम् ॥ १२ ॥
 नमामि कुलिकं नागं नागलोकनिकेतनम् ।
 इति संप्रणमन्नागान्गृणन्नामानि सर्वशः ॥ १३ ॥

सर्वश इति वासुकिप्रमुखाणां नवानां नामानि गृणन्निति स्तुवन्निति ।

आरोपयन्पवित्राणि वस्त्राणि विविधानि च ।
 ततः प्रदक्षिणीकृत्य व्रजेदायतनं निजम् ॥ १४ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्पत्नीस्तेषां यथाविधि ।
 सायंकाले स्वयं भुक्त्वा गृहस्वाप्ती विशेषतः ॥ १५ ॥
 नागस्थानं पुनर्गच्छेन्मृत्तिकानयने मुधीः ।
 नागभोगात्ममानीय मृत्तिकां सुमनाः मुधीः ॥ १६ ॥
 कुर्यान्नागीप्रतिनिधिं वाजिपृष्ठममाश्रयाम् ।
 पूजयेद्गन्धपुष्पैश्च दीपैर्नीराजयेत्ततः ॥ १७ ॥
 नैवेद्यैर्विधैर्धकृत्या ताम्बूलैस्तापयेच्छुभैः ।
 गीतैर्वादित्रयोपैश्च तां च जागरयेन्नृशि ॥ १८ ॥

शीलानाम्नीं सुशीलां च मृन्मयीं वाजिसंयुताम् ।
 प्रातःकाले तिथौ पष्ठ्यां विधानान्तरमिष्यते ॥ १९ ॥
 योषाजनैश्च क्रियते शीलाव्रतमनुत्तमम् ।
 गङ्गासैकततः किञ्चित्समानीय तु सैकतम् ॥ २० ॥
 वीरणानि समानीय क्रियते कृत्रिमं सरः ।
 मूर्तेस्तस्याश्च शीलायाः कृतायाः फणिनां मृदा ॥ २१ ॥
 विन्यसेद्दधिभक्तं च त्वर्कपत्रपुटे शुभे ।
 दद्यात्तं ब्राह्मणेभ्यश्च तत्पत्नीभ्यो विशेषतः ॥ २२ ॥
 वंशपात्रेषु विन्यस्य नूतनेषु शुभेषु च ।
 कार्पासकानि बस्त्राणि तथा कर्णावतंसकान् ॥ २३ ॥
 कण्ठसूत्राणि हारांश्च कुङ्कुमं चन्दनं तथा ।
 अञ्जनं चाष्ट सौभाग्यवस्तूनि सवसूनि च ॥
 सावित्रीप्रीतये दद्याच्छीलासंतोषवृद्धये ॥ २४ ॥

तत्र दानमन्त्रः—

प्रीयतां ब्रह्मसावित्री शीला च प्रीयतां सती ।
 दधिभक्तप्रदानेन भूयान्मे संततिः शुभा ॥ २५ ॥ इति ।
 एवं कृते विधाने च नागानां प्रीतिवर्धने ।
 शीलाव्रतविधानेन सहिते क्षेमदं नृणाम् ॥ २६ ॥
 विधानस्यास्य कथितं पुराणे च कथानकम् ।
 विधानं तस्य सर्वं च समासात्कथितं मया ॥ २७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां भविष्योत्तरपुराणोक्तं
 शीलाषष्ठीविधानयुक्तं नागपञ्चमीविधानम् ।

अथ पवित्रारोपणविधानम् ।

याः पूर्वमुक्तास्तिथयश्चैत्रमासि शुभावहाः ।
 अष्टौ दमनकारोपे पवित्रारोपणे मताः ॥ १ ॥

श्रावणे मासि संप्राप्ते कर्तव्यं विधिवद्बुधैः ।
 पवित्रारोपणं पुण्यं देवानां प्रीतिवर्धनम् ॥ २ ॥
 त्रिसूत्रं त्रिवृतं कृत्वा गोमूत्राक्तं च कारयेत् ।
 क्षालयेत्तु ततस्तोयैः शुद्धयर्थं शुद्धिमान्नरः ॥ ३ ॥
 कुर्यात्तस्य पवित्राणि विधिवन्मन्त्रकोविदः ।
 दृढसूत्रमयं पुण्यं पवित्रं क्रियते मया ॥ ४ ॥
 प्रीत्यर्थं सर्वदेवानां हिताय जगतामिह ।

इति मन्त्रेण पवित्राणि कुर्यात् ।

पवित्रे तन्तवः प्रोक्ताः शतसंख्यैकविंशतिः ॥ ५ ॥
 विनायकाय देवाय तावद्ग्रन्थिकरं हि तत् ।
 षष्ट्याऽधिका स्याद्विंशती तन्तूनां प्रीतये हरेः ॥ ६ ॥
 ब्रह्मसूत्रं प्रमाणं च शतग्रन्थि पवित्रकम् ।
 हराय तावदेव स्यात्परिमाणं पवित्रकम् ॥ ७ ॥
 षष्टितन्तुमयं दिव्यं षष्टिग्रन्थि पवित्रकम् ।
 भैरवाद्येषु देवेषु शतमष्टोत्तरं शुभम् ॥ ८ ॥
 तन्तूनां ग्रन्थयस्तावत्पवित्रे परिकीर्तिताः ।
 सहस्रसंमितं पूतं तन्तुभिर्वा शतत्रयम् ॥ ९ ॥
 शतं चाष्टाधिकं चैव पवित्रं गुरवे स्मृतम् ।
 शतग्रन्थि पवित्रं स्यादष्टाधिकमनुत्तमम् ॥ १० ॥
 पित्रोस्तु शतसंख्यं स्यात्पितृव्ये षष्टितन्तुकम् ।
 तदेव मातुले ज्ञेयं ज्येष्ठे भ्रातरि चैव हि ॥ ११ ॥
 षष्टितन्तुमयं श्रेष्ठं पितृपूज्येषु संमतम् ।
 अष्टाविंशतितन्तूनां पृथग्रन्थि पवित्रकम् ॥ १२ ॥
 इतरेषु च सर्वेषु निर्दिष्टं कर्मकोविदैः ।
 कुङ्कुमाक्ताः प्रकर्तव्या ग्रन्थयः सुसमाहिताः ॥ १३ ॥
 पवित्राणां च सर्वेषां त्रिदुषां मतमीदृशम् ।
 केषां मतेन पूजा स्यात्पवित्राणां यथोत्तरा ॥ १४ ॥

१ क. विविधं बुधैः । २ ख. 'णं दिव्यं दे' । ३ ख. 'येत्सरितस्तो' । ४ ख. 'यं पूतं प' ।
 ५ ख. 'मागेन श' । ६ ख. तथा चा' । ७ ख. 'न्तुमितं श्रे' ।

वृद्धिहाससमायुक्ता यावदेति च पूर्णताम् ।
 एवं कृतिः पवित्राणां विद्वद्भिः परिकीर्तिता ॥ १५ ॥
 यद्यद्यस्मै समुद्दिष्टं तत्तत्तस्यैव योषिते ।
 आदौ पूजा विधातव्या पवित्रेभ्यो मनीषिभिः ॥ १६ ॥
 विधातव्यः समारोपः पवित्रस्येश्वरादिषु ।
 सूतकाद्यवरोधेन प्रोक्ते काले न सिध्यति ॥ १७ ॥
 पवित्रारोपणं नृणां तदा भाद्रपदे शुभम् ।
 आश्विने वाऽपि कर्तव्यं यावन्नोत्तिष्ठते हरिः ॥ १८ ॥
 आपाढप्रभृति प्रोक्ता मासाः पञ्च मनीषिभिः ।
 पवित्रारोपणे श्रेष्ठास्तेषु श्रावण उत्तमः ॥ १९ ॥
 श्वेतादीन्भावयेद्वर्णान्पवित्रेषु समाहितः ।
 कलान्यासैस्तु पूतानि पवित्राणि च मान्त्रिकः ॥ २० ॥
 आरोपयेत्पवित्राणि रविपूर्वेषु पञ्चसु ।
 देवेषु स्थानमुद्दिश्य तथाऽऽराध्यं यथाविधि ॥ २१ ॥
 निष्पाद्य विधिवत्पूजां गन्धपुष्पादि कारयेत् ।
 एवं कृते विधाने च संपूर्णो वार्षिको विधिः ॥
 संपादितो भवेन्नृणां नात्र कार्या विचारणा ॥ २२ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 पवित्रारोपणविधानम् ।

अथ भाद्रपदे मासि गरुडपञ्चमीविधानम् ।

अडबालमते—

तत्र नदीतोये स्नानं कृत्वा बल्मीके विधानमेतत्कर्तव्यम् । कूष्माण्डीपर्णानि
 चतुर्दश तावन्त्येव कूष्माण्डीपुष्पाणि तावन्त एव गोधूमचूर्णस्य नागा
 विधातव्यास्तावन्त एव दीपास्तावन्त एव मुष्टिकास्तावन्त एव ऋषिपो-
 लिकास्तावन्त्येव यज्ञसूत्राणि तावन्त्येव पवित्राणि । तत्र चतुर्दशभिर्बीजैर्ब-
 ल्मीकसमन्ताद्गङ्गाजलेन सेचनीयम् । ततस्तु सर्पिणा पयसा च सेचनीयम् ।
 ततश्च कूष्माण्डीपर्णानि वामकरे गृहीत्वोत्तराभिमुखो मान्त्रिकः क्रमेण कण्ठे-

श्वरीबीजप्रभृतीनि बीजानि समुच्चार्य पर्णानि विन्यसेत् । तत्र बीजैरेवाऽऽसनं दत्त्वा बीजोद्धारेण सह नागा योजनीयाः ।

तत्र बीजमन्त्राः—

ॐ कण्ठेश्वरीची आज्ञा १ । ॐ पारोक्षीची आज्ञा २ । ॐ विपाशापेची आज्ञा ३ । ॐ पिशापेची आज्ञा ४ । ॐ धूमेयाची आज्ञा ५ । ॐ पटिरेयाची आज्ञा ६ । ॐ गरुडाची आज्ञा ७ । ॐ विनायकाची आज्ञा ८ । ॐ भाद्रनायकाची आज्ञा ९ । ॐ भौंईशेटीची आज्ञा १० । ॐ अडवालाची आज्ञा ११ । ॐ अडबलभामिनीयेची आज्ञा १२ । ॐ नागाची आज्ञा १३ । ॐ गुरुची आज्ञा १४ ।

एवं प्रकारेणैतानि बीजानि प्रत्येकं मन्त्ररूपाणि । ततः पूजान्त आर्द्रि-
कृतान् गोधूमान्समीपे संगृह्य स्नानं कृत्वा तत्रैव मार्जनमेतैरेव बीजैरेभिरेव
तर्पणं कर्तव्यम् । ततो जलाद्बहिर्निर्गत्य वल्मीकमागत्य प्रदक्षिणीकृत्य गोधू-
मैरर्चयेत् । दण्डवत्प्रणिपातं कृत्वा क्ष्वेडनं कुर्यात् । ततो गच्छ रे धाव रे विष तव
पिता अडवाल प्राप्त इत्युच्चार्य क्ष्वेडनं कुर्यात् । पुनस्तु देशभाषया क्ष्वेडनं
कुर्यात् । सर्वे निम्बपवित्रावतंसा दर्भपवित्राणि निम्बपल्लवपवित्राणि करयोर्धृत्वा
मन्त्रमुच्चारयेयुः । परस्परं कर्णेपु मन्त्रजपं [च] कुर्युः । यः परम्परया गुरुस्तस्मै पवि-
त्रारोपणं कृत्वा प्रणमेयुः । परस्परं चापि तस्मिन्नेव समये यस्मै कस्मैचिच्छू-
धानाय मन्त्रो दातव्यः । प्रत्यहं त्रिसंध्यं मन्त्रस्यास्यानुवृत्तिर्माजनं तर्पणं जल-
पानं च ।

एवं कृते विधानेऽस्मिन्मन्त्रः सिध्यति सत्वरम् ।

दष्टे प्राणिनि सर्पेण यत्र कुत्रापि जीवति ॥ १ ॥

तावत्कुर्यात्प्रयत्नेन विषस्योत्तारणं बुधः ।

जलाभिषेचनं शस्तं जपः कर्णे तथैव च ॥ २ ॥

निम्बस्य पल्लवैर्भ्रष्टैर्विषस्योत्तारणं बुधैः ।

निम्बाभावे महानिम्बस्तदभावे कुशः स्मृतः ॥ ३ ॥

कुशाभावे मयूरस्य पिच्छचूलः प्रकीर्तितः ।

विषस्योत्तारणं कार्यं सरिद्रोधसि मन्त्रतः ॥ ४ ॥

भैरवस्याऽऽलये तद्वन्नान्यत्र प्रविधीयते ।

विषस्य देहसंस्थस्य कुर्याच्चैव परीक्षणम् ॥ ५ ॥

नागवल्लीदलेनैव कांस्यपात्रेण वा पुनः ।
 ऊर्ध्ववृत्तं दलं कार्यं जलाद्रं च समन्त्रकम् ॥ ६ ॥
 शिरस्थस्यैव दष्टस्य पर्णं संश्लिष्य विग्रहे ।
 दष्टास्पदं समानीय ज्ञातव्या विषसंस्थितिः ॥ ७ ॥
 यत्र कुत्रापि देहे तु पर्णं लगति वह्निवत् ।
 तत्रैव विषमर्यादा ज्ञातव्या मन्त्रकोविदैः ॥ ८ ॥
 यतो विषं समुत्तीर्णं तत्र बन्धं त्रियायुषा ।
 मन्त्रेण सहितं कुर्याद्विषस्योत्तारणं पुनः ॥ ९ ॥
 यावन्निर्विषता देहे दष्टस्यैव प्रजायते ।
 तावत्क्रियां विदध्यात्तु विषस्योत्तारणं प्रति ॥ १० ॥
 नागानुमतवेत्तारो यदि यान्त्यनुमन्त्रितुम् ।
 नो गच्छेत्तत्र वेत्ता तु मन्त्रस्यास्य विचक्षणः ॥ ११ ॥
 दष्टं तु प्राणिनं श्रुत्वा कृत्यं त्यक्त्वा तु सत्वरम् ।
 स्नानं कृत्वाऽऽर्द्रवासाश्च गच्छेत्तत्र तु वेगवान् ॥ १२ ॥
 अनेनैव तु मन्त्रेण विषं हरतु सत्वरम् ।
 दंष्ट्रीणामपि सर्वेषां नात्र कार्या विचारणा ॥ १३ ॥
 लूताविस्फोटकाश्चैव कालस्फोटा विशेषतः ।
 नश्यन्ति विषमन्त्रेण सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ १४ ॥
 सर्वेषामपि देवानामेको विष्णुः सनातनः ।
 पक्षिणां गरुडः शेषो नागानां नृपतिर्नृणाम् ॥ १५ ॥
 चतुर्णां (वर्णानां) ब्राह्मणः श्रेष्ठः सरितां जाह्नवी तथा ।
 सतीनां जानकी श्रेष्ठा धेनूनां सुरराङ्गवी ॥ १६ ॥
 तथा च लघुविद्यानां विद्येयं सुभगा मता ।
 विषे हते तु सर्पस्य दष्टे व्याधित्रिमुक्तये ॥ १७ ॥
 किञ्चिद्धनं स्वयं दद्यान् किञ्चिदपि याचयेत् ।
 मन्त्रस्यास्य विधानेन कृतेन विधिवद्बुधैः ॥ १८ ॥
 प्रीयते केशवो देवस्तथैव विनतात्मजः ।
 यथा भागीरथीस्नानं प्रयागे तीर्थसत्तमे ॥ १९ ॥
 विषस्योत्तारणे तद्वत्स्नानं मन्त्रविदस्तथा ।
 अभिषेकसृतस्तोयबिन्दुर्लग्नो हि मन्त्रिणः ॥ २० ॥

यज्ञावभृथवज्ज्ञेयः स बिन्दुर्नात्र सेशयः ।
 तैलभुक्तिस्तु मालूरफलानां राजिकाशनम् ॥ २१ ॥
 विद्यावीर्यं निहन्त्याशु पञ्चम्यां द्विभुजिस्तथा ।
 एतद्व्रतं समुद्दिष्टं मन्त्रिणां सर्वदा बुधैः ॥ २२ ॥
 कर्मलोपो यदा पुंसो विषापहृतिकारिणः ।
 भवेच्चैव तदा तस्य नास्ति पापभयं क्वचित् ॥ २३ ॥

तथा च पुराणे—

सत्कर्म कुर्वतां पुंसां कर्मलोपो भवेद्यदि ।
 तत्कर्म ते प्रकुर्वन्ति तिस्रः कोट्यो महर्षयः ॥ २४ ॥
 एवं कृते विधाने च मन्त्रः सिध्यति सत्वरम् ।
 वीर्यमेति शुभो मन्त्रो नात्र कार्या विचारणा ॥ २५ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायामडवाल-
 मतोक्तं गरुडपञ्चमीविधानम् ।

—

अथाऽऽश्विने मासि नवचण्डीविधानम् ।

आश्विने प्रतिपन्मुख्याः पुण्यास्तु तिथयो नव ।
 चण्डिकापूजने प्रोक्ताः सर्वकामफलप्रदाः ॥ १ ॥
 स्नात्वा शुक्लतिलैस्तोये गङ्गायाः शुचिमानसः ।
 गृहे वा देवतास्थाने कुर्यात्कुसुममण्डपम् ॥ २ ॥
 वस्त्रैः परिवृतं सम्यङ् नानावर्णैः सुशोभनैः ।
 पूगैश्च नारिकेलैश्च जम्बीरैर्मालुङ्गकैः ॥ ३ ॥
 अन्यैश्च बहुभिः पुष्पैः शोभितं फलसंचयैः ।
 तत्र मध्ये मृदः कार्यमालवालं मनोरमम् ॥ ४ ॥
 निक्षिपेत्तत्र धान्यानि ततः सिञ्चेज्जलैः शुभैः ।
 तस्योपरि न्यसेत्कुम्भं जलपूर्णं नवं शुभम् ॥ ५ ॥
 सुवर्णं निक्षिपेत्तत्र गन्धपुष्पैः समर्चयेत् ।
 पुष्पमालावृतं कुर्यात्प्रतिष्ठामन्त्रमन्त्रितम् ॥ ६ ॥

पुरस्तात्तस्य कुम्भस्य जपेत्सप्तशतीं बुधः ।
 जपेत्सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा ॥ ७ ॥
 ततश्चाप्यर्गलां श्रेष्ठां ततश्च कीलकं जपेत् ।
 मूर्तीनां च रहस्यं च पल्लवं तदनन्तरम् ॥ ८ ॥
 ततो विधानमुद्दिष्टमेवं जपपरम्परा ।
 समाप्य विधिवद्विद्वान्स्तुतिं सप्तशतीं शुभाम् ॥ ९ ॥
 पुनः प्रपूजयेत्कुम्भं पुस्तिकां च कुमारिकाम् ।
 उपचारैः षोडशभिर्ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ॥ १० ॥
 तैलपक्वेन साज्येन पायसेन विशेषतः ।
 ततस्तु तुरगं श्रेष्ठं हयभूषणभूषितम् ॥ ११ ॥
 आनीय सरितस्तोयैः स्नापयित्वाऽर्चयेत्सुमैः ।
 चन्दनस्यानुलेपेन सर्वतश्चानुलेपितम् ॥ १२ ॥
 आनीय सदनं रम्यं कुर्यान्नीराजनाविधिम् ।
 स्वयं तिष्ठेन्निराहारोऽशक्तश्चेन्नक्तभोजनैः ॥ १३ ॥
 एवमेकोत्तरा वृद्धी रूपाणां परिकीर्तिता ।
 तथैव कन्यकाविप्रहयानां वृद्धिरुत्तमा ॥ १४ ॥
 रात्रौ जागरणं कार्यं गीतवादित्रनिस्वनैः ।
 ताम्बूलदानैर्बहुभिः स्तोत्रैर्देव्या मनोरमैः ॥ १५ ॥
 ततस्तु नवमीं प्राप्य कुर्यात्स्थण्डिलमुत्तमम् ।

उत्तममिति लक्षणोक्त (णान्वित) म् ।

मूर्तिं देव्याः प्रकुर्वीत सुवर्णस्य पलेन च ॥ १६ ॥
 तदर्धेन च वा कुर्यात्तदर्धेन च वा पुनः ।
 माषेण वा प्रकर्तव्या विदुषां मतमीदृशम् ॥ १७ ॥
 वस्त्रयुग्मेन (ण) संव्रीतां पद (घट) स्योपरि विन्यसेत् ।
 प्रतिष्ठामन्त्रमुच्चार्य पुष्पैः सह परिन्यसेत् ॥ १८ ॥
 पूजयित्वा यथाधर्मं यथाभावं यथाविधि ।
 ततस्तु प्रारभेद्धोमं स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ॥ १९ ॥
 प्रधानं पायसं साज्यं तिलव्रीही मतान्तरे ।
 अन्यैश्च मङ्गलद्रव्यैर्नारिकेलफलादिकैः ॥ २० ॥

श्रीनृसिंहभट्टविरचिता—

साज्यैस्तु हवनं कुर्याद्विल्वपत्रैर्विशेषतः ।
 जपस्यास्य दशशेन विधाय हवनं बुधः ॥ २१ ॥
 प्रतिश्लोकं तु जुहुयात्सर्वद्रव्याणि भक्तिमान् ।
 नमो देव्यै च मन्त्रेण विदध्याद्धवनं बुधः ॥ २२ ॥
 तूर्यघोषसमायुक्तं कुर्यात्कूष्माण्डभेदनम् ।
 विदधीताऽऽशु शास्त्रेण शक्तेर्दृष्टिप्रमाणतः ॥ २३ ॥
 ये तु जाप्यस्य कतारो होतारोऽप्यृत्विजस्तथा ।
 आचार्यब्रह्ममुख्याश्च पूजयेत्तान्यथाविधि ॥ २४ ॥
 दानानि बहुशो दद्यात्तिलधेनुमुखानि च ।
 कुमारीरूपतुरगवृद्धिः पूर्वं प्रकीर्तिता ॥ २५ ॥
 ताश्च प्राक्सकुमार्यश्च मातृकागणविग्रहाः ।
 प्रतिपत्प्रभृति श्रेष्ठाः पूजनीयाः प्रयत्नतः ॥
 भोजनाच्छादनैः सम्यक्ताम्बूलैश्च सचन्द्रकैः ॥ २६ ॥

तत्र प्रथमं कुमारीपूजनमन्त्राः—

मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातृणां रूपधारिणीम् ।
 नवदुर्गात्मिकां साक्षात्कन्यागात्राहयाम्यहम् ॥ २७ ॥
 त्रिपुरां त्रिगुणां धात्रीं मार्गज्ञानस्वरूपिणीम् ।
 त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिपुरां पूजयाम्यहम् ॥ २८ ॥
 कालिकां तु कलातीतां कारुण्यहृदयां शिवाम् ।
 कल्याणजननीं देवीं कल्याणीं पूजयाम्यहम् ॥ २९ ॥
 अणिमादिगुणोदारामकाराद्यक्षरान्विताम् ।
 अनन्तशक्तिभेदां तां कामाक्षीं पूजयाम्यहम् ॥ ३० ॥
 कामचारां महामायां कारुण्यहृदयां शिवाम् ।
 कामदां करुणां दान्तां कालरात्रिं नमाम्यहम् ॥ ३१ ॥
 चण्डवेगां चण्डमायां चण्डमुण्डविनाशिनीम् ।
 तां नमामि जगत्पूज्यां चण्डिकां पूजयाम्यहम् ॥ ३२ ॥
 सुखानन्दकरीं शान्तां सर्वदेवैर्नमस्कृताम् ।
 सर्वभूतात्मिकां देवीं शंभवीं पूजयाम्यहम् ॥ ३३ ॥
 सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां पुत्रसौभाग्यदायिनीम् ।

संतोषजननीं देवीं कौमारीं पूजयाम्यहम् ॥ ३४ ॥
 दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भयशोकविनाशिनीम् ।
 पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गार्तिनाशिनीम् ॥ ३५ ॥
 आद्या चैव महालक्ष्मीस्त्रिपुरा कालिका तथा ।
 कामाक्षी कालरात्री च चण्डिका शांभवी तथा ॥ ३६ ॥
 सुभद्रा चैव दुर्गा च नव दुर्गाः प्रकीर्तिताः ।
 एतासां पूजने सम्यग्लभते वाञ्छितं फलम् ॥ ३७ ॥

इति नवदुर्गापूजनम् ।

ततो नव विप्रनामधेयानि—

प्रथमो मत्स्यरूपी च द्वितीयः कूर्मनामकः ।
 तृतीयश्च वराहश्च चतुर्थो नृहरिः स्मृतः ॥ ३८ ॥
 पञ्चमो वामनश्चैव षष्ठो भार्गवसंज्ञकः ।
 सप्तमो रामभद्रश्च देवकीनन्दनोऽष्टमः ॥ ३९ ॥
 नारायणस्तु नवमो नव नारायणाः स्मृताः ।
 एतेषां पूजने तुष्टा नव स्युस्ते जनार्दनाः ॥ ४० ॥

अथ हयनामानि—

प्रतिपत्प्रभृति श्रेष्ठं हयवृद्धेस्तु पूजनम् ।
 स्नपयित्वा नदीतोये गन्धधूपैस्तु पूजयेत् ॥ ४१ ॥
 उच्चैःश्रवा हयश्चाऽऽद्यो द्वितीयो मेघपुष्पकः ।
 तृतीयः क्षेमकृद्वाजी चतुर्थो राजहंसकः ॥ ४२ ॥
 सर्वसौख्यप्रदः श्रेष्ठः पञ्चमो मकरालयः ।
 षष्ठः सुलोचनो बाहः सप्तमो भ्रमराक्षयः ॥ ४३ ॥
 अष्टमः कालकेशश्च नवमः सिद्धिदायकः ।
 एतेषु पूजितेष्वेव पूजिताः स्युः सुरोत्तमाः ॥ ४४ ॥

दधिक्राव्णो अकारिषमिति हयपूजामन्त्रः ।

१ स. °मचन्द्रश्च । २ स. °तीयो होम° । ३ स. तुर्यस्तु बलाहकः । पञ्चमो राजहंसश्च
 षष्ठश्च मकरालयः । सप्तमो लोचनो नाम अष्टमो मकराक्षयः । नवमः कलकेयस्तु दशमः
 सिद्धिदायकः ।

एवं कृते विधाने च रात्रौ नित्यं तु जागरम् ।
गीतवादित्रयोपैश्च स्तोत्रैर्देव्या मनोरमैः ॥ ४५ ॥
ततस्तु नवमीं प्राप्य कुर्यात्स्थण्डिलमुत्तमम् ।

उत्तममिति लक्षणान्वितम् ।

पूजितायाः शिवामूर्त्तेरग्रतो हवनं शुभम् ॥ ४६ ॥

ततस्तु स्थापितस्य घटस्य पुनः पूजां विधाय तत्रत्यान्सर्वधान्याङ्कुरान्सं-
गृह्य घटस्थेनैवोदकेन यजमानमुख्यानां सर्वेषां जनानामभिषेकं कुर्यात् । ततस्तं
घटं सजलं कस्यचित्करे दत्त्वा तूर्यघोषमायुक्तः पूजितैरश्वैस्तैरेव पूजितैर्नव-
भिर्विप्रैरन्यैश्च विप्रमुख्यैः पारजनैः सह नगरस्य प्रदक्षिणानवकं कृत्वा सुरयो-
न्मत्तं महाबलं रक्तवर्णनेत्रं महिषं शक्तेर्दृष्टिपाते निहन्यात् । ततस्तस्य
शोणितेनाक्तं भक्तं विकीर्येत । ततस्तु नवनाथस्वरूपेभ्यो नव विप्रेभ्यः
प्रायसप्रमुखाणि चान्नानि योगिवृन्देभ्यो दद्यात् ।

कन्धा मुद्राश्च शङ्खस्य राण्यस्य स्फटिकस्य वा ।

सुवर्णस्य च ताम्रस्य गृह्णीं दद्याद्विशेषतः ।

एवं संभोज्य विधिवत्सुगमांसानि दापयेत् ॥ ४७ ॥

एवं चण्डिकाप्रीतिकरं भोजनविधिं समाप्य ततश्च विधानान्तरं समारभेत ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां नवचण्डीविधानम् ।

अथेन्द्रमहोत्सवगोवर्धनपूजनविधानम् ।

विष्णुपुराणे पराशरमैत्रेयसंवादे । पराशर उवाच—

विमलाम्बरनक्षत्रे काले चाप्यागतो ब्रजम् ।

ददशेन्द्रमहोत्साहायोद्यतान्स ब्रजौकसः ॥ १ ॥

कृष्णस्तानुत्सुकान्दृष्ट्वा गोपानुत्सवलालसान् ।

कौतूहलादिदं वाक्यं प्राह वृद्धान्महामतिः ॥ २ ॥

कोऽयं शक्रमहो नाम येन वो हर्ष आविशत् ।

प्राह तं नन्दगोपश्च पृच्छन्तमिव सादरम् ॥ ३ ॥

मेघानां पयसां देवो देवराजः शतक्रतुः ।
 तेन संनोदिता मेघा वर्षन्त्यत्र पयोरसम् ॥ ४ ॥
 तद्वृष्टिजनितं सस्यं वयमन्ये च देहिनः ।
 भुञ्जानास्तर्पयामस्तां देवीं या कुलपूजिता ॥ ५ ॥
 क्षीरवन्त्य इमा गावो वत्सवन्त्यथ निर्वृताः ।
 तेन संवर्धितैः सस्यैः पुष्टास्तुष्टा भवन्ति ताः ॥ ६ ॥
 नासस्या नातृणा भूमिर्न क्षुधार्ता जनाः कचित् ।
 दृश्यन्ते यत्र दृश्यन्ते वृष्टिमन्तो बलाहकाः ॥ ७ ॥
 कुर्वन्ति क्षीरवृद्धिं च कीलालं च वने वने ।
 पर्जन्यः सर्वलोकस्य भवाय भुवि वर्षति ॥ ८ ॥
 तस्मात्प्रावृषि राजानः सर्वे नन्दन्ति वारिणा ।
 श्रद्धया परयेन्द्रस्य कुर्यादुत्सवमुत्तमम् ॥ ९ ॥
 इति तस्य वचः श्रुत्वा जानञ्छीमद्गदाग्रजः ।
 आह गोपाश्रिपं वाक्यमिन्द्रदर्पजिहीर्षया ॥ १० ॥
 न वयं कृषिकर्तारो वाणिज्याजीविनो वयम् ।
 गावोऽस्मद्देवतं तात वयं च हि वनेचराः ॥ ११ ॥
 आन्धीक्षिकी -यी वार्ता दण्डनीतिस्तथा परा ।
 विद्याचतुष्टयं ह्येतद्वार्तामत्र शृणुष्व मे ॥ १२ ॥
 कृषिस्तद्वच्च वाणिज्यं तृतीयं पशुपालनम् ।
 विद्या ह्येका महाभागा वार्ता वृत्तित्रयाश्रया ॥ १३ ॥
 कर्षकाणां कृषिवृत्तिः पण्यं वाणिज्यजीविनाम् ।
 अस्माकं गौः (गावोऽस्माकं) परा वृत्तिर्वार्ताभेदैरियं त्रिभिः ॥ १४ ॥
 विद्यया यो यथा युक्तस्तस्य सा देवतं महत् ।
 सैव तस्यार्चनीया च सैव तस्योपकारिका ॥ १५ ॥
 यो यस्य फलपञ्चनैव पूजयत्यपरं नरः ।
 इह च प्रेत्य चैवाऽऽशु ततो नाऽऽप्नोति शोभनम् ॥ १६ ॥
 कृष्यन्ताः प्रथिताः सीमाः सीमान्तं च पुनर्वनम् ।
 वनान्ततश्च गिरयः सर्वेऽस्माकं सदा गतिः ॥ १७ ॥
 तद्गामबन्धावरणानगृहक्षेत्रिणस्तथा । (?)

सुखिनः सकला लोका यथा वै चक्रचारिणः ॥ १८ ॥
 श्रूयन्ते गिरयः सर्वे वनेऽस्मिन्कामरूपिणः ।
 तत्तद्रूपं समास्थाय रमन्ते स्वेषु सानुषु ॥ १९ ॥
 यदा चैतेऽपराध्यन्ते तेषां ये काननौकसः ।
 तदा सिंहादिरूपैस्तान्घातयन्ति महीधराः ॥ २० ॥
 गिरियज्ञस्त्वयं तस्माद्गोयज्ञश्च प्रवर्तताम् ।
 किमस्माकं महेन्द्रेण गावः शैलाश्च देवताः ॥ २१ ॥
 मन्त्रयज्ञपरा विप्रा सीतायज्ञाश्च कर्षकाः ।
 गिरिगोयज्ञशीलाश्च वयमद्रिवनाश्रयाः ॥ २२ ॥
 तस्माद्गोवर्धनः शैलो भवद्भिर्विविधार्हणैः ।
 अर्च्यतां पूज्यतां मेध्यान्पशून्हत्वा विधानतः ॥ २३ ॥
 सर्वघोषस्य संदोहो गृह्यतां मा विचार्यताम् ।
 तोषयन्तस्ततो विप्रास्तथा ये चाभिवाञ्छकाः ॥ २४ ॥
 तमर्चितं (तेऽर्चनीयाः) कृते होमे भोजितेषु द्विजातिषु ।
 शरत्पुष्पकृताः पीडाः परिगच्छन्तु गोगणात् ॥ २५ ॥
 एतन्मम मतं गोपाः प्रीत्या तु क्रियते यदि ।
 ततः कृता भवेत्प्रीतिर्गवामद्रेस्तथा मम ॥ २६ ॥
 इति तस्य वचः श्रुत्वा नन्दाद्यास्तु ब्रजौकसः ।
 प्रीत्युत्फुल्लमुखाः सर्वे साधु साध्वित्यथानुवन् ॥ २७ ॥
 शोभनं ते मतं वत्स यदेतद्भवतोदितम् ।
 तत्कारिष्यामहे सर्वे गिरियज्ञः प्रवर्तताम् ॥ २८ ॥
 तथैव कृतवन्तस्ते गिरियज्ञं ब्रजौकसः ।
 दधिपायसमांसाद्यैश्चक्रुः शैलबलिं ततः ॥ २९ ॥
 द्विजांश्च भोजयामासुः शतशोऽथ सहस्रशः ।
 वृषभाश्चाभिनर्दन्तः(न्ति) संतोषाज्जलदा इव ॥ ३० ॥
 गिरिमूर्धनि कृष्णोऽपि शैलोऽहमिति मूर्तिमान् ।
 बुभुजेऽन्नं बहु तथा गोपवर्याहृतं द्विज ॥ ३१ ॥
 तेनैव कृष्णो रूपेण गोपैः सह गिरेः शिरः ।

अधिरुष्टार्चयामास द्वितीयामात्मनस्तनुम् ॥ ३२ ॥
 अन्तर्धानं गते तस्मिन्गोपा गिरिमहोत्सवम् ।
 कृत्वा गिरितले गोष्ठं निजमभ्याययुः पुनः ॥ ३३ ॥
 ततस्ते विस्मयन्तो वै दृष्ट्वा कृष्णस्य चेष्टितम् ।
 हयग्रीवतनुं धृत्वा यश्चखादान्नमुत्तमम् ॥ ३४ ॥
 प्रस्थशो द्रोणशश्चापि स्वारीशोऽपि ततः परम् ।
 आनीतं सर्वगोपैस्तैः स्वल्पवत्तेन भक्षितम् ॥ ३५ ॥
 ऊचुश्च सकला गोपाः प्रीत्या तं देवकीसुतम् ।
 प्रभावस्ते महान्कृष्ण लोकातीतस्तु दृश्यते ॥ ३६ ॥
 बालस्यापि क्षुधाबोधो बहवानलवत्कथम् ।
 अस्माकं तु शिशुः कृष्ण यत्करोषि तदद्भुतम् ॥
 देवानामविनिर्वाच्यं क्व च मानुषगोचरम् ॥ ३७ ॥

श्रीकृष्ण उवाच—

अहं सर्वगतः साक्षी साक्षात्परमपूरुषः ।
 त्रयाणां जगतां स्रष्टा धर्ता हर्ता स्वयं शिवः ॥ ३८ ॥
 यदद्य गिरियज्ञेऽस्मिन्भवद्भिः समुपाहृतम् ।
 स यज्ञपुरुषश्चास्मिन्स्त(न्नि त)दन्नमपि सर्वशः ॥ ३९ ॥
 अन्नोपसाधनं सर्वं कण्ठणीपेषणीमुखम् ।
 इत्युक्त्वाऽन्तर्दधे कृष्णस्तत्र तेषां च पश्यताम् ॥ ४० ॥
 कृष्ण कृष्णोति ते प्रोचुरशृण्वंश्चैव तद्गिरिः ।
 मुसलोलूखले शूर्पे घरटे पेषणीतले ॥ ४१ ॥
 इत्यादिसकलेष्वेव श्रुत्वा कृष्णस्य भारतीम् ।
 तुष्टुवुस्ते महाभागा नन्दाद्या ब्रजवासिनः ॥ ४२ ॥
 प्रादुर्बभूव गोविन्दः प्रसन्नतनुरीश्वरः ।
 उवाच वचनं श्लक्ष्णं नन्दादींस्तान्ब्रजौकसः ॥ ४३ ॥
 प्रत्ययो वस्तनूनां मे जातः सर्वत्र शोभनः ।
 यद्यद्दृष्टतमं लोके ततत्सर्वं भवाम्यहम् ॥ ४४ ॥
 मा कुरुध्वं तु संदेहं कृष्णं मां विज्ञे सादरम् ।

ये करिष्यन्ति मे चेमं महं गिरिमखात्मकम् ॥ ४५ ॥
 प्रत्यब्दभिषमासेऽस्मिन्पक्षे शुक्ले विशेषतः ।
 नवमीं तिथिमुद्दिश्य ते यान्ति परमां गतिम् ॥ ४६ ॥
 गोवर्धनगिरेरस्मादन्यस्मिन्विषयोत्तमे ।
 ग्रामे वा पत्तने वाऽपि स्वे स्वे हर्म्ये शुचित्रताः ॥ ४७ ॥
 मृन्मयः पर्वतः श्रेष्ठो गोवर्धनगिरिः स्वयम् ।
 कर्तव्यः श्रद्धया सम्यक्तृणवृक्षोपशोभितः ॥ ४८ ॥
 गोकुलं तत्र कर्तव्यं मया सह शुभावहम् ।
 पूजनीयः स शैलेन्द्रो मत्तनुस्तस्य मूर्धनि ॥ ४९ ॥
 उपत्यकायामपरा पूजनीया प्रयत्नतः ।
 गावो गोपाश्च संपूज्या गन्धधूपैः समर्चिताः ॥ ५० ॥
 ततो मुसलशूर्पादि पाकानां साधनं महत् ।
 शस्त्रास्त्राणि च सर्वाणि वस्त्राणि विविधानि च ॥
 मन्नाममन्त्रमुच्चार्य पूजयेत्प्रयतः पुमान् ॥ ५१ ॥

तथा हि—

मुसले बलदेवं^१ च वासुदेवमुलूखले ।
 शूर्पे देवं गदापाणिं घरट्टे च जनार्दनम् ॥ ५२ ॥
 वैरिवर्तिनि गोविन्दं पेषण्यां श्रीधरं तथा ।
 नारायणं तु मणिके चुल्ल्यां देवं हुताशनम् ॥ ५३ ॥
 भाजनेऽप्यारनालस्य लक्ष्मीशं पूजयेत्सुधीः ।
 महानसे महाविष्णुं वैकुण्ठं देवतास्पदे ॥ ५४ ॥
 कपाटे केशवं चैव प्रक्री(की)ले पुरुषोत्तमम् ।
 प्रद्युम्नं देहलीदेशे त्वलिन्दे माधवं तथा ॥ ५५ ॥
 अङ्गणे चक्रपाणिं च सर्वज्ञं पुस्तकालये ।
 चापे शार्ङ्गधरं देवं तूणीरे वामनं तथा ॥ ५६ ॥
 वाणेषु बलभद्रं च खड्गे नन्दकधारिणम् ।
 कुन्तायुधे पद्मनाभं तोमरे गरुडध्वजम् ॥ ५७ ॥
 छुरिकायां हृषीकेशमुपेन्द्रं चैव चर्मणि ।
 चतुर्भुजं तु फलके कंकटे मधुघातिनम् ॥ ५८ ॥

स्वधुवं वज्रवाचचे सर्वत्रैव त्रिविक्रमम् ।
 एवं संपूजयेद्देवं मामेव वृष्णिनन्दनम् ॥ ५९ ॥
 य इदं कुरुते नित्यं विधानं प्रतिवत्सरम् ।
 नन्दते सदनं तस्य यथा ते नन्द गोकुलम् ॥ ६० ॥
 संतानं वर्धते तस्य पुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः ।
 गवां च क्षीवृरद्धिः स्याद्धनधान्यसमन्विता ॥ ६१ ॥
 तस्मादिदं प्रकर्तव्यं विधानं मम सुव्रत ।
 प्रसन्ने मयि सर्वत्र विजयं प्राप्नुयान्नरः ॥ ६२ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां विष्णुपुराणोक्त-
 मिन्द्रमहोत्सवगोवर्धनपूजनविधानम् ।

अथ विजयादशमीविधानम् ।

प्राह नारदः—

सूर्योदये यदा राजन्हृश्यते दशमी तिथिः ।
 आश्विने मासि शुक्ला तु विजयां तां विदुर्बुधाः ॥ १ ॥

तथा च स्कन्दपुराणे—

मार्तिण्डस्योदये पुण्या वर्तते दशमी तिथिः ।
 आश्विने मासि शुक्ले तु सा भवेज्जयदा नृणाम् ॥ २ ॥
 निषिद्धमपि कर्तव्यं तैलाभ्यञ्जनमादरात् ।
 अश्वानामपि कर्तव्यं तैलस्नानं नदीजले ॥ ३ ॥
 तूर्ययोपसमायुक्तान्पुरं प्रवेशयेद्दयान् ।
 पुष्पमालापरीतांस्तान्हयांश्चन्दनभूषितान् ॥ ४ ॥
 चामरैर्वीज्यमानांश्च साधुशब्दैश्च लालितान् ।
 राजद्वारि समाविष्टान्स्त्रीभिर्नीराजितान्हयान् ॥ ५ ॥
 संपूज्य विधिवद्राजा नमस्कुर्यात्प्रयत्नतः ।
 भक्ष्यं भोज्यं स्वहस्तेन भोजयेत्तुलान्नृपः ॥ ६ ॥

वाहाधिकारिणः सर्वान्दानमानैस्तु तोषयेत् ।
 तथैव वारणान् राजा पूजयेच्च क्रमेलकान् ॥ ७ ॥
 नाममन्त्रेण विधिवच्चतुर्थ्यन्तेन मन्त्रवित् ।
 कृताभ्यङ्गो महाघोषैस्तूर्याणां शुभलब्धये ॥ ८ ॥
 ततश्च पूजयेद्देवान्गन्धपुष्पादिकैरलम् ।
 आहूय ब्राह्मणान्सर्वान्वाचयेत्स्वस्तिमङ्गलम् ॥ ९ ॥
 ततस्तुरगमारुह्य तूर्यघोषसमन्वितः ।
 बन्दिभिः स्तूयमानस्तु सन्मनाः शकुनैर्व्रजेत् ॥ १० ॥
 ज्योतिःशास्त्रोदितां काष्ठां सुतृद्धिः परिवारितः ।
 संप्राप्तस्तु शमीवृक्षमश्मन्तकमथापि वा ॥ ११ ॥
 अवतीर्य नृपो वाहाद्वेगात्सह पुरोधसा ।
 संनिषण्णः शमीमूलं विदध्यात्स्वस्तिवाचनम् ॥ १२ ॥
 कार्योद्देशाञ्जनैः साकं प्रयोगकुशलैर्वदेत् ।
 ततः प्रोक्ष्य शमीमूले भूमिं भूमिपतिर्भुवम् ॥ १३ ॥
 उत्कृत्य मृत्तिकां तत्र प्रक्षिपेत्तण्डुलाञ्छुभान् ।
 सपूगं हेम शक्त्या तु तदभावे तु तारकम् ॥
 ततः प्रदक्षिणं कुर्यात्तस्य वृक्षस्य भूपतिः ॥ १४ ॥

तत्र मन्त्रः—

शमी शमयते पापं शमी शत्रुविनाशिनी ।
 धारिण्यर्जुनबाणानां रामस्य प्रियवादिनी ॥ १५ ॥

इति शमीप्रार्थनामन्त्रः ।

अश्मन्तक महावृक्ष सर्वदोषनिवारण ।
 इष्टानां दर्शनं देहि कुरु शत्रुविनाशनम् ॥ १६ ॥

इत्यश्मन्तकप्रार्थनामन्त्रः ।

ततः शमीतरोर्वाऽश्मन्तकरय वो भयोः पत्राणि गृहीत्वा तस्यां मृदि
 तण्डुलपूगहेमानि प्राक्षिप्य गोलकं कृत्वा सर्वकार्यसिद्ध्यर्थं गृह्णाति ततो वृक्षं
 नमस्कृत्य दिग्विजयैर्मन्त्रैः प्राचीपूर्वादिगजयं गृहीतखङ्गः करोति । एवं
 त्रिचतुष्पादक्रमेण तुलितासिर्दिग्विजयं कृत्वा शत्रवो जिता इति ब्रूयात् ।

इन्द्रादीन्देवान्विप्रांश्च नमस्कृत्य स्वपुरं प्रविशेत् । ततः प्रविष्टः सन्महाद्वारसमीपे
पुण्यस्त्रीभिर्नीराजितो द्वारि न्यस्तेषु मञ्चकेषु तूलिकोपरि तण्डुलैः कृतमूर्तिषु
शत्रुषु पदं कृत्वा लब्धविप्रानुज्ञो निपण्णो भूत्वा द्रव्यवस्त्रताम्बूलादि सर्वं
दद्यात् ।

एवं कृत्वा विसृज्याऽऽशु सर्वान्पौरान्निजालयात् ।
प्रतिवर्षं कृते चैव सर्वकार्यपरो भवेत् ॥ १७ ॥
एवं सर्वेषु पौरेषु विधिरेष सनातनः ।
निष्पादितो यथाधर्मं विदधाति सुखं श्रियम् ॥ १८ ॥
एवं कृते विधाने च तुष्टिदे पुष्टिदे नृणाम् ।
सर्वैः पौरजनैः सार्धं विजयं प्राप्नुयान्नृपः ॥ १९ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां भविष्योत्तरपुराणोक्तं
विजयादशमीविधानम् ।

अथ नरकचतुर्दशीविधानम् ।

तत्र स्मृतिवचनम्—

कृष्णपक्षे चतुर्दश्यामाश्विनस्य विधूदये ।
तैलस्नानं प्रकर्तव्यं नरैर्नरकभीरुभिः ॥ १ ॥

तत्र प्रयोगः—

सर्वपापविनिर्मुक्तो नरकासुरतुष्टिदम् ।
सर्वकामफलप्राप्त्यै तिलस्नानं करोम्यहम् ॥ २ ॥

तत्र विशेषः—

कृतस्नाना तिलैर्नारी नीराजनपरा भवेत् ।
वैधव्यं लभते सा तु देशे च मरुके भवेत् ॥ ३ ॥
त्रिकटु सघृतं पश्चात्प्राश्रीयद्विर्तकाम्यया ।
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्वैष्णवान्विष्णुतुष्टये ॥ ४ ॥

एवं कृते विधाने च पुष्टिदे तुष्टिदे नृणाम् ।

आरोग्यं लभते सद्यो विजयं प्राप्नुयाद्भुवम् ॥ ५ ॥

इति श्रीमृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां नरकचतुर्दशी-
विधानम् ।

अथ भ्रातृद्वितीयासहितबलिमहोत्सवविधानम् ।

आश्विने कृष्णपक्षे तु द्वादशीमुख्यपञ्चसु ।

तिथिषूक्तः पूर्वरात्रे नृणां नीराजनाविधिः ॥ १ ॥

कृताभ्यङ्गमहोत्साहा कृतमाल्यानुलेपनाः ।

शुचिवस्त्राः शुभाचारा गृहीतकरदीपकाः ॥ २ ॥

नीराजयेयुर्देवास्तु विप्रान्गाश्च तुरङ्गमान् ।

ज्येष्ठाञ्छ्रेष्ठाञ्जघन्यांश्च मातृमुख्याश्च योषितः ।

राजानं सचिवं चापि राजपुत्रावपि ध्रुवम् ॥ ३ ॥

तत्र नीराजनमन्त्रः—

दीपोत्सवे महापुण्ये बलिराज्यप्रवर्तके ।

भूयाच्छुभकरी नृणां कृता नीराजना मया ॥ ४ ॥

विरोचनसुतो धीमान्परमं दैवकारणम् ।

बलिर्भूयात्सुखायात्र सर्वेषां प्राणिनामपि ॥ ५ ॥

सुभिक्षमायुरारोग्यं नित्योद्योगपरा जनाः ।

भवन्त्वह महोत्साहे रात्रौ नीराजिता मया ॥ ६ ॥

इति नीराजनमन्त्रः ।

एवं विधानं कर्तव्यं रात्रौ नीराजनात्मकम् ।

नित्याभ्यङ्गपरैः पुंभिर्हृष्टैः पुष्टैर्महोत्सवैः ॥ ७ ॥

कार्तिकस्य सिते पक्षे नक्षत्रं यद्द्विदैवतम् ।

नीराजनं न कुर्वीत प्रतिपद्याह गौतमः ॥ ८ ॥

कार्तिके शुक्लपक्षाद्ये विधानं द्वितयं तिथौ ।

नारीनीराजनं प्रातः सायं मङ्गलमालिका ॥ ९ ॥

प्रातःसायाह्नयोः कार्यं सपताकं गृहार्चनम् ।

पुष्पाणां प्रकरं योषाः कुर्युश्चत्वरभूमिषु ॥ १० ॥

दधिदूर्वाक्षतापुष्पप्रकरं चन्दनं तथा ।
 प्रकीर्य सन्नो द्वारे तोरणैश्च सुसंस्कृतैः ।
 उपचाराञ्छुभाचारान्कुर्याद्वलिदिने सुधीः ॥ ११ ॥
 मातृष्वसृसुतादिभ्यो देयं वस्त्रादिभूषणम् ।
 ब्राह्मणेभ्यो धनं गाश्च गोभ्यश्चैव तृणं जलम् ॥ १२ ॥
 भक्ष्यं भोज्यं च सर्वेभ्यः प्राणिभ्यो भूतिमिच्छता ।
 देयं बहुतरं सम्यग्विष्णुसंतोषकारकम् ॥ १३ ॥
 क्रीडाद्यूतं ततः कुर्याद्ब्राह्मणप्रमुखो जनः ।
 कुर्यात्ताम्बूलदानं च मिथःप्रीतिविवर्धनम् ॥ १४ ॥
 ततो रात्रौ समभ्यर्च्य पुष्पैः शंकरवल्लभाम् ।
 दीपैर्नाराजयेद्भैस्तोपयेत्प्रयतो नृपः ॥ १५ ॥
 ततः प्रभाते विमले भगिनी भ्रातृमन्दिरम् ।
 गत्वा निमन्त्रयेद्भ्रातृजनकं जननीं तथा ॥ १६ ॥
 आनीय सकलान्हृष्टाञ्छुभं स्वं मन्दिरं प्रति ।
 अभ्यङ्गं कारयेद्यत्नाच्छुभैर्भोज्यैश्च भोजयेत् ॥ १७ ॥
 पित्रादिसर्वबन्धुभ्यो दद्याद्वस्त्राणि भूरिशः ।
 तैश्च ताभ्यः प्रदातव्यं वस्त्रालङ्कारभूषणम् ॥ १८ ॥
 विधानान्तरगं चैतद्वितीयोत्सवपूर्वकम् ।
 कर्तव्यं प्राणिभिः सर्वैरायुरारोग्यमीप्सुभिः ॥ १९ ॥
 एतद्विधानद्वितयं नराणां कृतं विदध्याच्छुभकर्मसिद्धिम् ।
 अतोऽन्यथा चेद्विदधाति हानिं मृतिं विघातादिति चाऽऽहुरार्याः ॥ २० ॥
 विधानान्ते बलेर्भूतिं कृत्वा गीर्वाणमन्दिरे ।
 सर्वधान्ययुतां कुर्याद्वस्त्रयुग्मेण वेष्टिताम् ॥ २१ ॥
 पूजितां पुष्पधूपाद्यैरुपचारैर्मनोरमैः ।
 दानमन्त्रेण संमन्त्र्य दद्याद्विप्राय भूपतिः ॥ २२ ॥

तत्र दानमन्त्रः—

विरोचनसुतो धीमांश्चिरंजीवी महायशः ।

विप्राय विधिवद्वत्तो दद्यान्मे विपुलं सुखम् ॥ २३ ॥

इति दानमन्त्रः ।

ततः स्वान्स्वान्गृहान्यान्तु लोका राजपुरःसराः ।
 चिरं नन्दन्तु सुधियः प्रसादान्मधुघातिनः ॥ २४ ॥
 एवं बलिमहोत्साहे प्राप्ते सर्वजनप्रिये ।
 विधानमेतच्छुभदं यः कुर्यात्स सुखी चिरम् ॥ २५ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां भ्रातृद्विती-
 यासहितबलिमहोत्सवविधानम् ।

अथ संकीर्णविधानानि ।

आदित्यपुराणेऽरिष्टाध्याये—

अकालवृष्टिस्तरुमूलकृन्तनं फलेषु पुष्पेषु विपर्ययोद्भवः ।
 दूर्वाप्ररोहाः सद्नेषु निन्दितास्तरुप्ररोहा नृपतेर्भयप्रदाः ॥ १ ॥
 मूर्तिप्रभङ्गः सहजः सुराणामौत्पातिको वा भयदो नृपाणाम् ।
 तदा मृतिर्ब्रह्मवटोर्जनानां तद्भामतदंशभयस्य हेतुः ॥ २ ॥

अथ शिवलिङ्गभेदविधानम् ।

सहजोत्पाटिते देवे (लिङ्गे) यदि (भेदे) शूलभृतो यदा ।
 पिण्डिकायास्तदाऽप्येवं विधानं तत्र कथ्यते ॥ १ ॥
 पिण्डिका यदि भिन्ना स्यात्तदाऽन्यां कारयेद्बुधः ।
 तल्लिङ्गं स्थापयेन्नूनं मन्त्रैस्तल्लिङ्गसंज्ञकैः ॥ २ ॥
 श्रीसूक्तेन शुभाचारैर्ब्राह्मणैर्नैष्टिकव्रतैः ।
 श्रद्धया परया राजा विधानं कारयेत्सुधीः ॥ ३ ॥
 गर्भागारं जलैः शुद्धैः क्षालयेत्प्रथमं ततः ।
 दशाङ्गैर्धूपयेद्भूषैः पयसा पूरयेत्ततः ॥ ४ ॥
 पश्चाच्च क्षालयेत्तोर्यैरुष्णैः पल्लवसंयुतैः ।
 कुम्भाभिपेचनं कुर्युर्ब्राह्मणाश्च सहस्रकम् ॥ ५ ॥
 शतं चाष्टाधिकैर्मन्त्रैर्वारिभिस्तु सतूर्यकैः ।
 गन्धपुष्पैश्च तन्मन्त्रैर्धूपयेच्चानुलेपयेत् ॥ ६ ॥
 कालोद्भवैश्च पुष्पैश्च पूजयेत्प्रयतः शुचिः ।
 भूपयेन्नवरत्नैश्च वस्त्रयुग्मेण वेष्टयेत् ।

दापयेद्यज्ञसूत्राणि सप्त वा पञ्च वा सुधीः ॥ ७ ॥

तत्र पौराणमन्त्राः—

एवं सर्वेश्वरानङ्गन्देहभङ्गविधायक ।
 रक्ष लोकाञ्जगन्नाथ प्रसन्नो भव शंकर ॥ ८ ॥
 प्रतिष्ठा तव लोकेऽस्मिन्सुखदा भवतु प्रभो ।
 विघ्ना नश्यन्तु सर्वेऽपि प्रसन्नो भव शंकर ॥ ९ ॥
 लोहिताक्ष महाबाहो वेदमूर्ति (ते) निरामय ।
 पार्वतीनाथ विश्वेश संनिधिं कुरु सर्वदा ॥ १० ॥
 मूलमन्त्रेण सर्वेऽपि ह्युपचाराः प्रकीर्तिताः ।
 क्षेमवृद्धौ च कल्पन्ते सर्वदा देहधारिणाम् ॥ ११ ॥
 ततः प्रदक्षिणां कुर्युर्नृपतिप्रमुखा जनाः ।
 वृषभं पूजयेद्राजा गन्धपुष्पाक्षतैर्ध्रुवम् ॥ १२ ॥
 अष्टोत्तरसहस्रं च हावयेत्पायसेन च ।
 तण्डुलैः सर्पिषा युक्तैरष्टोत्तरशतं ततः ॥ १३ ॥
 विल्वपत्रैः सहस्रं च शतपत्रैः सचम्पकैः ।
 सितोत्पलैः सहस्रं च जुहुयात्सघृतैः सुधीः ॥ १४ ॥
 अपूपैश्चापि कर्तव्यं पूरकैः क्षीरपष्टिकैः ।
 मोदकैश्चापि कर्तव्यं मातुलुङ्गफलैस्तथा ॥ १५ ॥
 प्रधानं पायसं तत्र निलव्रीहिसमन्वितम् ।
 रौप्यं तु पारदं वाऽपि पीठे संपूजयेच्छिवम् ॥ १६ ॥
 सूक्तं तु पौरुषं विद्वाञ्जपेद्भूपालसंनिधौ ।
 श्रीसूक्तं तु शुभाचारः श्रेयस्करमिदं परम् ॥ १७ ॥
 एवं समाप्ते हवने ब्राह्मणान्भोजयेत्सुधीः ।
 दद्याच्च वस्त्रयुग्माणि सालङ्काराणि भूपतिः ॥ १८ ॥
 दक्षिणार्थं तु कण्ठकं रजतं वा समाहितः ।
 षोडशभ्यो द्विजातिभ्यो धान्यं दद्याच्च पुष्कलम् ॥ १९ ॥
 येन धेन विधानेन क्रियते द्विजतर्पणम् ।
 तच्छृणुष्व महाबाहो यतस्ते शिवमूर्तयः ॥ २० ॥
 प्रथमं शंकरं विद्याद्द्वितीयं शूलधारिणम् ।
 तृतीयं पार्वतीनाथं चतुर्थं वृषभध्वजम् ॥ २१ ॥
 पञ्चमं पञ्चवदनं षष्ठं खट्वाङ्गधारिणम् ।

सप्तमं प्रमथाधीशमष्टमं च कपर्दिनम् ॥ २२ ॥
 नवमं गिरिशं विद्याद्वयं फणिभूषणम् ।
 एकादशं च भूतेशं द्वादशं कृत्तिवाससम् ॥ २३ ॥
 त्रयोदशं वामदेवं भर्गं विद्याच्चतुर्दशम् ।
 मृत्युञ्जयं पञ्चदशमीशानं षोडशं स्मृतम् ॥
 एतानि शिवनामानि क्रमाद्विप्रेषु योजयेत् ॥ २४ ॥
 उपचारैः षोडशभिरुपचर्यो महेश्वरः ।
 षोडशक्षितिदेवेभ्यो दद्याद्भोजनमञ्जसा ॥ २५ ॥
 वस्त्राण्याच्छादनार्थाय दक्षिणां च यथाविधि ।
 संभोजयेद्द्विजपत्नीस्तावतीरेव सुव्रताः ॥ २६ ॥
 पार्वतीप्रीतये पुष्पवस्त्रालङ्कारभूषणैः ।
 एवंविधे विधाने च कृते दुष्कृतिना वरे ॥ २७ ॥
 क्षेमदो जायते देवः पार्वतीप्राणवल्लभः ।
 विघ्ना नश्यन्ति सर्वेऽपि लिङ्गभेदसमुद्भवाः ॥ २८ ॥

अथ भूमिभेदविधानम् ।

अकस्माद्भिद्यते भूमिरनिमित्तं सगर्जना ।
 तदाऽऽदिशति भूपस्य राष्ट्रग्रीडां महीयसीम् ॥ १ ॥
 व्याधीनां दारुणा भीतिः परचक्रभयं तथा ।
 तत्पीडाशमनं कार्यं विधानं पृथिवीभुजा ॥ २ ॥

पद्मपुराण उमामहेश्वरसंवादे । उमोवाच—

यदि भूमिर्द्विधा नाथ भिद्यते ह्यनिमित्ततः ।
 किं करोति नृपालस्य तद्वदस्व महेश्वर ॥ ३ ॥

श्रीमहेश्वर उवाच—

भूमिपर्वतभेदश्च जायते ह्यनिमित्ततः ।
 तदा दिशति राष्ट्रस्य नाशं सह महीभुजा ॥ ४ ॥

विधानं तत्र कर्तव्यं विद्वद्भिर्विधिपूर्वकम् ।
 स्योना पृथिविमन्त्रेण लक्षाणि जुहुयाद्दश ॥ ५ ॥
 तिलाज्येन तु वै विद्वान्ब्रीहियुक्तेन सत्तमः ।
 होमान्ते विधिवद्राजा धेनुं दद्यात्सदक्षिणाम् ॥ ६ ॥
 पर्यास्विन्यर्जुनी धेनुरिति लक्षणम् । अथवा या काचिद्भवेत् ।
 गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश ।
 इत्यादिपौराणवचनैः संप्राथम्यं श्रोत्रियाय कुटुम्बिने विष्णुभक्ताय दद्यात् ।
 ततो वस्त्राणि भूषाश्च ऋत्विग्भ्यो भूरिदक्षिणाम् ।
 शय्यां सदक्षिणां दद्याद्ब्राह्मणाय कुटुम्बिने ॥ ७ ॥
 व्यजनं चामरं चैव दद्यात्क्रोडस्य तुष्टये ।
 ततः सत्यवतीं भूमिं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥ ८ ॥
 भूमिः कश्यपसंभूता वराहेण समुद्धृता ।
 प्रीता भवतु दानेन ब्राह्मणे प्रतिपादिता ॥ ९ ॥
 यत्किञ्चित्कुरुते पापं ज्ञानतोऽज्ञानतोऽपि वा ।
 अपि गोचर्ममात्रेण भूमिदानेन शुध्यति ॥ १० ॥
 ससीरां सवृषां भूमिं यो दद्यात्पृथिवीं नृपः ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तः स विष्णुः परमेश्वरः ॥ ११ ॥
 भूमिपर्वतभेदेन यो विघ्नः परिजायते ।
 नश्यतेऽसौ भुवो दानात्पवनादिव बुद्धुदः ॥ १२ ॥
 होमद्रव्येषु सर्वेषु तिलाज्यं हि प्रधानकम् ।
 मन्त्रेष्वेवै च सर्वेषु स्योना पृथिवी भवेति ॥ १३ ॥
 आचार्यो विप्रवृन्दे च दानेषु च मही स्मृता ।
 देवतासु च सर्वासु वराहो देवता स्मृता ॥ १४ ॥
 यस्मिन्काले समुद्भूतिर्भुवो भेदस्य जायते ।
 अद्रेर्वा जायते देवि कालं तं न विलङ्घयेत् ॥ १५ ॥

अथ पद्मपुराणोक्तं पर्वतभेदविधानम् ।

उमामहेश्वरसंवादे महेश्वर उवाच—

विनिर्घातं तडित्पातं विना पर्वतभेदनम् ।
 जायते यदि रुद्राणि तदा राज्ञो भयं भवेत् ॥ १ ॥
 विधानं तत्र कर्तव्यं स्वहिताय महीक्षिता ।
 आहूय ब्राह्मणाव्राजा मानपूर्वं विमत्सरः ॥ २ ॥
 कुर्यात्पर्वतदानानि धातूनामष्टधाऽष्ट च ।
 अष्टौ पर्वतमूर्तींश्च विप्रेषु प्रतिपादयेत् ॥ ३ ॥
 हिमवान्माल्यवान्सह्यो विन्ध्यो मलयनिष्कुटौ ।
 श्वेताद्रिश्च सुमेरुश्च गिरीणां मूर्तयोऽष्टधा ॥ ४ ॥
 कनकस्य सुमेरुः स्याद्राजतो रौप्य (तः श्वेत) पर्वतः ।
 माल्यवांस्ताम्रमूर्तिश्च विन्ध्यः कांस्यमयः स्मृतः ॥ ५ ॥
 निष्कुटं लोहजं विद्याद्वङ्गजं हिमपर्वतम् ।
 सह्यं सीसमयं विद्यान्माण्डूरो मलयः स्मृतः ॥ ६ ॥
 मेरोर्मूर्तिः पलैः पङ्क्ती रजताद्रेस्तथाऽष्टभिः ।
 त्रिंशता माल्यवान्कार्यः सह्यः शतपलस्तथा ॥ ७ ॥
 तथैव हिमवाञ्ज्ञेयो विन्ध्यः शतपलो भवेत् ।
 पलानां च सहस्रेण निष्कुटं कारयेद्बुधः ॥ ८ ॥
 द्वात्रिंशत्पलको ज्ञेयो माल्यवान्पण्डितोत्तमैः ।
 सुवर्णं दक्षिणां तेषु दद्याद्भूपतिसत्तमः ॥ ९ ॥
 आदौ तु हवनं कृत्वा गायत्र्याऽयुतसंख्यया ।
 पायसेनाऽऽज्ययुक्तेन ततो दानविधिः स्मृतः ॥ १० ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्दक्षिणाभिस्तु तोषयेत् ।
 अभिषेकविधेः पश्चात्कृत्वा ब्राह्मणभोजनम् ॥ ११ ॥
 संभुक्तेषु च विप्रेषु गृह्णीयादाशिषो नृपः ।
 यस्तु भिन्नो गिरिस्तत्र निदध्यात्क्षीरशर्करे ॥ १२ ॥
 यानि कानि च पुष्पाणि यानि कानि फलानि च ।
 ततस्तु जायते शान्ती राज्ञो राष्ट्रस्य पार्वति ॥
 एवं कृते विधानेऽस्मिन्विघ्नः कोऽपि न जायते ॥ १३ ॥

अथ मध्यरात्रे धेनुहुम्बारविधानम् ।

तथा श्रीभारते—

धेनुः शब्दायते राजन्मध्यरात्रे गृहे गृहे ।
 नाशाय सर्वराष्ट्रस्य तत्कुलस्य विशेषतः ॥ १ ॥
 शान्तिं विधेहि भद्रं ते तया क्षेमं भविष्यति ।
 न करोपि यदि क्षमाप शान्तिं गर्गोदितां शुभाम् ॥ २ ॥
 तदा सर्वस्य राष्ट्रस्य त्वया सह महद्भयम् ।
 ग्रामे रुतं निशीथे गोघ्नामस्यैव भयं भवेत् ॥ ३ ॥
 राजधान्यां तु राजेन्द्र तदा पृथ्वी विलीयते ।
 अत्र शान्तिर्विधातव्या जपहोमसुरार्चनैः ॥ ४ ॥
 मृत्युञ्जयेन मन्त्रेण लक्षजाप्यं विधीयते ।
 यथोक्तं हवनं पश्चात्ततो ब्राह्मणभोजनम् ॥ ५ ॥
 मृत्युञ्जयेन मन्त्रेण सर्वमेव विधीयते ।
 धेनुं पयस्विनीं दद्याद्यथालक्षणलक्षिताम् ॥ ६ ॥
 सप्त धान्यानि देयानि विप्रेभ्यो भूतिमिच्छता ।
 या गौः शब्दति राजेन्द्र साऽपि देया द्विजातये ॥ ७ ॥
 गृहे गृहे च लेख्यानि गोकुलानि विचित्रकैः ।
 गोपालैः सह राजेन्द्र यमुनातीरकेलिभिः ॥ ८ ॥
 उच्छ्रायं तोरणानां च विदध्यान्नामशो जनः ।
 एवं कृते विधाने च विद्वः कोऽपि न जायते ॥ ९ ॥

अथाश्वत्थपूजाविधानम् ।

स्कन्दपुराणे—

यस्य स्त्री स्त्रीप्रसूनित्यं मृतापत्याऽथ वा भवेत् ।
 तेनाऽऽशु पिप्पलः पूज्यो यथाविधि हितेप्सुना ॥ १ ॥
 भृगुवारे प्रदोषे च सायंविधिमुपास्य च ।
 सभार्यः पिप्पलं गत्वा प्रार्थयेच्च समाहितः ॥ २ ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

बोधिद्रुम महावृक्ष महापापनिवारण ।
 नारायणस्वरूपस्त्वं क्षेमं कुरु जगत्पते ॥ ३ ॥
 इति संप्रार्थ्य तं वृक्षं कृत्वा चैव प्रदक्षिणम् ।
 आलवाले जलं क्षिप्त्वा ततः स्वगृहमाव्रजेत् ॥ ४ ॥
 ब्रह्मचारी * स्वपेद्रात्रौ भुक्त्वा भुवि हरिं स्मरन् ।
 निधाय तुलसीदाम कण्ठे मुद्रितलोचनः ॥ ५ ॥
 ततः प्रातः समुत्थाय स्नात्वा गङ्गाजले तिलैः ।
 गच्छेतां द्वावपि ब्रह्मन्पिप्पलान्तिकमादरात् ॥ ६ ॥
 विष्णोर्नाम्नां सहस्रं च जपेत्तत्र समाहितः ।
 कुर्यात्संमार्जनं तत्र ह्यासमन्तात्तरुप्रभोः ॥ ७ ॥
 विकीर्य तत्र पुष्पाणि चन्दनं च विशेषतः ।
 कुङ्कुमं केसरं चैव पिप्पलाङ्गे विलेपयेत् ॥ ८ ॥
 आलवाले क्षिपेद्दारि क्षीरं दधि घृतं मधु ।
 तद्विष्णोरिति मन्त्रेण पायसं जुहुयात्सुधीः ॥ ९ ॥
 अयुतं वा सहस्रं वा यथाविभवसारतः ।
 मातुलुङ्गैस्ततः कुर्याद्धवनं शतसंख्यया ॥ १० ॥
 उद्देशो विष्णुदैवत्यो द्रव्याणां हवने स्मृतः ।
 धात्रीफलैस्तथा द्राक्षाफलैः खर्जूरकैस्तथा ॥ ११ ॥
 इक्षुदण्डैश्च कदलैः शतसंख्यया पृथक्पृथक् ।
 जाते तु हवने तस्मिन्सूत्रैरावेष्टयेत्त्रिभिः ॥ १२ ॥
 पिप्पलं संस्कृतं सम्यग्वाससा वेष्टयेत्ततः ।
 गन्धपुष्पाक्षतैः सम्यग्वृक्षाङ्गं तत्समर्चयेत् ॥ १३ ॥
 दशाङ्गैर्धूपयेद्धूपैर्दीपैर्निराजयेत्सुधीः ।
 नैवेद्यैर्विधिवद्भक्त्या ताम्बूलेन सुतोपयेत् ॥ १४ ॥
 बोधिद्रुम महावृक्ष महापापनिपूदन ।
 पुत्रान्देहि जगन्नाथ कुरु मे जीवसंततिम् ॥ १५ ॥

* आर्षत्वाच्छपोऽलुकि साधुः ।

इति संप्रार्थ्यं प्रदक्षिणीकृत्य दण्डवत्प्रणिपातैः प्रणम्य तत आचार्य-
पूजनं कुर्यात् ।

वस्त्रयुग्मं च धेनुं च दद्यादाचार्यतुष्टये ।

अत्राऽऽचार्यप्रार्थनामन्त्रः पौराणः—

आचार्य त्वं महाविष्णुराचार्यानीयमब्धिजा ।

दत्तं मे संततिं श्रेष्ठां प्रसन्नेनैव चेतसा ॥ १६ ॥

युवं वस्त्राणीति वस्त्राणि समर्पयेत्, हिरण्यरूप इति हिरण्यम् । गवामङ्गेषु
तिष्ठन्तीति गोप्रदानम् ।

ततः स्वगृहमागत्य ब्राह्मणान्धोजयेत्सुधीः ।

चतुर्विंशतिसंख्याका विष्णुमूर्तीः प्रकल्पयेत् ॥ १७ ॥

तत्र प्रत्येकमूर्तिपार्थक्यम् ।

प्रथमं केशवं विद्याद्वितीयं मधुमूदनम् ।

संकर्षणं तृतीयं च दामोदरमतः परम् ॥ १८ ॥

वामनं पञ्चमं विद्यात्पष्टं प्रद्युम्नसंज्ञकम् ।

सप्तमं विष्णुनामानं माधवं चाष्टमं विदुः ॥ १९ ॥

नवमं चानिरुद्धाख्यं दशमं पुरुषोत्तमम् ।

एकादशमधोक्षजं द्वादशं च जनार्दनम् ॥ २० ॥

त्रयोदशं च गोविन्दं त्रिविक्रममतः परम् ।

श्रीधरं पञ्चदशमं* हृषीकेशं च षोडशम् ॥ २१ ॥

नारसिंहं सप्तदशं वासुदेवमतः परम् ।

अतः परं पद्मनाभं कृष्णं विंशतिमं तथा ॥ २२ ॥

एकविंशतिमं विद्यादुपेन्द्रं जगतः प्रभुम् ।

हरिं च द्वाविंशतिकमच्युतं च ततः परम् ॥ २३ ॥

चातुर्विंशतिकं विद्यान्नारायणमनुत्तमम् ।

एतानि विष्णुनामानि चतुर्विंशतिषु न्यसेत् ॥ २४ ॥

ब्राह्मणेषु नभोरत्न विष्णुधर्मरतेषु च ।

तेभ्यो दद्याच्च रत्नानि वस्त्राण्याभरणानि च ॥ २५ ॥

भुक्तवन्तस्ततस्ते तु दद्याुराशिपमुत्तमाम् ।
 एवं कृते विधाने च श्रेष्ठे पिप्पलपूजने ॥
 जायते पुत्रसंतानमक्षयं गुणवत्तमम् ॥ २६ ॥

अथ ब्रह्मचारिनिधनविधानम् ।

येषां कुले ब्रह्मचारी निधनं प्राप्नुयाद्यदि ।
 तत्कुलं क्षयमाप्नोति सोऽपि दुर्गतिमाप्नुयात् ॥ १ ॥
 ग्रहत्वमाप्नुयाद्बोधिद्रुमेऽनवरतं वसेत् ।
 तस्यापि तस्य वंशस्य गतिमिच्छन्महीयसीम् ॥ २ ॥
 विधानं च विधायाऽऽशु तत ऊर्ध्वं समाचरेत् ।
 मृतस्य म्रियमाणस्य पडब्दव्रतमादिशेत् ॥ ३ ॥
 त्रिंशते ब्रह्मचारिभ्यो दद्यात्कौपीनकान्नवान् * ।
 हस्तमात्राः कर्णमात्रा दद्यात्कृष्णाजिनानि च ॥ ४ ॥
 पादुकाञ्चत्रमाल्यानि गोपीचन्दनमञ्जसा ।
 ब्रह्मसूत्राणि साधूनि प्रवालमणिमालिकाः ॥ ५ ॥
 यद्यत्प्रदीयते तेभ्यो मन्त्रैस्तल्लिङ्गकैः स्फुटम् ।
 प्रयोगो (त्येकं) ब्रह्मसायुज्यसिद्धये प्रतिपादने (येत्) ॥ ६ ॥
 अभावे व्रतिनां पूज्या गृहस्थाः साधवः शुभाः ।

शुभा इत्यस्यायमर्थः—हीनाङ्गाधिकाङ्गव्याधिग्रस्तवन्ध्यमृतापत्येतरे । साधव इत्यस्यायमर्थः—कुलीना विद्याविशारदाः केवलमृतुकालाभिगामिनः सुशीला अनभिशस्ता दुष्टप्रतिग्रहरहिता दान्ता उदारा उपकारिणः सौजन्यशीलाः श्रोत्रियाः । एवमेतद्विधाय पश्चात्तच्छरीरं क्षीरादिपञ्चामृतैः प्रस्नाप्य हरिद्राक्तं कृत्वा घृतेनाभ्यज्य तद्धर्मिणाऽग्निना सूर्यकान्तादुद्धूतेन वा कपालाग्निना वा लौकिकाग्निना वा दहेत् । अन्त्येष्टिविधिनाऽऽद्यदिवसमारभ्य द्वादशाहपर्यन्तं कर्म कुर्यादिति ।

एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ॥ ७ ॥

* आर्षत्वाल्लिङ्गव्यत्ययेन कथंचिन्निर्वहणीयम् ।

अथ कुष्ठिमरणविधानम् ।

तत्र यमस्मरणात्(णम्)—

मृतस्य कुष्ठिनो देहं निखनेद्वोष्ठभूमिषु ।
 वासरत्रितयं पश्चादुद्धृत्यान्यत्र तद्वहेत् ॥ १ ॥
 न गङ्गापवनं कार्यं न निक्षेपो विधीयते ।
 षडब्दव्रतपूर्वेण विधिनाऽन्त्यक्रतुं चरेत् ॥ २ ॥
 ततोऽस्थिसंचयं तस्य गङ्गायां प्रक्षिपेत्सुधीः ।
 मासि मासि ततः कुर्यान्मासश्राद्धानि पार्वणात् ॥ ३ ॥
 संकल्पविधिना केचित्प्रवदन्ति मनीषिणः ।
 इत्येतत्कुष्ठिनो ह्यूर्ध्वं कथितं शास्त्रकोविदैः ॥
 स्मृतिविद्भिरनूचानैर्यमाद्यैः पूतविग्रहैः ॥ ४ ॥

अथापमृत्यौ नारायणीयबलिप्रवृत्तिविधानम् ।

तत्र कानि कान्यपमृत्युलक्षणानि तान्याह—

सर्पव्याघ्रहता ये च ये च शस्त्रहता नराः ।
 जले मग्ना विपं पीत्वा मृता ये शृङ्गिभिर्हताः ॥ १ ॥
 उपलैस्ताडिता ये च लगुडैर्निहता भृशम् ।
 रज्ज्वा नियन्त्रिता ये च शृङ्खलायन्त्रिताश्च ये ॥ २ ॥
 अश्वादीनां पदाघातैर्ये मृता गजपोथनैः ।
 वृक्षाग्रात्पतिता ये च ये च पर्वतमूर्धतः ॥ ३ ॥
 शूलेन निहता ये च वह्निना ये मृता नराः ।
 विपूचिकागदव्याप्त्या ये मृताः क्षयपीडनात् ॥ ४ ॥
 उत्पाद्य मरणं ये च मृता निस्खलनादपि ।
 ये मृता बन्धनागारे येऽज्ञातौषधसेवनात् ॥ ५ ॥
 व्रणकृमिनिपातेन जर्जरीभूतविग्रहाः ।
 इत्याद्यसदृशैर्दोषैर्मृता ये भुवि मानवाः ॥ ६ ॥
 तेषां गत्यर्थमादिष्टो बलिर्नारायणीयकः ।
 विशेषात्सर्पदष्टस्य कुर्याद्भौजंगिकं बलिम् ॥ ७ ॥

बलिद्वयं विधातव्यं सर्पदष्टस्य देहिनः ।

यस्य नास्ति शरीरं च नास्त्यस्थनां च चयः क्वचित् ॥ ८ ॥

+पालाशीयो विधिस्तस्य ब्राह्मणस्य विधीयते ।

गवाद्यर्थे हतो यस्तु या स्त्री पत्यनुगामिनी ॥ ९ ॥

वृषोत्सर्गस्तयोर्नास्ति नास्ति नारायणो बलिः ।

दण्डा ये द्विजजातीनां प्रोक्ता मौञ्जीनिबन्धने ॥ १० ॥

ता एव समिधो ज्ञेयास्तेषामन्त्येष्टिदीपने ।

शूद्रजातौ कुशैरेव दाहो देहस्य निह्वे ॥ ११ ॥

सर्वेषामपमृत्यौ च बलिर्नारायणीयकः ।

कर्तव्यो विधिवद्दृष्टो महदेनोऽन्यथा भवेत् ॥ १२ ॥

अग्निहोत्रपरो विप्रः प्रेतः स्यादपमृत्युतः ।

त्रिभिर्मसैस्तथा पक्षैस्तस्यायं क्रियते बलिः ॥ १३ ॥

प्रेतश्च यजमानश्च द्वावप्यग्निपरौ यदा ।

दत्त्वा गोदशकं सद्यः कुर्यादूर्ध्वं यथाविधि ॥ १४ ॥

अथ यतिमरणविधानम् ।

काशीखण्डात्—

यतेश्वतुर्विधस्यापि निधने क्रियते विधिः ।

विधानं तत्प्रवक्ष्यामि संस्कारं यतिधर्मिणाम् ॥ १ ॥

स्नात्वा गृहस्थः शुद्धात्मा यतिसंस्कारमारभेत् ।

शिक्ये शरीरमारोप्य गन्धपुष्पैरलंकृतम् ॥ २ ॥

घोषितं जयशब्देन दुन्दुभीनां रवैरपि ।

प्राचीमुदीचीं वा गत्वा शुद्धदेशं समाश्रयेत् ॥ ३ ॥

नदीतीरेऽश्वत्थमूले गवां गोष्ठे हरेर्गृहे ।

छायायां ब्रह्मवृक्षस्य भूमिं प्रोक्ष्य समाहितः ॥ ४ ॥

विप्रो व्याहृतिभिः प्रोक्ष्य दर्भानास्तीर्य पुष्कलान् ।

दक्षिणाग्राञ्छरीरं तत्सावित्र्या प्रोक्ष्य यत्नतः ॥ ५ ॥

स्नापयेत्सरितस्तोयैः पठन्सूक्तं च पौरुषम् ।

प्रत्यूचं प्रतिपादं वा गन्धपुष्पैः समर्चयेत् ॥ ६ ॥

विष्णो हव्यं * रक्षस्वेति तच्छरीरं कुण्डे निधाय हंसः शुचिपदिति हृदय-
देशे जपेत् । ततः पुरुषसूक्तं यतिभूमध्ये जपेत् । ब्रह्मजज्ञानमिति मूर्ध्नि ।

भूमिर्भूमिमधश्चागान्माता मातरमप्यगात् ।

भूयाम पुत्रैः पशुभिर्यो नो द्वेष्टि समिध्र(ध्य)ताम् ।

इति मूर्धानं भिन्द्यादश्मना परशुना वा । ॐ भूर्भुवः स्वरोमित्यभिमन्त्र्य
दर्भैराच्छाद्य देवयजनं पूरयेत् । अग्निनाऽग्निः समिध्यतां पृथिवी होतेति मन्त्रद्वयं
त्रिदण्डविषयम् । श्वापदादिमृगवायसगोमायुरक्षणार्थं सम्यक्छादयेत् । यदि
शृगालादिभिर्भक्ष्यते तदा तस्मिन्देशेऽनावृष्टिर्भवति । तस्माद्भूमिं शिलादिभि-
राच्छादयेत् । गङ्गायां नर्मदायां वा तल्लिङ्गैरेव मन्त्रैर्वा पूर्वोक्तैः कुर्यात् । यत्र
मन्त्रानुपपत्तिस्तत्र प्रणवेनैव कुर्यात् । यत्र गङ्गानर्मदयोरप्राप्तिस्तत्र सर्वत्र
शुचौ देशे सामान्यनद्यां वा । [यदा] गङ्गाशब्देन भागीरथी गोदावरी प्रोच्यते
तदा गङ्गानर्मदयोरिति द्विवचनेन द्वे एव निर्दिष्टे । भागीरथी गौतमी त्वेकैव ।
आनायकभागीरथगौतमसंबन्धित्वेनौपाधिको भेदो न तु तात्त्विकः । सांसि-
द्धिकं चोभयत्र गङ्गाशब्दवाच्यत्वम् । गौतमीशब्दप्रत्येतव्यत्वं न भागीरथानीते
स्वरूपे । अथ च भागीरथीशब्दप्रत्येतव्यत्वं न गौतमानीते स्वरूपे । यथा
जपाकुसुमसंबन्धाद्रक्तः स्फटिकश्चम्पकपुष्पसंबन्धात्पीतः स्फटिकः । न पीत-
शब्दो रक्तस्य प्रत्यायको न रक्तशब्दः पीतस्येत्यौपाधिको भेदः । स्फटि-
कवाच्यत्वं स्वरूपमात्रस्य तद्वदिदम् । सत्यपि भेदेऽभेदः । यथा पयोण्याः
कावेरीचण्डवेगाक्षिप्रागोमत्यन्तं रूपमोघभेदेऽप्येकमेव तद्वचेदम् । किं चोभयत्र
गङ्गाशब्दवाच्यत्वं स्कन्दपुराणब्रह्मपुराणाभ्याम् । स्कन्दपुराणे भागीरथ्यां
गङ्गाशब्दो यथा—

विष्णुपादार्घ्यसंभूते गङ्गे त्रिपथगाभिनि ।

धर्मद्रवीति विख्याते पापं मे हर जाह्नवि ॥ इति ।

ब्रह्मपुराणे गोदावर्यां गङ्गाशब्दो यथा—

ब्रह्माद्रिशिखरोत्पन्ने त्रिकण्टकविराजिते ।

गौतमप्रार्थिते गङ्गे गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ॥ इति ।

कृष्णावेण्यादिषु सरित्सु लोकमध्ये गङ्गाशब्दः समुद्रगामित्वगुणयोगा-
द्रौणो देवदत्तगतसिंहशब्दवत् । यतिनिधने नाशौचं विधीयते नोदकक्रिया ।
वहनखननशिरःस्फोटनादि कुर्वतामपि सद्यः शौचमेव । यतस्तत्र नारायणमय-
त्वात्प्रेतत्वाभावः । यतश्च प्रेतत्वविमुक्त्या संन्यासस्वीकारः । अतोऽपि—

पदे पदेऽश्वमेधस्य फलमाप्नोति मानवः ।

अनुव्रजति साध्वीं यो यतिं गोब्राह्मणार्थिनम् ॥ ७ ॥

सोऽपि तल्लोकमाप्नोति इत्याह भगवान्हरिः ।

परोपकारिणः पुंसः कर्मलोपो भवेद्यदि ॥ ८ ॥

तत्कर्म ते प्रकुर्वन्ति मुनयो हि ममाऽऽज्ञया ।

धर्मसंजल्पने देवसेवायां गोचिकित्सिते ॥ ९ ॥

यत्कर्म लुप्यते पुंसां विधास्ये सफलं हि तत् ।

व्याधिग्रस्तस्य विप्रस्य तृपार्तस्य च कस्यचित् ॥ १० ॥

यश्चोपकुरुते सद्यः स मे ध्येयो निरन्तरम् ।

मासोपवासिनी नारी गवाद्यर्थे हतो नरः ॥ ११ ॥

संन्यासी मद्गुणग्राही चतस्रो मम मूर्तयः ।

संन्यासी भगवान्विष्णुः संन्यासी शंकरः स्वयम् ॥

संन्यासी विश्वसृङ्देवस्त्रिमुतिर्भगवान्यतिः ॥ १२ ॥

— — —

अथ भृगुपातविधानम् ।

चतुर्वर्गचिन्तामणौ—

ब्रह्महा मद्यपः स्तेयी तथैव गुरुनल्यगः ।

एते महापातकिनो यश्च तैः सह संयमेत् ॥ १ ॥

भार्यात्यागी पितृन्यागी मातृद्रोही महागदः ।

एतेषां पतनं श्रेष्ठं भृगौ चैव यथाविधि ॥ २ ॥

हरिश्चन्द्रे पुरश्चन्द्रे श्रीशैले त्रिपुरान्तके ।

महाबले च कावेर्यामोकारे सिन्धुपर्वते ॥ ३ ॥

एतेषु भृगवः श्रेष्ठाः प्रोक्ताः शास्त्रविदुत्तमैः ।

तेषु तेषु च यः पातो भृगुपातः स उत्तमः ॥ ४ ॥

तत्र विधिमाह—

शनिवारेः निराहारः स्नात्वा नद्यां तिलैः शुभैः ।
 शुक्लाम्बरधरो भूत्वा धृतमालयानुलेपनः ॥ ५ ॥
 जपेन्नामसहस्राणि विष्णोस्तद्ध्यानसंयुतः ।
 रात्रौ जागरणं कार्यं गीतवादित्रनिःस्वनैः ॥ ६ ॥
 ततः प्रभातसमये स्नायाद्धात्रीफलैर्जले ।
 कृत्वाऽऽह्निकविधिं सम्यग्जुहुयाज्जातवेदसम् ॥ ७ ॥
 तिलैराज्ययुतैर्लक्षं गायत्र्या वा सहस्रकम् ।
 होमान्ते विधिवत्पूज्या ऋत्विजः कनकादिभिः ॥ ८ ॥
 भृगुमूर्धनि देवेशं भैरवं पूजयेत्सुधीः ।
 गन्धपुष्पैस्तथा धूपैर्नैवेद्यैर्विविधैरपि ॥
 प्रार्थयेत्क्षेत्रनाथं तं कृताञ्जलिपुटः सुधीः ॥ ९ ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

देवदेव महादेव क्षेत्रपाल महामते ।
 कुरु मे सफलं कामं भृगुपातोदिमं प्रभो ॥ १० ॥
 इति संप्रार्थ्य देवं तं भृग्वग्रस्थं समाहितः ।
 कृत्वा प्रदक्षिणां देवं भैरवं सिद्धिदायकम् ॥ ११ ॥
 ब्राह्मणानभिवन्द्याथ निर्भयो मुक्तमूर्धजः ।
 स्मरन्नारायणं चित्ते कृतं पापं समुच्चरन् ॥ १२ ॥
 तिष्ठन्भृगुसमीपे च मानसे धृतवाञ्छितः ।
 निपतेद्भृगुपातेऽत्र मृतः प्राप्नोति वाञ्छितम् ॥ १३ ॥

तत्र पातानाह—

पारावतो मौसलाख्यो हंसपातश्च झैल्लिकः ।
 ऊर्ध्वहस्तो गृध्रपातः सिंहपातोदरौ तथा ॥ १४ ॥
 एते पाताः समाख्याता भृगुपातेषु देहिनाम् ।
 पारावतेन पातेन ब्रह्महा निपतेद्भृगौ ॥ १५ ॥

मद्यपो मौसलेनैव हंसपातेन तस्करः ।
 मातृगो झैल्लिकाख्येन भार्यात्याग्यूर्ध्वहस्तकात् ॥ १६ ॥
 पितृत्यागी गृध्रपातात्सिंहान्मातृविरोधकृत् ।
 औदराख्याद्दीर्घरोगी निपतेद्भृगुमूर्धतः ॥ १७ ॥
 संसर्गी भृगुपातस्य दर्शनाच्छुद्धिमाप्नुयात् ।
 निमित्तेन विना यस्तु निपतेद्भृगुमूर्धतः ॥ १८ ॥
 नास्ति तस्य फलं किञ्चिदान्महा स भवेन्नरः ।
 नृपाणां पतनं श्रेष्ठं विशां काष्ठाग्निसेवनम् ॥
 शूद्राणां करपत्रेण मरणं श्रेष्ठमंहसः ॥ १९ ॥

अथाग्निप्रवेशविधानम् ।

चतुर्वर्गचिन्तामणौ हेमाद्रिविरचिते पुराणसंग्रहे—

याऽनुवृत्ताऽङ्गना लोके कर्मणा मनसा भवेत् ।
 मृते पत्यौ न जीवेत्सा बह्निमार्गपरायणा ॥ १ ॥
 आर्ताऽऽर्ते मुदिते हृष्टा प्रोषिते मलिना कृशा ।
 मृते श्रियेत या पत्यौ सा स्त्री ज्ञेया पतिव्रता ॥ २ ॥
 मातृकं पैतृकं चैव दत्ता यस्मिन्कुले सती ।
 कुलत्रयं पुनात्येका भर्तारमनुगच्छति ॥ ३ ॥
 तिस्रः कोट्योऽर्धकोटी च यानि रोमाणि मानवे ।
 तावद्वर्षसहस्राणि पत्या सह वसेद्विवि ॥ ४ ॥
 विशन्तं पन्नगं गृध्री बलादुद्धरते विलात् ।
 पतिं पापनिमज्जन्तभैकैवोद्धरतेऽङ्गना ॥ ५ ॥
 मृते पत्यौ तु या जीवेद्यदिकापञ्चकं भुवि ।
 बध्व्यं नास्ति तस्यास्तु यावद्विशति चानले ॥ ६ ॥

तथा च * भविष्यपुराणे सावित्रीवचनम्—

सतां संतोषनित्या (वृत्त्या) च स्त्रीणां भर्ता सदा गतिः ।

* भूगतोर्लृटि शत्रादेशे स्य इटि च कृते पृषोदरादित्गत्तराप भविष्येति साधीयान्प्रयोगः । अन एव यज्जविष्णे विनहन्तीत्यादि पञ्चनञ्चत् । एवमय धर्मसिन्धौ ज्योतिर्ग्रन्थे च ज्योतिष्यमाणो गतैष्ययोग एष्यवटिकेन्यादावकारान्नैष्यशब्दप्रयोगः सर्वजनीनः साधुरिति प्रतीयते ।

वेदो वर्णाश्रमाणां च शिष्याणां च सदा गुरुः ॥ ७ ॥

तथा च श्रीमहाभारत आदिपर्वणि खाण्डववनदाहं—

गतिः प्रजानां नृपतिः सुतानां च पिता गतिः ।

वेदो गतिर्द्विजातीनां पतिः स्त्रीणां सदा गतिः ॥ ८ ॥

माता गतिः स्तन्यभृतां शिशूनां स्त्रीणां गतिः प्राणद एव नान्यः ।

तस्मान्मृते भर्तारि नान्यमानसा वह्निं विशत्येव विधिप्रयुक्तम् ॥

कीर्तिं जने स्वर्गगतिं परत्र लभेत्पुमांसं (च पुंसां) सह या तु गच्छति ॥ ९ ॥

तत्र च क्रमेणानुममनविशेषः—

शय्याफलनमाजीवं ब्राह्मणी कुरुते यदि ।

सा याति ब्रह्मसायुज्यमनन्तं गतकल्मषा ॥ १० ॥

एकाकिनी वसेत्प्रेतभूमिदेशे त्वहर्निशम् ।

अन्नं तोयमयाचन्ती भुञ्जीयात्स्वयमागतम् ॥ ११ ॥

मलिना जटिलाऽस्नेहा त्रिकालस्नानकारिणी ।

अप्रावृताऽप्यनास्तीर्णा सा शय्यापालिका स्मृता ॥ १२ ॥

तदन्या निर्विशेद्वह्निं शयीत पतिना सह ।

वामाङ्गे विधिवत्काष्ठनिचये दर्भयन्त्रिते ॥ १३ ॥

उत्तानशायिनी भूत्वा स्मरन्ती श्रीजनार्दनौ ।

तदङ्गपञ्चके पुत्रो देवरोऽथ च गोत्रजः ॥ १४ ॥

जुहुयात्सर्पिरानीय गायत्र्याऽऽहुतिपञ्चकम् ।

नाभौ वक्त्रे ललाटे च तथैव करयोर्द्वयोः ॥ १५ ॥

सभीपे वह्निमाधाय कृतस्नानो विरोदनः ।

ललाट इन्द्रमुद्दिश्य वक्त्रे चैव प्रजापतिम् ॥ १६ ॥

नाभावग्निं समुद्दिश्य पाण्योः सूर्ययमौ क्रमात् ।

यजेद्देवानिमान्पुत्रः कृत्वा पूर्वविधिं पितुः ॥

पाददेशे ततो वह्निं तृणैरादीपयेत्सुधीः ॥ १७ ॥

सुधीशब्देन शास्त्रोद्देशमात्रं कृत्वा येन केन प्रकारेण वह्निः प्रदीप्तो भवति स एव कर्तव्यः । तदभावे वह्निप्रपातनं कुर्यात् ।

सह शयने प्रपाते वा यद्व्रतं तत्तु कथ्यते ।
 तैलाभ्यङ्गपरा भूत्वा धृतमाल्यानुलेपना ॥ १८ ॥
 अश्वपृष्ठे समारुढा वपन्ती तण्डुलान्प्रजेत् ।
 आनमन्ती राविं विप्रान्देवमूर्तीर्गुरूनपि ॥ १९ ॥
 हसन्ती ददती वित्तं सर्वसाधारणं सताम् ।
 नत्वा गङ्गाम्भसि स्नात्वा स्मरेत्सावित्रिकां सतीम् ॥ २० ॥
 वंशपात्रेषु विन्यस्य कण्ठसूत्रावतंसकान् ।
 कार्पासकानि वस्त्राणि हरिद्राकुङ्कुमं तथा ॥ २१ ॥
 नारिकेलानि ताम्बूलं नानारत्नानि भूरिशः ।
 सावित्रीप्रीतये दद्याद्ब्राह्मणीभ्यो यथाविधि ॥ २२ ॥
 शृणुयाच्चरितं तस्याः सावित्र्यास्तु समञ्जसा ।
 ततोऽभिवाद्य देवांश्च सूर्यं विप्रवधूस्तथा ॥ २३ ॥
 कृत्वा प्रदक्षिणां वह्नेः कालश्रवणपूर्वकम् ।
 तिष्ठेद्धर्मशिलापृष्ठे क्षिप्त्वा पुष्पं विभावसौ ॥ २४ ॥
 ततश्च संविशेद्बहिर्मुखं बाहुलता सती ।
 पारावतेन पातेन तथा मुसलपाततः ॥ २५ ॥
 झैलिकाख्येन सिंहेन गृध्रपातेन वा पुनः ।
 ऊर्ध्वहस्तेन हंसेन तथैवोदरपाततः ॥ २६ ॥

तत्र पातलक्षणान्याह —

पारावतो यथोद्डीय स्वाहच्छेत्पृथिवीतलम् ।
 पक्षावाकुच्य शिरसा पारावत उदाहृतः ॥ २७ ॥
 ऊर्ध्वमुद्ध्रियते यद्वन्मुसलं युवतीजनैः ।
 विद्यातं मौसलं पातं भृगौ बह्वौ स उत्तमः ॥ २८ ॥
 हंसो यथा विशन्नम्बु सरितः प्लवते मुहुः ।
 निर्विशेद्वीतिहोत्रे सा भर्तारं याऽनुगच्छति ॥ २९ ॥
 सिंहश्चपेटमुद्धृत्य कुञ्जरं प्रति धावति ।
 तथा हस्तं समुद्धृत्य विशेद्बहिर् पतिव्रता ॥ ३० ॥
 उदरेण स्पृशेद्बहिर् निविष्टा या विभावसौ ।
 उदराख्यः स विज्ञेयो भृगौ बह्वौ स उत्तमः ॥ ३१ ॥

एवंविधैस्तु पातैर्या निर्विशेज्जातवेदसम् ।
प्राप्नुयाद्ब्रह्मसायुज्यं भर्त्रा सह पतिव्रता ॥ ३२ ॥

अथ काष्ठनिषेवणविधानम् ।

काशीखण्डे—

महापापनिमग्नानामपुत्राणामृ(णां रु)जा जिताम् ।
गुरुद्रोहिकृतघ्नानां प्रयागे काष्ठसेवनम् ॥ १ ॥
माघे मासि प्रयागे च ये विशन्ति हुताशनम् ।
ते यान्ति ब्रह्मसायुज्यमनन्तं धौतकल्मषाः ॥ २ ॥

तत्र विधानमाह—

कृतस्नानविधिः सम्यग्विधाय पितृतर्पणम् ।
दत्त्वा च विविधं दानं प्रार्थयेद्ब्राह्मणाञ्जुचीन् ॥ ३ ॥
एकाकी कुलहीनश्चेज्जीवन्नेवौर्ध्वदेहिकम् ।
विदध्यात्सर्वमेवाऽऽशु त्वेकस्मिन्नेव वासरे ॥ ४ ॥
पश्चाद्विधीयते चोर्ध्वं सद्भावो गोत्रिणां यदि ।
कृत्वा सुमङ्गलं स्नानं स्मृत्वा लक्ष्मीपतिं हृदि ॥ ५ ॥
आगत्य सरितस्तीरं प्रयागं तीर्थमुत्तमम् ।
रचयेत्स्वयमेवाऽऽशु चितिं काष्ठमयीं दृढाम् ॥ ६ ॥
ऊर्ध्वार्ग्रैर्दारुभिः सम्यग्रचितां विस्तृतां चिताम् ।
स्मरन्नारायणं देवं प्राङ्मुखः स्वयमाविशेत् ॥ ७ ॥
पादमूले न्यसेद्वह्निं स्मरन्नारायणं प्रभुम् ।
एवं यो दहति क्षिप्रं शरीरं धैर्यसंयुतः ॥
स याति ब्रह्मसायुज्यमनन्तं गतकल्मषः ॥ ८ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचि त्रयां विधानमालायां
संकीर्णविधानानि ।

अथ साधारणहरिकथाश्रवणविधानम् ।

चतुर्वर्गचिन्तामणौ पुराणसंग्रहे—

सर्वपापविनिर्मुक्तिकरणे यस्य मानसम् ।
वर्तते विधिवत्तेन पुराणं श्रूयतां ध्रुवम् ॥ १ ॥
प्रातःकाले समुत्थाय दन्तधावनपूर्वकम् ।
प्रातःस्नानं विधायैव जुहुयाज्जातवेदसम् ॥ २ ॥
कृत्वाऽऽह्निकं समाहूय वक्तारं शास्त्रकोविदम् ।
संभाव्याऽऽसनदानेन नमस्कुर्यात्समञ्जसा ॥ ३ ॥

तत्र नमस्कारमन्त्रः—

नमस्ते भगवन्व्यास सर्वशास्त्रार्थकोविद ।
ब्रह्मविष्णुमहेशानमूर्ते सत्यवतीसुत ॥ ४ ॥

इति नमस्कारमन्त्रेण व्यासस्वरूपिणं वक्तारं प्रणमेत् । तत्र पुराणकथाश्र-
वणस्थानान्याह—

शिवालये हरिगृहे देवतासदने तथा ।
वृन्दावने नदीतीरे तथा चैव गृहे शुभे ॥
पुराणं शृणुयाद्भक्त्या यथोक्तविधिना गृही ॥ ५ ॥

ततो गन्धपुष्पादिभिरर्चयित्वा तेनोक्तां पुराणकथां शृणुयात् ।
पूर्वपक्षोक्तिसिद्धान्तपरिनिष्ठासमन्विताम् ।
कथां श्रुत्वा पुनः पूजां कुर्याद्वक्तुः प्रयत्नतः ॥ ६ ॥
नारायणं हृषीकेशं मानसे परिचिन्तयेत् ।
निधाय तुलसीं हस्ते पुष्पयुक्तामतन्द्रितः ॥ ७ ॥
प्रार्थयित्वा हि तं विप्रं भोजयेत्प्रयतः शुचिः ।
अन्यांश्च भोजयेद्विप्रान्विधिवन्मानपूर्वकम् ॥ ८ ॥
एवं नित्यं कथां विद्वाञ्छृणुयान्मधुवातिनः ।
कथासमाप्तौ विप्रस्य व्यासरूपस्य धीमतः ॥ ९ ॥
दद्याद्वित्तं च वस्त्राणि वक्तृतुष्टिकराणि च ।
कथाप्रसङ्गतो यानि तानि सेव्यानि सर्वशः ॥ १० ॥
तेभ्यो वित्तं प्रदातव्यं कौर्याकार्येषु मानवैः ।

इदमेव फलं नृणां श्रोतॄणां मुनिभिः स्मृतम् ॥

त्याज्यं यत्त्यज्यते सद्यो ग्राह्यं संगृह्यते ध्रुवम् ॥ ११ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां साधारण-
हरिकथाश्रवणविधानम् ।

अथ भारतश्रवणविधानम् ।

सत्र याज्ञवल्क्यः—

त्रिवृता पूर्णपृथिवीदानाद्यत्फलमश्नुते ।

तपसश्च परस्येह नित्यं स्वाध्यायवान्द्विजः ॥ १ ॥

यस्य यस्य जपः प्रोक्तो ब्रह्मयज्ञे मनीषिभिः ।

तेन तेन भवेद्विप्रो नित्यं स्वाध्यायवान्द्विजः ॥ २ ॥

एकतश्चतुरो वेदान्कृत्वा भारतमेकतः ।

विष्णुना तुलितं यावत्तावद्धि गुरु भारतम् ॥ ३ ॥

भाति सर्वपुराणेषु रतिः सर्वेषु जन्तुषु ।

तर्णं सर्वपापानां तस्माद्भारतमुच्यते ॥ ४ ॥

यस्य नास्ति मुतः पुंसो यस्य हत्या सुदारुणा ।

यस्य चातुर्यलिप्साऽस्ति श्रोतव्यं तेन भारतम् ॥ ५ ॥

अपमृत्युविनाशाय महाशोकापनुत्तये ।

कलाविज्ञानसौख्याय श्रोतव्यं भारतं नृभिः ॥ ६ ॥

यथा धातूच्चये हेम वज्रं रत्नोच्चये यथा ।

तोयेषु जाल्वीतोयं तथा शास्त्रेषु भारतम् ॥ ७ ॥

धर्मार्थकाममोक्षाणां चतुर्णामुत्तमं फलम् ।

श्राव्यो ज्ञेयो जयेऽसूनां व्यासवक्त्रानकध्वनिः ॥ ८ ॥

कतकेन तु पानीयं निर्मलं जायते यथा ।

भारतश्रवणान्नृणां तथा निष्कल्मषं मनः ॥ ९ ॥

पवित्रं निर्मलं स्वाद्यं पथ्यं खण्डं रुचिप्रदम् ।

तथैव भारतं लोके श्रोतव्यं तेन मानवः ॥ १० ॥

प्रयागे मकरस्नानं द्विजातिभयवारणम् ।

भारतश्रवणं चैव सममेतन्नयं स्मृतम् ॥ ११ ॥

तत्र भारतश्रवणे विधिः—

स्नात्वा गङ्गाजले पुण्ये कृताह्निकविधिर्नरः ।
 शृणुयाद्भारतं रम्यमादिपर्वपुरःसरम् ॥ १२ ॥
 प्रतिपर्वसमाप्तौ च दद्याद्धेनुं सवत्सकाम् ।
 समाप्ते सति सर्वस्मिँल्लक्षहोमो विधीयते ॥ १३ ॥
 होमान्ते विधिवद्दद्यादृत्विग्भ्यो भूरिदाक्षिणाम् ।
 ततो वक्तारमानस्य संपूज्य च यथाविधि ॥ १४ ॥
 भूषणैर्हस्तकर्णानां वस्त्रैः क्षौमादिभिः सुधीः ।
 राजतं सुदृढं जिष्णुं कुञ्जरं दशभिः पलैः ॥ १५ ॥
 चतुर्दन्तं सकुथकं साङ्कुशं च सर्पजठरम् (सहाभ्रमुम्) ।
 विधाय विधिवद्दद्यादाचार्याय सदक्षिणम् ॥
 आचार्यानीं समभ्यर्च्य वस्त्रालंकारभूषणैः ॥ १६ ॥

तत्राऽऽचार्यपूजनमन्त्रौ—

आचार्य त्वं महाविष्णुर्व्यासरूप नमोऽस्तु ते ।
 प्रसन्ने त्वयि विप्रेन्द्र प्रसन्नो मे जनार्दनः ॥ १७ ॥
 मया ते वदनाद्विप्र पवित्रं भारतं श्रुतम् ।
 तेन मे सफलाः कामाः सकलाः सन्तु सत्वरम् ॥ १८ ॥

इत्याचार्यपूजनमन्त्रौ ।

ततः सर्वेभ्यो भूतेभ्यो यथाशक्ति धनं दद्यात् । भारतस्य वक्त्रे भारतपुस्तकं
 दद्यात् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालाया
 भारतश्रवणविधानम् ।

— — —

अथ हरिवंशश्रवणविधानम् ।

जपवच्छ्रवणं प्रोक्तं हरिवंशस्य सूरिभिः ।
 श्रवणान्ते हरेर्मूर्तिः सश्रीकस्य च दीयते ॥
 सुवर्णेन कृता सम्यग्लक्षणा पलमानतः ॥ १ ॥
 विशेषोऽत्र समुद्दिष्टो मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ।
 स्थातव्यं ब्रह्मचर्येण यावद्ब्रह्मन्थः समाप्यते ॥ २ ॥

समाप्तौ विधिवद्दद्याद्वस्त्रं क्षौमं द्विजातये ।
भोजयेन्मिथुनान्येव चतुर्विंशतिमादरात् ॥ ३ ॥

प्रत्यवरोहमन्त्रेण विशेषहवनं सहस्रसंख्यं कुर्यात् ।
एवं कृते विधाने च प्रजां प्राप्नोति मानवः ।
धनमारोग्यमायुष्यं सौभाग्यं गुणगौरवम् ॥
प्राप्नोति मनुजः सम्यङ्नात्र कार्या विचारणा ॥ ४ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
हरिवंशश्रवणविधानम् ।

अथ श्रीमद्भागवतश्रवणविधानम् ।

शतं भोज्यं प्रतिस्कन्धं स्वर्णं दद्यात्प्रथावसु ।
श्रुते सिंहं सुवर्णस्य पलमानस्य साम्बरम् ॥ १ ॥
आचार्याय सुधीर्दत्त्वा मुक्तः स्याद्भवबन्धनैः ।
गायत्र्या हवनं कार्यं पायसेनाऽऽज्यतस्तथा ॥ २ ॥
तिलव्रीहिभिरेवात्र मता व्याहृतयो यजौ ।
होमान्ते भगवान्विष्णुः पूज्यः स्वर्णमयः शुभैः ॥ ३ ॥
उपचारैः षोडशभिर्मन्त्रैः पौरुषसंभवैः ।
ततश्च धेनुदानं च वक्त्रे देयं प्रयत्नतः ॥ ४ ॥
एवं कृते विधाने च सर्वपापनिवारणम् ।
फलदं स्यात्पुराणं तु श्रीमद्भागवतं शुभम् ॥ ५ ॥
धर्मार्थकाममोक्षाणां साधनं नात्र संशयः ।
अर्थवादान्वदन्त्येव पुराणानि च केचन ॥ ६ ॥
न तथा भारतं सम्यक्छुतं भागवतं जनैः ।
विधानसहितं सम्यक्पुराणफलदं भवेत् ॥
तस्माद्विधानयुक्तं तु पुराणं शृणुयान्नरः ॥ ७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां श्रीमद्भागवतश्रव-
णविधानम् ।

अथ रामायणश्रवणविधानम् ।

रामायणे श्रुते दद्याद्रथं हेममयं सुधीः ।
 चतुर्भिर्वाजिभिर्युक्तं तथा क्षौमपताकया ॥ १ ॥
 यन्त्रा चैव समायुक्तं किंकिणीनादनादितम् ।
 संपादिते रथे सम्यग्धेनुं दद्यात्पयस्विनीम् ॥ २ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाच्छतमष्टोत्तरं सुधीः ।
 एवं कृते विधाने च महाकाव्यं फलप्रदम् ॥
 रामायणं भवेन्नूनं नात्र कार्या विचारणा ॥ ३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां रामायण-
 श्रवणविधानम् ।

अथ वासिष्ठश्रवणविधानम् ।

वासिष्ठश्रवणे जाते कृतिनां विधिपूर्वकम् ।
 प्रदेयं शशिनो बिम्बं राजतं पलमानंतः ॥
 हवनं पायसेनैव साज्येनायुतसंमितम् ॥ १ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 वासिष्ठश्रवणविधानम् ।

अथ काशीखण्डश्रवणविधानम् ।

काशीखण्डे श्रुते दद्याद्भवां पञ्चकमादरात् ।
 विधानं पूर्ववत्कार्यं गायत्र्या हवनं मतम् ॥ १ ॥
 अयुतं वा सहस्रं वा शतं वाऽष्टाधिकं तथा ।
 प्रधानं पायसं साज्यं प्रायश्चित्तं चतुर्विधम् ॥ २ ॥
 कृते तु हवने पश्चाद्भवां दानं विधीयते ।
 ततश्च भोजयेद्विप्रांस्तेषां पत्नीश्च भोजयेत् ॥
 एवं कृते विधाने च फलप्राप्तिर्भवेन्नृणाम् ॥ ३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधान-
 मालायां काशीखण्डश्रवणविधानम् ।

अथ ब्राह्मत्रयश्रवणविधानम् ।

तथा हि—

ब्रह्माण्डे ब्रह्मवैवर्ते तथा ब्रह्मणि संश्रुते ।
गां भूमिं महिषीं दद्यात्क्रमाद्गोदावगाहनात् ॥ १ ॥
इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
ब्राह्मत्रयश्रवणविधानम् ।

अथ कालिकापुराणश्रवणविधानम् ।

पुराणे कालिकायाश्च श्रुते दद्यादसिं शुभम् ।
कांस्यपात्राणि देयानि घण्टा दर्पणमञ्जसा ॥ १ ॥
गायत्र्या हवनं कार्यं सहस्रं तिलसर्पिषा ।
होमान्ते विधिवत्कुर्याच्छतब्राह्मणभोजनम् ॥ २ ॥
इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
कालिकापुराणश्रवणविधानम् ।

अथ माघमाहात्म्यश्रवणविधानम् ।

पद्मपुराणे—

शृणुयान्माघमाहात्म्यं माघस्ताने कृते सति ।
सवृषं शकटं दद्यात्कम्बलं कनकं घृतम् ॥ १ ॥
त्रिंशच्छूर्पाणि वंशस्य सालंकाराणि शक्तितः ।
तावन्ति मिथुनान्येव भोजयेत्सादरं सुधीः ॥
भुक्तेषु मिथुनेष्वेव दद्याच्छूर्पाणि भक्तिमान् ॥ २ ॥

तत्र शूर्पदानमन्त्रः—

माधवः प्रतिगृह्णाति माधवो वै ददाति च ।
माधवस्तारको लोके प्रीयतां माधवोऽच्युतः ॥ ३ ॥

इति शूर्पदानमन्त्रः ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
माघमाहात्म्यश्रवणविधानम् ।

अथ नानापुराणश्रवणविधानम् ।

येषां प्रोक्तं मया चात्र पुराणानां विधानकम् ।
 पृथक्त्वेनैव दृष्टं तत्पृथग्दानसमन्वितम् ॥ १ ॥
 मत्स्यादीनां नु शेषाणां सर्वसाधारणो विधिः ।
 पुराणश्रवणान्ते च दद्याद्धेनुं सवत्सकाम् ॥ २ ॥
 वस्त्रालंकारसहितां साधुलक्षणलक्षिताम् ।
 वेदार्थो दुर्गमो लोके मीमांसाहृदयं परम् ॥ ३ ॥
 कृष्णेन कृपया नृणां पुराणे सुगमीकृतः ।
 प्रभुत्वं मित्रधर्मश्च कान्तासंगतिरेव च ॥ ४ ॥
 वेदे पुराणे काव्ये च क्रमशः परिकीर्त्यते ।
 पुराणे श्रूयमाणे च ग्रामे च सकलैर्जनैः ॥ ५ ॥
 न शृणोति कैथं पापः पापविच्छित्तिकारकम् ।
 तेन माता कृता बन्ध्या न श्रुतं येन भारतम् ॥ ६ ॥
 न दत्तं ब्रह्मणे किञ्चिन्न स्नातं गौतमीजले ।
 पौराणीं वृत्तिमाश्रित्य ये जीवन्ति द्विजोत्तमाः ॥ ७ ॥
 ते यान्ति ब्रह्मसायुज्यमनन्तं गतकल्मषाः ।
 ते सूर्यमण्डलं भित्त्वा यान्ति ब्रह्म सनातनम् ॥ ८ ॥
 गङ्गातोयेन शुद्धेन पवित्रीकृतविग्रहाः ।
 ये शृण्वन्ति कथां विष्णोस्तुल्यास्ते सनकादिकैः ॥ ९ ॥
 विप्राणां शौनकस्तीर्णो भवाब्धि गतकल्मषः ।
 परिक्षितस्तु भूपानां हरिदत्तो विशां तथा ॥ १० ॥
 पुराणश्रवणेनैव विधिपूर्वेण सत्वरम् ।
 तस्मात्पुराणश्रवणं विधिपूर्वं हितं नृप ॥ ११ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 नानापुराणश्रवणविधानम् ।

अथ वेदपारायणविधानम् ।

आश्विने सर्वविघ्नशमनार्थमथ वा यदा कदाचित्समय उत्पन्नमहाव्याधि-
शमनार्थं वेदपारायणं चरेत् । मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदेत्यनेन वचनेन वेदपठनं
कृत्वा षडङ्गानि पठेत् ।

ततो वाक्यं पुराणं च नाराशंसीश्च गाथिकाः ।

इतिहासांस्तथा विद्यां योऽधीते शक्तितोऽन्वहम् ॥ १ ॥

अनेन न्यायेन ऋग्वेदादिचतुर्वेदपठनं तत्पारायणमिति जाते पारायणे सति
सौवर्णीं गायत्रीप्रतिमां सौवर्णं वेदपुरुषं च कृत्वा कलशोपरि स्थापयेत् । तिला-
ज्येन गायत्र्या हवनं जपस्य दशांशेन विधाय पश्चाद्यथाविभवं ब्राह्मणत-
र्पणं कुर्यात् ।

तथा च श्रीमद्भागवते—

नाहं तथाऽग्निं यजमानहविर्विताने श्रोतद्घृतप्लुतमदन्हुतभुङ्मुखेन ।

यद्ब्राह्मणस्य मुखतश्चरतोऽनुघासं तुष्टस्य मय्यवहितैर्निजकर्मपाकैः ॥ २ ॥

इत्यनेन न्यायेन लोके ब्राह्मणभोजनं कर्तव्यम् ।

ततो वेदपारायणकृद्भ्यो ब्राह्मणेभ्यो वस्त्राणि भूषणानि कनकं गाश्च दद्यात् ।
पूर्वप्रतिष्ठापिते कलशे यानि धान्यानि प्ररोहन्ति तैरेव प्ररोहाङ्कुरैस्तेन कलशो-
दकेन सकुटुम्बस्य यजमानस्याभिषेकं कुर्युः । ततस्तान्साधुवचनैः संप्रार्थ्य
प्रस्थापयेत्स्वयं सीमान्तमनुव्रजेत् ।

वेदपारायणं येन साधुना सुखसिद्धये ।

कृतं भवति तेनाऽऽशु वाजिमेधशतं शुभम् ॥ ३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां

वेदपारायणविधानम् ।

अथ विनायकपूजाविधानम् ।

तत्र याज्ञवल्क्यः—

विनायकोऽविघ्नकर्मसिद्ध्यर्थं विनियोजितः ।

गणानामाधिपत्ये च रुद्रेण ब्रह्मणा तथा ॥ १ ॥

तेनोपसृष्टो यस्तस्य लक्षणानि निबोधत ।
 स्वमेऽवगाहतेऽत्यर्थं जले मुण्डांस्तु पश्यति ॥ २ ॥
 काषायवाससश्चैव क्रव्यादांश्चाधिरोहति ।
 अन्त्यजैर्गदिभी रुष्टैः सहैकत्रावतिष्ठते ॥ ३ ॥
 ब्रजन्तं च तथाऽऽत्मानं मन्यतेऽनुगतं परैः ।
 विमना विफलारम्भः संसीदत्यनिमित्ततः ॥ ४ ॥
 तेनोपसृष्टो लभते राज्यं नो राजनन्दनः ।
 कुमारी न च भर्तारं न पुष्पं गर्भमङ्गना ॥ ५ ॥
 आचार्यत्वं श्रोत्रियश्च न शिष्योऽध्ययनं तथा ।
 वणिग्लभं न चाऽऽप्नोति कृषिं चैव कृषीवलः ॥ ६ ॥
 स्नपनं तस्य कर्तव्यं पुण्येऽह्नि विधिपूर्वकम् ।
 गौरसर्षपकल्केन साज्येनाऽऽच्छादितस्य च ॥ ७ ॥
 सर्वौषधैः सर्वगन्धैर्विलिप्तशिरसस्तथा ।
 भद्रासनोपविष्टस्य स्वस्तिवाच्य द्विजोत्तमैः ॥ ८ ॥
 अश्वस्थानाद्भजस्थानाद्बल्मीकात्संगमाद्भद्रात् ।
 मृत्तिका रोचनां गन्धान्गुग्गुलुं चाप्सु निक्षिपेत् ॥ ९ ॥
 अहतैरव्रणैश्चैव चतुर्भिः कलशैर्हृदात् ।
 चर्मण्यानडुहे रक्ते स्थाप्यं भद्रासनं तथा ॥ १० ॥
 सहस्राक्षशतधारं पवित्रमृषिभिः स्मृतम् ।
 तेन त्वामभिषिञ्चामि पात्रमान्यः पुनन्तु वै ॥ ११ ॥
 भगं ते वरुणो राजा भगं सूर्यो बृहस्पतिः ।
 भगमिन्द्रश्च वायुश्च भगं त ऋषयो ददुः ॥ १२ ॥
 यत्ते केशेषु दौर्भाग्यं सीमन्ते यच्च मूर्धनि ।
 ललाटे कर्णयोरक्ष्णोरापस्तद् घनन्तु सर्वदा ॥ १३ ॥
 स्नानं सर्षपतैलेन सुवेणौदुम्बरेण तु ।
 जुहुयान्मूर्धनि कुशान्सव्येन परिगृह्य च ॥ १४ ॥
 मितश्च प्रमितश्चैव तथा शालकटङ्कटौ ।
 कूष्माण्डो राजपुत्रश्चेत्येतैः स्वाहासमन्वितैः ॥ १५ ॥

नामभिर्बलिमन्त्रैश्च नमस्कारसमन्वितैः ।
 दद्याच्चतुष्पथे शूर्पे कुशानास्तीर्य सर्वतः ॥ १६ ॥
 कृताकृतास्तण्डुलांश्च पललौदनमेव च ।
 मत्स्यान्पक्वांस्तथैवाऽऽमान्मांसमेतावदेव तु ॥ १७ ॥
 पुष्पं सुगन्धं चित्रं तु सुरां च त्रिविधामपि ।
 मूलकं पूरिकापूर्पांस्तथा वेष्टनिकाः स्रजः ॥ १८ ॥
 दध्योदनं पायसं च गुडमिश्रसितोदकम् ।
 एतत्सर्वं समाहृत्य भूमौ कृत्वाऽऽनतं शिरः ॥ १९ ॥
 विनायकस्य जननीमुपतिष्ठेत्ततोऽम्बिकाम् ।
 दूर्वासर्षपपुष्पाणां दत्त्वाऽर्घपूर्णमञ्जलिम् ॥ २० ॥
 रूपं देहि जघं देहि भगं पार्वति देहि मे ।
 पुत्रान्देहि धनं देहि सर्वकामांश्च देहि मे ॥ २१ ॥
 ततः शुक्लाम्बरधरः शुक्लमाल्यानुलेपनः ।
 ब्राह्मणान्भोजयेद्दद्याद्ब्रह्मयुग्मं गुरोरपि ॥ २२ ॥
 एवं विनायकं पूज्य ग्रहांश्चैव विधानतः ।
 कर्मणां फलमाप्नोति श्रियं प्राप्नोत्यनुत्तमाम् ॥ २३ ॥
 आदित्यस्य सदा पूजां तिलकं स्वामिनस्तथा ।
 महागणपतेश्चैव कुर्वन्सिद्धिमवाप्नुयात् ॥ २४ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां याज्ञव-
 ल्क्योक्तविनायकपूजाविधानम् ।

अथ नवग्रहमखविधानम् ।

याज्ञवल्क्यः—

श्रीकामः शान्तिकामो वा ग्रहयज्ञं समाचरेत् ।
 वृष्ट्यायुष्पुष्टिकामो वा तथैवाभिचरन्नपि ॥ १ ॥
 सूर्यः सोमो महीपुत्रः सोमपुत्रो बृहस्पतिः ।
 शुक्रः शनैश्चरो राहुः केतुश्चैव ग्रहाः स्मृताः ॥ २ ॥
 ताम्रकात्स्फटिकाद्रक्तचन्दनात्स्वर्णकादुभौ ।
 रजतादयसः सीसात्कांस्यात्कार्या ग्रहाः क्रमात् ॥ ३ ॥

सुवर्णे वा पटे लेख्या गन्धैर्मण्डलकेषु च ।
 यथावर्णं प्रदेयानि वासांसि कुसुमानि च ॥ ४ ॥
 गन्धाश्च बलयश्चैव धूपो देयश्च गुग्गुलुः ।
 कर्तव्या मन्त्रवन्तश्च चरवः प्रतिदैवतम् ॥ ५ ॥
 आ कृष्णेन इमं देवा अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत् ।
 उद्धुध्यस्वेति च ऋचो यथा संपरिकीर्तिताः ॥ ६ ॥
 एकैकस्य शतं साष्टमष्टाविंशतिरेव वा ।
 होतव्या मधुसर्पिभ्यां दध्ना क्षीरेण संयुताः ॥ ७ ॥
 गुडौदनं पायसं च हविष्यं क्षीरपट्टिकाः ।
 दध्योदनं च कृसरो मांसं चिन्नान्नमेव च ॥ ८ ॥
 दद्याद्ब्रह्मक्रमादेतद्विजेभ्यो भोजनं बुधः ।
 शक्तितो वा यथालाभं सत्कृत्य विधिपूर्वकम् ॥ ९ ॥
 धेनुः शङ्खस्तथाऽनड्वान्हेम वासो हयः क्रमात् ।
 कृष्णा गौरायसं * छाग एता वै दक्षिणाः स्मृताः ॥ १० ॥
 यस्य यस्य यदा दुष्टः स तं यत्नेन पूजयेत् ।
 ब्रह्मणा च वरो दत्तः पूजिताः पूजयिष्यथ ॥ ११ ॥
 ग्रहाधीना नरेन्द्राणामुच्छ्रायाः पतनानि च ।
 भावाभावौ च जगतस्तस्मात्पूज्यतमा ग्रहाः ॥ १२ ॥
 ग्रहाणामिदमातिथ्यं कुर्याद्यः प्रतिवत्सरम् ।
 आरोग्यं वर्णसंपत्तौ (त्ती) जीवेद्वर्षशतं नरः ॥ १३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 याज्ञवल्क्योक्तं नवग्रहमखविधानम् ।

अथ वसिष्ठोक्तनवग्रहमखविधानम् ।

आदित्याद्या ग्रहाः सर्वे दुष्टस्थानस्थिता नृणाम् ।
 तदा कुर्वन्ति सर्वत्र पीडा नानाविधा ध्रुवम् ॥ १ ॥
 तत्पीडाशमनायाऽऽशु विधानं तु विधीयते ।
 पूर्वशास्त्रानुसारेण वित्तशास्त्रविवर्जितः ॥ २ ॥

आहूय विधिविज्ञानपरान्विप्रान्समाहितः ।
 प्रारभेद्ब्रह्मपूजार्थं विधानं विधिवत्ततः ॥ ३ ॥
 अच्छिद्रेण तु भावेन यथाविभवमात्मनः ।
 शतौषधीः समाहृत्य कलशं च मनोरमम् ॥ ४ ॥
 यत्र कुत्र च खेटस्य क्रियते पूजनं बुधैः ।
 तत्रावलोकयेद्भूमिब्रह्मवर्णादिलक्षणम् ॥ ५ ॥
 शुक्लाभां च रसे स्वादुं पूतां पूर्वप्लवां शुभाम् ।
 तां विद्याद्ब्राह्मणीं भूमिं सर्वकर्मसुसाधिकाम् ॥ ६ ॥
 आलोहितां तीक्ष्णरसां भूमिमाहुर्भुजोद्भवाम् ।
 आभिचारिककर्माणि तस्यां कुर्वीत पण्डितः ॥ ७ ॥
 पीतवर्णां रसे क्षारां विदुर्वैश्यां (शीं) वसुंधराम् ।
 शान्तिकर्म प्रकुर्वीत पुटं भेषजकर्मणि ॥ ८ ॥
 कटुकां मद्यगन्धां च कृष्णां शौद्रीं वसुंधराम् ।
 उच्चाटनादिकं कर्म तस्यां कुर्वीत सिद्धये ॥ ९ ॥
 ब्राह्मी भूः सर्ववर्णेषु शस्ता क्षात्री त्रये शुभा ।
 वैशी ख्या (स्वा) दिद्वये श्रेष्ठा शौद्री वर्णे स्वके शुभा ॥ १० ॥
 पूर्वोत्तरप्लवा भूमिर्विशल्या मण्डपान्विता ।
 तस्यां कुण्डं प्रकुर्वीत चतुरस्रं करावधि ॥ ११ ॥
 उच्छ्रायस्त्वङ्गुलैः पङ्क्तिर्मैखला चतुरङ्गुला ।
 योनिर्वितस्तिमात्रा च आयामेऽङ्गुलसप्तकम् ॥ १२ ॥
 सर्वावयवसंपूर्णोत्सेधे ह्यङ्गुलसप्तकम् ।
 मध्येऽङ्गुष्ठप्रमाणा च गर्ता कार्या हि पण्डितैः ॥ १३ ॥
 कुण्डात्पूर्वविभागस्था वितस्त्यन्तरशालिनी ।
 गर्ताङ्गुष्ठप्रमाणा च तत्र संस्था दिवौकसाम् ॥ १४ ॥
 कीदृशं ब्राह्मणे कुण्डं कीदृशं क्षत्रिये तथा ।
 कीदृशं चोरुजे कुण्डं कीदृशं शूद्रजातिषु ॥ १५ ॥

वसिष्ठ उवाच—

हस्तप्रमाणमुक्तं हि विप्रस्य चतुरङ्गुलम् ।
 इयुमात्रं क्षत्रियस्य तावदेव विशो मतम् ॥ १६ ॥

प्रथमादधिकं कुण्डं शूद्रस्य पद्भिरङ्गुलैः ।
 मानहीनाधिकं कुण्डमनेकभयवर्धनम् ॥ १७ ॥
 यस्मात्तस्मात्प्रयत्नेन शान्तिः कुण्डं विधीयते ।
 खन्यमाने यदा कुण्डे पापाणः प्राप्यते तदा ॥ १८ ॥
 धनायुर्वृद्धिदो ज्ञेयोऽस्थिकेशेषु धनक्षयः ।
 अङ्गारखण्डकान्दृष्ट्वा त्यजेत्तत्कुण्डमञ्जसा ॥ १९ ॥
 अङ्गारदर्शने रोगो दैन्यं केशविलोकने ।
 पापाणदर्शने सौख्यं कुलनाशः शवास्थिषु ॥ २० ॥
 कोविदारस्य काष्ठे च भस्माङ्गारास्थिखर्परे ।
 सर्पे च वृश्चिके दृष्टे रोगमृत्युभयप्रदम् ॥ २१ ॥
 पापाणे श्रीमदारोग्यमिष्टका सर्वकामदा ।
 अङ्गारे स्वामिनो नाशः खर्परे स्त्रीधनक्षयः ॥ २२ ॥
 भस्मना संततिच्छेदः सिकताभिर्धनक्षयः ।
 गजास्थि स्वामिनं हन्ति तुरगास्थि धनापहम् ॥ २३ ॥
 मानुषास्थि मनुष्यांश्च हन्ति होतुर्न संशयः ।
 पश्वस्थि पशुसंघातं हन्ति नात्र विचारणा ॥ २४ ॥

एवं कुण्डखननपरीक्षा ।

सर्वलक्षणसंपूर्णे कुण्डे च विहिते सति ।
 विदध्याद्धोमसंधानं होमलक्षणकोविदः ॥ २५ ॥
 कुण्डस्य रुद्रदिग्भागे द्विहस्ते पीठमारभेत् ।
 किञ्चिन्मध्योत्तरं (न्नतं) कुर्यादुच्छ्राये द्वादशाङ्गुलम् ॥ २६ ॥
 आर्यमाचार्यमादूय कुलीनं वेदपारगम् ।
 दैवज्ञं वा द्विजश्रेष्ठं कुशलं यज्ञकर्मणि ॥ २७ ॥
 सदाचारांश्च विदुषः कुलीनान्कुशलान्कृतौ ।
 ऋत्विजोऽष्टौ च चत्वारो द्वावप्येकं विधेर्विदम् ॥ २८ ॥
 समिदाज्यतिलान्दर्भान्यवान्क्षौद्रं पयोऽदधि ।
 पुष्पाणि च तथा धूपं नैवेद्यं च समाहरेत् ॥ २९ ॥
 यजमानः शुचिः स्नातः श्रद्धायुक्तो जितेन्द्रियः ।
 पादशौचाध्यवस्त्राद्यैराचार्यादींस्ततोऽर्चयेत् ॥ ३० ॥
 अथ कुण्डखननविधानं भस्मजोऽप्यग्नौ विधातुम् ॥

सुप्रसादं प्रकुर्वन्तु शान्तिके हवने शुभे ॥ ३१ ॥
 इति संप्रार्थ्य विप्रांस्तान्दद्यात्पूगी(ग)फलं करे ।
 आचार्यत्वे वृतोऽसीति ब्रह्मर्त्विक्त्वे वृतोऽसि च ॥
 सदस्यत्वे वृतोऽसीतीत्युद्गातृत्वे वृतोऽसि च ॥ ३२ ॥

इति वरणविधिः । ततस्तूलेखने कृतेऽग्निप्रतिष्ठां कुर्यात् । तत्राग्निनामानि
 वक्ष्ये—

आदित्ये कपिलो नाम पिङ्गलः सोम उच्यते ।
 धूमकेतुस्तथाऽङ्गारै जठराग्निर्बुधस्य च ॥ ३३ ॥
 गुरौ चैव शिखी नाम शुक्रे भवति हाटकः ।
 शनैश्चरे महातेजा राहौ केतौ हुताशनः ॥ ३४ ॥
 अविदित्वाऽग्निनामानि होमं कुर्याद्विचक्षणः ।
 तद्धृतं न च संस्कारं न च यज्ञफलं लभेत् ॥ ३५ ॥
 पीठे चाष्टदलं पद्मं कृत्वा श्रेष्ठं सिताक्षतैः ।
 रुद्रकुम्भं सवस्त्रं च सपत्राम्भःसपल्लवम् ॥ ३६ ॥
 पुष्पचन्दनसंयुक्तं पीठस्येशानतो न्यसेत् ।
 सितैरखण्डितैः श्रेष्ठैः क्षालितैः शालितण्डुलैः ॥ ३७ ॥
 ग्रहानाहूय संस्थाप्य पङ्कजे रूपधारिणः ।
 वृत्तं मण्डलमादित्ये चतुरस्रं निशाकरे ॥ ३८ ॥
 महीपुत्रे त्रिकोणं च बुधे स्याद्वाणसंनिभम् ।
 गुरौ च पट्टिशाकारं पञ्चकोणं च भार्गवे ॥ ३९ ॥
 धनुराकृति मन्दे च शूर्पाकारं च राहवे ।
 केतूनां च ध्वजाकारं मण्डलान्येव कारयेत् ॥ ४० ॥
 शुक्राको प्राङ्मुखौ ज्ञेयौ गुरुसौम्याबुदङ्मुखौ ।
 प्रत्यङ्मुखः शनिः सोमः शेषा दक्षिणतोमुखाः ॥ ४१ ॥
 मध्ये तु भास्करं विद्याच्छशिनं पूर्वदक्षिणे ।
 दक्षिणे लोहितं विद्याद्बुधं पूर्वोत्तरेण तु ॥ ४२ ॥
 उत्तरे च गुरुं विद्यात्पूर्वेणैव तु भार्गवम् ।
 पश्चिमे तु शनिं विद्याद्राहुं दक्षिणपश्चिमे ॥ ४३ ॥
 पश्चिमोत्तरतः केतुः स्थाप्यो वै शुक्रतण्डुलैः ।
 वर्णस्य च गुणैर्युक्तान्व्याहृत्याऽऽवाहयेत्तु तान् ॥ ४४ ॥

भो भोः सूर्य ग्रहाध्यक्ष कलिङ्गविपयोद्भव ।
 रक्त काश्यपगोत्र (त्रिं) स्तु द्विभुजः (बाहो) पद्मलाञ्छन ॥ ४५ ॥
 सप्ताश्ववाहनाऽऽगच्छ पद्ममध्ये वरप्रद ।
 अग्निं दूतेतिमन्त्रेण रुद्ररूपीप्र(पिन्व)तिष्ठित ॥ ४६ ॥
 अहो चन्द्र जगत्प्राण यमुनाविपयोद्भव ।
 श्वेतवर्णात्रिगोत्रे(त्री)य गदापाणे वरप्रद ॥ ४७ ॥
 दशाश्ववाहनाऽऽगच्छ उमारूपीस(पिन्स)माविश ।
 हुताशनदले देव मन्त्रेणास्वग्निनाऽर्चित ॥ ४८ ॥
 उज्जयिन्यां समन्वन्न भो भो भौम चतुर्भुज ।
 भगद्वाजकुले जात शूलशक्तिगदाधर ॥ ४९ ॥
 मेघमारूढ वरद स्कन्दप्राण तडित्प्रभ ।
 स्योना पृथिविमन्त्रेण दले यान्ये प्रतिष्ठित ॥ ५० ॥
 अहो चन्द्रमुत श्रीमन्मगधीयासमुद्भव ।
 अत्रिगोत्र चतुर्बाहो खड्गखेटकधारक ॥ ५१ ॥
 * गदावरद सिंहस्थ सुवर्णाभ समाविश ।
 नीलपङ्कजपत्रस्थ इदं विष्णुप्रपूजित ॥ ५२ ॥
 अहो वाचस्पते जीव सिन्धुमण्डलसंभव ।
 एवाङ्गिरसगोत्रे(त्री)य हयारूढ चतुर्भुज ॥ ५३ ॥
 दण्डाक्षसूत्रवरदकमण्डलुधर प्रभो ।
 महानिन्द्रेणि संपूज्य विधिवच्चोत्तरे दले ॥ ५४ ॥
 भो भो भोजकं जात शुक्र श्वेताश्ववाहन ।
 समागच्छ चतुर्बाहो भृगुगोत्रविभूषण ॥ ५५ ॥
 परिष्वा(घा)त्रायलीहस्त कमण्डलुधर प्रभो ।
 पूर्वपत्रे प्रतिष्ठा तु(ष्टाऽऽशु) शुक्र ज्योतीतिपूजित ॥ ५६ ॥
 अहो सौगाष्टसंजात च्छायापुत्र चतुर्भुज ।
 कृष्णवर्णार्किगोत्रे (त्री) य वाणखड्गधनुर्धर ॥ ५७ ॥
 वरद त्वं समागच्छ त्रिशूलिन्मृगवाहन ।
 प्रजापतीनि संपूज्य ह्यम्बुजस्यात्तरे दले ॥ ५८ ॥

* गदा प्रसिद्धः शस्त्रावशेषो वरदं वरदातृत्वसूचकहतादिविन्यासरूपो मुद्राभेदश्चास्य स्त
 इति मन्वर्थेऽर्हाद्यचा स्थितस्य गतिश्चिन्तनीयेति न्यायेन यथाकथं विभिर्वाह्य चन्द्रसुतविशेषं
 बोध्यमिति त्रिदुषः प्रार्थये ।

- संजात दर्वरे देशे राहो कायविवर्जित ।
 गोत्रे पैठीनसे ह्येहि सिंहारूढ वरप्रद ॥ ५९ ॥
 करालवदन श्रेष्ठ कालरूपिञ्जनप्रभो ।
 आर्यं गौरितिमन्त्रेण पूज्य नैर्ऋतपत्रके ॥ ६० ॥
 केतवो विविधाकारा मलयाद्रिसमुद्भवाः ।
 द्विभुजा जैमिने(निगो)त्रा गदाहस्ता वरप्रदाः ॥ ६१ ॥
 आगच्छत कपोतस्थाः शोभने मारुते दले ।
 ब्रह्मजज्ञानमन्त्रेण चित्रगुप्त इवार्चिताः ॥ ६२ ॥
 एवं ग्रहान्प्रतिष्ठाप्य स्थापनीयाश्च देवताः ।
 तेषां स्थानानि नामानि मन्त्रांश्च प्रवदाम्यहम् ॥ ६३ ॥
 रुद्रं त्र्यम्बकमन्त्रेण रवेरुत्तरतो न्यसेत् ।
 सोमस्याऽऽग्नेयदिग्भागे श्रीश्च ते मेनकात्मजाम् ॥ ६४ ॥
 यदक्रन्देति भौमस्य स्कन्दं यान्ये प्रपूजयेत् ।
 विष्णुं विष्णो रराटेति यजेत्पूर्वे बुधस्य च ॥ ६५ ॥
 गुरोरुत्तरतोऽभ्यर्च्यो ब्रह्मा ब्रह्मेतिमन्त्रतः ।
 सजोषा इति शुक्रस्य प्राच्यां शक्रं निधापयेत् ॥ ६६ ॥
 शनेश्च पश्चिमे स्थाप्यो यमायेतिकृत्वा यमः ।
 कार्णिरसीतिमन्त्रेण राहोः कालं तथोत्तरे ॥ ६७ ॥
 चित्रगुप्तं तु केतूनां चित्रश्वमेनि नैर्ऋते ।
 ग्रहाणां देवताः ख्याता मुख्याः शृण्वधिदेवताः ॥ ६८ ॥
 शंभोश्चाग्रे भवेद्बहिरापश्चोमाऽधि नैर्ऋति ।
 धरा च स्कन्दवायव्ये विष्णुर्नागयणोत्तरे ॥ ६९ ॥
 * चित्रगुप्तान्तरे ब्रह्मा अधिदेवान्निधापयेत् ।
 × सनोपोदादिदं विष्णुरिन्द्रस्त्वैन्द्री प्रजापतिः ॥
 नमोऽस्तु ब्रह्मजज्ञानमधिदेवा यथाक्रमम् ॥ ७० ॥

* शृण्वधिदेवता इत्यनेन प्रत्यधिदेवताकर्मकआवर्णं प्रतिज्ञाय शंभोश्चेत्यादिनारायणोत्तर इत्यन्तेन ग्रन्थेन ब्रह्मचव्वराविष्णवः प्रत्यधिदेवाश्चन्दारः श्राविनाः । अग्रे च चित्रगुप्तान्तरे ब्रह्मे-
 त्यनेन ब्रह्मा श्रावितो न तु विष्णोरग्रेतना इन्द्रेन्द्राणीप्रजापतिर्गर्ग्यप्रत्यधिदेवाः । ततश्चैरमनुभीयते-
 तेषां तद्वन्थो भ्रष्ट इति । × अस्मिञ्श्लोक इदं विष्णुर्नमोऽस्तु ब्रह्मजज्ञानमित्यादिमन्त्रप्रतीकदर्शना-
 त्प्रत्यधिदेवस्थापनमन्त्रसंग्रहं चिकीर्षतीति भाति । पूर्वग्रन्थसदर्भेणापि तथैव प्रतीयते । परं त्वत्प्रशु-
 द्धत्वात्प्रत्यन्तराभावाच्च यथास्थित एव श्लोकः स्थापितः ।

आ नो भद्रेत्यनन्तं च रवेः पूर्वे प्रपूजयेत् ।
 देवानां वासुकिः पूज्यो मृगाङ्कस्याग्रतो बुधैः ॥ ७१ ॥
 तां पूर्वयाऽहिचक्रस्य तक्षकं स्थापयेत्पुरः ।
 तन्नो वातेति कर्कोटं पूजयेदुत्तरे बुधात् ॥ ७२ ॥
 तर्मीशानेति पद्मं तु गुरोरग्रे निधापयेत् ।
 महापद्मं च शुक्रस्य सव्यतः सौम्यतो न्यसेत् * ॥ ७३ ॥
 शतं मित्रेति केतूनां पु(कु)लिकं पुरतो न्यसेत् ।
 आ नो भद्रानुवाकेन एवं प्रत्यधिदेवताः ॥ ७४ ॥
 गणनाथं तथा दुर्गां वायुमाकाशमेव च ।
 कुमारावश्विनौ देवौ लोकपालांस्तथैव च ॥ ७५ ॥
 शनेः केतोश्च पूर्वे तु गुरोः सूर्यस्य पश्चिमे ।
 आवाहयामि देवेशं गणानामधिपं शुभम् ॥ ७६ ॥
 आस्तुवाहनमारुहं तप्तकाञ्चनसप्रभम् ।
 लम्बोदरं महाकायमेकदन्तं गजाननम् ॥ ७७ ॥
 विभ्रतं पुस्तिकामक्षान्कमलं च परश्वधम् ।
 आगच्छ भगवन्देव यज्ञेऽस्मिन्संनिधौ भव ॥ ७८ ॥
 नमो गणेति मन्त्रेण गणेशं पूर्वतो न्यसेत् ।
 आवाहयामि देवीं तां दुर्गां दुर्गार्तिनाशिनीम् ॥ ७९ ॥
 सुस्तिग्धां श्यामवर्णां च सर्वशस्त्रप्रधारिणीम् ।
 अनेकबाहुवदनां बहुरूपधरां शिवाम् ॥ ८० ॥

तत्राऽऽवाहनमन्त्रः—

आगच्छ देवि चामुण्डे यज्ञेऽस्मिन्संनिधा भव ।
 त्वयि संनिहितायां च कर्मसिद्धिर्भवेन्मम ॥ ८१ ॥
 जातवेदसेमन्त्रेण चामुण्डां दक्षिणे न्यसेत् ।
 आवाहयामि देवेशीं चतुःपट्यधिदेवताम् ॥
 मुण्डमालाधरां घोरां व्याघ्रचर्माम्बरप्रियाम् ॥ ८२ ॥

* अत्रापि क्रियान्ग्रन्थो भ्रष्ट इति भाति ।

क्षेत्रपालं हयारूढं खड्गपात्रधरं शुभम् ।
 विभ्रतं डमरुं शूलं सर्पयज्ञोपवीतिनम् ॥ ८३ ॥
 आगच्छ भगवन्देव यज्ञेऽस्मिन्संनिधौ भव ।
 भूतानामितिमन्त्रेण भैरवं चोत्तरे न्यसेत् ॥ ८४ ॥
 गणनाथं प्रतिष्ठाप्य सर्वदेवसमन्वितम् ।
 घृतं घृतेतिमन्त्रेण अन्तरिक्षं तु पश्चिमे ॥ ८५ ॥
 अग्र आउयेतिमन्त्रेण उत्तरे च धनाधिपम् ।
 श्रियं मन्त्रेण तद्देव्या श्रीश्च ते इति दक्षिणे ॥ ८६ ॥
 यावांकशेतिमन्त्रेण पूर्वे स्थाप्यौ तथाऽश्विनौ ।
 सप्त सप्त यजेद्भानि प्रागेवाश्विनिपूर्वकम् ॥ ८७ ॥
 अश्विन्यां तेजसाऽश्विन्या यमाय भरणीषु च ।
 कृत्तिकायामग्निदेवो रोहिणी ब्रह्मदैवता ॥ ८८ ॥
 सोमो वैश्वेति सौम्यस्य नमस्ते रुद्रदैवते ।
 अदितिर्द्यौः पुनर्वसुः पुष्ये वाचस्पते इति ॥ ८९ ॥
 सार्षे च दैवतं सर्पः पितरः पितृदैवते ।
 भगप्रणोति भाग्यं च देव्या रथुर्य(चार्येयु)र्यमम् ॥ ९० ॥
 हस्तं विभ्रतिमन्त्रेण त्वाष्ट्रं त्वाष्ट्रेति पूजयेत् ।
 वायो अन्येति वायव्यमिन्द्राग्नीति द्विदैवतम् ॥ ९१ ॥
 नमो मित्रेति मित्रर्क्षं स इष्विति पुरंदरम् ।
 मूलं मातेव पुत्रं तु पूर्वाषाढामपाद्यतम् (?) ॥ ९२ ॥
 विश्वे अद्येति विश्वेशं गायत्र्या वाऽभिजिन्न्यसेत् ।
 श्रवणं विष्णुमन्त्रेण धनिष्ठां वसुधारया ॥ ९३ ॥
 पञ्चवारुणं वारुण्यां अजपादोवनोदिते । (?)
 शिवौ नामेत्यहिर्युध्न्ये पौष्णं पूषस्तत्रेन तु ॥ ९४ ॥
 योगे योगेतिमन्त्रेण विष्कम्भादि प्रपूजयेत् ।
 भद्रं कर्णेतिमन्त्रेण करणान्यखिलान्यपि ॥ ९५ ॥
 ध्रुवोऽसीति ध्रुवौ मध्ये ग्रहाणां शततारकाश्च ।
 गङ्गां च सरितः सर्वाः पञ्च नद्येति पूजयेत् ॥ ९६ ॥
 सागरांश्चैव सप्तैतानिमं म इति पूजयेत् ।
 पृथिव्यां पर्वतान्कांश्चित्पर्वतेति प्रपूजयेत् ॥ ९७ ॥

पाँवायस्तेतिमन्त्रेण रैवतं पूजयेत्ततः ।
 ऋषीणामितिमन्त्रेण ऋषीणां पूजनं मतम् ॥ ९८ ॥
 असंख्यातेति संपूज्यो रुद्रो रुद्रघटेऽम्भसि ।
 पूज्यो विष्णुः स्वसूक्तेन वामनेन तथैव च ॥ ९९ ॥
 चतुःषष्टिपदो वास्तुः पूज्यो वास्तोष्पते इति ।
 गणानां त्वेति वायव्ये गणनाथं प्रपूजयेत् ॥ १०० ॥
 प्रजापत इत्यनेन पूज्यो दक्षः प्रजापतिः ।
 रुद्रकुम्भाग्रतः पूज्या चामुण्डा जातवेदसे ॥ १०१ ॥
 यो वः शिवेतिमन्त्रेण चोत्तरे मातृमण्डलम् ।
 भूर्लोकान्सत्यपर्यन्तानैशान्यादौ प्रपूजयेत् ॥ १०२ ॥
 अहो इन्द्र गजेन्द्रस्थ वज्रहस्त प्रपूजित ।
 त्रातारमितिमन्त्रेण प्राचीं संरक्ष दिक्पते ॥ १०३ ॥
 अहो मेघस्थ सप्तार्चे शक्तिपाणे महाबल ।
 त्वं नो अग्नेति संपूज्य दिशं बह्वे प्रपालय ॥ १०४ ॥
 अहो महिषमारूढ दण्डपाणे वरप्रद ।
 सुगं न इति संपूज्य दक्षिणाशां प्रपालय ॥ १०५ ॥
 अहो नैऋत दिक्पाल नैऋत्यां खड्गधारक ।
 आगच्छ कुण्ठमारूढ सुन्वन्तमिति पूजित ॥ १०६ ॥
 अहो वरुण वारुण्यां यादःपृष्ठसमाश्रित ।
 आगच्छ पाशपाणे त्वं तत्त्वायामीति पूजित ॥ १०७ ॥
 अहो वायो मृगारूढ ध्वजहस्त प्रपूजित ।
 आ नो नियुद्धिमन्त्रेण मारुताशां प्रपालय ॥ १०८ ॥
 अहो किंनरराजेद्र शिविकारूढ वित्तप ।
 रक्षोत्तरदिशं सम्यग्भयं सोमेति पूजित ॥ १०९ ॥
 अहो वृषभमारूढ शूलपाणे महाबल ।
 गौद्राशामीश रक्ष त्वं तमीशानेतिपूजित ॥ ११० ॥
 अहो हंसस्थित ब्रह्मन्वयोम रक्ष निरन्तरम् ।
 ब्रह्मजज्ञानमन्त्रेण पूजितः सकमण्डलुः ॥ १११ ॥
 अहो गरुडमारूढ शङ्खचक्रगदाधर ।

स्योना पृथिविपूजार्हं पालय त्वमधोदिशम् ॥ ११२ ॥
 संपूज्य बलिपुष्पैस्तु प्रक्रमेण दिगीश्वरान् ।
 तत्र ये स्थापिताः पीठे ग्रहा देवाधिदेवताः ॥ ११३ ॥
 विचिन्त्याः संमुखाः सर्वे मूर्ताश्चैव वरप्रदाः ।
 मृदुभिः शोभनैर्वस्त्रैः परिधाप्याः पृथक्पृथक् ॥ ११४ ॥
 युगैकपाश्च वा सर्वे रुद्रकुम्भयुगैकपाः ।
 श्रीखण्डं भार्गवे चन्द्रे भौमार्के रक्तचन्दनम् ॥ ११५ ॥
 चमसं च बुधे जीवे शेषाणां कुङ्कुमं स्मृतम् ।
 ह्यारिकुसुमैः सूर्यं कुमुदैः सोममर्चयेत् ॥ ११६ ॥
 क्षितिजं तु जपापुष्पैश्चम्पकैः सोमनन्दनम् ।
 शतपत्रैर्गुरुः पूज्यो जातीपुष्पैस्तु भार्गवः ॥ ११७ ॥
 मल्लिकाकुसुमैः पङ्गुं कुन्दपुष्पैर्विभुंतुदम् ।
 केतुं नानाविधैः पुष्पैर्ऋतुकालोद्भवैः शुभैः ॥ ११८ ॥
 प्रतिष्ठासंभवैर्मन्त्रैः पश्चाद्भूपं प्रदापयेत् ।
 कुन्दुराज्यं रवेर्धूपं तण्डुलाज्यं निशाकरे ॥ ११९ ॥
 सल्लकीधूपमुर्वीजे बुधेऽगरुदाहतः ।
 स एव त्रिदशाचार्ये साज्यं बिल्वाङ्कुरं कवौ ॥ १२० ॥
 गुग्गुलं सूर्यपुत्रे तु राहौ लाक्षा ह्युदाहता ।
 नखं केतौ समादिष्टं वसवस्त्वेति धूपयेत् ॥ १२१ ॥
 गुडान्नं क्षीरिकासारं दुग्धान्नं दधिभक्तकम् ।
 घृतान्नं कृशरान्मापान्विचित्रान्नं गुडादिभिः ॥ १२२ ॥
 द्राक्षेक्षुपूगनारङ्गजम्बीरं बीजपूरकम् ।
 खर्जूरं नारिकेलं च दाडिमं च यथाक्रमम् ॥ १२३ ॥
 अलाभे यानि भक्ष्याणि फलानि तानि दापयेत् ।
 खेचराणां च ताम्बूलमेकैकस्य प्रदापयेत् ॥ १२४ ॥
 नववर्तियुतो दीपो घृतेन परिपूरितः ।
 ग्रहाणामग्रतः कार्यस्तजोऽस्येतेन मन्त्रितः ॥ १२५ ॥
 ग्रहदेवाधिदेवाश्च स्थापनीया दिगीश्वराः ।
 प्रतिष्ठालिङ्गमन्त्रैश्च पुनस्तेषां प्रकल्पयेत् ॥ १२६ ॥
 ततः कुण्डं समासाद्य निर्वृत्याग्निक्रियां चरुम् ।

श्रपयित्वा ततो होमः कर्तव्यः खेचरान्प्रात ॥ १२७ ॥
 आधारावाज्यभागांश्च जुहुयात्पञ्चवारुणीम् ।
 हिरण्यस्तूप आ कृष्णेन त्रिष्टुप्सविता मतः ॥ १२८ ॥
 आप्यायस्वे गौतमस्तु गायत्रं सोमदैवतम् ।
 अग्निर्मूर्धा विरूपाक्षो गायत्रं चाग्निदैवतम् ॥ १२९ ॥
 उद्धुध्यस्व बुधास्त्रिष्टुब्बविश्वेदेवाश्च देवताः ।
 बृहस्पते गृत्समदस्त्रिष्टुब्देवो बृहस्पतिः ॥ १३० ॥
 अन्नादिभिर्भरद्वाजस्त्रिष्टुप्पूषा च देवता ।
 सिन्धुद्वीपस्तु गायत्री आपः शं न इति क्रमात् ॥ १३१ ॥
 प्रक्रान्ते वामदेवस्तु गायत्रं स्याच्छतक्रतुः ।
 केतुं कृण्वन्मधुक्रुपिर्गायत्री चेन्द्रदैवतम् ॥ १३२ ॥
 एकैकां च घृतस्याऽऽहुतिमेकैकां चरोस्तथा ।
 मन्त्रे मन्त्रे स्वकीये च दद्याद्देवग्रहान्प्राति ॥ १३३ ॥
 समिदाज्यचरोर्होमः कर्तव्यस्तु क्रमेण तु ।
 समिदर्कमयी सूर्ये पालाशी शशिनस्तथा ॥ १३४ ॥
 खादिरी भूमिपुत्रे च ह्यापामार्गी बुधस्य च ।
 गुरोरश्वत्थजा प्रोक्ता शुक्रस्यौदुम्बरी तथा ॥ १३५ ॥
 शमी प्रोक्ता च मन्दस्य सोमे (राहौ) दूर्वा प्रकीर्तिता ।
 केतोः कुशाः समादिष्टा यज्ञविद्याविशारदैः ॥ १३६ ॥
 अभावे तु प्रकर्तव्याः सर्वा ब्रह्मतरोः शुभाः ।
 या ओषधीरित्यनेन समिधस्त्वार्द्रिका हरेत् ॥ १३७ ॥
 अक्रोधनो गतव्याधिः शुचिः सन्ब्राह्मणोत्तमः ।
 पूर्वदिक्प्रान्ततो वाऽथ सौम्यतो वाऽथ पश्चिमात् ॥ १३८ ॥
 आहरेत्समिधः सर्वा न तु याम्यदिशः सुधीः ।
 हुत्वा पलाशवृक्षस्य समिधो द्विजसत्तमः ॥ १३९ ॥
 सर्वान्कामान्समाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ।
 खादिरी चार्थलाभाय ह्यपामार्गेण रूपवान् ॥ १४० ॥
 अश्वत्थः सर्वकामाणां ददात्यविरतं फलम् ।
 हेमक्षीरस्य समिधः सौभाग्यसुखदा नृणाम् ॥ १४१ ॥

- शमी शमयते पापं दूर्वा ह्यायुर्विवर्धिनी ।
 कुशा धर्मार्थकामानां फलदा नात्र संशयः ॥ १४२ ॥
 रक्षोघ्नास्तु कुशाः काशाः पिशाचगणवारणाः ।
 तस्मात्कुशाः पवित्रास्तु काशास्तेषामलाभतः ॥ १४३ ॥
 कृशा स्थूला च दीर्घा च न्यूना शीर्णा दलीकृता ।
 कीटविद्धा तथा शुष्का वर्जनीया प्रयत्नतः ॥ १४४ ॥
 वक्रा द्विशाखा त्वग्हीना समिन्नेष्टा श्रुतौ स्मृतौ ।
 विशीर्णाऽऽयुक्ष्यं कुर्याद्द्विदला व्याधिकारिणी ॥ १४५ ॥
 ह्रस्वया मृत्युमाप्नोति वक्रा विघ्नकरी स्मृता ।
 स्थूला हरति वित्तानि कृशायां पापसंचयः ॥ १४६ ॥
 द्विशाखा नेत्ररोगाय कृमिदष्टार्थनाशिनी ।
 द्वेषं वितनुते दीर्घा प्राणघ्नी त्वग्विवर्जिता ॥ १४७ ॥
 शस्ता दशाङ्गुलोपेता द्वादशाङ्गुलिका तथा ।
 रोगहन्त्री मनस्तुष्टिसंपद्भोगविवर्धिनी ॥ १४८ ॥
 प्रजालाभप्रदा पापक्षयदा रोगनाशिनी ।
 आयुर्विवर्धिनी शोकनाशिनी धनदा तथा ॥ १४९ ॥
 अर्कादिसमिधो ज्ञेया विद्वद्भिर्गतमत्सरैः ।
 अष्टोत्तरसहस्रं च शतमष्टाधिकं तथा ॥ १५० ॥
 अष्टाविंशतिमष्टौ वा यजेत्पञ्चामृतप्लुताः ।
 इन्धनैः पूरिते वह्नौ सुसमिद्धे विशेषतः ॥ १५१ ॥
 निर्धूमे लेलिहाने च होतव्याः कर्मसिद्धये ।
 अन्नवृत्रे (अप्रवृद्धे) समिद्धे च जुहुयाद्यो हुताशने ॥ १५२ ॥
 यजमानो भवेदन्धः सौमित्र इति नः श्रुतम् ।
 आ कृष्णेनेति सूर्यस्य इमं देवेति शीतगोः ॥ १५३ ॥
 अग्निर्मूर्धेति भौमस्य उद्बुध्यस्वेति बोधने ।
 * बृहस्पतेति जीवस्य शुक्रस्यान्नात्परिश्रुतेः ॥ १५४ ॥
 शं नो देवी शनेर्मन्त्रः कया नश्चित्र राहवे ।
 केतुं कृष्वन्न केतूनां होममन्त्राः प्रकीर्तिताः ॥ १५५ ॥

शेषाणां स्थापने मन्त्रैर्होमो व्याहृतिभिस्त्रिलैः ।
 अन्नाद्विशेषहोमः स्यादन्ते व्याहृतिरुच्यते ॥ १५६ ॥
 न मुक्तवालो जुहुयान्नानुपातितजानुकः ।
 अनुपातितजानुश्च रक्षसे जुहुयाद्धविः ॥ १५७ ॥
 हूयमाने हुताशे च यदि ज्वालासमुद्भवः ।
 सिद्धिदो यजमानस्य ज्ञेयः प्रीतो मनीषिभिः ॥ १५८ ॥
 सा ज्वाला यदि रक्ता स्यात्कृष्णा चैव विशेषतः ।
 उदिता शत्रुभयदा ऋत्विजां नात्र संशयः ॥ १५९ ॥
 वह्निः प्रदक्षिणावर्तः सशिखो धूमवर्जितः ।
 स्निग्धः सुगन्धिर्गम्भीरश्चिरायुर्होतुरादिशेत् ॥ १६० ॥
 होमान्ते सर्वकृत्यानां दद्यात्पूर्णाहुतिं शुभाम् ।
 अध्वर्युऋत्विक्सहितः पूर्णाहुतिमुपारभेत् ॥ १६१ ॥
 श्रैपर्णी खादिरी दार्वी विकङ्कतसमुद्भवा ।
 बाहुमात्रा प्रकर्तव्या सुग्वा स्याद्धस्तमात्रिका ॥ १६२ ॥
 यस्य काष्ठस्य दर्वी स्यात्तस्यैव स्यात्सुवः शुभः ।
 खादिरो हैमदुग्धो वा प्रोक्तो यज्ञस्य कर्मणि ॥ १६३ ॥
 चतुरस्रमुखा दर्वी योनिः स्याच्चतुरङ्गुला ।
 अर्धाङ्गुलसमुच्छ्राया पञ्चाङ्गुलमितानना ॥ १६४ ॥
 हरिणीखुरमाना स्यान्माने त्र्यङ्गुल उच्यते ।
 द्विपक्षः शुभदो ज्ञेयः सुवो यज्ञस्य कर्मणि ॥ १६५ ॥
 चन्दनेनानुलिप्ताङ्गौ कृत्वा दर्वीसुवौ शुभौ ।
 वामहस्ते धृतां दर्वीमाज्येनैवाभिघारयेत् ॥ १६६ ॥
 शुक्रज्योत्यनुवाकेन घृतेनाच्छिन्नधारया ।
 निविष्टः प्राङ्मुखः कर्ता शान्तात्मा च हुतानलः ॥ १६७ ॥
 होमान्ते यजमानेन कर्तव्यं ग्रहपूजनम् ।
 यो यस्य विहितो होमः सर्वं तस्य नियोजयेत् ॥ १६८ ॥
 अष्टाधिकसहस्रं च शतमष्टाधिकं तथा ।
 अष्टाविंशतिरेव स्युरष्टौ वा समिधोऽर्कजाः ॥ १६९ ॥
 अर्कतृप्त्यै च होतव्याः पृषदाज्येन संयुताः ।
 समिद्भ्यो द्विगुणं प्रोक्तं पृषदाज्यं मनीषिभिः ॥ १७० ॥

ततस्तु त्रिगुणाः प्रोक्तास्तिला यज्ञविशारदैः ।
 तिलेभ्यश्चाक्षतास्तद्वत्समुद्दिष्टाश्चतुर्गुणाः ॥ १७१ ॥
 ॐकारपूर्वमुच्चार्य मन्त्रं तल्लिङ्गकं शुभम् ।
 ध्यात्वा च भास्करं देवं काश्यपिं च कलिङ्गजम् ॥ १७२ ॥
 सप्तम्यां च समुत्पन्नं विशाखर्क्षसमुद्भवम् ।
 वर्णेन क्षत्रियं विद्याद्भगवन्तं विभावसुम् ॥ १७३ ॥
 आहुत्यन्ते समुच्चार्य चतुर्थ्या ग्रहनामकम् ।
 विशेषणं विशेष्यं च ततस्तु जुहुयात्सुधीः ॥ १७४ ॥
 अत्रिगोत्रसमुद्भूतं यमुनातीरवासिनम् ।
 अष्टम्यां कृत्तिकायां च जातं विद्याद्ब्रह्मं विधुम् ॥ १७५ ॥
 वैश्यवर्णसमुद्भूतं दशाश्वं द्विभुजं तथा ।
 देशे मालवके जातं भारद्वाजकुलोद्भवम् ॥ १७६ ॥
 उज्जयिन्यां समुद्भूतं दशमीतिथिसंभवम् ।
 पूर्वाषाढासमुत्पन्नं क्षत्रियं मङ्गलं विदुः ॥ १७७ ॥
 अत्रिगोत्रसमुद्भूतं चन्द्रजं वैश्यवर्णजम् ।
 गिरिव्रजे समुत्पन्नं देशे मगधसंज्ञके ॥ १७८ ॥
 द्वादश्यां च धनिष्ठायां बुधं सर्वज्ञमुत्तमम् ।
 गोत्रे चाऽऽङ्गिरसे जातं सिन्धुदेशसमुद्भवम् ॥ १७९ ॥
 सिन्धुग्रामे समुद्भूतमेकादश्यां विशेषतः ।
 पूर्वफल्गुनिकर्क्षे ब्रह्मवर्णं बृहस्पतिम् ॥ १८० ॥
 देशे भोजकटे जातं विद्याद्गोत्रे भृगुं भृगुम् ।
 नक्षत्रे रेवतीसंज्ञे चतुर्दश्यां समुद्भवम् ॥ १८१ ॥
 वर्णेन ब्राह्मणं श्रेष्ठं दैत्याचार्यं चतुर्भुजम् ।
 कश्यपस्य कुले जातं सूर्यपुत्रं शनैश्वरम् ॥ १८२ ॥
 रेवतिकर्क्षजं ज्ञेयं जातं सौराष्ट्रमण्डले ।
 शूद्रवर्णे समुद्भूतं कृष्णवर्णं चतुर्भुजम् ॥ १८३ ॥
 कमण्डल्वक्षमालाधनुष्पाशान्बिभ्रतं करैः ।
 चतुर्दश्यां समुद्भूतं कृष्णपक्षे विशेषतः ॥ १८४ ॥
 यमरूपं महाघोरं देवदैत्यनमस्कृतम् ।

पैठीनसकुले जातं देशे बर्बरसंज्ञके ॥ १८५ ॥
 पूर्णिमायां भरण्यां च सिंहिकातनयं विदुः ।
 शूद्रवर्णं महारौद्रं देववंशभयप्रदम् ॥ १८६ ॥
 गोत्रेण जैमिनिं जातं मलये पर्वतोत्तमे ।
 अमायां सर्पदैवत्ये शूद्रवर्णं महाबलम् ॥ १८७ ॥
 केतुं विद्यान्महारौद्रं चन्द्रसूर्यभयप्रदम् ।
 येन केन प्रकारेण सुप्रीतं कारयेद्बुधः ॥ १८८ ॥
 गौरं गौरतनुं रक्तं गौरं गौरं सुपीतकम् ।
 कृष्णं कृष्णं च धूम्रं च भास्कारादिग्रहं स्मरेत् ॥ १८९ ॥
 एके वदन्ति केतूनां रूपबाहुल्यमञ्जसा ।
 एक एवास्ति केतुस्तु नानावर्णं वदन्ति तम् ॥ १९० ॥

अथ संकल्पः—

यथासंख्याकेन समित्तिलचर्वाज्यद्रव्यैर्व्याहृतिभिर्ऋग्यजुःसामाथर्वमन्त्रैर्यज-
 मानस्य सपुत्रस्य सकलत्रस्य सान्वयस्य सपशुधनस्य सवृत्तस्य सशीलस्य
 सभृतकस्याऽऽयुरारोग्यसिद्धयर्थमुत्पन्नकेशनिवृत्त्यर्थं सर्वकामफलप्राप्त्यर्थं यत्कृतं
 ग्रहहवनमनेन ग्रहहवनेनाऽऽदित्यादिनवग्रहाः सुप्रसन्ना भवन्तु । अनेन ग्रहप्रसा-
 देन यजमानस्य मनोरथाः सफलाः सन्तु । भूतवर्तमानभविष्यान्निविधाकल्याण-
 विनाशनार्थं लक्ष्मीप्राप्त्यै प्राप्तश्रीपरित्राणार्थं तिथिमुहूर्तकरणलगाधिदेवताप्री-
 त्यर्थं पूर्वाग्नेयदक्षिणनैर्ऋतपश्चिमवायव्यात्तरैशानोर्ध्वाधो यानि कानि च तीर्थानि
 याः काश्चिद्देवतास्तेषां प्रीणनार्थं जम्बूशाकक्रौञ्चकुशशालमलिप्लक्षपुष्करसप्तद्वीपेषु
 प्रसाद्यानि तीर्थानि क्षेत्राणि गङ्गाद्याः सारितः पुण्या नैमिषचम्पकारण्यवदारिका-
 श्रमप्रभृतिपुण्यारण्यानि वाराणसीमुक्तिनगरीश्रीमद्द्वारकाप्रभृतिशैववैष्णवस्था-
 नानि तेषां प्रीणनार्थं सप्त पातालानि मर्यादीकृत्य हाटकेश्वराधोलोकसंस्थितवा-
 सुकिप्रमुखपन्नगकुलप्रीत्यर्थं स्वर्लोकसंस्थितेन्द्रादिदेवतागणगन्धर्वयक्षराक्षस-
 विद्याधरभूतप्रेतपिशाचवेतालाष्टविधदेवयोनिप्रीत्यर्थं मनुष्यलोकसंस्थितसनकस-
 नन्दनादिप्रीत्यर्थं पितृलोकसंस्थितवसुरुद्रादिप्रीणनार्थं [यत्कृतं हवनं तेनै] ते
 होमाधिष्ठातारोऽग्निवायुसूर्यादियज्ञदेवाः प्रीयन्ताम् ।

आचार्यः प्रथमं पूज्यो गजाश्वरथकाञ्चनैः ।

तोषयित्वा महादानैर्नमस्कृत्य क्षमापयेत् ॥ १९१ ॥

ततस्तु ऋत्विजः पूज्या ग्रहमूर्तिप्रदानतः ।
 वस्त्रालंकारदानेन दक्षिणाभिश्च भूरिशः ॥ १९२ ॥
 यस्मै यस्मै नभोगाय येन येन यथाविधि ।
 कृतं स्याद्धवनं तं तं तस्मै तस्मै प्रदापयेत् ॥ १९३ ॥
 ततस्तु ब्राह्मणाः सर्वे सदस्यत्वेन संस्थिताः ।
 तेऽपि पूज्या यथाविद्यं यथाविभवमात्मनः ॥ १९४ ॥
 रवेर्धेनुं विधोः शङ्खमनङ्गाहं कुजस्य च ।
 हेम झस्य गुरोर्वस्त्रं हयं शुक्रे शनेश्च गाम् ॥ १९५ ॥
 अजं राहोर्विदुस्तज्ज्ञाः केतूनामायसं तथा ।
 सितासिते च गावौ स्तो रक्तोऽनङ्गान्प्रकीर्तितः ॥
 पीतं वस्त्रं हयः श्वेतस्तथैवाजः प्रकीर्तितः ॥ १९६ ॥

तथा च पैठीनसिः—

आदित्याय शुभां धेनुं शङ्खं सोमाय दापयेत् ।
 भौमे रक्तमनङ्गाहं सोमपुत्राय काञ्चनम् ॥ १९७ ॥
 गुरवे वस्त्रयुग्मं च हयं श्वेतं भृगोस्तथा ।
 शनैश्चराय कृष्णां गां राहोश्छागं तथैव च ॥
 केतूनामायसं दद्यात्सर्वेषामपि काञ्चनम् । १९८ ॥

तथा च याज्ञवल्क्यः—

धेनुः शङ्खस्तथाऽनङ्गान्हेम वासो हयः क्रमात् ।
 कृष्णा गौरायसं छागो ह्येता वै दक्षिणाः स्मृताः ॥ १९९ ॥
 हयस्य वृषभस्यापि साम्यं सर्वत्र कल्पयेत् ।
 एतन्मुनिमतं श्रेष्ठं दक्षिणायां पृथक्पृथक् ॥ २०० ॥
 आस्तीर्णवाससा सार्धं पट्टतण्डुलसंयुतम् ।
 ब्रह्मणे यज्ञकृद्दद्याद्यथावित्तं च दक्षिणाम् ॥ २०१ ॥
 आचार्यमृत्विजं यस्तु ब्रह्माणमपि ऋत्विजम् ।
 कुर्वन्नैवाऽऽप्नुयात्तस्य यज्ञस्य सकलं फलम् ॥ २०२ ॥
 विप्राभावे प्रकर्तव्यामृत्विजौ तौ मनीषिभिः ।
 सद्भावे न हि कर्तव्यौ फलच्युतिक्षयान्नृभिः ॥ २०३ ॥
 यज्ञकुण्डात्पश्चिमतो ह्यभिषेकं समाचरेत् ।

आदाय रुद्रकलशं द्विजैः सार्धं ततो गुरुः ॥ २०४ ॥
 पञ्चाङ्गरुद्रजाप्येन वशं कुर्यात्सदाशिवम् ।
 ईश्वरो वशगो यस्य तस्य वश्यं जगन्नयम् ॥ २०५ ॥
 उच्चार्य वारुणान्मन्त्राञ्जलमश्वत्थपल्लवैः ।
 उद्धृत्योद्धृत्य संसिञ्चेत्सकलत्रं सपुत्रकम् ॥ २०६ ॥
 आम्रोदुम्बरन्यग्रोधजम्बूदूर्वाः समूलिकाः ।
 सपुष्पाः सकुशाः प्रोक्ता विद्वद्भिरभिषेचने ॥ २०७ ॥
 आपो हि ष्ठेति सूक्तेन मन्त्रैर्वाऽपि त्रिभिस्तथा ।
 पञ्चैन्द्रैर्वारुणैस्तावदिदमापेति वै तथा ॥ २०८ ॥
 समुद्रज्येष्ठामन्त्रैस्तु चतुर्भिरभिषेचयेत् ।
 आप्यायपञ्चनद्येति शिरो मेति च पञ्चभिः ॥ २०९ ॥
 देवस्य त्वात्रिभिः कुर्यादभिषेकं महामतिः ।

तथा पौराणविधिः—

सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः ।
 आयान्तु मम देहस्य दुरितक्षयकारकाः ॥ २१० ॥

इति यजमानः प्रार्थयेत् ।

ततश्च तैर्ब्राह्मणैः पौराणवचनैरभिषेकः कर्तव्यः ।

तथाहि—

शक्रादिदेवताः सर्वा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
 सर्वे त्वामभिषिञ्चन्तु सुरपत्न्योऽमराङ्गनाः ॥ २११ ॥
 नारायणो जगन्नाथो देवः संकर्षणो विभुः ।
 प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च ऋद्धिमिच्छन्तु ते सदा ॥ २१२ ॥
 नारदाद्या ऋषिगणा ये चान्ये च तपोधनाः ।
 भवन्तु यजमानस्य आशीर्वादपरायणाः ॥ २१३ ॥
 इन्द्रो वह्निर्यमश्चैव निर्ऋतिर्वरुणस्तथा ।
 वायुः सोमश्च रुद्राश्च दिक्पालाः पान्तु सर्वदा ॥ २१४ ॥
 वत्सरायनमासाश्च तिथिवाराश्च नाडिकाः ।
 मुहूर्तास्त्वाऽभिषिञ्चन्तु नक्षत्राणां च देवताः ॥ २१५ ॥
 आदित्यश्चन्द्रमा भौमो बुधजीवसितार्कजाः ।
 ग्रहास्त्वाप्तमभिषिञ्चन्तु राहुः केतुश्च तर्पिताः ॥ २१६ ॥

आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गणाः ।
 लोकपालाः प्रयच्छन्तु मङ्गलानि दिने दिने ॥ २१७ ॥
 गन्धर्वाः किंनरा यक्षाः सिद्धा विद्याधरास्तथा ।
 अभिषिञ्चन्तु ते सर्वे नद्यः सागरपर्वताः ॥ २१८ ॥
 वेदशास्त्राणि मीमांसे छन्दास्यागमपञ्चकम् ।
 पुराणानि च सर्वाणि सेतिहासानि सर्वतः ॥ २१९ ॥
 गायत्री चैव सावित्री शवी लक्ष्मीः सरस्वती ।
 मृडानी मातरः सर्वा भवन्तु वरदास्तव ॥ २२० ॥
 यमेवं रुद्रकुम्भेण कर्तारमभिषेचयेत् ।
 सर्वान्कामानवाप्नोति यथावद्ब्रह्मपूजनात् ॥ २२१ ॥
 नोपसर्गा न च ध्याधिर्न च प्रियवियोगिता ।
 न दारिद्र्यं न शोकः स्यात्कृत्वैवं ग्रहपूजनम् ॥ २२२ ॥
 विवाहोत्सवयज्ञादौ राज्यप्राप्तौ महीपतिः ।
 यात्रादौ धनवृद्धौ च कुर्याद्ब्रह्मखं बुधः ॥ २२३ ॥
 वित्तशक्तिर्गृहे नास्ति यदि स्याद्ब्रह्मपीडनम् ।
 दत्तं स्वल्पं हि भावेन प्रसन्नास्ते नव ग्रहाः ॥ २२४ ॥

अन्नहीनो दहेद्राष्ट्रं मन्त्रहीनस्तु ऋत्विजः ।
 यजमानमदक्षिण्यो (अदक्षिणो यजमानं) नास्ति यज्ञसमो रिपुः ॥ २२५ ॥
 वेदशास्त्रपुराणेषु होमाग्निस्त्रिविधः स्मृतः ।
 कोटिलक्षायुता ज्ञेयाः सर्वकर्मसु शोभनाः ॥ २२६ ॥
 कोटिहोमे यदा शक्तिर्लक्षे वाऽप्ययुते तथा ।
 प्रतिवर्षं प्रकर्तव्यं हवनं पुष्टिवर्धनम् ॥ २२७ ॥
 शाखा वाजसनेयी या सर्वसाधारणा मता ।
 तां पुरस्कृत्य मुनिना वसिष्ठेन प्रकाशिता ॥ २२८ ॥
 अध्येतव्या प्रयत्नेन वासिष्ठी शान्तिरुत्तमा ।
 शान्तिकं यः पठेन्नित्यं श्रद्धया यः शृणोति वा ।
 सानकूला ग्रहास्तस्य सर्वकाले भवन्ति हि ॥ २२९ ॥
 यथा समुत्थितं यन्त्रं यत्नेन प्रतिबध्यते ।
 एवं समुत्थितं घोरं सर्वशान्त्या विनश्यति ॥ २३० ॥

यथा बाणप्रहाराणां कवचं वारणं भवेत् ।
 तथा सर्वोपघातानां शान्तिर्भवति वारणम् ॥ २३१ ॥
 बलिं गृह्णन्तु तं देवा आदित्या वसवस्तथा ।
 मरुतश्चाश्विनौ रुद्राः सुपर्णः पन्नगास्तथा ॥ २३२ ॥
 असुरा यातुधानाश्च पिशाचा राक्षसा नगाः ।
 शाकिन्यो यक्षवेताला योगिन्यः पूतना ग्रहाः ॥ २३३ ॥
 जृम्भकाः सिद्धगन्धर्वाः साध्या विद्याधरा नराः ।
 दिक्पाला लोकपालाश्च ये ये विघ्नविनाशकाः ॥ २३४ ॥
 जगतां शान्तिकर्तारो ब्रह्माद्याश्च महर्षयः ।
 मा विघ्नो मा च मे पापं मा सन्तु परिपन्थिनः ॥
 सौम्या भवन्तु सुस्निग्धा भूतप्रेताः सुखावहाः ॥ २३५ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 वसिष्ठोक्तं नवग्रहमखविधानम् ।

अथ सिंहगते सूर्ये गोप्रसवजनितविघ्नहरविधानम् ।

मनुराह—

माघे बुधे च महिषी श्रावणे वडवा दिवा ।
 सिंहे गावः प्रसूयन्ते स्वामिनो मरणं भ्रुवम् ॥ १ ॥
 विधानं तत्र कर्तव्यं नरेण हितमिच्छता ।
 सौरैः सूक्तैः प्रकर्तव्यो होमः सूर्यस्य तुष्टये ॥ २ ॥
 प्रधानं तिलसर्पीषि पायसं शर्करायुतम् ।
 सहस्रं हवनं प्रोक्तं दानान्यष्टौ यथाविधि ॥ ३ ॥
 सहस्रकिरणप्रीत्यै कर्तव्यानि च धीमता ।
 एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ॥ ४ ॥

इदमेव माघे बुधे महिषीप्रसवे श्रावणे दिवा वडवाप्रसवे च विधानं बोध्यम् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां सिंहगते सूर्ये
 गोप्रसवजनितविघ्नहरविधानम् ।

अथानवरतस्वेदनयनस्रुतिकाकमैथुनदर्शनजनित-
विघ्नहरं विधानम् ।

यदि स्युर्विषमे स्थाने मनुष्याणां नभश्चराः ।
शान्तिकं च न कुर्वन्ति न भजन्ति सुरान्द्विजान् ॥ १ ॥
ये ये विघ्नाः प्रजायन्ते तेषां ताञ्छृणु पार्वति ।
दक्षिणं नयनं तेषां स्रवति द्रवते * सदा ॥ २ ॥
निमित्तेभ्य ऋते काकमैथुनं यस्तु पश्यति ।
प्रकृतिर्विकृतिं याति पण्मासान्निधनं भवेत् ॥ ३ ॥
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि सर्वप्राणिहितां शुभाम् ।
वैश्वानरीं शुभां देवि देवानामपि दुर्लभाम् ॥ ४ ॥
दृष्ट्वा काकरतं धीमान्विदध्याच्छान्तिकं तदा ।
स्नात्वा तैलेन शुद्धेन वाणिणोष्णेन संगवे ॥ ५ ॥
+ प्रारभेद्धवनं धीमान्वैश्वानरसुतोपकृत् ।
अयुतं वा सहस्रं वा अग्निमीळ इति स्मरेत् ॥ ६ ॥

स्मरेदिति ऋचं जपेत् ।

जुहुयात्तद्वशांशेन पायसेन ससर्पिषा ।
अग्निमीळ इत्यग्नेर्वा लक्षजाप्यं समाचरेत् ॥ ७ ॥
व्याहृतीनां सहस्राणि जुहुयात्पञ्चविंशतिम् ।
होमान्ते महिषीं दद्याद्ब्राह्मणाय सदक्षिणाम् ॥ ८ ॥
तरुणीं रूपसंपन्नां भूरिक्षीरां सुशोभनाम् ।
सवत्सकां यमप्रीत्यै ह्यकालमरणापहाम् ॥ ९ ॥
दत्त्वा तां महिषीं धीमान्ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ।
य एवं कुर्वते देवि विधानं विधिसत्तमाः ॥ १० ॥
तेषां प्रीतोऽनलो देवो हुतः सम्यञ्जनीपिभिः ।
यमस्तु महिषीदानाद्ददाति विपुलं सुखम् ॥ ११ ॥
नारीणां वा नराणां वा दक्षिणं नयनं स्रवेत् ।
विना निदानमर्याणि पण्मासात्तन्मृतिप्रदम् ॥ १२ ॥

* आर्षत्वाद्व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् । + आर्षत्वाद्व्यत्ययेन परस्मैपदं ब्राह्मि मामिति वत् ।

तथैव विग्रहे खेदं विना घर्मः प्रजायते ।
 सोऽपि चेत्सततं नृणामादिशेत्पूर्ववत्फलम् ॥
 तद्विघ्नशमनायाऽऽशु विधानं पूर्ववत्स्मृतम् ॥ १३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायामनवरतस्वेद-
 नयनस्रुतिकाकमैथुनदर्शनजनितविघ्नहरविधानम् ।

अथ काकश्येनादिदुष्टपक्षिस्पृष्ट्यादिजनितविघ्नहरं विधानम् ।

काकश्येनकपोतगृध्रबलाकादिदुष्टपक्षिगणे यः कोऽपि यदा मनुष्यस्य जीवतो
 विग्रहे विलीनो भवति निविष्टो वा भवति तदा तस्य नरस्य नार्या वा षण्मा-
 साभ्यन्तरेण मरणं विनिर्दिशेत् । तेषां मध्ये गृध्रस्तु मासमात्रेण मरणं सूचयति ।
 श्येनस्तु तात्कालिकं मरणं सूचयति । कपोतो दीर्घव्याधिं न तु मरणम् ।
 बलाकः प्रतिष्ठाहानिं करोति । काकस्तु संततिविच्छित्तिं ददाति । एतद्भारते
 विस्तरेण दर्शितम् ।

तत्र शान्तिविधानम्—

गङ्गाजले कृतस्नानो द्विजानाहूय सत्वरः ।
 कृतस्वस्त्ययनो धीमाञ्जपेन्मृत्युंजयं ततः ॥ १ ॥
 शिवालये महास्थाने प्रदीपं दीपयेत्सुधीः ।
 घृतेन तिलतैलेन कौसुम्भेनाथ वा पुनः ॥ २ ॥
 प्रदक्षिणानमस्कारान्प्रकुर्याच्छक्तितस्त्रयहम् ।
 पिप्पलं पूजयेद्धीमान्मूलतस्त्विमन्त्रतः ॥ ३ ॥
 अष्टोत्तरशतं (न) वारान्म (रं म) न्दे कुर्यात्प्रदक्षिणाः ।
 तथा गोगोष्ठमध्यस्थः स्पृशेद्गाः पृष्ठमागतः ॥ ४ ॥
 यथाशक्ति तिलान्दद्याद्वाह्मणाय कुटुम्बिने ।
 नमो रुद्राय भीमाय नीलकण्ठाय वेधसे ॥ ५ ॥
 कपर्दिने सुरेशाय व्योमकेशाय वै नमः ।
 इत्यादिस्तोत्रमालास्तु जपन्नेव दिनत्रयम् ॥ ६ ॥
 शयीत शिवसांनिध्ये शिवध्यानपरायणः ।
 चतुर्थे दिवसे प्राप्ते भोजयेच्छक्तितो द्विजान् ॥ ७ ॥

काकादिमूर्तयः कार्या गौरसर्षपपिष्टतः ।

छेत्तव्याः कण्ठतः साज्या होतव्या यमतुष्टये ॥ ८ ॥

यमाय सोममित्याद्यैर्मन्त्रैश्च यमदैवते ।

एवं कृते विधाने च दुष्पक्षिस्पृष्टिभावितः ॥

विघ्नो नश्यति मर्त्यस्य सम्यगेतन्निबोधत ॥ ९ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां काकश्येनादिदुष्ट-
पक्षिस्पृष्ट्यादिजनितविघ्नहरं विधानम् ।

अथ जन्ममासादिपूजाविधानम् ।

निषिद्धं यत्र मासे यत्कर्म पुंसां मनीषिभिः ।

तन्मास एव कर्तव्यं मासाधीशस्य पूजनम् ॥ १ ॥

तस्य देवस्य कर्तव्या मूर्तिः स्वर्णमयी शुभा ।

निष्केण वा तदर्धेन तस्याप्यर्धेन वा पुनः ॥ २ ॥

ध्यानयुक्तां दृढां श्रेष्ठां निजवाहनशालिनीम् ।

तल्लिङ्गेनैव मन्त्रेण पूजयेत्प्रयतः पुमान् ॥ ३ ॥

सप्तर्षिमते—

गणेशप्रमुखा देवा दुर्गाद्या मासदेवताः ।

पूज्यास्तल्लिङ्गकैर्मन्त्रैर्योजयेच्च विशेषतः ॥

सप्तधान्यमये राशौ स्थापयेत्पट्टमुत्तमम् ॥ ४ ॥

उत्तममिति श्रीपर्णीदेवकाष्ठादिजं तैजसं वा । सप्त धान्यान्याह—

यवाः प्रियंगवो माषा आढक्यश्चणकास्तिलाः ।

व्रीहयश्च समुद्दिष्टं धान्यानां सप्तकं बुधैः ॥ ५ ॥

पट्टस्योपरि विन्यस्य वस्त्रमच्छिन्नमुत्तमम् ।

तस्योपरि न्यसेन्मूर्तिं शालितण्डुलपङ्कजाम् ॥ ६ ॥

वस्त्रेणान्येन तां मूर्तिं समन्तात्परिधापयेत् ।

पूजयेत्कालजैः पुष्पैर्दशाङ्गेनैव धूपयेत् ॥ ७ ॥

चन्दनेनानुलिप्ताङ्गीं दीपैर्नीराजयेत्ततः ।

ततस्तु हवनं कार्यं कृत्वा चाग्निमुखं बुधैः ॥ ८ ॥

प्रधानं पायसं तत्र शतमष्टोत्तरं भवेत् ।
 व्याहृतीः कारयेद्विद्वान्यथासंख्यं यथावसु ॥ ९ ॥
 तल्लिङ्गेनैव मन्त्रेण प्रधानं जुहुयाद्बुधः ।
 होमान्ते विधिवत्पूजां तन्मूर्तेः कारयेत्सुधीः ॥ १० ॥
 प्रतिपाद्य ततः श्रेयो होमकर्त्रे यथाविधि ।
 अभिषेकं ततः कुर्यादाचार्यः कर्तुरञ्जसा ॥ ११ ॥
 शान्तिपाठं पठेयुस्ते ये सदस्या द्विजोत्तमाः ।
 आचार्याय ततो दद्याद्दामेकां लक्षणान्विताम् ॥ १२ ॥
 अन्येभ्यो विप्रवर्येभ्यः प्रदद्याद्भूरिदक्षिणाम् ।
 ततस्तु भोजयेच्छक्त्या साधुवाचा क्षमापयेत् ॥ १३ ॥

अत्र मासशब्दो जन्ममासवाचको ज्ञेयः । न तु पौषाषाढौ निषिद्धत्वेन स्मर्तव्यौ ।

जन्ममासे जन्मतिथौ जन्मर्क्षे जन्मलग्नके ।
 विधानं तु प्रयोक्तव्यं विदुषा शान्तिमिच्छता ॥ १४ ॥
 विवाहे व्रतबन्धे च जन्ममासादि वर्जयेत् ।
 एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ॥ १५ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां जन्ममासादि-
पूजाविधानम् ।

अथ मातङ्गिनीपूजाविधानम् ।

भैरव उवाच—

शृणु देवि महागुह्यं मातङ्गिन्याः समुद्भवम् ।
 सुधार्णवे शयानं तं हरिं परमदैवतम् ॥ १ ॥
 रमादेवीसमायुक्तं पुरुषं शेषशायिनम् ।
 तत्र गत्वा महात्मानायुभौ नारदतुम्बुरु ॥ २ ॥
 कृताञ्जलिपूटौ भूत्वा परमेशमपृच्छताम् ।
 नारायण महादेव गीतज्ञानं वद प्रभो ॥ ३ ॥

श्रीनारायण उवाच—

समयेऽस्मिन्मुनी प्राप्तो ह्यहं शंकरपर्वतम् ।
 दृष्टस्तत्र महादेव उमया सहितो मया ॥ ४ ॥
 जयशब्दैरनेकैस्तु प्रोक्तो देवो मया मुनी ।
 रेभे मां शंकरो गौरी रेभे लक्ष्मीं पतिवराम् ॥ ५ ॥
 विचित्रे आसने दत्ते उभयोर्मानपूर्वकम् ।
 आवाभ्यामुपविष्टाभ्यां दृष्टं चित्रमलौकिकम् ॥ ६ ॥
 अन्नराशिर्महादिव्यो नानाव्यञ्जनसंयुतः ।
 मनोहरो महास्वादो विविधास्वादनैर्युतः ॥ ७ ॥
 जा(या)तो दृष्टिपथं राशिरावयोश्चित्रकारिणोः ।
 सामरस्यं तदा जातं भोक्तुमुच्छिष्टमावयोः ॥ ८ ॥
 देवदेव्योस्तदोच्छिष्टमावाभ्यां भक्षितं मुनी ।
 उच्छिष्टं देहे देहीति प्रोक्तः शंभुः सुरेश्वरी ॥ ९ ॥
 दत्तमात्रे तदोच्छिष्टे कुमारी सर्वलक्षणा ।
 आवाभ्यां च समुत्पन्ना दिव्यरूपा कृशोदरी ॥ १० ॥
 साऽप्युवाच शिवं गौरीमुच्छिष्टं * काङ्क्षये हि वाम् ।
 उभाभ्यां दत्तमुच्छिष्टं तस्यै सप्तस्वरैर्युतम् ॥ ११ ॥
 चतुर्विधैश्च वादित्रैः सहितं प्रीतिपूर्वकम् ।
 ऊचतुश्च ततः कन्यां प्रीतिपूर्वं मुहुर्मुहुः ॥ १२ ॥

देवदेव्या ऊचतुः—

त्वां यजन्ति च ये कन्ये जपहोमार्चनादिभिः ।
 तेषां कर्माणि सिध्यन्ति वश्यादीनि न संशयः ॥ १३ ॥
 तदाप्रभृति लोकेषु ख्यातोच्छिष्टा परेश्वरी ।
 अनेकगुणसंयुक्ता साधकानां वरप्रदा ॥ १४ ॥
 गायनं नर्तनं वाद्यं गन्धर्वाणां ददौ शिवा ।
 ननाम तानि संगीते दर्शितानीह नारद ॥ १५ ॥
 तदाप्रभृति नाम्ना सा जातोच्छिष्टा कुमारिका ।
 मातङ्गिनीति विख्याता कल्पितार्थप्रदा नृणाम् ॥ १६ ॥

* काङ्क्षये इति काक्षि काङ्क्षायामिति धातो रामो राज्यनचीकरदितिवत्स्वार्थगिच्चा निर्वाहम् ।

विष्णोस्तु वचनं श्रुत्वा गतौ नारदतुम्बुरु ।
 आर्यादिमातृभिर्युक्तं गिरिं दृष्ट्वा तु सुन्दरम् ॥ १७ ॥
 शुद्धस्फटिकसंकाशं शृङ्गैर्व्याप्तदिगन्तरम् ।
 संपूर्णचन्द्रसदृशं पीयूषकरसंनिभम् ॥ १८ ॥
 दृष्ट्वा शिवगिरिं विप्रौ परं हर्षमवापतुः ।
 ऊचतुश्च गिरीशस्य वर्णनं तौ विचक्षणौ ॥ १९ ॥

नारदतुम्बुरु ऊचतुः—

जय क्षोणीधर श्रीमञ्जुशैलराज महागिरे ।
 त्वद्दर्शनाद्गतं पापमावयोर्निर्गतं तमः ॥ २० ॥
 इति स्तुत्वा गिरिं तौ तु प्रणम्य च गणेश्वरम् ।
 कैलासशिखरासीनं देवदेवं जगद्गुरुम् ॥ २१ ॥
 युक्तं स्कन्देन देवेन सेनेशेन दिवौकसाम् ।
 तौ मुनी तौ समाविष्टौ पप्रच्छतुरुमासुतौ ॥ २२ ॥
 कल्पमुच्छिष्टफन्याया मातङ्गिन्या महामती ।
 ऊचतुश्च ततो देवौ कल्पं प्रति मुनीश्वरौ ॥ २३ ॥
 शृणुतं विप्रवर्यौ तं कल्पमत्यन्तसुन्दरम् ।
 यस्य विज्ञानतः सर्वो भाग्ययुक्तो भवत्यलम् ॥ २४ ॥
 अर्चनं साधनं ध्यानं विनियोगं च सुव्रतौ ।
 उच्छिष्टं तु पदं पूर्वं चाण्डाल्याः शृणुतं शुभम् ॥ २५ ॥
 मातङ्गिनीपदं चान्ते ये स्मरन्ति मनीषिणः ।
 सर्ववशंकरी स्वाहा मन्त्रराजमनुत्तमम् ॥ २६ ॥
 ते यान्ति परमं स्थानं दुःखशोकविवर्जितम् ।
 बालात्रिबीजमाद्यं च मायाबीजेन संयुतम् ॥
 इमं मन्त्रं महागुह्यमावाभ्यां प्रकटीकृतम् ॥ २७ ॥
 दुग्धेऽग्निलोकानैलवर्णयुक्तं न्यासोऽङ्गपट्टके विहितः सुविद्यैः ।
 सकृत्कृते न्यासवरे शरीरे सिध्यन्ति कर्माणि च साधकानाम् ॥ २८ ॥
 उच्छिष्टेन बलिं दद्याद्रात्रौ रात्रौ च साधकः ।
 चतुर्दशप्रकारेण बलिं दद्यात्प्रयत्नतः ॥ २९ ॥

ध्येया सुनीलपद्माभा शङ्खकुण्डलधारिणी ।
 चतुर्भुजा चैकवक्त्रा वीणापाशाङ्कुशाभया ॥ ३० ॥
 मुक्ताप्रवालमालाभिर्भूषिताङ्गी समस्वरा ।
 कृष्णांशुका महानीलमयूखाभा शुचिस्मिता ॥ ३१ ॥
 कर्पूरागरुधूपेन धूपितार्द्रकचा शिवा ।
 सर्वलक्षणसंयुक्ता पुष्पमालोपशोभिता ॥ ३२ ॥
 भावयुक्तस्य भक्तस्य भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी ।
 त्रिकोणं पञ्चकोणाष्टदलं षोडशपत्रकम् ॥ ३३ ॥
 चतुरस्रं चतुर्द्वारं वृत्तं व्यायामसंयुतम् ।
 सौवर्णे राजते ताम्रे वाऽथ भूर्जस्य पत्रके ॥ ३४ ॥
 पटे वाऽप्यालिखेद्यन्त्रं समरेखं मनोहरम् ।
 चन्द्रचन्दनकस्तूरीरोचनागरुकुङ्कुमैः ॥ ३५ ॥
 लिखेद्यन्त्रं च देवस्य सृष्टिमागसुखावहम् ।
 ततं च विततं चैव घनं सुषिरमेव च ॥ ३६ ॥
 चतुर्द्वारेषु वाद्यानि पूजयेत्पूर्वतः क्रमात् ।
 बटुकं च गणेशं च क्षेत्रपालं च योगिनीम् ॥ ३७ ॥
 आग्नेयादिषु कोणेषु पूजयेत्साधकः सुधीः ।
 पादुकां भावनां चैव प्रथमं पूजयेत्सुधीः ॥ ३८ ॥
 उर्वशीं मेनकां रम्भां घृतार्चीं पुञ्जकस्थलाम् ।
 सुकेशीं मञ्जुघोषां च महारङ्गवतीं तथा ॥ ३९ ॥
 यक्षगन्धर्वसिद्धांश्च किन्नरान्गुह्यकांस्तथा ।
 विद्याधरान्पन्नगांश्च तेषां रामा मनोहराः ॥
 षोडशारे महापद्मे पूजयेत्तान्यथाविधि ॥ ४० ॥

अत्र पिशाचा अनुपङ्गेण ज्ञातव्याः । एवं षोडश देवयोनिशक्तयः ।

पूर्वे च कामघाणं तु कन्यायाश्च नमोन्तकम् ।
 पूजयित्वा क्रमं सर्वमनेन विधिना तदा ॥ ४१ ॥
 अणिमा महिमा चैव लघिमा गरिमा तथा ।
 प्राकाम्यं वशिनाऽदृश्यं (तेशित्वं) पादुका घु(गु)टिका तथा ॥ ४२ ॥

अञ्जनाख्या च सिध्यन्ति पूजितास्त्वष्ट्रपत्रके ।
 अग्रतोऽष्टदले पूज्याः सिद्धयः सिद्धिकाङ्क्षिणा ॥ ४३ ॥
 ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी तथा ।
 वाराही चैव कौबेरी तथा चैन्द्री च चण्डिका ॥ ४४ ॥
 इत्यष्टदलस्य च शक्तीः संपूजयेत्सुधीः ।
 उन्मादनं रोचनं च ततः संमोहनं शरम् ॥ ४५ ॥
 जारणं मारणं बाणान्पञ्चकोणेषु विन्यसेत् ।
 इच्छा क्रिया ज्ञानशक्तिः पूजितव्यास्त्रिकोणके ॥ ४६ ॥
 रतिः प्रीतिर्भनोभावा त्रिवृत्त्या पूजिताः शुभाः ।
 रागाः श्रीरागमुख्यास्तु निषादाद्यास्तथा स्वराः ॥ ४७ ॥
 रागिण्यश्च लयास्ताला देव्याः पश्चिमतोऽर्चयेत् ।
 गन्धपुष्पादिनैवेद्यैर्यथाविभवविस्तरैः ॥ ४८ ॥
 कुलाचारक्रमात्पूज्या गुरुभक्तिपरायणैः ।
 मौनेनात्र ध्रुवं पूज्या कुमारी सा परेश्वरी ॥ ४९ ॥
 एवं सा पूजिता भक्त्या सर्वकामप्रदा भवेत् ।
 ग्लुं गुं प्लुमिति रत्नानां त्रयेण स्याच्च पूजनम् ॥ ५० ॥

इति पूजनम् ।

काम्यकर्मा(र्म)णि वक्ष्यामि सर्वसिद्धिप्रदानि च (दे तथा) ।
 कुण्डे वा स्थण्डिले वाऽपि विधिहोमः प्रशस्यते ॥ ५१ ॥
 वक्ष्याकर्षणकामार्थे योनिकुण्डे विधीयते ।
 अग्निवक्त्रं ततः कृत्वा यथोक्तविधिना द्विजः ॥ ५२ ॥
 देवीमावाह्य विधिवत्साध्यानां तु कुमारिकाम् ।
 संपूज्य होमयेत्पश्चाद्रक्ताम्बरवृतां शिवाम् ॥ ५३ ॥
 रक्ताक्षतां रक्तमालां रक्तचन्दनचर्चिताम् ।
 रक्ताश्वमारकुसुमैर्गुग्गुलैश्च घृतप्लुतैः ॥ ५४ ॥
 होमयेद्युतं येन राजा वश्यः समौलिकः ।
 मल्लिकार्जुनातिपुंनार्गैर्होमयेद्भाग्यकामुकः ॥ ५५ ॥
 राज्याधीनं बिल्वपत्रैश्च तथोत्पलसमन्वितैः ।
 श्रीकामः श्वेतपुष्पैश्च चम्पकैर्वाऽपि नारद ॥ ५६ ॥

उत्पलैर्भोगकामार्थी केवलैर्होमयेत्सुधीः ।
 लक्ष्मीपुष्पैस्तथा विद्वान्होमयेद्भोगकामुकः ॥ ५७ ॥
 बकुलैश्च जपापुष्पैः किंशुकैर्बन्धुजीवकैः ।
 सर्ववश्यविधौ विद्वान्होमयेत्प्रयतः शुचिः ॥ ५८ ॥
 आकर्षणपरो विद्वान्मध्वक्तैर्मधुभिर्यजेत् ।
 वाञ्छुलैः पुष्टिकामस्तु गुडूचीभिर्ज्वर्गातिहृत् ॥ ५९ ॥
 आयुष्कामो हि दूर्वाभिर्धनार्थी स्वर्णपुष्पकैः ।
 स्त्रीवश्यार्थी तिलैः साज्जैर्लवणेन समन्वितैः ॥ ६० ॥
 कदम्बकुसुमैर्हुत्वा सर्ववश्यकरो भवेत् ।
 रोचनाकुङ्कुमैर्हुत्वा स्त्रीवश्यं लभते नरः ॥ ६१ ॥
 अन्नार्थी अन्नहोमेन वित्तार्थी शालितण्डुलैः ।
 मधुत्रितयहोमेन सर्ववश्यकरो भवेत् ॥ ६२ ॥
 नन्द्यावर्तैर्यजेद्यस्तु स वाग्विभवमात्रजेत् ।
 लक्ष्म्यार्थी कर्णिकारैस्तु तेजोर्थां किंशुकैर्यजेत् ॥ ६३ ॥
 कपिलाघृतेन वित्तार्थी पुत्रार्थी तत्पयो यजेत् ।
 द्विषामुन्मादकरणे धूस्तूरैर्जुहुयात्सुधीः ॥ ६४ ॥
 विपवल्लीदलैर्निम्बदलैर्निर्गुण्डिकादलैः ।
 दलैः श्लेष्मान्तकस्यापि विभीतकतरोस्तथा ॥ ६५ ॥
 औलूकैर्गृध्रपत्रैश्च तैलाक्तैश्च विशेषतः ।
 नवकोणे तथा कुण्डे वैरिनाशाय होमयेत् ॥ ६६ ॥
 दक्षिणाभिमुखो भूत्वा नग्नो दृष्टिं निमीलयेत् ।
 परोच्चाटनकृद्विद्वान्वायव्याशामुखो भवेत् ॥ ६७ ॥
 तेषां जारणकृच्चैव नैर्ऋत्यभिमुखो भवेत् ।
 मारणार्थी तु द्विषतां वह्निकाष्ठामुखो भवेत् ॥ ६८ ॥
 शान्तिके प्राङ्मुखो भूत्वा स्तम्भने पश्चिमामुखः ।
 उत्तराभिमुखो भूत्वा सर्वकर्माणि कारयेत् ॥ ६९ ॥
 मङ्गलं पौष्टिकं कर्म पूर्वाशास्यः प्रसाधयेत् ।
 आरोग्यार्थी सुखार्थी च सौम्याशाभिमुखो यजेत् ॥ ७० ॥

सगुडं पायसं चैव इक्षुंश्चैव विशेषतः ।
 हुत्वा जयति वित्तार्थी सर्वाणि च न संशयः ॥ ७१ ॥
 अपस्मारविनाशाय पायसं सघृतं यजेत् ।
 मरीचानि सतैलानि कासश्वासातिनाशने ॥ ७२ ॥
 जुहुयात्प्रयतो भूत्वा पूर्वाशास्यस्तु मन्त्रवित् ।
 निर्गुण्डीमूलहोमेन वायुं शमयतेऽञ्जसा ॥ ७३ ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि जीवस्याऽऽकर्षणं परम् ।
 आकृष्ट(ति)श्रितयं कृत्वा जीवन्त्यासं च कारयेत् ॥ ७४ ॥
 कुलालमृत्तिकारूपं मधूच्छिष्टेन वै परम् ।
 अपरं लवणेनैव रूपत्रयमुदाहृतम् ॥ ७५ ॥
 यं यं कामयते कामं तं तं सुखमवाप्नुयात् ।
 स्व(सु)रूपं विन्यसेत्कुण्डं सप्ताङ्गुलमधस्ततः ॥ ७६ ॥
 लवणं मेखलायां तु मधूच्छिष्टं तु पूर्वतः ।
 मृन्मयं दक्षिणे कुण्डाद्योज्यं रूपत्रयं बुधैः ॥ ७७ ॥
 वैरिणां विजये विद्राहलवणं होमयेत्सुधीः ।
 श्रीकामो वा तच्चा कुर्याद्धवनं बुद्धिमत्तरः ॥ ७८ ॥
 लवणं मधुनाऽक्तं च रूपं कृत्वा यथाविधि ।
 आरभ्य दक्षिणाद्दृष्ट्वेवामपादावसानकम् ॥ ७९ ॥
 पुरुषाणामयं होमः स्त्रीणां चैव विपर्ययात् ।
 सप्तरात्रान्महादेवि लभते मदनातुरा ॥ ८० ॥
 तिष्ठते बन्धकीभावे कन्यासिद्धिरियं स्मृता ।
 लवणं तैलसंयुक्तं निम्बपत्रैः समन्वितम् ॥ ८१ ॥
 आशु सिद्धिकरं बह्वै हृतं शत्रुविनाशकृत् ।
 हरिद्राचूर्णमिश्रं तु लवणं स्तम्भकारकम् ॥ ८२ ॥
 यच्च सम्यक्परं वस्तु तेन तेन च होमयेत् ।
 पूर्वाह्णे पूर्वरात्रे च सिद्धयर्थं च जपेद्बुधः ॥ ८३ ॥
 मातङ्गिनी तु मध्याह्णे मध्यरात्रेऽथ वा पुनः ।
 कुर्यादुच्चाटनं शत्रोर्लक्षजाप्यान्न संशयः ॥ ८४ ॥
 मुख्यत्वात्तु जपेत्लक्षं दशांशं होममाचरेत् ।
 मान्त्रिकस्य भवेत्सिद्धिः सिद्धो मन्त्रो भवेदिह ॥ ८५ ॥

कन्यापूजा च कर्तव्या गन्धपुष्पाब्जसंपदा ।
 आर्याष्टकं जपेद्यस्तु कुमारीतृप्तिहेतवे ॥ ८६ ॥
 मातङ्गिनीप्रसादेन सिद्धो भवति भूतले ।
 यद्यत्साधयते कर्म तत्तत्प्राप्नोत्यसंशयम् ॥ ८७ ॥
 योगिन्यष्टकमेवाऽऽशु पूजयेच्छ्रद्धयाऽन्वितः ।
 ततः स्वयं च भुञ्जीत चैकीकृत्य रसोच्चयम् ॥ ८८ ॥
 मद्यमांसादिनैवेद्यैस्तर्पयेत्परमेश्वरीम् ।
 बलिं निवेदयेत्पश्चान्मातङ्गिन्यै वरानने ॥ ८९ ॥
 नमो भगवति श्रीशे मातङ्गिन्यै नमोऽस्तु ते ।
 नमोऽस्तु जगतां धात्र्यै कुमार्यै ते नमो नमः ॥ ९० ॥
 इति स्तुत्वा महादेवीं महादेवस्य बल्लभाम् ।
 मातङ्गिनीप्रसादेन ह्यङ्गनावलभो भवेत् ॥ ९१ ॥
 इमं बलिं प्रगृहीष्व स्वाहेति प्रयतः पुमान् ।
 मन्त्रमुच्चारयेद्यस्तु सर्वत्र विजयी भवेत् ॥ ९२ ॥
 मातङ्गिनीमहामन्त्रं त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् ।
 सुखोपायेन वश्यं तु प्रोक्तं तव वरानने ॥ ९३ ॥
 त्रिपुरा भैरवी सिद्धिस्तथा त्रिपुरसुन्दरी ।
 राजलक्ष्मीर्महालक्ष्मीस्तथैव भुवनेश्वरी ॥ ९४ ॥
 मातङ्गिनी महामारी बाला च श्यामला तथा ।
 एताः सिंहासनस्थाः स्युर्विद्या इति विदो विदुः ॥ ९५ ॥
 एतासां स्मरणं यस्य मन्त्रपूर्वं दिने दिने ।
 स राजसु भवेन्मान्यो नात्र कार्या विचारणा ॥ ९६ ॥
 एवं तु कथितं भद्रे नारदस्य च धीमतः ।
 मया कारुण्यमनसा तेनासौ सुभगो मुनिः ॥ ९७ ॥
 किं स्याद्यज्ञैः फलं नृणां सहस्रशतदक्षिणैः ।
 यदि मातङ्गिनीकल्पो हृदये परिवर्तते ॥ ९८ ॥

इदं रहस्यं परमं कथनीयं न कस्यचित् ।

भोगमोक्षप्रदं नृणां नात्र कार्या विचारणा ॥ ९९ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां मत्स्यसंहितोक्तं
मातङ्गिनीपूजाविधानम् ।

अथोदकी(क्या)सूतकी(तिका)शुद्धिविधानम् ।

उदकी (क्या) सूतकी (तिका) चैव पीडयमाना ज्वरादिभिः ।

स्नानेऽक्षमा तदा काया स्पृष्ट्वा स्पृष्ट्वा शतप्लुतिः ॥ १ ॥

तथा च वसिष्ठस्मृतौ—

ज्वरार्तिपीडिता नारी सूतकी च तथोदकी (रि उदक्या सूतिका तथा) ।

स्पृष्ट्वा स्पृष्ट्वा शतस्नानैः शुद्धा परकृतैर्भवेत् ॥ २ ॥

शतं भागाः शरीरस्य केशाग्रात्परिकल्पिताः ।

पादाङ्गुल्यवधि प्राज्ञैर्मन्त्रैर्वारुणसंज्ञकैः ॥ ३ ॥

तथा हि—

१ केशाग्रं २ केशमध्यं च ३ केशमूलं च ४ मस्तकम् ।

५ ललाटं ६ भ्रूलते ७ कर्णौ ८ नेत्रे ९ नासापुटे तथा ॥ ४ ॥

ओष्ठौ १० दन्ताश्च ११ चिबुकं १२ रसनाद्वय १३ मेव च ।

कण्ठस्तु १४ स्कन्धयुग्मं १५ च बाहुयुग्मं १६ तथैव च ॥ ५ ॥

कूर्परौ १७ च कराग्रे १८ च तथा वक्षः १९ स्तनद्वयम् ।

२० स्तनयोर्मध्यभागश्च २१ कुक्षिद्वय २२ मतः परम् ॥ ६ ॥

उदरं २३ नाभिदेशस्तु २४ तथा पृष्ठं २५ कटि २६ स्तथा ।

जघनं २७ योनिभाग २८ स्तु ऊरू २९ जानू ३० च सक्थिनी ३१ ॥ ७ ॥

जङ्घे च ३२ गुल्फदेशश्च ३३ पादाङ्गुल्यो ३४ नखानि ३५ च ।

त्रिः कृत्वा संस्पृशेद्विद्वानेकैकं शुद्धिहेतवे ॥ ८ ॥

प्राजापत्यान्पञ्चदश दद्यात्तच्छुद्धिहेतवे !

ततोऽभिषेचयेन्नारीं गृहीतान्यांशुकां बुधैः ॥

ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चान्स्मरेद्विषवचो महत् ॥ ९ ॥

तथा हि—

सोमः शौचं ददावासां गन्धर्वश्च शुभां गिरम् ।

पावकः सर्वमेध्यत्वं मेध्या वै योपितो ह्यतः ॥ १० ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां वसिष्ठस्मृत्युक्तमुदकी-
(कया)सूतकी(र्तिका)शुद्धिविधानम् ।

— — — —

अथ विरजयात्राविधानम् ।

आदित्यपुराणे सूर्य उवाच—

यस्य नास्ति सुतः पुंसो यस्तु पेशाच्यसंयुतः ।

महाग्रहैर्गृहीतात्मा स गच्छेद्विरजं प्रति ॥ १ ॥

तत्र यात्रानियमः —

गन्तव्यं श्वोदिने येन यात्रायै विरजस्य वै ।

आद्ये तु दिवसे तेन भोजनीया द्विजोत्तमाः ॥ २ ॥

लक्ष्मीनारायणप्रीत्यै स्त्रीभिः सार्धं महामते ।

पश्चाशन्मिथुनान्येव शक्त्या वाऽपि समाहितः ॥ ३ ॥

वस्त्रैस्तु दक्षिणादानैर्यथाविभवमात्मनः ।

निष्पाद्य विधिवद्भक्त्या गृहे भोज्यविधिं सुधीः ॥ ४ ॥

भुञ्जीत च स्वयं पश्चात्ततस्तस्य कुटुम्बिनी ।

समाप्य विधिवत्सांध्यं विधिं सायंतनं सुधीः ॥ ५ ॥

भूमिशय्यां समासाद्य स्त्रिया सार्धं महामते ।

नियमं ब्रह्मचर्यस्य गृहीत्वा दृढमानसः ॥ ६ ॥

प्रातःकाले समुत्थाय दन्तधावनपूर्वकम् ।

प्रातर्विधिं समाप्यैव निर्गच्छेद्विरजं प्रति ॥ ७ ॥

तत्र यात्रानिर्गममन्त्रः—

अद्यप्रभृति यात्रायै गृहीतनियमः स्वयम् ।

दर्शनेच्छुरहं मातः कमले तव पादयोः ॥ ८ ॥

इति कृत्वा विधिं सम्यक्स्वस्तिवाच्य द्विजोत्तमैः ।

हृष्टपुष्टमना वत्स निर्गच्छेत्सुखसिद्धये ॥ ९ ॥

यो येन वर्त्मना याति विरजं तीर्थमुत्तमम् ।

तत्र वर्त्मनि या नद्यो गोदाद्याः सागराम्बुगाः ॥ १० ॥

तास्तु वक्ष्यन्ते—

गौतमी तपती रेवा कृष्णा भीमरथी तथा ।

वर्त्मगा खलु साधूनां नृणां विरजयायिनाम् ॥ ११ ॥

मा(या)त्रा स्नानं प्रकर्तव्यं हेमश्राद्धं यथाविधि ।

विरजं प्राप्य सदृत्तं प्रणिपत्य मुहुर्मुहुः ॥ १२ ॥

दृष्ट्वा गङ्गात्रयं स्नानं पुण्यं कुर्यादतन्द्रितः ।

अमासोमसमायोगे विरजे फलमुत्तमम् ॥ १३ ॥

अथाऽऽदित्यवार उदुम्बरयात्राविधानम्—

आदित्ये सूर्यतीर्थस्य गमनं शस्यते बुधैः ।

ब्राह्मे मुहूर्त उत्थाय स्नात्वा गङ्गात्रयेऽमले ॥ १४ ॥

आगत्य भास्करं तीर्थमुदुम्बरतलं वरम् ।

जलं दृष्ट्वा महापुण्यं देवानामपि दुर्लभम् ॥ १५ ॥

तत्र स्नात्वा महातीर्थे विदध्याज्जलतर्पणम् ।

प्रातर्विधिं समाप्याऽऽशु हिण्यश्राद्धमारभेत् ॥ १६ ॥

तर्पयित्वा पितृन्देवान्हिरण्याद्यैर्महाधनैः ।

अश्वदानं ततो दद्या(तः कुर्या)द्ब्राह्मणाय सदक्षिणम् ॥ १७ ॥

कलशं स्थापयित्वा तु यज्ञवृक्षस्य दक्षिणे ।

तस्योपरि निधायैव वंशपात्रं मनोरमम् ॥ १८ ॥

तस्योपरि न्यसेद्वस्त्रमच्छिन्नं च सकुङ्कुमम् ।

स्थापयेत्तत्र देवानां ब्रह्माद्यानां त्रयं शुभम् ॥ १९ ॥

कृत्वा स्वर्णमयं वत्स प्रत्येकं पलसंख्यया ।

तदर्धेन प्रकर्तव्यं यथाविभवमात्मनः ॥ २० ॥

प्रस्नाप्य पयसा दध्ना मधुनाऽऽज्ये(ऽक्ते)न सर्पिषा ।

पूजयेत्प्रयतो विद्वान्गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ २१ ॥

धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैस्ताम्र्युलैश्च सदक्षिणैः ।

ततो बह्विमुखं कृत्वा जुहुयात्तिलसर्पिषा ॥

एकैकशोऽयुतं विद्वान्मन्त्रैरेतैः पृथक्पृथक् ॥ २२ ॥

ते च मन्त्राः—

ब्रह्म जज्ञानमिति ब्रह्मणे । तद्विष्णोः परमं पदमिति विष्णवे । अस्मे रुद्रा
इति रुद्राय ।

होमान्ते विधिवद्दद्याद्धेनुं विद्वान्विरिञ्चये ॥
विष्णवे मेच(मश्च)कं दद्यात्सोपधानं सदक्षिणम् ॥ २३ ॥
रुद्राय वृषभं दद्यात्सुशीलं च धुरंधरम् ।
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्संपूज्याऽऽचार्यमादरात् ॥ २४ ॥
मूर्तीर्निवेद्य तस्मै ता अन्येभ्यो भूरिदक्षिणाः ।
एवं निष्पाद्य तत्सर्वं प्रार्थयेद्यज्ञपादपम् ॥ २५ ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

हेमक्षीर महाविष्णो चतुरानन शंकर ।
पूजिते त्वयि वृक्षेशे पूजिताः सन्तु देवताः ॥ २६ ॥
कामान्मे सफलान्सर्वान्विधेहि सततं प्रभो ।
इति संप्रार्थ्य वृक्षं तं कृत्वा चैव प्रदक्षिणाम् ॥ २७ ॥
प्रणम्य विधिवद्भक्त्या ह्यागच्छेन्निजमन्दिरम् ।
आगत्य मन्दिरं विद्वान्भुञ्जीत सह भार्यया ॥ २८ ॥

इत्यादित्यवार उदुम्बरयात्राविधानम् ।

अमासोमसमायोगे प्रातरुत्थाय मानवः ।
कृत्वा गङ्गानत्रये स्नानं निर्गच्छेद्विरजं प्रति ॥ २९ ॥
यत्र गङ्गानत्रयस्यौघो मिश्री भवति निश्चयात् ।
विरजे भाग्यतो नृणां गदाधरसमीपतः ॥ ३० ॥
तत्र स्नानं प्रकुर्वीत महापातकशान्तये ।
निधाय वस्त्रयोर्ग्रन्थि दंपती पुत्रकाम्यया ॥ ३१ ॥
समुच्चार्याऽऽर्द्रं(ऽऽत्म)पापानि पश्चात्तापाकुलेन्द्रियौ ।
स्नानं भक्त्या विदध्यातां विरजे तीर्थसत्तमे ॥ ३२ ॥
पिण्डदानं प्रकुर्वीत सुवर्णश्राद्धपूर्वकम् ।
गां प्रदद्याच्छुभां धीमान्विप्रायांहोविमुक्तये ॥ ३३ ॥
ततस्तु बुद्धिमान्गच्छेद्रामतीर्थं शुचित्रतः ।
तत्र स्नानादिकं कृत्वा पश्येद्रामेश्वरं सुधीः ॥ ३४ ॥

कार्पासकानि वस्त्राणि तथा कर्णावतंसकान् ।
 ब्राह्मणेभ्योऽङ्गना दद्यात्कण्ठसूत्राणि चैव हि ॥
 शूर्पाणि विविधान्येवं जानकीप्रीतये सुधीः ॥ ३५ ॥

तत्र मन्त्रः—

रामपति महाभागे पुण्यमूर्ते निरामये ।
 गृहाणेमानि शूर्पाणि मया दत्तानि जानकि ॥ ३६ ॥

इति शूर्पगतिपादनमन्त्रः ।

कञ्चुकीवस्त्रयुग्मैश्च तथा कर्णावतंसकैः ।
 कण्ठसूत्रैश्च भूपाभिः प्रीयतां निमिनन्दिनी ॥ ३७ ॥

इति वस्त्रादिसमर्पणमन्त्रः ।

शतं वाऽथ तदर्थं वा तथा वा पञ्चविंशतिः ।
 द्वादश द्वादशार्थं वा तोषयेज्जनकात्मजाम् ॥ ३८ ॥
 ततस्तु भूरिदानानि कृत्वा तत्र महामते ।
 निर्गच्छेद्द्वहितीर्थस्य समीपं श्रद्धयाऽन्वितः ॥ ३९ ॥
 तत्र स्नात्वा जले पुण्ये वैरजे भक्तिसंयुतः ।
 तर्पयित्वा पितृन्सम्यग्जुहुयात्तिलसर्पिषा ॥ ४० ॥
 अग्निं दूतं वेत्यमुना गायत्र्या वा समाहितः ।
 अष्टोत्तरशतं विद्वान्मेघं दद्यात्सदक्षिणम् ॥ ४१ ॥
 मेघालाभे प्रदद्याच्च पट्टमौर्णं द्विजातये ।
 तदभावे यथाशक्ति स्वर्णं दद्यात्समाहितः ॥ ४२ ॥

तत्र दानमन्त्रौ—

मेघवाह महाबाहो सप्तजिह्व सुरेश्वर ।
 प्रीतो भवानल श्रीमन्मेघे दत्ते मया सति ॥ ४३ ॥
 और्णपट्टमनुध्येयं स्वर्णबीजं तव प्रभो ।
 दत्तं गृहाण देवेश पापं संहर सत्त्वरम् ॥ ४४ ॥

इति मेघौर्णपट्टदानमन्त्रौ ।

ततो निर्गम्य गोविन्दवल्लभां कमलां सतीम् ।
 संप्राप्य प्रयतो भूत्वा दण्डवत्प्रणमेन्मुहुः ॥ ४५ ॥
 ततः स्नात्वा जले पुण्ये श्रियो दृष्टिनिपातने ।
 पुष्पाणां गकरैर्देवीं कमलां परिपूजयेत् ॥ ४६ ॥

चन्दनेनानुसंलिप्य धूपयेद्धूपसंचयैः ।
दीपैर्नीराजयेत्पश्चान्नैवेद्यैः परितोषयेत् ॥ ४७ ॥
कर्पूरसमवेतेन ताम्बूलेन सुतोषयेत् ।
नव्येन वाससा देवीं कमलां परिधापयेत् ॥ ४८ ॥
मुहुर्मुहुः प्रणम्यैव वर्णयेत्स्तोत्रसंचयैः ।
ततस्तु प्रार्थयेद्भक्त्या कृत्वा चैव प्रदक्षिणम् ॥ ४९ ॥
निर्गत्य स्थानतस्तस्मात्तारातीर्थमनुव्रजेत् ।
दृष्ट्वा तज्जलकल्लोलं क्षारामृक्पूयसंयुतम् ॥ ५० ॥
अकुत्सयंस्तु तत्तोयं स्नायाच्छुद्धेन चेतसा ।
तत्र दद्याद्घृतं तैलं राजतं पारदं तथा ॥ ५१ ॥
मुक्ताफलानि हीरांश्च विद्रुमांश्च तथैव च ।
सनत्कुमार शक्त्यैव वित्तशाठ्यं विवर्जयेत् ॥ ५२ ॥
ततस्तु तत्पयः पीत्वा चुलुकैः सप्तभिः सुधीः ।
समुच्चरेच्च पापानि यथा लोकः शृणोत्यलम् ॥ ५३ ॥
यानि चोच्चारितान्याशु विलयं यान्ति तानि वै ।
तस्मादुत्तरतो गत्वा भार्गवं तीर्थमुत्तमम् ॥ ५४ ॥
कृतस्नानस्तु ताराख्ये भार्गवे दानमादिशेत् ।
चामरं व्यजनं छत्रं पादुकाः करपत्रि(यष्टि)काः ॥ ५५ ॥
वस्त्रयुग्मानि(णि) धौतानि यज्ञसूत्राणि चैव हि ।
भार्गवं च समुद्दिश्य ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥ ५६ ॥
ततस्तूत्तरतो देशे देवे सिद्धेश्वरे सुधीः ।
ताम्रं नागं च विन्यस्य देवमूर्धनि बुद्धिमान् ॥ ५७ ॥
पूजां प्रकल्पयेद्भक्त्या सप्तधान्यैः सुशोभनाम् ।
ततो गदाधरं देवमाव्रजेत्प्रयतः पुमान् ॥ ५८ ॥
गयाश्राद्धं प्रकुर्वीत यथाविधि यथावसु ।
ततो निर्गत्य विरजालक्ष्मीमानस्य भक्तिमान् ॥ ५९ ॥
गङ्गात्रये जलं पीत्वा मन्दिरं स्वं समाविशेत् ।
हेमरौप्यादिदानानि तत्र कुर्याच्च शक्तितः ॥ ६० ॥

तत्र विरजाम्भःपानमन्त्रः—

ये मे कुक्षिगता दोषा ये मे गर्भविमोचकाः ।

ते सर्वे विलयं यान्तु विरजाम्भोनिषेवणात् ॥ ६१ ॥

एवं कृते विधाने च वैरजे विरजा भवेत् ।

सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो ध्रियते च शतं समाः ॥

लभते पुत्रसंपत्तिं सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ ६२ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
विरजयात्राविधानम् ।

अथार्धोदयव्रतविधानम् ।

अगस्त्य उवाच—

भगवंस्त्वत्प्रसादेन श्रुतोऽयं व्रतविस्तरः ।

अर्धोदयं तु मे ब्रूहि दुर्लभं हि चराचरे ॥ १ ॥

जीवितं प्राणिनां पुण्यं यदि तद्वदसि प्रभो ।

कथं कार्यं कृते किं स्यात्फलं कथय षण्मुख ॥ २ ॥

श्रीस्कन्द उवाच—

श्रूयतां पुण्ययोगोऽयं दुर्लभोऽर्धोदयोदयः ।

तिर्यङ्मनुष्यदेवानां दुष्प्रापः सर्वकामदः ॥ ३ ॥

माघात्रायां व्यतीपात आदित्ये विष्णुदैवते ।

अर्धोदयः न विख्यातः सहस्रार्कग्रहैः समः ॥ ४ ॥

तथा च—

अमाऽर्कपातश्रवणैर्युक्ता चेत्पौषमाघयोः ।

अर्धोदयः स विज्ञेयः सूर्यपर्वशताधिकः ॥ ५ ॥

पुराकृतं वसिष्ठेन जामदग्न्येन सुव्रत ।

सनकाद्यैर्मनुष्यैश्च बहुभिर्मुनिसत्तमैः ॥ ६ ॥

अन्यैः शतसहस्रैश्च इष्टं भवति कुम्भज ।

व्रतानां यज्ञतीर्थानां फलं येन कृतं भवेत् ॥ ७ ॥

ससागरा धरा चैव सप्तद्वीपसमन्विता ।

दत्ता स्याद्येन तत्सर्वं विधानं विहितं भुवि ॥ ८ ॥

गङ्गायां च प्रयागे च पुष्कराणां त्रये तथा ।

मानसे विष्णुतीर्थे च यत्पुण्यं स्नानदानतः ॥ ९ ॥

अर्धोदयविधानेन लभते तत्फलं नरः ।
 नारी वा पुरुषो वाऽपि दंपती वा समाहितौ ॥ १० ॥
 विधुरो ब्रह्मचारी वा कुर्यादधोदयव्रतम् ।
 अश्वमेधायुते पुण्यमिष्टापूर्ते च यद्भवेत् ॥ ११ ॥
 गवां च रक्षणे पुण्यं तदधोदयकृलभेत् ।
 वाचि सत्यं गृहे लक्ष्मीं संततिं चानपायिनीम् ॥ १२ ॥
 आयुर्यशोभिवृद्धिं च विधानाल्लभते नरः ।
 इन्द्राग्नियमलोकेषु नैर्ऋतस्य पयःपतेः ॥ १३ ॥
 वसेद्वायुकुबेरेशभवनेषु विधानतः ।
 कोटिदानेन वनूनां पूता ये तीर्थवासिनः ॥ १४ ॥
 अर्धोदयविधानस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ।
 भूर्लोकधिपतित्वेन स्वर्लोकपालनेन यत् ॥ १५ ॥
 फलं प्रोक्तं मुनिव्रातैस्तत्फलं लभते हि सः ।
 ततो हिरण्यगर्भस्य प्रभावात्परमेष्ठिनः ॥ १६ ॥
 अर्धोदयविधानस्य फलं प्राप्नोत्यविच्युतम् ।
 ततो षिष्णुः सुव(प)र्णस्य त्रै(स्थस्त्रै)लोक्याधिपतिर्भवेत् ॥
 शङ्खचक्रगदाधारी वनमाली हरिः स्वयम् ॥ १७ ॥

अगस्त्य उवाच—

स्कन्द केन विधानेन कर्तव्यं व्रतमुत्तमम् ।
 अर्धोदयाख्यमुद्देशात्प्रब्रूहि मम पृच्छतः ॥ १८ ॥

श्रीस्कन्द उवाच—

कृते कृतं वसिष्ठेन त्रेतायां रघुणा कृतम् ।
 द्वापरे बर्मराजेन कलौ पूर्णोदयेन च ॥ १९ ॥
 अन्यैर्देवमनुष्यैश्च दानवैर्द्विजसत्तम ।
 कृतमधोदयं सम्यक्सर्वकामफलप्रदम् ॥ २० ॥
 माघमासे तु पौषे वा दर्शे सूर्यदिने तथा ।
 श्रवणे च व्यतीपाते कार्यमेतद्व्रतोत्तमम् ॥ २१ ॥
 पूर्वाह्णे संगमे स्नात्वा शुचिर्भूत्वा समाहितः ।

सर्पपापविशुद्ध्यर्थं नियमस्थो भवेन्नरः ॥ २२ ॥

तत्र नियमस्वीकारमन्त्रः—

त्रिदैवतं व्रतं देवाः करिष्ये भुक्तिमुक्तिदम् ।
भवन्तु संनिधौ मेऽद्य त्रयो देवास्त्रयोऽग्रयः ॥ २३ ॥

इति नियमस्वीकारमन्त्रः ।

ब्रह्मविष्णुमहेशानां सुवर्णपलसंख्यया ।
कर्तव्याः प्रतिमा ब्रह्मन्यथाध्यानं प्रयत्नतः ॥ २४ ॥
वित्ताभावे पलार्धेन तदर्धार्धेन वा तथा ।
शतत्रयेण सार्धेन द्रोणानां तिलपर्वतः ॥ २५ ॥
ब्रह्मणे तु प्रकर्तव्यो नात्र कार्या विचारणा ।
कर्तव्यौ विष्णुरुद्राभ्यां गिरी पूर्वोक्तसंख्यया ॥ २६ ॥
अथ्यात्रयं ततः कुर्यादुपस्करसमन्वितम् ।
देवानां त्रयमुद्दिश्य शक्तितो भक्तितत्परः ॥ २७ ॥
ब्रह्मविष्णुशिवप्रीत्यै दातव्यं तु गवां त्रयम् ।
हिरण्यभूमिधान्यादिदानं विभवसारतः ॥ २८ ॥
कुर्याच्च श्रद्धयोपेतो ब्राह्मणेभ्यः प्रयत्नतः ।
मध्याह्ने तु नरः स्नात्वा शुचिर्भूत्वा समाहितः ॥
तिलपर्वतमध्यस्थं पूजयेद्देवतात्रयम् ॥ २९ ॥

आदौ ब्रह्मपूजा—

नमो विश्वसृजे तुभ्यं सत्याय परमेष्ठिने ।
देवाय देवपतये यज्ञानां पतये नमः ॥ ३० ॥
ॐ नमो ब्रह्मणे पादौ स्वर्णगर्भाय वै नमः ।
ऊरू धात्रे नमो जानू जङ्घे च परमेष्ठिने ॥ ३१ ॥
वेधसे च नमो गुह्यं स्तनौ पद्मोद्भवाय च ।
कटिदेशं हंसवाहनाय वक्त्रं तु दक्षिणम् ॥ ३२ ॥
ॐ नमः सामवेदाय पूजयेत्पाश्चिमाननम् ।
नमो ह्यथर्ववेदाय यजुर्वेदाय वै नमः ॥ ३३ ॥
इत्यौत्तराहं पूर्वास्यमृगवेदाय नमो नमः ।
लोकपालास्ततः पूज्याः स्वैः स्वैर्मन्त्रैः प्रयत्नतः ॥ ३४ ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

हिरण्यगर्भं देवेश प्रधानव्यक्तरूपक ।

प्रसादसुमुखो भूत्वा पूजां मे सफलां कुरु ॥ ३५ ॥

इति प्रार्थनामन्त्रः ।

अथ विष्णुपूजा ।

नारायण जगन्नाथ नमस्ते गरुडध्वज ।

पीताम्बर नमस्तुभ्यं जनार्दन नमोऽस्तु ते ॥ ३६ ॥

अनन्ताय नमः पादौ विष्णुरूपाय वै नमः ।

ऊरु नमो मुकुन्दाय जानू जङ्घे नमो नमः ॥ ३७ ॥

गोविन्दायेति गुह्यं तु प्रद्युम्नायेति पूजयेत् ।

पद्मनाभायेति नाभिं चतुर्वक्त्राब्जसंभवाम् ॥ ३८ ॥

भुवनोदरायोदरं वक्षः कौस्तुभवक्षसे ।

चतुर्भुजाय वै बाहूंश्चतुरो वेदरूपकान् ॥ ३९ ॥

विश्वतोवदनायेति वदनं च शिरस्तथा ।

मौलिं सहस्रशीर्षाय केशवाय नमो नमः ॥ ४० ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

आदित्यचन्द्रनयन दिग्बाहो दैत्यसूदन ।

पूजां दत्तां मया भक्त्या गृहाण करुणाकर ॥ ४१ ॥

इति प्रार्थनामन्त्रः ।

अथ महेश्वरपूजा ।

महेश्वर महेशान नमस्ते त्रिपुरान्तक ।

जीमूतकेशाय नमो नमस्ते वृषभध्वज ॥ ४२ ॥

ईशानाय नमः पादौ चन्द्रशेखर ते नमः ।

जङ्घे जानू पशुपतय ऊरु शंकराय वै ॥ ४३ ॥

उमाकान्ताय गुह्यं तु नीललोहित ते नमः ।

नाभिं वा उदरं कृत्तिवाससे ते नमोऽस्त्विति ॥ ४४ ॥

नागोपवीतिने कुक्षी बाहून्भोगियुताय च ।

नीलकण्ठाय कण्ठं तु मुखं पञ्चमुखाय च ॥ ४५ ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

अन्धकारे ह्यमेयात्मन्नमो लोकान्तकारक ।

पूजां दत्तां मया भक्त्या गृहाण वृषभध्वज ॥ ४६ ॥
इति प्रार्थनामन्त्रः ।

इति पूजाक्रमः प्रोक्तो मन्त्रैरेतैः प्रयत्नतः ।
आचार्यं पूजयेद्भक्त्या वस्त्रालंकारभूषणैः ॥ ४७ ॥
हस्तमात्राः कर्णमात्राः पीठं छत्रं कमण्डलुः ।
श्वेतवस्त्रयुगं देयं ब्रह्मणे सर्वमूर्तये ॥ ४८ ॥
पीतवस्त्रयुगं विष्णोर्लोहितं शंकरस्य च ।
पञ्चामृतेन स्नपनं पूजनं कुसुमैः स्वकैः ॥ ४९ ॥
ब्रह्माणं पूजयेद्भक्त्या कमलैश्च स्वकैरिति ।
विष्णुं संपूजयेद्धीमांस्तुलसीछदसंचयैः ॥ ५० ॥
शंकरं पूजयेत्पश्चाद्विल्वपत्रैरखण्डितैः ।
तत्कालसंभवैर्दिव्यैः पूजयेत्तु यथाक्रमम् ॥ ५१ ॥
यथाशक्ति तु कर्तव्यं व्रतमेतत्सुदुर्लभम् ।
जीवितं प्राणिनां चैव अनित्यं निश्चितं यतः ॥ ५२ ॥

अथ व्रताङ्गहोमविधिः—

देवतात्रयमुद्दिश्य शास्त्रदृष्टेन कर्मणा ।
रुद्राय विश्वरूपाय प्रजानां पतये नमः ॥ ५३ ॥
अनेनैव तु मन्त्रेण षड्भिः संस्थाप्य भक्तितः ।
ततो होमं प्रकुर्वीत यथाविभवसंभवम् ॥ ५४ ॥

अग्नये प्रजापतये स्वाहा । अग्नये विष्णवे स्वाहा । अग्नये रुद्राय स्वाहा ।

ॐकारपूर्वमुच्चार्य मन्त्रमेनं द्विजोत्तमः ।
त्रिदैवतयजिश्चात्र स्वाहान्ता परिकल्पिता ॥ ५५ ॥
होमस्तु चरुणा कार्यो घृताक्तेन द्विजन्मना ।
प्रजापते न त्वदेतानिति होमो विरिञ्चये ॥ ५६ ॥
इदं विष्णुर्विष्णवे च त्र्यम्बकं शूलिने त्विति ।
एतैर्मन्त्रैराज्यहोमः स्वाहान्तैर्नामभिः स्मृतः ॥ ५७ ॥
ततः पूर्णाहुतिः कार्या ब्रह्मणे विष्णवे तथा ।

स्वाहान्ताय च रुद्राय धामन्त इति मन्त्रतः ॥ ५८ ॥
 मन्त्रमेनं पट्टावितं ब्रह्माद्यैर्नामभिः कृतम् ।
 समुच्चार्याऽऽहुतिं दद्याद्वां च होमावसानके ॥ ५९ ॥
 तरुणीं रूपसंपन्नां सुशीलां च पयस्विनीम् ।
 स्वर्णशृङ्गीं रौप्यखुरीं ताम्रपृष्ठां सवत्सकाम् ॥ ६० ॥
 रत्नपुच्छीं तथा वस्त्रवण्टाभरणभूषिताम् ।
 चामरैः पञ्चभिर्मुक्तां कांस्यदेहां सदक्षिणाम् ॥ ६१ ॥
 आचार्याय सुशीलाय श्रोत्रियाय कुटुम्बिने ।
 दत्त्वा तां धेनुकां धीमान्सर्वकामानवाप्नुयात् ॥ ६२ ॥
 तेन दत्तं हुतं तप्तमिष्टं यज्ञैः सहस्रधा ।
 अर्धोदयस्य सामर्थ्याद्विधानज्ञो विधानकृत् ॥ ६३ ॥
 पूरितं पायसेनैव साज्येन च सदक्षिणम् ।
 कांस्यपात्रं मुनिश्रेष्ठ दद्याद्विप्राय सुव्रत ॥ ६४ ॥
 सूर्यमुद्दिश्य विप्रर्षे महापापोपशान्तये ।
 एवं कृते विधानेऽस्मिन्सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ ६५ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 स्कन्दपुराणोक्तमर्धोदयव्रतविधानम् ।

अथ कपिलापट्टीविधानम् ।

भविष्यपुराणे कृष्णयुधिष्ठिरसंवादे —

भाद्रे स्कन्दतिथौ कृष्णे रोहिण्यां भौमवासरे ।
 व्यतीपाते महायोगे कपिलापट्टिरु(सा पट्टी कपिलो)च्यते ॥ १ ॥
 षण्णां योगे महापुण्ये नृणां भाग्यानुसारिणी ।
 तदा धर्मस्य सिद्धयर्थं विधानं क्रियते बुधैः ॥ २ ॥
 सूर्यनारायणं देवं स्वर्णमूर्तिं सुलक्षणम् ।
 पलेन कारयेद्धीमांस्तदर्थार्थेन वा पुनः ॥ ३ ॥
 रथं रौप्यमयं कुर्यात्पलैरष्टभिरावृतः ।
 सप्तभिस्तुरगैः सार्धं ध्वजस्तम्भसमन्वितम् ॥ ४ ॥
 तत्र तं विन्यसेद्देवं सूर्यनारायणं प्रभुम् ।

द्विभुजं षडहस्तं च गरुडाग्रजसारथिम् ॥ ५ ॥
 पुण्यकाले य(त)दा राजन्कृतस्नानो नरोत्तमः ।
 यो वा को वा श्रिया युक्तः कुर्यादेतद्विधानकम् ॥ ६ ॥
 तर्पयित्वा पितृन्देवाञ्छ्रद्धया परया युतः ।
 विधानं प्रारभेद्धीमान्सर्वकामप्रसिद्धये ॥ ७ ॥
 स्वस्तिवाचनपूर्वं तु हवनं कारयेद्बुधः ।
 अग्निवक्त्रं ततः कृत्वा तिलाज्यं जुहुयाद्बुधः ॥ ८ ॥
 सहस्रं चैव सावित्र्या प्रधानं चैव तत्स्मृतम् ।
 हुत्वा स्विष्टकृतं सम्यक्प्रायश्चित्तं तु सापंपा ॥ ९ ॥
 होमादौ पूजितं सूर्यं होमान्ते प्रतिपूजयेत् ।
 पुष्पैः कालोद्भवैर्गन्धैर्लेपयेत्प्रयतः पुमान् ॥ १० ॥
 सकर्पूरेण धूपेन धूपयेत्तदनन्तरम् ।
 दीपैर्नाराजयेत्स्निग्धैर्नैवेद्यैः परितोषयेत् ॥ ११ ॥
 ततो गां कपिलां साध्वीं बहुक्षीरां शुभप्रजाम् ।
 नवाम्रपल्लवाभासां पीतनेत्रां बृहत्स्तनीम् ॥ १२ ॥

शुभप्रजामित्यस्य जीवत्प्रजामव्यङ्गवत्सां चेत्यर्थः ।

समशृङ्गीं शुभारावां सालंकारां सवत्सकाम् ।
 तां गां यत्नेन संपूज्य वस्त्रयुग्मेण वेष्टिताम् ॥ १३ ॥
 दण्डवत्प्रणिपातेन प्रणम्य भक्तितत्परः ।
 आचार्याय सुशीलाय ससुवर्णां प्रदापयेत् ॥ १४ ॥

तत्र दानमन्त्रः—

सर्वदेवमयीं दोग्ध्रीं सर्वलोकमयीं तथा ।
 सर्वलोकनिमित्तं गां सर्वदेवनमस्कृताम् ॥ १५ ॥
 प्रयच्छामि महासत्त्वामक्षय्यां च शुभामिति ।
 प्रीणन्तु सकला देवा धर्मसिद्धिः प्रजायताम् ॥ १६ ॥
 या लक्ष्मीः सर्वभूतानां या च देवे व्यवस्थिता ।
 धेनुरूपेण सा देवी मम पापं व्यपोऽनु ॥ १७ ॥

गावो मे अग्रतः सन्तिवत्याचार्यस्य गोत्रनामान्युच्चार्योद्भूमुखो यजमानः
 प्राङ्मुखाय ब्राह्मणाय तां कपिलां दद्यात् । ततः पूर्वपूजितं सूर्यनारायणं विदुषे
 ब्राह्मणाय दद्यात् ।

तत्र दानमन्त्रः—

द्युमे जगतां नाथ विश्वात्मन्विश्वतोमुख ।
दानेन तव देवेश मम नश्यतु पातकम् ॥ १८ ॥

इति दानमन्त्रः ।

ततः संपादिते दाने त्वन्येभ्यो दीयतां वसु ।
यथासंख्यं यथावित्तं यथाविधि यथासुखम् ॥ १९ ॥
एवं कृते विधानेऽस्मिन्गृहमागम्य सुव्रत ।
ब्राह्मणान्भोजयेच्छक्त्या ततो भुञ्जीत च स्वयम् ॥ २० ॥
सूर्यपर्वशतान्येवं सोमग्रहसहस्रकम् ।
राजेन्द्र कपिलापष्ट्याः कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥ २१ ॥
कृत्वा तु कपिलापष्टीविधानं विधिपूर्वकम् ।
ब्रह्महा मुच्यते पापान्नात्र कार्या विचारणा ॥ २२ ॥
इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
भविष्यपुराणोक्तं कपिलापष्टीविधानम् ।

अथ सिंहस्थे बृहस्पतौ बृहस्पतिपूजनसहितं गोदा-
वरीयात्राविधानम् ।

ब्रह्माण्डपुराणे ब्रह्मनारदसंवादे नारद उवाच—

ये त्वया प्रापिता देव संसारं भुवि मानवाः ।
तेषामुद्धरणार्थाय तीर्थं किं कल्पितं विभो ॥ १ ॥

श्रीब्रह्मोवाच—

अस्ति विख्यातमतुलं पापाब्धौ तरणं परम् ।
गोदावरीति विख्यातं शंभुना रचितं पुरा ॥ २ ॥
ब्रह्माद्रिशिखराज्जातं तीर्थानामुत्तमोत्तमम् ।
शतयोजनविस्तीर्णं पूर्वसागरगं शुभम् ॥ ३ ॥
ब्रह्महत्यादिपापानां गौतमी क्षयकारिणी ।
दृष्ट्वा सती मुनिश्रेष्ठ प्राणिनां भवयायिनाम् ॥ ४ ॥
गङ्गाद्वारे कुशावर्ते बिल्वके नीलपर्वते ।
स्नात्वा कनखले तीर्थे पुनर्जन्म न लभ्यते ॥ ५ ॥

इति मोक्षतीर्थपञ्चकम् ।

अथ ब्रह्महत्याविनाशनं तीर्थं श्रीगोदावर्या पद्मनगरे—

अरुणावरुणयोर्मध्ये यत्र प्राची सरस्वती ।

तत्र स्नात्वा च पीत्वा च ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥ ६ ॥

ततश्च काशीसमं प्रतिष्ठानाख्यं तीर्थम्—

विश्वेशः पिपलेशोऽयं गोदेयं किल जाह्नवी ।

प्रतिष्ठानमिदं काशी सिंहस्थे च बृहस्पतौ ॥ ७ ॥

तथा च—

त्र्यम्बके पद्मके चैव गङ्गासागरसंगम ।

सर्वत्र सुलभा गोदा त्रिषु स्थानेषु दुर्लभा ॥ ८ ॥

अतः कारणान्सर्वपातकनाशेषुना सिंहस्थे गुरौ सति गौतमीतीरं गन्तव्यम् ।
तत्राऽऽदौ यात्रामुखप्रयोगः—

अद्य गच्छामि गौतम्या दर्शनेऽसुरतन्द्रितः ।

यात्रानियममामाद्य जपन्नारायणाभिधाम् ॥ ९ ॥

नमो देवि महापुण्ये पुण्यतोयममन्त्रिते ।

तद्य यात्रां विधास्यामि प्रसीद गौतमान्मजे ॥ १० ॥ इति ।

ततो दर्शने जातेऽयं मन्त्रः—

मनोवाक्कायजैः पापैर्ग्रस्तो बहुविधेरपि ।

वीक्ष्य मातर्भवेयं त्वां पूतोऽहं देवि गौतमि ॥ ११ ॥

नमो देवि महागङ्गे महादेवस्य बलभे ।

वहति त्वां शिवो मूर्ध्नी गोदावरि नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥

इति नमस्कृत्य गङ्गां प्राप्तः सन्कृताञ्जलिर्भूत्वा गङ्गां प्रणमेत् । तत्र मन्त्रः—

दण्डवत्प्रणिपातेन दृष्ट्वा गोदावरीपयः ।

प्रणमन्त्यमकृद्ये तु ते न यान्ति यमालयम् ॥ १३ ॥

देवि गौतमि पापाब्धौ मयं मां त्वं समुद्धर ।

लुठन्तं ते तटे मातः कुरु मोक्षस्य भाजनम् ॥ १४ ॥

इति प्रणिपातमन्त्रः । ततः—

मुण्डनं चोपवासश्च सर्वतीर्थेष्वयं विधिः ।

इतिन्यायेन तीर्थविधिं कृत्वा सिंहस्थवृहस्पतिपूजनमारभेत ।

सौवर्णं त्रिदशाचार्यं कृतं वै पलसंख्यया ।

तण्डुलोपरि विन्यस्ते कलशे स्थापयेद्बुधः ॥ १५ ॥

कुम्भवक्त्रे तु विन्यस्य वंशपात्रं सवस्त्रकम् ।

तत्र तं स्थापयेद्विद्वान्प्रतिष्ठामन्त्रतत्परः ॥ १६ ॥

बार्हस्पत्येन सूक्तेन तोषयेद्देवमन्त्रिणम् ।

*वृहस्पतेतिमन्त्रेण जुहुयात्तिलसर्पिषा ॥ १७ ॥

अष्टोत्तरसहस्रं च शतं चाष्टाधिकं तथा ।

होमान्ते विधिवद्द्याद्रामेकां च पयस्विनीम् ॥ १८ ॥

जाते नक्ते द्विजैः सार्धं विदध्याज्जागरं बुधः ।

गीतवाद्यैश्च नृत्यैश्च पुराणश्रवणेन च ॥ १९ ॥

शान्तिपाठैरनेकैश्च नीत्वा रात्रिं प्रयत्नतः ।

प्रातःकाले समुत्थाय स्नानं कृत्वा यथाविधि ॥ २० ॥

तर्पयित्वा सुमनसो मुनीन्मनुजसत्तमान् ।

पितृश्च विधिवद्विद्वान्प्रारभेत्पूजनं पुनः ॥ २१ ॥

मुनिपुष्पैः समभ्यर्च्य चन्दनेनानुलेपयेत् ।

धूपैश्च विविधैर्देवराजाचार्यं च धूपयेत् ॥ २२ ॥

दीपैर्नीराजयेद्भक्त्या नैवेद्यैः परितोषयेत् ।

पीतवस्त्रद्वयं तस्मै हर्षयेद्देवमन्त्रिणे ॥ २३ ॥

वृहस्पते प्रथममितिसूक्तं च जपेत्ततः ।

ततस्तु प्रार्थयेन्नाकिगुरुं च श्रृङ्गया गिरा ॥ २४ ॥

नमस्ते वाग्विलासाय देवाचार्याय धीमते ।

सिंहस्थाय च जीवाय त्रैलोक्यहितकारिणे ॥ २५ ॥

अथ गौतमीप्रार्थनम्—

गोदावरि महाभागे महापापविनाशिनि ।

धर्मार्थकाममोक्षाणां +सुलभे गौतमप्रिये ॥ २६ ॥

नमस्ते भुवनाधीशे नमस्ते सुरनिम्नगे ।
 ब्रह्माद्रिशिखरोद्भूते पाहि लोकत्रयं शिवे ॥ २७ ॥
 मज्जन्ति तव तोये ये तवाङ्घ्रीं प्रणमन्ति ये ।
 तान्समुद्धर वेगेन पापाब्धेर्गौतमात्परे ॥ २८ ॥ इति ।

गोदावरीयायिनां नराणां प्रशंसा—

ते धन्या मानवा लोके कुतस्तेषां तु दुष्कृतम् ।
 दृष्ट्वा यैर्गौतमी गङ्गा सिंहस्थे सुरमन्त्रिणि ॥ २९ ॥
 जैनन्यु(नो)पकृतस्येह नोत्तीर्णाः स्युः कदाचन ।
 ते भवन्ति न संदेहो गोदावर्यां तु पिण्डदाः ॥ ३० ॥
 अश्वमेधेन किं पुण्यं किं फलं भृगुसेवनात् ।
 यावन्न क्रियते लोके गोदावर्यां निषेवणम् ॥ ३१ ॥
 ततस्तु विधिवद्द्याहुं हेममयं शुभम् ।
 आचार्याय सुवृत्ताय सर्वोपस्करसंयुतम् ॥ ३२ ॥
 कृताञ्जलिपुटो भूत्वा ह्याचार्यं प्रार्थयेत्सुधीः ।
 दानेन च नमस्कारैर्विनयेन क्षमापयेत् ॥ ३३ ॥
 इति कृत्वा गुरोः पूजां विसृज्याऽऽचार्यसत्तमम् ।
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चादन्नैर्नानाविधैस्तदा ॥ ३४ ॥
 एवं कृते विधाने च पापमुक्तो भवेन्नरः ।
 सर्वान्कामानवाप्नोति नन्दते* पुत्रपौत्रकम् ॥ ३५ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां सिंहस्थे बृहस्पतौ
 बृहस्पतिपूजनसहितं गोदावरीयात्राविधानम् ।

अथ कन्यागते बृहस्पतौ श्रीशैलयात्राविधानम् ।

स्कन्दपुराणे स्कन्दसूर्यसंवादे सूर्य उवाच—

कन्यागते गुरौ स्कन्द कृष्णायां किं विधीयते ।
 श्रीशैले तु विशेषेण तन्ममाऽऽचक्ष्व पृच्छतः ॥ १ ॥

श्रीस्कन्द उवाच—

शृणु भास्करं वक्ष्यामि श्रीशैले यद्विधीयते ।

* आर्पत्वाव्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् ।

विधानं मनुजैः सम्यक्कृष्णायात्रानुयायिभिः ॥ २ ॥
 या गतिर्योगमु(यु)क्तानां मुनीनामूर्ध्वरेतसाम् ।
 सा गतिः सर्वजन्तूनां कृष्णातीरनिवासिनाम् ॥ ३ ॥
 महाबले च वैराटे तथा वेणीसमागमे ।
 करहाटे महातीर्थे कृष्णा भार्गीरथीसमा ॥ ४ ॥
 कन्यागते सुराचार्ये ये गच्छन्ति रमाचलम् ।
 शिवरात्रौ विशेषेण ते न पश्यन्ति भास्करिम् ॥ ५ ॥

तत्र शिवरात्रौ श्रीपर्वतं गत्वा यत्क्रियते विधानं तद्वक्ष्यते—

चतुर्दश्यां प्रभाते च समुत्थाय समाहितः ।
 स्नायान्नीलसरित्तोषे कुर्याद्देवादितर्पणम् ॥ ६ ॥
 कृतक्षौरक्रियः सम्यग्जीवज्जनककाटते ।
 कुर्यात्स्नानविधिं सर्वमुचितं श्रद्धयाऽन्वितः ॥ ७ ॥
 हेमश्राद्धं ततः कुर्याद्दानानि किल भूरिशः ।
 ततो मन्दिरमागम्य श्रीशैलाधिपतेः प्रभोः ॥ ८ ॥
 मण्डपादि विदध्यात्तु तोरणाडम्बराणि च ।
 सायंकाले शिवं पश्येन्मल्लिकार्जुनमादरात् ॥ ९ ॥
 गर्भागारं गिरीशस्य क्षालयेद्गन्धवारिणा ।
 ततस्तु धूपयेद्दूपैर्दीपैर्नीराजयेत्ततः ॥ १० ॥
 ततो विल्वदलैः पूर्णैः कर्णिकारसमन्वितैः ।
 पूजयेन्पार्वतीनाथं यावत्स्याच्चेतसो रुचिः ॥ ११ ॥
 पूजान्ते धूपयेद्देवं दीपैर्नीराजयेत्पुनः ।
 नैवेद्यैर्विविधैर्भक्त्या तोषयेत्पार्वतीपतिम् ॥ १२ ॥ :
 ब्राह्मणेभ्यो धनं दद्याच्छ्रीकृष्णाप्रीतये बुधः ।
 सवत्सां महिषीं दद्यात्सपल्याणं तुरंगमम् ॥ १३ ॥
 धेनूः पयस्विनीर्दद्याच्छकटं सट्टपं तथा ।
 पट्टकूलानि वस्त्राणि भूमिदानं तथैव च ॥ १४ ॥
 प्रियंगूर्यवगोधूमान्यावनालांस्तथा तिलान् ।
 एवमादीनि धान्यानि शय्या दीपांश्च दीपिकाः ॥ १५ ॥
 करपत्रीश्च मणिकाञ्जलपूर्णास्तथैव च ।
 फलानि बीजपूराणां कूष्माण्डानि तथैव च ॥ १६ ॥

नारिकेलानि रम्भाणि जम्बीराणि तथैव च ।
 वंशपात्राणि चित्राणि च्छत्राणि विविधानि च ॥ १७ ॥
 राजिकामानमप्यत्र श्रीकृष्णायां प्रदापयेत् ।
 तत्सुमेरुसमं प्रोक्तं नात्र कार्या विचारणा ॥ १८ ॥
 ततः प्रभाते विमले स्नात्वा कृष्णाजले बुधः ।
 ग्राह्यणान्भोजयेच्छेष्टानन्नैर्नानाविधैः शुभैः ॥ १९ ॥
 कृतप्रणामो देवस्य स्वयं भुञ्जीत भक्तिमान् ।
 पारणान्ते ततस्तिस्त्रो यष्टीर्वेणुमयीः शुभाः ॥ २० ॥
 गृहीयाद्गैरिकं तोयसिक्ताम्बरधरः शुचिः ।
 ततस्तु गृहमागच्छेद्भृतव्रह्मव्रतः पुमान् ॥ २१ ॥
 अन्येऽपि लौकिकाचारा मार्गसेकादयो गृहे ।
 भगिनीप्रमुखा नार्यः कुर्युस्तांस्तद्धिते रताः ॥ २२ ॥
 नारी वा रविवारे तु भैरवं पूजयेत्सुरम् ।
 गन्धपुष्पाक्षतादीनि शुभद्रव्याणि चार्पयेत् ॥ २३ ॥
 नैवेद्यं विविधं चैव ताम्बूलं तदनन्तरम् ।
 ततस्तु भोजयेत्लोकान्ब्राह्मणादीञ्छुचिव्रतान् ॥ २४ ॥
 ततस्तु स्वयमश्रीयाद्भूमौ शयनमाचरेत् ।
 ततः प्रभाते विमले सोमवारे शुचिव्रतः ॥ २५ ॥
 स्नात्वा तैलेन शुद्धेन नव्यवस्त्रावृतस्तदा ।
 पारिवर्हीश्व भेधावी गृहीयात्सुप्तमाहितः ॥ २६ ॥
 कृतस्वस्त्ययनो गच्छेन्मन्दिरं पार्वतीपतेः ।
 गैरिकं तानि वस्त्राणि यष्टीर्वेणुमयीस्तथा ॥ २७ ॥
 तत्सर्वं विन्यसेत्तत्र वृषभस्य समीपतः ।
 ततोऽवलोकयेद्देवं शंकरं लोकशंकरम् ॥ २८ ॥
 गन्धपुष्पाक्षतादीनि चार्पयेद्भक्तिमान्नरः ।
 प्रार्थयेद्देवदेवेशं पार्वतीप्राणवल्लभम् ॥ २९ ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

इह जन्मनि देवेश यत्कृतं पातकं मया ।
 तत्सर्वं त्वं महादेव क्षिप्तं नाशय शंकर ॥ ३० ॥

इति प्रार्थयित्वा प्रदक्षिणीकृत्य स्वमन्दिरं व्रजेत् । ततः मुहूर्तिः सहेकवङ्कौ
 भुञ्जीत ।

एवं कृते विधाने च कन्यासंस्थे बृहस्पतौ ।
श्रीगिरौ कृष्णवेण्या वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥
सर्वान्कामानवाप्नोति देहान्ते मोक्षमाप्नुयात् ॥ ३१ ॥

तत्र पुराणवचनं केदारखण्डे—

रेतःकुण्डोदकं पीत्वा वाराणस्यां मृतो यदा ।
श्रीशैलशिखरं दृष्ट्वा पुनर्जन्म न लभ्यते ॥ ३२ ॥
इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
कन्यागते बृहस्पतौ श्रीशैलयात्राविधानम् ।

अथ कार्तिकेयदर्शनविधानम् ।

पञ्चपुराणे—

कार्तिक्या कृत्तिकायोगे शिवयोगसमन्विते ।
यः पश्येत्कृत्तिकापुत्रं स भवेद्ब्रह्मसत्तमः ॥ १ ॥
नीलकुण्डे सुधीः स्नात्वा स्वामिनं योऽवलोकयेत् ।
सप्तजन्मसु विप्रः स्याद्भनाढ्यो वेदपारगः ॥ २ ॥
दृष्ट्वा देवं महासेनं कुशैः पुष्पैः समर्चयेत् ।
चन्दनेनानुसंलिप्य दशाङ्गेनैव धूपयेत् ॥ ३ ॥
दीपैर्नीराजयेद्भक्त्या मयूरमपि पूजयेत् ।
कमण्डलुं ब्रह्मसूत्रमक्षमालां कुशांस्तिलान् ॥
पञ्चोपवीतकान्येव(उपवीतानि च मृदं) समन्त्राणि समर्पयेत् ॥ ४ ॥

तत्र मन्त्राः—

कमण्डलुर्जलापूर्णः स्वर्णगर्भः सुलक्षणः ।
अर्पितस्ते महासेन प्रसन्नोऽनेन मे भव ॥ ५ ॥

इति कमण्डलुसमर्पणमन्त्रः ।

ब्रह्मसूत्रं महादिव्यं प्रीतये ते मयाऽर्पितम् ।
ब्रह्मजन्मास्तु मे देव ब्रह्मसूत्रसमर्पणात् ॥ ६ ॥

इति यज्ञोपवीतसमर्पणमन्त्रः ।

गोमतीतीरसंभूता गोपीवापीसमुद्भवा ।

य(मृ)दर्पिता मया तुभ्यं ब्रह्मजन्माप्तये गुह ॥ ७ ॥

* इति गोपीचन्दनार्पणमन्त्रः ।

उपवीतानि शुभ्राणि पवित्राणि शिवात्मज ।

पुरतस्तेऽर्पयाम्यद्य प्रसादार्थं तव प्रभो ॥ ८ ॥

इति पवित्रारोपणमन्त्रः ।

तिलाः काश्यपसंभूतास्तिलाः पापहराः स्मृताः ।

पादयोरर्पितास्तेऽद्य सर्वपापापनुत्तये ॥ ९ ॥

इति तिलार्पणमन्त्रः ।

दर्भा ब्रह्ममया विष्णुस्वरूपा रुद्ररूपिणः ।

प्रीत्यर्थं तव देवेश न्यस्ताः पादतले मया ॥ १० ॥

इति दर्भारोपणमन्त्रः ।

अष्टाविंशतिसंख्याकै रुद्राक्षैर्योजिता मया ।

अर्पिता तव हस्ते च गृहाण सुरसैन्यप ॥ ११ ॥

इत्यक्षमालार्पणमन्त्रः ।

सुवर्णमुत्तमं लोके भुक्तिमुक्तिप्रदं तथा ।

अर्पितं तव देवेश दैन्याज्ञानापनुत्तये ॥ १२ ॥

इति सुवर्णार्पणमन्त्रः ।

एतत्कृत्वा समस्तं च प्रणम्य च मुहुर्मुहुः ।

प्रासादतो त्रिनिर्गत्य विधानान्तरमादिशे(चरे)त् ॥ १३ ॥

* कमण्डलुमिन्यादिसमर्पयेदित्यन्तश्चाकेन तत्तत्पदार्थसमर्पणं प्रतिज्ञाय तत्र पोरणमन्त्रदर्शनार्थं तत्र मन्त्रा इत्यवतरणं दत्त्वा कमण्डलुर्जलापूर्ण इत्यादयस्ते ते मन्त्रा उक्ताः । तत्र गोमतीतीरेत्यादिगोपीचन्दनसमर्पणमन्त्रदर्शनात्पवित्रगमर्पणमन्त्रे च संख्याया अनुपादानात्तथाऽग्रे स्वर्णसमर्पणमन्त्रदर्शनाच्च पञ्चोपवीतेत्यादितृतीयचरणस्थाने मृत्सुवर्णोपवीतानीतिपाठेन भाव्यमित्यनुमीयते ।

दक्षिणं स्कन्धमारोप्य भागिनेयं तु मातुलः ।
 कुर्यात्प्रदक्षिणास्तिस्त्रस्तूर्यनादसमन्वितः ॥ १४ ॥
 ततोऽवतार्य तं धीमान्स्वस्कन्धाद्भगिनीसुतम् ।
 संपूजयेद्धिरण्यादिसंपद्भिर्भक्तिपूर्वकम् ॥ १५ ॥
 ततो मन्दिरमागत्य स्नायात्तलेन सुव्रतः ।
 ब्राह्मणान्भोजयेद्भूरिधनं तेभ्यः समर्पयेत् ॥ १६ ॥
 एवं कृते विधाने तु सर्वपापहरे शुभे ।
 सप्तजन्मसु विप्रः स्याद्धनाढ्यो वेदपारगः ॥ १७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 कार्तिकेयदर्शनविधानम् ।

अथ ब्रह्मकूर्चविधानम् ।

ब्रह्मशुद्धौ गृहारम्भे सूतके मृतसूतके ।
 यज्ञारम्भे धनप्राप्तौ प्रायश्चित्ते विशेषतः ॥ १ ॥
 रोगमुक्तौ च संपर्के क्षुद्रपापापनुत्तिषु ।
 विदध्याद्ब्रह्मकूर्चं च मासि मांस्यपि वा द्विजः ॥ २ ॥

तत्र ब्रह्मकूर्चलक्षणम्—

दुग्धं दधि घृतं मूत्रं पञ्चमं गोमयं तथा ।
 देहशुद्ध्यर्थमादिष्टं पवित्रं गव्यपञ्चकम् ॥ ३ ॥
 गव्यं तु गोश्च संभूतं क्षीरदध्यादि पञ्चकम् ।
 पृथग्भूतं गवां चैव पञ्चानामिति निश्चयः ॥ ४ ॥
 नवाम्रपल्लवाभा या पीतनेत्रा सुलक्षणा ।
 सा धेनुः कपिला ज्ञेया साक्षाद्विष्णुस्वरूपिणी ॥ ५ ॥
 लाक्षारससमानाभा श्वेतरोम्णी ललाटतः ।
 सा रक्ता कथिता विष्णुस्वरूपा धेनुरुत्तमा ॥ ६ ॥
 या गौः स्फटिकसंकाशा सुस्निग्धा स्निग्धलोचना ।
 सा गौः श्वेता समादिष्टा मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ ७ ॥
 अतसीपुष्पसंकाशा लम्बपीनपयोधरा ।
 सा नीली सुरभिर्ज्ञेया महापापविनाशिनी ॥ ८ ॥

भिन्नाञ्जनसमानाभा पीनोद्धी चारुमस्तका ।

सा कृष्णा कृष्णरूपा च महादोषनिवारिणी ॥ ९ ॥

* कपिलाया घृतं (मूत्रमेकपलं) ग्राह्यमङ्गुष्ठार्धं च गोमयम् ।

क्षीरं सप्तपलं ग्राह्यं दधि त्रिपलमुच्यते ॥ १० ॥

घृतमेकपलं ग्राह्यं पलमेकं कुशोदकम् ।

घृतेन तेजो वीर्यं च घृतमायुर्यशस्करम् ॥

घृतमारोग्यकरणं घृतं रक्षोघ्नमेव च ॥ ११ ॥

नद्यां प्रस्रवणे तीर्थे रहस्ये निर्जने वने ।

यज्ञागारे गवां गोष्ठे देवतायतने तथा ॥ १२ ॥

तत्र स्नात्वा शुचिर्भूत्वा शुक्रयासा जितेन्द्रियः ।

+ गायत्र्या गृह्य गोमूत्रं गन्धद्वारेति गोमयम् ॥

आप्यायस्वेति च क्षीरं दधिक्राव्णोऽथ वै दधि ॥ १३ ॥

तेजोऽसि शुक्र(क्र)मस्यमृतमसि नामधामासि प्रियं देवानां घृतं देवयजन-
मसीत्याज्यम् । देवस्य त्वेति कुशोदकम् । आपो हि एष्टा मयोभुव इति त्र्युचेना-
भिमध्नीयात् ।

पालाशं पाद्मपत्रं च ताम्रभाजनमेव च ।

उदुम्बरमयं पात्रं श्रीवृक्षस्याथ वा भवेत् ॥ १४ ॥

सप्तपत्राश्च ये दर्भा अक्षता यवसंयुताः ।

तेषु केषु च संगृह्य पञ्चगव्यं द्विजोत्तमः ॥ १५ ॥

स्रुवेण जुहुयाद्विद्वांस्तैर्वा यज्ञार्थकोविदः ।

स्वाहाऽग्नये च प्रथमा सोमायेति परा स्मृता ॥ १६ ॥

आहुतिद्वितयं मुख्यं पञ्चगव्ययजौ स्मृतम् ।

मा नस्तोक इदं विष्णुर्गायत्री ब्रह्मजेत्यपि ॥ १७ ॥

* गोमूत्रं ताम्रवर्णायाः श्वेतायाश्चापि गोमयम् ।

पयः काञ्चनवर्णाया नीलायाश्च तथा दधि ॥ १ ॥

घृतं च कृष्णवर्णायाः सर्वं कापिलमेव च ।

अलाभे सर्ववर्णानां पञ्चगव्येष्वयं विधिः ॥ २ ॥

इत्यन्यत्र ।

समग्रस्य तृतीयांशमेतैर्व्याहृतिभिस्तथा ।
 अनले विधिवद्धुत्वा हुतशेषं पिवेन्नरः ॥ १८ ॥
 पञ्चगव्यं महाश्रेष्ठं देवानामपि दुर्लभम् ।
 मासि मासि नरोऽश्रीयात्सर्वपापापनुत्तये ॥ १९ ॥
 अर्धमासे तु योऽश्रीयात्स स्वर्गं प्राप्नुयाद्भुवम् ।
 ब्रह्मलोकमवाप्नोति षष्ठे पष्ठे तु वासरे ॥ २० ॥
 वचस्य(यत्त्वग)स्थिगतं पापं देहे तिष्ठति वै नृणाम् ।
 ब्रह्मकूर्चो दहेत्सर्वं घृतसिक्त इवानलः ॥ २१ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 ब्रह्मकूर्चविधानम् ।

अथ बालकस्योर्ध्वदन्तोद्गमजनितविघ्नभङ्गविधानम् ।

ब्रह्मयामले—

प्रथमं दन्तनिर्मुक्तिरूर्ध्वा बालस्य चेद्भवेत् ।
 क्लेशाय मातुलस्येह तदा प्रोक्ता मनीषिभिः ॥ १ ॥
 विघ्नभङ्गं प्रवक्ष्यामि विधानं विधिपूर्वकम् ।
 सौवर्णं राजतं वाऽपि ताम्रं कांस्यमयं तथा ॥ २ ॥
 दध्योदनेन पूर्णं तु पात्रं दद्याच्छिशोः करे ।
 समन्त्रं भाजनं दत्त्वा संपश्येन्मातुलः शिशुम् ॥
 सालंकारं सवस्त्रं च शिशुमालिङ्ग्य सादरम् ॥ ३ ॥

तत्र मन्त्रः—

रक्ष मां भागिनेय त्वं रक्ष मे सकलं कुलम् ।
 गृहीत्वा भाजनं सान्नं प्रसन्नो भव मे सदा ॥ ४ ॥
 निर्विघ्नं कुरु कल्याणं निर्विघ्नां च स्वमातरम् ।
 त्वमप्यात्मानमातिष्ठ चिरं जीव मया सह ॥ ५ ॥

इति भाजनदानमन्त्रः ।

ततोऽभिनन्दयेद्विद्वान्भगिनीं भगिनीपतिम् ।
 ज्येष्ठाञ्छ्रेष्ठान्गुरुन्विप्रान्पवित्रानभिवादयेत् ॥ ६ ॥

एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ।
 ऊर्ध्वदन्तोद्गमभवं पापं नश्यति तत्क्षणात् ॥ ७ ॥
 बालकं जननी चैव चिरं जीवति मातुलः ।
 तस्मात्प्रयत्नतो विद्वान्विधानं सम्यगाचरेत् ॥ ८ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां बालकस्यो-
 र्ध्वदन्तोद्गमजनितविघ्नभङ्गविधानम् ।

अथ महानदीमहापूरहरविधानम् ।

ब्रह्मपुराणे ब्रह्मनारदसंवादे नारद उवाच—

निस्तरन्ति कथं लोका गङ्गापूरपरिप्लुताः ।
 तन्ममाऽऽचक्ष्व लोकेश सम्यग्विधिविदां वर ॥ १ ॥

श्रीब्रह्मोवाच—

शृणु नारद वक्ष्यामि विधानं विधिपूर्वकम् ।
 तरन्ति येन मनुजा नदीपूरपरिप्लुताः ॥ २ ॥
 पतिप्रियहिते युक्ता सवीरा सुभगा सती ।
 कर्तव्यं हि तया सम्यग्विधानं विधिपूर्वकम् ॥ ३ ॥
 स्नात्वा तैलेन शुद्धेन शुक्लाम्बरधरा सती ।
 आगत्य सरितस्तीरं दण्डवत्प्रणमेन्नदीम् ॥ ४ ॥
 परिधाय नवं वस्त्रं सकूर्पासकमुत्तमम् ।
 शूर्पे षोडशबन्धे च कर्णपत्रादिकं तथा ॥ ५ ॥
 हरिद्रां कुङ्कुमं चैव जीरकं धान्यकं तथा ।
 लवणं च गुडं चैव तण्डुलान्मधुकं तथा ॥ ६ ॥
 अक्षतांश्चन्दनं चापि चन्द्रं कस्तूरिकां तथा ।
 एतत्सर्वं तु शूर्पस्थं समन्त्रं सरितेऽर्पयेत् ॥ ७ ॥

तत्र मन्त्रमाचार्यः समुच्चारयेत्—

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वतीति अन्यान्यापि वारुणानि सूक्तानि जपेत् ।

कराभ्यां शूर्पमादाय सप्तवारं जलं क्षिपेत् ।
सरितः सरितो मध्ये मन्त्रानुच्चार(न्प्रब्रुव)ती सती ॥ ८ ॥

तत्र पौराणमन्त्राः—

गृहाणाढ्यं मया दत्तं गङ्गे त्रिपथगामिनि ।
लोकानुद्धर तीरस्थान्पूरं संहर चाऽऽत्मनः ॥ ९ ॥

इति जपित्वा शूर्पेण जलमध्ये जलं प्रक्षिपेत् । एवं प्रतिमन्त्रं जलमध्ये जलं
क्षिपेत् ।

गङ्गे त्वं पुण्यरूपाऽसि सर्वपापविनाशिनी ।
पूरेण ते जगन्मग्नं समुद्धर समुद्रगे ॥ १० ॥
जीवनं तव लोकानां सुभगं तारणक्षमम् ।
अर्घ्यार्थमर्पितं तुभ्यं गृहाण परमेश्वरि ॥ ११ ॥
अत्युत्कटेन तोयेन सर्वं जगदुपप्लुतम् ।
रक्ष तत्सकलं मातर्बलिदानेन सुव्रते ॥ १२ ॥
स्वर्गे मन्दाकिनी देवी पाताले भोगवत्यसि ।
भागीरथी तु भूलोके गृहाणाढ्यं नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥
उत्तुङ्गबीचिवेगेन प्लावितं जगतीतलम् ।
रक्षितुं तत्समस्तं हि पूरं संहर चाऽऽत्मनः ॥ १४ ॥
पुष्पधूपान्वितं सर्वं बलिं तुभ्यं मया हृतम् ।
गृहाण त्वं जगद्धात्रि कृपया रक्ष भूतलम् ॥ १५ ॥

इति सप्त मन्त्रानुच्चार्य सप्तवारं तेन शूर्पेण गङ्गामध्ये गङ्गाजलं प्रक्षिपेत् ।
तत्सर्वं वस्त्रादिकं गङ्गायां प्रक्षिपेत् । अथ वा तत्स्वरूपिण्यै सुचरित्रायै ब्राह्मण्यै
दद्यात् । ततस्तु तां पुरंध्रीं सर्वे जना नमस्कुर्युः ।

कूर्पासकं च वस्त्रं च कर्णपत्रादिकं तथा ।
कृताञ्जलिपुटाः सर्वे हर्षयेयुः समञ्जसा ॥ १६ ॥
एवं कृते विधाने तु पूरं संहरति क्षणात् ।
दृष्टपुष्टो जनः सर्वो विधानान्नन्दति ध्रुवम् ॥ १७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
महानदीमहापूरहरविधानम् ।

अथोत्पन्नस्य बालकस्य माससंवत्सरवृद्धिविधानम् ।

ल(लु)ब्धजातके—

मासः पूर्णो यदा जातो जननाच्च शिशोस्तदा ।
 कार्यं वृद्धिविधानं तु मात्रा बालस्य वृद्धये ॥ १ ॥
 अभ्यज्य बालकं सम्यक्पलवाद्येन वारिणा ।
 दिपैर्नीराजयेद्वस्त्रं नूतनं च समर्पयेत् ॥ २ ॥
 * अपूपान्पूरकान्साज्यान्ब्राह्मणीभ्यः समर्पयेत् ।
 ब्राह्मणान्भोजयेत्सम्यग्बालकायुर्विवृद्धये ॥ ३ ॥
 अस्योत्पन्नस्य बालस्य सम्यगायुर्विवृद्धये ।
 जन्मर्क्षदेवताप्रीत्यै कृत्यं सर्वं समर्पयेत् ॥ ४ ॥
 एवं कृत्वा मासि मासि बालायुर्वृद्धिदं विधिम् ।
 संप्राप्ते द्वादशे मासि विधानान्तरमादिशे(चरे)त् ॥ ५ ॥
 सुदृढाः कारयेत्स्थूलाः सुवृत्ता वंशपेटिकाः ।
 निधाय मोदकादीनां खाद्यानां तत्र संचयम् ॥ ६ ॥
 आच्छाद्य नूतनैर्वस्त्रैः पूर्णा द्वादश पेटिकाः ।
 जीवत्प्रजासु नारीषु प्रतिसंपादयेत्सुधीः ॥ ७ ॥
 प्रत्यब्दं च ततः कुर्यात्समावृद्धिमनुत्तमाम् ।
 संततेः क्षेमवृद्धयर्थं जननी पुत्रवत्सला ॥ ८ ॥
 यदाऽब्दपष्टिरापूर्णा संप्राप्ते जन्मवासरे ।
 स्नात्वा शुद्धेन तैलेन पूजयेद्वत्सराधिपम् ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेच्छक्त्या तेनाऽऽरोग्यमवाप्नुयात् ॥ ९ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायामुत्पन्नस्य
 बालकस्य माससंवत्सरवृद्धिविधानम् ।

अथ मृत्युंजयविधानम् ।

ग्रहपीडासु सर्वासु महागदनिपीडने ।
 वियोगे बान्धवानां च जनमार उपस्थिते ॥ १ ॥
 गज्यभङ्गे धनगलानावपमृत्युविनाशने ।
 अभियोगे समुत्पन्ने मनोधर्मविपर्यये ॥ २ ॥

* आर्षत्वाल्लिङ्गव्यत्ययः कृत इति भाति । पुरिकाः साग्न्यानि ते तु सम्यगेव ।

मृत्युंजयस्य देवस्य विधानं क्रियते बुधैः ।
 यदाकदाचित्समये प्राप्ते चन्द्रबले शुभे ॥ ३ ॥
 शुभे तिथौ शुभे वारे शुभनक्षत्रसंयुते ।
 शुभे योगे शुभे लग्ने शुभग्रहसमीक्षिते ॥ ४ ॥
 मृत्युंजयस्य देवस्य विधानं शुभदं स्मृतम् ।
 मण्डिते शंकरद्वारि चित्रिते मण्डपान्विते ॥ ५ ॥
 दीपस्थानं तु संशोध्य रत्नकम्बलसंयुते ।
 ब्राह्मणान्वेदशास्त्रज्ञानाहूय गतमत्सरान् ॥ ६ ॥
 स्वस्तिवाचनपूर्वं तु विधानं परमारभेत् * ।
 प्रारब्धस्य च कार्यस्य सदृशो जप उत्तमः ॥ ७ ॥
 ऊनाधिकस्तु कार्याच्च जपो हीनफलः स्मृतः ।
 राष्ट्रभङ्गे जनकेशे महारोगनिपीडने ॥ ८ ॥
 कोटिसंख्यो जपः प्रोक्तो मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ।
 सामान्यगदपीडायां दुष्टस्वप्नस्य दर्शने ॥ ९ ॥
 मृत्युंजयस्य मन्त्रस्य जपो लक्षमितः शुभः ।
 अपमृत्युविनाशाय जपोऽयुतमितः स्मृतः ॥ १० ॥
 दुर्वार्ताश्रवणे जाप्यं सुहृदामनृते क्षुते ।
 यात्रायामयुतं कार्यं सहस्रं वा समाहितैः ॥ ११ ॥
 आदावभ्यर्च्य देवेशं शंकरं लोकशंकरम् ।
 गर्भागारं जलैर्गङ्गैः क्षालयेच्चन्दनान्वितैः ॥ १२ ॥
 दशाङ्गैर्धूपयेद्धूपैः स्नपयेच्छंकरं ततः ।
 पञ्चामृतैः समन्त्रैश्च सपुष्पैः साक्षतैः शुभैः ॥ १३ ॥

तत्र पञ्चामृतान्याह—

पयो दधि घृतं गव्यं शर्करा च शुभं मधु ।
 आप्यायस्वेति च क्षीरं दधिक्रावणस्तथा दधि ॥ १४ ॥
 तेजोऽसि शुक्रमित्याज्यं मधुवातास्तथा मधु ।
 गायत्र्या शर्कराशुद्धिर्जलस्नानं ततः परम् ॥ १५ ॥

* अक्षिडो डित्करणेनानुदात्तेत्त्वलक्षणात्मनेपदस्यानित्यञ्ज्ञापनात्परस्मैपदं कश्चिद्यततीतिवद्बोध्यम् ।

सप्तपिंमते च—

तैलाभ्यङ्गः शुभः शंभोः सर्वकार्येषु चोत्तमः ।
 यथाविधि विधातव्यः सर्वकेशनिवारणः ॥ १६ ॥
 चन्दनेन सुगन्धेन कुर्यादेवस्य लेपनम् ।
 स्थावरे पाणिना कार्यं जङ्गमे सकनिष्ठिकम् ॥ १७ ॥
 ततः पुष्पैर्विधातव्या पूजा देवस्य शूलिनः ।
 कालोद्भवैर्यथोद्दिष्टैवावत्स्यात्स्वमतोरुचिः ॥ १८ ॥
 दशाङ्गैर्भूषयेत्तथाद्भूयैर्निराजयेत्ततः ।
 दीपिकाभिश्च साज्यैस्तु नैवेद्यैः परितोपयेत् ॥ १९ ॥
 तान्बूलमपयेत्साङ्गं प्रीत्यै देवस्य शूलिनः ।
 न्यस्तनीजाक्षरो मन्त्री स्वदेहावयवेषु च ॥ २० ॥
 रुद्राक्षमालिकाहस्तौ जपेच्चिन्तितशंकरम् ।
 यावन्मो जृम्भणं निद्रा शरीरस्यावसर्जनम् ॥ २१ ॥
 जायते मन्त्रिणस्तावदेव स्याज्जप उत्तमः ।
 जपान्ते च पुनः शंभोः प्रतिपूजां तु कारयेत् ॥ २२ ॥
 ततः प्रदक्षिणीकृत्य शंभुं स्वगृहमाव्रजेत् ।
 निर्वर्त्यैवाऽऽह्निकं विद्वान्भुञ्जीयाद्विधिना गृही ॥ २३ ॥
 हविष्यान्नं समर्पिस्तु सभुङ् पायसान्वितम् ।
 भुक्त्वाऽऽचर्य जलैरुष्णैः पुनः शीतैर्जलैस्तथा ॥ २४ ॥
 कृताभ्यशुद्धिः श्चिमाञ्छयात् पृथिवीतले ।
 एवं दिने दिने विद्वान्कृतजाप्यो महामतिः ॥ २५ ॥
 पूर्णसंख्यस्य जाप्यस्य दशांशव्रतं मतम् ।
 पायनेन च साज्येन समिद्धिस्तिष्ठत्यर्पिता ॥ २६ ॥
 श्रीवृक्षस्य फलैः परैः कपलैः शतपत्रकैः ।
 साज्यैरेव तु ग्वर्जैर्गन्धैर्यज्ञफलैस्तथा ॥ २७ ॥
 हवनं कारयेद्विद्वान्कृताचारोचेनक्रियः ।
 ब्राह्मणान्भोजयेत्समन्यग्दशांशेन यजेस्तथा ॥ २८ ॥
 एवं कृते विधाने च सर्वकामफलं लभेत् ।
 चिन्तितार्थस्य सिद्धिः स्यान्नात्र कार्या विवारणा ॥ २९ ॥
 आराध्य विधिवदेवं मृत्युं जयमुपायनिम् ।

गतविघ्नो गतक्लेशः सततं सुखमाप्नुयात् ॥ २० ॥

अथ जाप्यलक्षणम्—

अस्य श्रीत्र्यम्बकमन्त्रस्य वसिष्ठ ऋषिः । मृत्युञ्जयम्द्रो देवता । अनुष्टु-
प्लन्दः । देवदेव्यां प्रणमो वीजशक्ती । सर्वकामसिद्धयर्थं जपे विनियोगः ।

अत्र मूलमन्त्रेण करशुद्धिं कृत्वा प्रणवं करतलयोर्विन्यस्य व्याहृत्यादिमन्त्र-
पादचतुष्टयं सर्वं च करयोरङ्गुष्ठादिकनिष्ठिकान्तमङ्गुलिषु विन्यस्य

ॐ त्र्यम्बकं सर्वज्ञाय हृदयाय नमः । ॐ यजामहे तृप्तिरूपाय शिरसे
स्वाहा । ॐ सुगन्धिं पुष्टिवर्धनमनादिबोधाय शिवायै वषट् । ॐ उर्वारुकमिव
बन्धनाद्वाञ्छिणे वज्रकवचाय हुम् । ॐ मृत्योर्मुक्षीय नित्यमलुप्तमूर्तये नेत्रत्रयाय
वौषट् । ॐ माऽमृतादचिन्त्यानन्तशक्तयेऽस्त्राय फट् । एवं सर्वेण मन्त्रेण व्यापक-
न्यासं कृत्वा देहाङ्गन्यासमारभेत ।

ॐ त्र्यं त्र्यक्षेशाय त्रिनेत्राशक्तिसहिताय शिवायां पादुकां पूजयामि ।
ॐ वं वालाकतेजसे वालाशक्तिसहिताय शिरसि पादुकां पूजयामि । ॐ कं काला-
न्तकेशाय कल्याणीशक्तिसहिताय ललाटे पादुकां पूजयामि । ॐ यं यज्ञेशाय
यज्ञरूपाशक्तिसहिताय श्रुयोः पादुकां पूजयामि । ॐ जां जालंधरेशाय
ज्वालामुखीशक्तिसहिताय नेत्रयोः पादुकां पूजयामि । ॐ मं महादेवेशाय
महाशक्तिसहिताय श्रोत्रयोः पादुकां पूजयामि । ॐ हं हाकिनीशाय हिमवती-
शक्तिसहिताय नासिकायां पादुकां पूजयामि । ॐ मुं सुधीणाय सुगन्धाशक्ति-
सहिताय कपोलयोः पादुकां पूजयामि । ॐ गं गङ्गाधरेशाय गम्भीराशक्ति-
सहितायोर्ध्वेष्टे पादुकां पूजयामि । ॐ धिं धीमहीशाय धीराशक्तिसहितायाध-
रोष्ठे पादुकां पूजयामि । ॐ पुं पुण्डरीकाक्षेशाय पूर्णाशक्तिसहितायोर्ध्वदन्तेषु
पादुकां पूजयामि । ॐ त्रिं त्रीवनेशाय त्रीवना (?) शक्तिसहितायाधोदन्तेषु
पादुकां पूजयामि । ॐ वं वरिष्ठेशाय वरेण्याशक्तिसहिताय जिह्वायां पादुकां
पूजयामि । ॐ र्धं धन्वीशाय ध्वान्ताशक्तिसहिताय हर्ता पादुकां पूजयामि ।
ॐ नं नदीस्वामीशाय नादिनीशक्तिसहिताय वक्त्रे पादुकां पूजयामि । ॐ उं
युद्धि (उमुद्धी)शायोमाशक्तिसहिताय कण्ठे पादुकां पूजयामि । ॐ र्वां वारुणी-
शाय वामाशक्तिसहिताय अहन्वयोः पादुकां पूजयामि । ॐ रू रूद्रेशाय रूप-
वतीशक्तिसहिताय दादोः पादुकां पूजयामि । ॐ कं कान्तीशाय कान्ताश-
क्तिसहिताय हस्तयोः पादुकां पूजयामि । ॐ मिं मीदुप्रमीशाय मङ्गलाश-

क्तिसहिताय वक्षसि पादुकां पूजयामि । ॐ वं वेदवेदेशाय वेदगर्भेशाय वेद-
गर्भाशक्तिसहिताय स्तनयोः पादुकां पूजयामि । ॐ वं वकीशाय बन्दिनीशक्ति-
सहिताय हृदये पादुकां पूजयामि । ॐ धं धर्मीशाय धनुष्मतीशक्तिसहिताय
नाभौ पादुकां पूजयामि । ॐ नान्नाकेश्वरेशाय पुष्टिशक्तिसहिताय कंधरायां
पादुकां पूजयामि । ॐ मं मृत्युंजयेशाय मृत्युनाशिनीशक्तिसहिताय गुह्ये पादुकां
पूजयामि । ॐ त्यों त्यादीशाय त्यादिशक्तिसहिताय पायौ पादुकां पूजयामि ।
ॐ मुं मुक्तीशाय मुकुंदाशक्तिसहिताय कट्यां पादुकां पूजयामि । ॐ क्षीं क्षिती-
शाय क्षेमकरीशक्तिसहिताय ज्ञान्वोः पादुकां पूजयामि । ॐ यं योगिनीशाय
यन्त्रभेदिनीशक्तिसहितायोर्वोः पादुकां पूजयामि । ॐ मां माङ्गल्येशाय
महर्द्धिशक्तिसहिताय जङ्घयोः पादुकां पूजयामि । ॐ मृं मृत्युविनाशनेशाय
मृतवतीशक्तिसहिताय गुल्फयोः पादुकां पूजयामि । ॐ तात्तान्त्रिकेशाय तन्वती-
शक्तिसहिताय पादयोः पादुकां पूजयामि ।

इति वर्णन्यासः ।

ॐ इयम्बकं त्रिपुरान्तकेशाय त्रिलोक्याशक्तिसहिताय शिरसि पादुकां
पूजयामि । ॐ यजा यज्ञपतीशाय स्वाहाशक्तिसहिताय ललाटे पादुकां पूज-
यामि । ॐ महे महत्तत्त्वेशाय मायाशक्तिसहिताय श्रोत्रयोः पादुकां पूजयामि ।
ॐ सुं सुखीशाय सुरुचिशक्तिसहिताय चक्षुषोः पादुकां पूजयामि । ॐ गन्धि
गगनेशाय गगनाशक्तिसहिताय नासिकायां पादुकां पूजयामि । ॐ पुष्टिं पुरु-
पेशाय पुरंदरीशक्तिसहिताय वक्त्रे पादुकां पूजयामि । ॐ वर्धनं वरदेशाय
वशं करणीशक्तिसहिताय बाह्वोः पादुकां पूजयामि । ॐ उर्वा, उमाव-
तीशायोर्ध्वरेतःशक्तिसहिताय हृदये पादुकां पूजयामि । ॐ रुक् रूपवतीशाय
रुक्मशक्तिसहिताय कुक्षयोः पादुकां पूजयामि । ॐ मित्र मित्रेशाय मित्रिकाश-
क्तिसहिताय नाभौ पादुकां पूजयामि । ॐ बन्धनाद्बालचन्द्रमौलीशाय बर्वरी-
शक्तिसहिताय कट्यां पादुकां पूजयामि । ॐ मृत्योर्मेन्वीशाय मन्त्रशक्तिसहि-
ताय गुह्ये पादुकां पूजयामि । ॐ मुक्षीय मुक्तिकरीशाय मुक्तिशक्तिसहिताय
ज्ञान्वोः पादुकां पूजयामि । ॐ मा महाकालेशाय महाशक्तिसहिताय जङ्घयोः
पादुकां पूजयामि । ॐ [अ] मृतादमृतेशायामृताशक्तिसहिताय पादयोः पादुकां
पूजयामि ।

इति पा(प)दन्यासः ।

ॐ त्र्यम्बकं भवेशाय भूक्ति(ति) शक्तिसहितायाऽऽधारे पादुकां पूजयामि ।
 ॐ यजामहे सर्वेशाय शर्वाणीशक्तिसहिताय स्वाधिष्ठाने पादुकां पूजयामि ।
 ॐ सुगन्धि रुद्रेशाय विभुषा(त्व) शक्तिःसहिताय मणिपूरे पादुकां पूजयामि ।
 ॐ पुष्टिवर्धनं पुरुषवरदेशाय वंशवर्धनीशक्तिसहितायानाहते पादुकां पूजयामि ।
 ॐ उर्वारुकमिवोग्रेशायोग्राशक्तिसहिताय विशुद्धे पादुकां पूजयामि । ॐ बन्ध-
 नान्महादेवेशाय मानवीशक्तिसहितायाऽऽज्ञायां पादुकां पूजयामि । ॐ मृत्यो-
 र्मुक्षीय भीमेशाय भद्रकालीशक्तिसहिताय ब्रह्मरन्ध्रे पादुकां पूजयामि । ॐ
 माऽमृतादीशानेशायेश्वरीशक्तिसहिताय सहस्रदले पादुकां पूजयामि ।

इति वाक्यन्यासः ।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे त्र्यम्बकेशायाम्बिकाशक्तिसहिताय पूर्ववक्त्रे पादुकां
 पूजयामि । ॐ सुगन्धि पुष्टिवर्धनं मृत्युञ्जयेशाय वामाशक्तिसहिताय दक्षिण-
 वक्त्रे पादुकां पूजयामि । ॐ उर्वारुकमिव बन्धनान्महादेवाय भीमाशक्तिसहिताय
 पश्चिमवक्त्रे पादुकां पूजयामि । ॐ मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्संजीवनेशाय रौद्रीश-
 क्तिसहितायोत्तरवक्त्रे पादुकां पूजयामि ।

इति चरणन्यासः ।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनं महेशाय गौरीशक्तिसहिताय दक्षि-
 णपार्श्वे पादुकां पूजयामि । ॐ उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृताच्छां-
 भवीशाय व्यापिनीशक्तिसहिताय वामपार्श्वे पादुकां पूजयामि ।

इत्यर्धचर्चन्यासः ।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनम् ।

उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ॥

सर्वाख्येशायानाख्याशक्तिसहिताय सर्वशरीरे पादुकां पूजयामि ।

इति समग्रचर्चन्यासः ।

एवं षड्विधदेहाङ्गन्यासं कृत्वा षडङ्गन्यासमारभेत ।

ॐ नमो भगवते त्र्यम्बकाय शूलपाणिने हृदयाय नमः । ॐ नमो भगवते
 रुद्रायामृतमूर्तये मां जीवय शिरसे स्वाहा । ॐ नमो भगवते रुद्राय चन्द्रशिरसे
 जटिने शिखायै वषट् । ॐ नमो भगवते त्रिपुरान्नाकाय हां हीं हूं कवचाय
 हुम् । ॐ नमो भगवते त्रिलोचनाय ऋग्यजुःसाममन्त्राय नेत्रत्रयाय वौषट् ।

ॐ नमो भगवते बह्नित्रयाय महामृत्युंजय ज्वल ज्वल मां रक्ष रक्षाघोरास्त्राय फट् ।

एवं न्यासादिकं कृत्वा शिवो भूत्वा शिवं यजेत् ।

ततश्चन्द्रमण्डलोपरिवद्धपद्मासनस्थं प्रवहदमृतचन्द्रकलाधरं योगमुद्रायद्धाधरह-
स्तद्वयममृतपूर्णकलशोत्तरहस्तद्वयं सोमसूर्याग्निलोचनं पिङ्गलजगज्जूटं नागभूषितं
भक्तानुकम्पिनं रुद्रं ध्यात्वा स्नेहपूर्णेन मनसा पूर्वोक्तेन विधानेनार्चयित्वा
शरणं व्रजेत् ।

हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो

द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवल्यं द्वाभ्यां वहन्तं परम् ।

अङ्कन्यस्तकरद्वयामृतचटं कैलासबन्धं शिवं

स्वच्छा(वद्धा) स्मोजगतं मुचन्द्रमुकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे ॥ ३१ ॥

एवं ध्यानपरां जपं कुर्यात् ।

अथ मतान्तरम् ।

ॐ त्र्यम्बकमिति मन्त्रस्य मैत्रावरुणवभिष्ट कृषिः । रुद्रो देवता । अनुष्टु-
पछन्दः । त्र्यम्बकमन्त्रजपे विनियोगः ।

अत्र मूलमन्त्रेण करशुद्धिं कृत्वा प्रणवं करतलयोर्विन्यस्य व्यापकन्यासं
कुर्यात् । व्याहृत्यादिमन्त्रपादचतुष्टयं सर्वं च करतलयोरङ्गुलीषु विन्यसेत् ।
ततो देहाङ्गन्यासमारभेत ।

ॐ त्र्यम्बकमिति शिरसि । यजामह इति ललाटे । सुगन्धिमिति मुखे ।
पुष्टिवर्धनमिति हृदये । उर्वारकलिति नाभौ । बन्धनादिति कक्ष्याम् । मृत्योर्-
न्यूरुद्वये । मुक्षीयेति जानुद्वये । माऽमृतादिति पादद्वये ।

इति देहाङ्गन्यासं कृत्वा षडङ्गन्यासमारभेत ।

ॐ नमो भगवते त्र्यम्बकाय शूलपाणये हृदयाय नमः । ॐ नमो भगवते
रुद्रायामृतमूर्तये मां जीवय शिरसे स्वाहा । ॐ नमो भगवते रुद्राय शिरश्चन्द्राय
जटिने शिखायै वषट् । ॐ नमो भगवते त्रिपुरान्तकाय हां ह्रीं हूं कवचाय हुम् ।
ॐ नमो भगवते त्रिलोचनाय कण्ठायजुःश्यामन्त्राय नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ नमो
भगवते बह्नित्रयाय महामृत्युंजय ज्वल ज्वल रक्ष रक्ष मामघोरास्त्राय फट् । ॐ
भूर्भुवः स्वरोमिति दिग्बन्धः ।

ततश्चन्द्रमण्डलोपरिवद्धपञ्चासनं चन्द्रवर्णं स्वयदमृतवन्द्रकलाधरं योगमुद्राव-
द्धस्तद्वयं सोमसूर्याग्निलोचनं—

वद्धपिङ्गजटाजूटं नागाभरणभूषितम् ।
भक्तानुकम्पिनं कृत्वाऽभ्यर्चनं शरणं ग्रजेत् ॥ ३२ ॥
मृत्युञ्जय महादेव त्राहि मां शरणागतम् ।
जन्ममृत्युजरारोगैः पीडितं कर्मबन्धनैः ॥ ३३ ॥
तावकस्त्वत्स्थितप्राणस्त्वच्चित्तोऽहं सदा मूढ ।
इति विज्ञाप्य देवेशं मन्त्रं त्रैयम्बकं जपेत् ॥ ३४ ॥

ॐ ह्रीं जूं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ—

* त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकामिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥
ॐ स्वः, भुवः, भूः ॐ सः, जूं, ह्रीम्, ॐ ।

ॐ ईशानं मूर्ध्नि । तत्पुरुषं मुखे । अघोरं हृदये । वामदेवमूर्ध्वोः । सद्योजातं
पादयोः । ततो जपं कुर्यात् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
मृत्युञ्जयविधानम् ।

अथ रुद्रानुष्ठानविधानम् ।

चतुर्वर्गेचिन्तामणौ—

अभिशापे महाव्यार्थौ महापापविनाशने ।
यज्ञादो ग्रहपीडायां युद्धयात्रामुखे तथा ॥
अनुष्ठितो नरैरुद्रो रौद्रपीडानिवारणः ॥ १ ॥

* “ अर्थज्ञानं विना कर्म न श्रेयःसाधनं प्रतः । अर्थज्ञानं साधनीयं द्विजः श्रेयोर्धिभिस्ततः ” ॥
इत्यभिपुक्तोक्तेर्मन्त्रस्यार्थं प्रदर्शयाम्—

त्र्यम्बकमिति । हे भगवन्, त्र्यम्बकं त्रिनयनं सुगन्धिं दिव्यसौरभपुष्पं पुष्टिवर्धनं स्वभक्तपालनवर्धकं
त्वां यजामहे । यथोर्वारुकं कर्कश्यादेः फले पकं सद्बन्धनं दूषन्तान्मृचयते तथाऽस्मान्मृत्योः सकाशा-
न्मुक्षीय मोचय । अमृतान्मोक्षान्मा मृतीय मा मोचय ।

यजामहे त्रिनयनं त्वां सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
कर्कश्यादिफलं पकं यथा दूषन्तान्मृचयत ॥
तथा मुं योर्मां च शस्मान्मृतान्मा विमोचय ” इति ।

तत्र विधानक्रमः—

एकादशद्विजातीनां प्रथमं वरणं भवेत् ।
 एकादश्यामिन्दुवारे शुभनक्षत्रसंयुते ॥ २ ॥
 प्रातःकाले समुत्थाय स्नात्वा गङ्गाजले शुभे ।
 प्रातर्विधिं समाप्यैव कालश्रवणपूर्वकम् ॥ ३ ॥
 वरणं कार्यमुद्दिश्य कर्तव्यं नूनमृत्विजाम् ।
 ततस्ते शुचयो विप्रा ह्यागत्य शिवमन्दिरम् ॥ ४ ॥
 अर्चयित्वा शिवं सम्यक्पुष्पैर्नानाविधैः शुभैः ।
 कुर्युः षोडश धीमन्तो ह्युपचारान्पृथक्पृथक् ॥ ५ ॥
 मूलमन्त्रेण शर्वस्य सर्वकामफलेच्छया ।
 ततस्तु दीपमासाद्य जपं कुर्युरतन्द्रिताः ॥ ६ ॥
 रुद्रं विन्यस्य सर्वाङ्गे क्रमादक्षरतो बुधाः ।
 नियमेन जपे सिद्धे कुर्युस्ते यजनं ततः ॥ ७ ॥
 आगमोद्दिष्टमार्गेण समाप्य विधिवद्यजिम् ।
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्दद्यात्तेभ्यश्च दक्षिणाः ॥ ८ ॥
 आचार्यमृत्विजः सर्वास्तोषयेत्कनकादिभिः ।
 एकादश वृषान्दद्यादृत्विग्भ्यस्तु सदक्षिणान् ॥ ९ ॥
 सालङ्काराणि वस्त्राणि धान्यानि विविधानि च ।
 एकादशभ्य ऋत्विग्भ्यो दद्याद्रुद्रस्य तुष्टये ॥ १० ॥
 यदि तुष्टो महारुद्रः सिद्धिभिः किं प्रयोजनम् ।
 किं स्यात्तु निधिभिस्तस्य महापद्मादिभिस्तथा ॥ ११ ॥
 कियत्तु पृथिवीस्वाम्यं यज्ञैः किं भूरिदक्षिणैः ।
 तुष्टे सर्वेश्वरे रुद्रे पूजिते च यथाविधि ॥ १२ ॥
 एवंविधं महारुद्रविधाने विहिते सति ।
 अद्वो देवमामोति नात्र कार्या विचारणा ॥ १३ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 रुद्रानुष्ठानविधानम् ।

अथ वृक्षारोपणविधानम् ।

चतुर्वर्गचिन्तामणौ—

अश्वत्थमेकं पिचुमन्दमेकं न्यग्रोधमेकं दश तित्तिडीश्च ।

कपित्थविल्वामलकीत्रयं च पञ्चाम्रवापी नरकं न पश्येत् ॥ १ ॥

तत्र केषांचिदारोपणे सकामता केषांचिदारोपणे निष्कामता । अश्वत्थवट-
निम्बानामारोपणे केवलं निष्कामता । आम्रतित्तिड्यारोपणे केवलं सकामता ।
कपित्थविल्वामलकीनां त्रये द्विस्वभावता । इति पुराणमतम् । अन्येषामपि
पुष्पजातीनां वृक्षाणां सकामनिष्कामताऽस्ति ।

वृक्षगुल्मलतानां च षड्विधोत्पत्तिरिष्यते ।

अग्रमूलैश्च शाखाभिः फलैर्वीजैश्च कन्दकैः ॥ २ ॥

अष्टादशप्रकारैश्च भारसंख्या निगद्यते (?) ।

तेष्वष्टादशभारेषु कुञ्जराशन उत्तमः ।

तथैव वटवृक्षः स्यात्पिचुमन्दोऽपि तादृशः ॥ ३ ॥

तत्राश्वत्थजातौ वर्णचतुष्टयमस्ति । तथा हि—

शुक्लपक्षे मधौ मासे यस्य शुक्लदलोद्भवः ।

दृश्यते स द्विजातिः स्याद्वापितुर्मु(द्वप्तुर्वै मु)क्तिकारकः ॥ ४ ॥

मधावेवासिते पक्षे दृश्यन्ते रक्तपल्लवाः ।

नवीना बोधिवृक्षस्य वापितुर्वि(वप्तुः स्याद्वि)ष्णुलोकदः ॥ ५ ॥

माधवे मासि पीतश्च पल्लवो यस्य दृश्यते ।

सारूप्यं च सिते पक्षे स ददाति च वापितुः (वप्त्रे प्रददाति च) ॥ ६ ॥

वैशाखे कृष्णपक्षे च हरित्पल्लवसंभवः ।

नूतनो दृश्यते यस्य स शूद्रगुण उच्यते ॥ ७ ॥

ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्चत्वार एव च ।

शुक्लो रक्तस्तथा पीतो हरितो जायते क्रमात् ॥ ८ ॥

उप्तो येन वटो भूमौ पुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः ।

संतानैर्नन्दयत्येनं वापितारं (वप्तरं च) न संशयः ॥ ९ ॥

सर्वाङ्गेषु जटा यस्य प्ररोहन्ति च मूलवत् ।

स वटः शंकरः साक्षाद्भुक्तिमुक्तिप्रदो भवेत् ॥ १० ॥

निम्बावरोपणे कर्तुर्गदमुक्तिस्तु जायते ।
 पञ्चाङ्गे सेविते निम्बे महाकुष्ठं विलीयते ॥ ११ ॥
 धात्रीकपित्थविल्वानां रोपणं कीर्तिवर्धनम् ।
 प्रीयते शंकरस्तैस्तु वमुर्नास्त्यत्र संशयः ॥ १२ ॥
 प्रायेण शैशिरे काले वापिते चूतपञ्चके ।
 मङ्गलानि लभेत्कर्ता महापङ्क्तौ महाफलम् ॥ १३ ॥
 राज्यं प्राप्नोत्यविरतं कृतासु बहुपङ्क्तिषु ।
 शिल्पोक्तेन विधानेन नात्र कार्या विचारणा ॥ १४ ॥
 चम्पकाशोकपुंनागजम्बूपाटलिकादिकान् ।
 तरून्वापयिता श्रीमाञ्जायते पृथिवीपतिः ॥ १५ ॥
 पिप्पलः शंकरद्वारि वटो मार्गे चतुष्पथे ।
 जलाशये गवां गोष्ठे रोपितः सर्वकामदः ॥ १६ ॥
 निम्बश्चतुष्पथे रोप्यः सह बोधिद्रुमेण च ।
 यदा फलति साक्षात्स रुद्ररूपी न संशयः ॥ १७ ॥
 पिप्पलस्य दले तस्य निम्बस्य गलितं फलम् ।
 विदधाति शिवे स्वर्णमर्पितं स्वतुलासमम् ॥ १८ ॥
 प्रदक्षिणप्रक्रमणैः सप्तभिः पिप्पलद्रुमः ।
 अभिवन्द्यः शनेः प्रीन्यै नरैः स्वहितमीप्सुभिः ॥ १९ ॥
 संस्पृश्य शनिवारेऽसौ समालिङ्ग्यः पुनः पुनः ।
 अन्यदा प्रणमेन्नैव संस्पृशेत्तु कदाचन ॥ २० ॥
 अश्वत्थसेवया धेनुस्पर्शनेन समालभेत् ।
 गङ्गास्नानफलं सम्यङ्नात्र कार्या विचारणा ॥ २१ ॥
 आम्राणां वापने यत्तु विधानं क्रियते नरैः ।
 वक्ष्यामि तत्समासेन हिताय प्राणिनामिह ॥ २२ ॥
 कृष्णायां भुवि संरोप्यश्वतः पल्लवसंनिधौ ।
 उद्याने वाटिकायां च संशोध्य पृथिवीतलम् ॥ २३ ॥
 मानं धृत्वा भुवः सम्यगष्टादशकरान्तरम् ।
 तत्र तं वापयेद्धीमान्कलबाहुल्यलब्धये ॥ २४ ॥
 धात्री स्वद्वारि संयोज्यां कपित्थं तु चतुष्पथे ।
 शिवप्राकारमध्ये तु वापयेच्छ्रीतरुं पुमान् ॥ २५ ॥

निम्ने देशे तिन्तिडीं तु चम्पकं वाटिकान्तरे ।
उदुम्बरः समारोप्य उद्याने वाऽथवा वने ॥ २६ ॥
अन्ये जम्बवादयो वृक्षा नृपोद्याने जलाश्रये ।
आरोप्य विधिवद्धीमाननन्तं फलमश्नुते ॥ २७ ॥

अथ वल्लीविषये विशेषमाह—

वाटिकायां समारोप्या मृद्वीका शिशिरे शुभा ।
अशोकलतिका निम्ने कुल्यारोधसि माधवे ॥ २८ ॥
केचिन्म(पां म) तेन सा रोप्या माधवीमण्डपान्तरे ।
पिप्पली नागवल्ली च मृदुवृक्षतले तथा ॥ २९ ॥
वाटिकाभ्यन्तरे रोप्या खर्जूरी नालिकेरिका ।
वृन्दावने तु तुलसीं ग्रीष्मान्ते परिवापयेत् ॥ ३० ॥
अन्याश्च पुष्पजातीश्च यथाकालं यथाक्षिति ।
एतस्फलं समालोक्य वापयन्ति तरुन्नराः ॥
ते यान्ति ब्रह्मसायुज्यं विधूतीकृतकल्मषाः ॥ ३१ ॥
इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शिल्पशास्त्रे
भोजकृतवृक्षारोपणविधानम् ।

अथ वृक्षोद्यापनविधानम् ।

चतुर्वर्गचिन्तामणौ—

आरोपितस्य वृक्षस्य कुर्वन्नुद्यापनाविधिम् ।
फलं तु लभते सम्यगन्यथाऽर्धफलं लभेत् ॥ १ ॥

तत्रोद्यापनविधाने विशेषः—

यः काल उदितः सम्यग्विवाहे मुनिपुंगवैः ।
तस्मिन्नेव प्रकर्तव्य उद्यापनविधिस्तरोः ॥ २ ॥
नान्दीश्राद्धं प्रकर्तव्यं पिप्पलोद्यापनाविधौ ।
नवग्रहमखं चाऽऽदौ विदधीत यथावसु ॥ ३ ॥
सहस्रपर्णसंपत्तौ सत्यां बोधितरोर्ध्रुवम् ।
जातकर्मादिकं कुर्याद्भोदानावधिकं ततः ॥ ४ ॥

कार्यमुद्यापनं नूनं विवाहविधिवन्नरैः ।
 पुक्षशाखां समारोप्य समीपे पिप्पलस्य तु ॥ ५ ॥
 आलवाले जलं क्षिप्त्वा शतकुम्भमितं शुभम् ।
 सा शाखा स च वृक्षश्च वस्त्रयुग्मेण वेष्टितः ॥ ६ ॥
 सेचनीयोऽथ दुग्धेन मधुना सघृतेन च ।
 तयोः शाखामयान्हस्तांश्चतुरः परियोजयेत् ॥ ७ ॥
 त्रिसूत्रेण त्रिवृत्तेन सव्यतस्तौ प्रवेष्टयेत् ।
 ब्रह्मवर्णस्य वृक्षस्य विधिरेष सनातनः ॥ ८ ॥
 क्षत्रियस्य तु वृक्षस्य शरो ग्राह्यः परस्परम् ।
 वैश्यः प्रतोदमादद्यात्तुरीये पल्लवग्रहः ॥ ९ ॥

तथा च याज्ञवल्कीये धर्मशास्त्रे—

पाणिर्ग्राह्यः सवर्णासु गृह्णीयात्क्षत्रियः शरम् ।
 वैश्यः प्रतोदमादद्याद्वेदने त्वग्रजन्मनः ॥ १० ॥
 संयोज्य विधिवत्तौ तु पुक्षाश्वत्थौ सुवेष्टितौ ।
 कृत्वाऽग्निवदनं सम्यग्जुहुयात्तिलसर्पिणी ।
 प्रधानदेवता ब्रह्मा वृक्षस्यास्य न संशयः ॥ ११ ॥

तत्र मन्त्रः—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया इति ।
 अष्टोत्तरसहस्रं च जुहुयात्तिलसर्पिणी ।
 ततो व्याहृतिभिर्होमं विदध्याच्च यथारुचि ॥
 चरुं साज्यं तु जुहुयाद्विद्वान्स्विष्टकृते* समम् ॥ १२ ॥

सममित्यस्य कोऽर्थः—साज्याश्चरुतिलाः ।

शान्तिपाठं ततो विद्वान्विप्रैश्च सहितः पठेत् ।
 अग्निपूर्वविभागस्थं ब्रह्माणं पूजितं पुरा ॥ १३ ॥
 स्वर्णमूर्तिफलैः साकं स्वर्णभूषीठसंस्थितम् ।

* तादर्थ्यं चतुर्थी वाच्येति वार्तिकेतादर्थ्यं चतुर्थ्येषा । तथा च स्विष्टकृत्सिद्धयर्थमित्यर्थः ।
 तदुक्तं मिद्धान्तकौमुद्यां भट्टोजीदीक्षितैर्दिदण्ड्यादिभ्यश्चेति सूत्रे—तादर्थ्यं चतुर्थ्येषा । एषां सिद्धयर्थमिति ।

सवस्त्रं च ततो दद्यादाचार्याय महीयसे ॥ १४ ॥

महीयसे सर्वज्ञायेति ।

धेनुं पयस्विनीं दद्यात्सुशीलां वत्ससंयुताम् ।

ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्दद्यात्तेभ्यश्च दक्षिणाम् ॥ १५ ॥

वृक्षवेष्टनवस्त्रे च ब्राह्मणाय समर्पयेत् ।

नीराजयेत्ततो वृक्षं दृढमूलं समाहितम् ॥ १६ ॥

समाहितं दृढवेदिविराजितमित्यर्थः ।

एवं कृते विधाने च पिप्पलोद्यापनाभिधे ।

समग्रं लभते कर्ता फलमारोपगोद्भवम् ॥ १७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां पिप्पलो-
द्यापनविधानम् ।

अथ वटोद्यापनम् ।

तत्रैवोक्तम्—

न बध्नाति फलं यावद्वापितो वटपादपः ।

तावदुद्यापनं नैव कर्तव्यं हितमिच्छता ॥ १ ॥

जाते फले तदा कार्यो वटस्योद्यापनाविधिः ।

आदौ संवरणं कृत्वा परिसंशोध्य भूतलम् ॥ २ ॥

वृत्तं वा चतुरस्रं वा दृढप्राकारसंवृतम् ।

प्राकारान्तस्ततः कुर्यान्मण्डपं तोरणान्वितम् ॥ ३ ॥

मण्डपाभ्यन्तरे कुर्याद्धोमकुण्डं विचक्षणः ।

प्रयुतस्योचितं सम्यक्सर्वलक्षणसंयुतम् ॥ ४ ॥

ऋत्विजस्तत्र कर्तव्याश्चत्वारः कर्मकोविदाः ।

आचार्यलक्षणोपेतमाचार्यं परिकल्पयेत् ॥ ५ ॥

लब्धवर्णं च कुर्वीत ब्रह्माणं यज्ञकर्मणि ।

स्वस्तिवाच्य द्विजाः सर्वे चतुर्वेदपरायणाः ॥ ६ ॥

आदौ वृता ऋत्विजस्तु कृत्वा वह्निमुखं विदः ।

जुहुयुः पायसं साज्यं गायत्र्या प्रयुतं ततः ॥ ७ ॥

सावित्रीप्रीतये सर्वे ततो व्याहृतिभिर्यजिः ।

प्रधानं पायसं चैव सावित्री दैवतं परम् ॥ ८ ॥

कृत्वा स्विष्टकृतं सम्यग्विसृज्य हव्यवाहनम् ।
 पूजितां पूर्वतः पीठे सावित्रीं प्रतिपूजयेत् ॥ ९ ॥
 उपचारैः षोडशभिस्ततः संवरणं तरोः ।
 आरुह्य वेदिकां सम्यक्कुर्यात्स्थण्डिलमुत्तमम् ॥ १० ॥
 अग्निकवत्रं ततः कुर्याद्ध(कृत्वा ह)वनं तत्र कारयेत् ।
 विवाहविधिवद्धीमांस्ततः संवेष्टयेत्तरुम् ॥ ११ ॥
 त्रिसूत्र्या मन्त्रतः सम्यक्परि त्वा गिर्वणस्त्विति ।
 सुवर्णं दक्षिणां दद्याद्धेनुं दद्यात्पयस्विनीम् ॥ १२ ॥
 नैयग्रोधं फलं दद्यात्सौवर्णं श्रोत्रियाय च ।
 सवत्सां महिषीं दद्यादाचार्याय महीयसे ॥ १३ ॥
 वस्त्रयुग्मं ततो दद्यात्तत्पत्न्यै कञ्चुकादिकम् ।
 कुण्डले हस्तमात्राश्च तत्पत्न्यै कर्णभूषणे ॥ १४ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चान्निधुनानि च षोडश ।
 वंशपात्राणि तल्लिङ्गैर्मन्त्रस्तोत्रैर्यथाविधि ॥ १५ ॥
 आचार्यं प्रार्थयेत्पश्चात्सम्यक्संश्लक्ष्णया गिरा ।
 ततः प्रदक्षिणीकृत्य न्यग्रोधस्य समाहितः ॥ १६ ॥
 सम्यक्फलमवाप्नोति वटस्योद्यापने कृते ।
 यज्ञैः किं बहुभिर्दानैस्तपोभिस्तीर्थसाधनैः ॥
 आरोपिते वटे नृणां साक्षाच्छंकरविग्रहे ॥ १७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 वृक्षोद्यापनविधानम् ।

— — —

अथ तडागादिजलाशयोद्यापनविधानम् ।

भविष्यपुराणे—

देवखाते तडागे च पुष्करिण्यां सरोवरे ।
 वाण्यां कूपे विशेषेण कुर्यादुद्यापनाविधिम् ॥ १ ॥

युधिष्ठिर उवाच—

तरन्ति मनुजाः सम्यक्पतिता भवसागरे ।
 प्रयान्ति तत्र सायुज्यं तन्ममाऽऽचक्ष्व माधवी ॥ २ ॥

श्रीकृष्ण उवाच—

संसारगहने घोरे पतिता ये शरीरिणः ।
 तेषामुद्धरणार्थाय विधानं चिन्तितं मया ॥ ३ ॥
 तडागो वा सरो वाऽपि देवखातं तथाऽपि वा ।
 दीर्घिका वापिका कूपस्तथा पुष्करिणी शुभा ॥
 कुल्या तु कृत्रिमा कार्या सर्वपापापनुत्तये ॥ ४ ॥

तत्रैतेषां जलाशयानां लक्षणानि वक्ष्ये—

कुल्यामाबध्य पाषाणैर्निम्नां तु निखनेन्महीम् ।
 तत्र यज्जलमातिष्ठेत्स तडागः प्रकीर्तितः ॥ ५ ॥
 जलान्तः शोधयेद्भूमिं तत्र कुर्यात्प्रणालिकाम् ।
 आरोपयेच्च नलिनीः सर्वजात्याः प्रयत्नतः ॥ ६ ॥
 तन्मध्ये रोपयेत्स्तम्भं काष्ठजं वा शिलामयम् ।
 सरस्यारोपयेद्बृक्षान्वाटिकास्तत्र कारयेत् ॥ ७ ॥
 प्रतिष्ठां देवतानां तु सरस्यन्ते नियोजयेत् ।
 सरस्तत्कृत्रिमं विद्याल्लोकानन्त्याय कल्पते ॥ ८ ॥
 लक्षणं देवखातस्य गिरौ यत्परिवर्तते ।
 सहजं कृत्रिमं वाऽपि स्तम्भस्तु बहुभिर्वृतम् ॥ ९ ॥
 गिरौ वा पथि वा कार्यं शीतलैर्निर्झरैर्युतम् ।
 गम्भीरान्तं सूक्ष्ममुखं सोपानपङ्क्तिशोभितम् ॥
 तद्देवखातमुद्दिष्टं मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ १० ॥
 दीर्घाभिर्दीर्घिका ज्ञेया द्विवक्त्रा निम्नभूतला ।
 शोधिता जलपर्यन्तं दृढपापाणशोभिता ॥
 सा दीर्घिका विजानीयाल्लोकानन्त्यप्रदा नृणाम् ॥ ११ ॥
 वापिका चतुरास्या स्याद्घटिताश्मसमावृता ।
 मधुहन्तुः समायुक्ता चतुर्विंशतिमूर्तिभिः ॥ १२ ॥
 चराहं कारयेत्तत्र शेषं कूर्मसमाश्रयम् ।
 भूगोलं कोलदेहस्थं समग्रं कारयेत्सुधीः ॥ १३ ॥
 अन्यैस्तु देवलिङ्गैश्च बहुभिः परिशोभिता ।
 पुरे वा पथि वा कार्या तथा देवस्य संनिधौ ॥ १४ ॥
 वाटिकायां नृपोद्याने सा कार्या मुक्तिमीप्सुभिः ।

चतुरास्या द्विवक्त्रा वा त्रिवक्त्रा वा प्रकल्पिता ॥
 सा वापिका समुद्दिष्टा लोकानन्त्यप्रदा नृणाम् ॥ १५ ॥
 कूपस्तु मन्दिरे प्रोक्तो बद्धः सोपानपङ्क्तिभिः ।
 कपाटेन युतो वक्त्रे कूपः स परिकीर्तितः ॥ १६ ॥
 एकवक्त्रा पुष्करिणी सुलभा सर्वदेहिनाम् ।
 जलार्थिनां पशूनां च सुगमा या पदक्रमे ॥
 शिल्पविद्भिः समुद्दिष्टा श्रेष्ठा पुष्करिणीफले ॥ १७ ॥
 पिवेत्पानोयमेका गौस्तृपातोऽन्योऽपि कश्चन ।
 कर्तुः स्वर्गफलायाऽऽशु कल्पते किं ततोऽधिकः ॥ १८ ॥
 कुल्यामानीय निम्ने तु तत्रोद्यानं प्रकल्पयेत् ।
 शालतालतमालादिपादपैरुपशोभितम् ॥ १९ ॥
 इक्षून्सवापयेत्तत्र कदलीकन्दसंचयम् ।
 आर्द्रकं च हरिद्रां वा शालीन्सर्वतुसंभवान् ॥ २० ॥
 एतद्विधानं कुल्यायाः कर्तुः कामविवर्धनम् ।
 सहस्रं मानसादीनां सरसां तु चतुष्टयम् ॥ २१ ॥
 कर्ता तेषां मृडानीशो न तत्रोद्यापनाविधिः ।
 विरजारूढं सरस्तद्वद्भान्धारं सर उत्तमम् ॥ २२ ॥
 कूपेषु वृषभः श्रेष्ठो न तत्रोद्यापनाविधिः ।
 वापीकूपतडागानां कुर्यादुद्यापनं बुधः ॥ २३ ॥
 आदौ निरीक्ष्य तत्कालं ज्योतिःशास्त्रोदितं शुभम् ।
 जलाश्रयात्पश्चिमतो मण्डपं कारयेद्बुधः ॥ २४ ॥
 संशोध्य भूतलं रम्यं स्थण्डिलं तत्र कारयेत् ।
 वानीरसमिधश्चात्र सहस्रं जुहुयाद्बुधः ॥ २५ ॥
 वरुणो देवता चात्र विद्ध्यत्कनकस्य तम् ।
 स्थण्डिलात्पूर्वतः पूज्यः पीठे वानीरसंभवे ॥ २६ ॥
 वस्त्रयुग्मे समासीनो मकरोपरिसंस्थितः ।
 पाशं खड्गं तथा खे(धरन्खे)ष्टं तोमरं चोर्ध्वदक्षिणात् ॥ २७ ॥
 हस्तक्रमं विजानीयात्पाशादीनां चतुष्टये ।
 यच्चिद्धि ते तु मन्त्रेण वारुणं हवनं मतम् ॥ २८ ॥

प्रधानं पायसं प्रोक्तं प्रायश्चित्तं तु सर्पिषा ।
 होमान्ते विधिवत्कुर्यात्प्रतिपूजां च पाशिनः ॥ २९ ॥
 आचार्याय ततो दद्यान्महिषीं च पयस्विनीम् ।
 ब्रह्मणे वस्त्रयुग्मं च ऋत्विग्भ्यो भूरिदक्षिणाः ॥ ३० ॥
 मूर्तिमाचार्यवर्याय दद्याद्वस्त्रसमावृताम् ।
 अभिषेकं ततः कुर्याद्वाप्याः कर्तुः समाहितः ॥ ३१ ॥
 मूर्तीनां च कलान्यासं कुर्याद्देवस्य वज्रिणः ।
 वराहस्य सशेषस्य सकूर्मस्यापि तत्त्रयिन् ॥ ३२ ॥
 तथैव देवखातादिजलाशयविधानकम् ।
 कुर्यात्फलस्य संप्राप्त्यै स्वर्गस्य तु न संशयः ॥ ३३ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्संमानैः परितोषयेत् ।
 एवं कृत्वा तु वाप्यादिजलस्योद्यापनं सुधीः ॥ ३४ ॥
 प्राप्नुयादिन्द्रलोकस्य शाश्वतीं च समीपताम् ।
 यज्ञैः किं बहुभिर्भूष तपोभिर्वा व्रतैस्तथा ॥ ३५ ॥
 एकगोतृसिकृत्तोयं यदि भूमौ विधीयते ।
 यथा गङ्गाजलं श्रेष्ठं तडागाम्बु तथाविधम् ॥ ३६ ॥
 क्षुद्रतोयाशये राजन्विद्यते परतोयता ।
 पञ्च पिण्डाननुद्धृत्य न स्नायात्परवारिषु ॥ ३७ ॥
 इति क्षुद्रजलाशयेषु विशेषः । तथा च याज्ञवल्क्यः—
 शुचिं गातृसिकृत्तोयं प्रकृतिस्थं महीगतम् । इति ।
 तथा दानखण्डे—

जलाधारं जगत्सर्वं जलाधारा हि देवताः ।
 तस्माज्जलप्रदानेन प्रीतो भवतु केशवः ॥ ३८ ॥
 इति जलप्रशंसा ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 तडागादिजलाशयोद्यापनविधानम् ।

अथ प्रपाविधानम् ।

भविष्यपुराणे कृष्णयुधिष्ठिरसंवादे । युधिष्ठिर उवाच—

कथं कृष्ण तरन्त्यत्र संसारे पतिता नराः ।
स्वल्पेनैव तु कालेन तथा दानेन शंस मे ॥ १ ॥

श्रीकृष्ण उवाच—

विधानमेकमतुलं सामान्यनरसेवितम् ।
प्रपाख्यं विद्धि राजेन्द्र कथ्यमानं मया शृणु ॥ २ ॥
यस्मिन्पथि जलं नास्ति नास्ति ग्रामः समीपगः ।
प्रपा तत्र प्रकर्तव्या स्वर्गभोगेप्सुभिर्नरैः ॥ ३ ॥
माघमासेऽसिते पक्षे शिवरात्रौ विशेषतः ।
कृत्वा तु मण्डपं रम्यं चतुर्द्वारं सुशोभितम् ॥ ४ ॥
शाला शिलामयी कार्या दृढैः स्तम्भैर्विराजिता ।
एकवक्त्रा द्विवक्त्रा वा पूर्वोत्तरमुखा शुभा ॥ ५ ॥
मार्गाणां सति बाहुल्ये यत्र कुत्र च वर्त्मनि ।
तत्र तां कारयेद्धीमान्मणिकं च निधापयेत् ॥ ६ ॥
दृढग्रावमयं रम्यं मृन्मयं वा समाहितः ।
पूर्वजांस्तु समुद्दिश्य स्वर्गकामोऽथ वाऽऽत्मनः ॥ ७ ॥
प्रावृट्समयपर्यन्तं जलैः स्वच्छैः प्रपूरयेत् ।
यवागूं तक्रसंयुक्तां व्यञ्जनैस्तु समन्विताम् ॥ ८ ॥
अन्यैर्वा बहुभिश्चान्नैः सघृतैश्चैव संयुताम् ।
ताम्बूलं लवणं वाऽपि खट्वा नानाविधास्तथा ॥ ९ ॥
प्रपायां योजयेच्छक्त्या जलं वा केवलं तथा ।
ब्राह्मणार्थं पृथक्पात्रं ब्रह्मचिह्नेन लक्षितम् ॥ १० ॥
स्वस्तिवाचनपूर्वं तु सर्वमेतत्प्रकल्पयेत् ।
एवंविधा प्रपा प्रोक्ता विद्वद्भिर्धर्मकोविदैः ॥ ११ ॥
शिशूनां जननी यद्वत्क्षुत्तृपाहरणे क्षमा ।
सर्वेषामपि राजेन्द्र मार्गगाणां तथा प्रपा ॥ १२ ॥
नन्दन्ति पितरस्तस्य तुष्यन्ति कुलदेवताः ।
स्तुवन्ति मनुजास्तं तु येनाध्वनि कृता प्रपा ॥ १३ ॥
क्रतुकोटिशते यत्तु पुण्यं संलभते नरः ।
तथा मन्दिरवीक्षायां प्रपाकृत्तद्वाप्नुयात् ॥ १४ ॥

दुर्भिक्षे ग्रासमात्रात्तं ग्रीष्मे विन्दुसमं जलम् ।
 तुलितं क्रतुलक्षेण द्वयमेतत्ततोऽधिकम् ॥ १५ ॥
 प्रपा तु द्विविधा प्रोक्ता मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ।
 चरा वाऽप्यचरा राजन्सर्वकामविवर्धिनी ॥ १६ ॥
 कावडिस्थेन तोयेन (वीवधेन समाहृत्य) मार्गे यत्प्राप्यते जलम् ।
 मनुजान्विद्धि राजेन्द्र प्रपा सा स्थावरेतरा ॥ १७ ॥
 शालायां मणिके तोयं लोकार्थं यन्निधीयते ।
 सा प्रपा स्थावरा ज्ञेया लोकानन्त्यप्रदायिनी ॥ १८ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 प्रपाविधानम् ।

अथान्नसत्रविधानम् ।

भविष्यपुराणे—

भूपतेः सर्वधर्मार्थं किं पुण्यं वद केशव ।
 सर्वदा क्रियमाणं च सर्वकामसुखास्पदम् ॥ १ ॥

श्रीकृष्ण उवाच—

यदीच्छसि महाराज्यमिहामुत्र महासुखम् ।
 तत्प्रयच्छ कुरुश्रेष्ठ स्वन्नसत्रं यथेच्छया ॥ २ ॥
 यो यदिच्छति राजेन्द्र तस्मै तच्च प्रदीयते ।
 अन्नं बहुविधं तद्धि स्वेच्छाभोजनमुच्यते ॥ ३ ॥
 अन्नमेकविधं दत्तं बहुधा वा प्रकल्पितम् ।
 अनन्तसुखदं ज्ञेयं दातुर्नात्र विचारणा ॥ ४ ॥
 कार्तिके वाऽथ माघे वा श्रावणे शुद्धिसंयुते ।
 प्रारभेतान्नसत्रं तु प्रीतये सर्वनाकिनाम् ॥ ५ ॥
 वारिदस्तृप्तिमाप्नोति सुखमक्षयमन्नदः ।
 तिलप्रदः प्रजामिष्टां दीपदश्चक्षुरुत्तमम् ॥ ६ ॥

अनेन प्रकारेणाक्षयसुखप्राप्तिरन्नदानेन भवेत् । यतः कारणादन्नदानेन सर्व-
 मेव घटते तेन कारणेन भूभुजाऽन्नसत्रं विधातव्यम् ।

आहूय ब्राह्मणान् राजा स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ।
 प्रारभेतान्नसत्रं तद्यत्र सौख्यं निरामयम् ॥ ७ ॥
 तीर्थे वाऽपि पुरे वाऽपि तथैव च महापथे ।
 जलाशयसमीपस्थं विदध्यात्सत्रमण्डपम् ॥ ८ ॥
 महानसं समाधाय सर्वोपस्करसंयुतम् ।
 मुसलोलूखलादीनि पाकयन्त्राणि सर्वदा ॥ ९ ॥
 निधापयेद्बहून्याशु तुल्या(लादी)नि समन्ततः ।
 घृतकुम्भांस्तैलकुम्भान्व्यञ्जनानि बहून्पि ॥ १० ॥
 पर्णानि विहितान्येव शाकान्नानाविधांस्तथा ।
 तैलानि भाण्डनिचयं दधिक्षीरघटान्वहून् ॥ ११ ॥
 सूदान्प्रस्थापयेत्तत्र कुशलान्पाककर्मसु ।
 आन्धसिकवधूस्तत्र शुचिचित्तान्निधापयेत् ॥ १२ ॥
 गिरिजानलभीमानां ग्रतेषु परिशिक्षितान् ।
 सर्वर्तुषु प्रदातव्यमिच्छापूर्त्यै चतुर्विधम् ॥ १३ ॥
 अन्नं तु तृप्तिपर्यन्तं साधुशब्दसमन्वितम् ।
 आचान्तेभ्यस्ततो दद्यात्ताम्बूलं च सुसंस्कृतम् ॥ १४ ॥
 शय्यां दद्याच्छयालुभ्यः पादशौचं च कारयेत् ।
 एवं यः कुरुते राजा प्राप्नुयात्स सुखं परम् ॥
 सत्रिणः सूतकं नास्ति स्मृतिरेषा सनातनी ॥ १५ ॥

तत्र याज्ञवल्क्यः—

ऋत्विजां दीक्षितानां च यज्ञकर्म प्रकुर्वताम् ।
 सत्रिव्रतिब्रह्मचारिदातृब्रह्मविदां तथा ॥ १६ ॥
 नन्दन्ति पितरस्तस्य कुलानि च पितामहाः ।
 अन्नदोऽस्मत्कुले जात इति संचिन्त्य सर्वदा ॥ १७ ॥
 नित्यं गयायजिस्तस्य नित्यं गङ्गावगाहनम् ।
 नित्यं तुलाप्रदानं च पुंसो नित्यान्नसत्रिणः ॥ १८ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालाया-
 मन्नसत्रविधानम् ।

अथ दत्तकपुत्रविधानम् ।

शौनकस्मृतौ शौनक उवाच—

इदानीं संप्रवक्ष्यामि पुत्रसंग्रहमुत्तमम् ।
 बन्ध्या मृतप्रजा वाऽपि पुत्रार्थं समुपोष्य च ॥ १ ॥
 आधाय विधिवद्वह्निं स्वगृहोक्तेन वर्त्मना ।
 बन्धूनाहूय सर्वास्तु ग्रामस्वामिनमेव च ॥ २ ॥
 वाससी कुण्डले छत्रमुष्णीषं चाङ्गुलीयकम् ।
 दद्यादाचार्यवर्याय संपूज्य द्विजपुंगवान् ॥ ३ ॥
 मधुपर्कं ततो दद्यात्पृथिवीशाय शालिने ।
 पायसं चैव साज्यं च शतसंख्यं तु हावयेत् ॥ ४ ॥

प्रजापते न त्वदिति प्रजापतिमुद्दिश्य जुहुयात्स्विष्टकृतं हुत्वा होमं समाप्य
 दातुः समीपं गत्वा पुत्रं देहीति याचेत ।

समक्षस्थो ददत्तस्मै ये यज्ञेनेति पञ्चभिः ।
 देवस्य त्वेति मन्त्रेण हस्ताभ्यां प्रतिगृह्यं च ॥
 अङ्गदङ्गेत्यृचं जप्त्वा चाऽऽघ्राय शिशुमूर्धनि ॥ ५ ॥

वस्त्रादिभिरलंकृत्य च्छत्रच्छायाविषण्णं कृत्वा ।

नृत्यगीतैश्च वादित्रैः स्वस्तिशब्दैश्च संयुतम् ।
 यस्त्वा हृदेति द्वाभ्यां तु तुभ्यमग्र ऋचैकया ॥ ६ ॥
 सोमो दददित्येताभिः प्रत्यृचं पञ्चभिस्तथा ।
 स्विष्टकृदवशेषं च कृत्वा होमं समापयेत् ॥
 ब्राह्मणानां सपिण्डेषु कर्तव्यः पुत्रसंग्रहः ॥ ७ ॥

तदभावेऽलाभे वाऽसपिण्डस्थोऽपि ।

क्षत्रियाणां स्वजातौ वा गुरुगोत्रे समेऽपि वा ।
 वैश्यानां वैश्यजातौ च दत्तपुत्रविधिः स्मृतः ॥
 शूद्राणां शूद्रजातौ च कर्तव्यः पुत्रसंग्रहः ॥ ८ ॥
 यदि स्यादन्यजातीयं गृहीतमपि नन्दनम् ।
 अंशभाजं न कुर्वीत मन्वादीनां मतं हि तत् ॥ ९ ॥

दौहित्रो भागिनेयश्च शूद्रैस्तु क्रियते सुतः ।
 ब्राह्मणादित्रये नास्ति भागिनेयः सुतः क्वचित् ॥ १० ॥
 नैकपुत्रेण कर्तव्यं पुत्रदानं कदाचन ।
 बहुपुत्रेण कर्तव्यं पुत्रदानं यथाविधि ॥ ११ ॥
 दक्षिणां गुरवे दद्याद्यथाशक्ति द्विजोत्तमः ।
 नृपो राष्ट्रार्थमेवापि वैश्यो रत्नशतत्रयम् ॥ १२ ॥
 शूद्रः सर्वस्वमेवापि ह्यशक्तस्तु यथावसु ।
 दत्तपुत्रे यदा जाते कदाचित्त्वौरसो भवेत् ॥ १३ ॥
 पितुर्वित्तस्य सर्वस्य भवेतां समभागिनौ ।
 अविधाय विधानं यः परिनन्दति नन्दनम् ॥ १४ ॥
 विवाहविधिभाजं ते कुर्यान्न धनभाजनम् ।
 तस्मिञ्जाते सुते दत्ते ह्यकृते च विधानके ॥ १५ ॥
 तत्सुतस्यैव वित्तस्य स स्वामी पितुरञ्जसा ।
 जातेष्वन्येषु पुत्रेषु दत्तपुत्रपरिग्रहात् ॥
 पिता चेद्विभजेद्वित्तं नैवांसौ ज्येष्ठभागभवेत् ॥ १६ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शौनकोक्तं
 दत्तकपुत्रविधानम् ।

अथ ब्रह्मयामलोक्तं ग्रहणसूतकदोषदूषितौषध—
 मन्त्रदृढीकरणविधानम् ।

यदा कदाचित्समये ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ।
 वेधदोषेण दुष्यन्ति मन्त्रौषधरसक्रियाः ॥ १ ॥
 तृतीये दिवसे चन्द्रग्रहः सूर्यस्य पश्चमे ।
 यदि स्याद्भेषजं मन्त्रं मन्त्रितं निखनेद्भुवि ॥ २ ॥
 क्षुद्रमन्त्रक्रियाः सर्वमौषधं सूत्रयन्त्रितम् ।
 पृथिव्यां ब्रह्मवर्णायां यत्नतो निखनेद्बुधः ॥ ३ ॥

बीजसंख्यां समाम्नायै सूत्रग्रन्थिपरम्पराम् ।
 संप्रोक्ष्य पयसा भूमिं ततस्तिलकुशोदकैः ॥ ४ ॥
 निखनेत्तत्र तां सूत्रग्रन्थिमालां प्रयत्नतः ।
 शरावसंपुटे धृत्वा पूर्वाशासंमुखः शुचिः ॥ ५ ॥
 ततो दृष्टग्रहे चन्द्रसूर्ययोः स्पर्श एव च ।
 स्नात्वा खातां सूत्रमालां बीजोच्चारैस्तु मोचयेत् ॥ ६ ॥
 बीजैस्तैर्मार्जनं कृत्वा तर्पणं जलमध्यतः ।
 सहस्रं वा शतं वाऽपि जपो मन्त्रस्य कीर्तितः ॥ ७ ॥
 एवं पृथक्पृथक्मन्त्रान्संरक्षेद्ब्रह्मसूतकात् ।
 सर्पवृश्चिकनेत्रादिवृ(त्र)णमन्त्रक्रियोषधम् ॥ ८ ॥
 अभूमिस्थं विधानेन संगोप्यं सिद्धिहेतवे ।
 संगोपिते यदा मन्त्रे द्विगुणं बलमादिशेत् ॥ ९ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां ब्रह्मयामलोक्तं
 ग्रहणसूतकदोषदूषितौषधमन्त्रदृढीकरणविधानम् ।

अथानृतमृतवार्तापग्निहरणविधानम् ।

गर्गसंहितायाम्—

दुष्टस्थाने यदा पुंसो भवेत्क्रूरो नभश्चरः ।
 कुलदेव्याः प्रकोपो वा तदा विघ्नः प्रजायते ॥ १ ॥
 मृत एवेति वार्ता स्यात्सर्वदेशे दुरत्यया ।
 विधानं तत्र कर्तव्यं नरेण हितमिच्छता ॥ २ ॥
 आहूय ब्राह्मणान्सर्वांश्चतुर्वेदपरायणान् ।
 स्नात्वा तैलेन शुद्धेन पूजेयत्कुलदेवताः ॥ ३ ॥
 पितृन्तसंतर्प्य विधिवत्स्वास्तिर्वाच्या द्विजोत्तमैः ।
 जुहुयाद्विधिवद्बह्निमिन्द्रप्रीत्यै समाहितः ॥ ४ ॥

१ ख. °भादाय । २ ख. °य तत्र । ३ ख. °ग्रन्थय° । ४ ख. दृष्टे म° । ५ ख. °धग्निधं
 मन्त्रं सं° । ६ ख. °दिब्रह्म? म° । ७ ख. °माविशे° ।

स्वादिष्ठया मदिष्ठयेति जुहुयादयुतं सुधीः ।
 पायसं सर्पिषा युक्तं प्रधानं द्रव्यमुत्तमम् ॥ ५ ॥
 मूर्तिमिन्द्रस्य हेम्नस्तु पीठे देवतरोः शुभे ।
 पूजितां विधिवद्भक्त्या ह्याचार्याय निवेदयेत् ॥ ६ ॥
 हुते स्विष्टकृते विद्वान्गां प्रदद्यात्पयस्विनीम् ।
 तैलं दद्याद्द्विजातिभ्यो विघ्ननाशाय भूरिशः ॥ ७ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाच्छतं वा शक्त्यपेक्षया ।
 आत्मनस्त्वायसीं मूर्तिं पलैस्तु दशभिः कृताम् ॥
 तैलाभ्यक्तां ततो दद्याद्ब्राह्मणाय सदक्षिणाम् ॥ ८ ॥

तत्रेन्द्रस्य मूर्तिदानमन्त्रौ—

सहस्राक्ष महाबाहो सर्वविघ्नविनाशन ।
 अनेन मूर्तिदानेन सुप्रीतो भव मे सदा ॥ ९ ॥
 अपमृत्युविनाशाय मूर्तिमेतां ददाम्यहम् ।
 तुष्टेन मृत्युनाऽनेन पातकं मे व्यपोहतु ॥ १० ॥
 ततः पुण्यस्त्रियो विप्रा वृद्धाश्च गुरवस्तथा ।
 नीराजयन्ति दुर्वार्ताहरणाय पुनः पुनः ॥ ११ ॥

शतं जीव शरदो वर्धमान इत्याशिषं पठेयुः ।

ततोऽभिषेचनं कुर्युर्दुर्वार्तापीडितस्य च ।
 वृद्धान्प्रणमतस्तस्य दद्युराशीर्वचो द्विजाः ॥ १२ ॥
 ग्रहं तु पूजयेद्दुष्टं प्रणम्य कुलदेवताम् ।
 एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ॥ १३ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां गर्गोक्त-
 मृतमृतवार्ताहरणविधानम् ।

अथ चर्मपात्रशुद्धिविधानम् ।

शङ्खोक्तम्—

चर्मपात्राणि नव्यानि तथा मांसमयानि च ।

पूरितानि घृतेनाऽऽशु शुध्यन्त्येकाह एव तु ॥ १ ॥
 घृतं वा चाथ तैलं वा यावन्निःसरतो मुखात् ।
 चर्मपात्रस्य नव्यस्य तदा शुद्धिस्तु जायते ॥ २ ॥
 तत्तैलं तद्घृतं चैव त्यक्त्वाऽन्यन्निक्षिपेद्घृतम् ।
 व्यवहार्यं भवेत्तत्तु दैवे पित्र्ये च कर्मणि ॥ ३ ॥
 जलपात्राणि नव्यानि शल्कलादीनि चैव हि ।
 त्रयोदशदिनैः शुद्धिं चाऽऽप्नुवन्ति मृदादिभिः ॥ ४ ॥
 मृद्भस्मत्वक्फलैः शुद्धिर्भवेन्निभिस्त्रिभिर्दिनैः ।
 उद्धृत्य सर्षपैः पात्रं व्यवहारं (यं) द्विजातिभिः ॥ ५ ॥

तत्र क्रमः—

स्थूले वा लघुनि ज्ञेया शुद्धिः पात्रे च चर्मणः ।
 मृदादिभिश्च कल्कैश्च वासरैश्च त्रिभिस्त्रिभिः ॥ ६ ॥
 निक्षिपेन्मृत्तिकां कृष्णां सजलां वासरत्रये ।
 ततश्च भस्म तावच्च ततः सप्तत्वचस्यहम् ॥ ७ ॥
 अश्वत्थोदुम्बरप्लक्ष्म्यग्रोधाम्रशिंवास्तथा ।
 जम्बूश्च चर्मणः शुद्धौ विदलस्य प्रकीर्तिताः ॥ ८ ॥
 यदा कदाचिद्भिन्नैस्तु(नं तु)पात्रं शुद्धं तु चर्मणः ।
 संधितं सर्षपैः शुध्येद्दिनेनैकेन सत्त्वरम् ॥ ९ ॥
 शुद्धपात्रं दिने यस्मिन्क्षालयेत्सरितो जलैः ।
 तेनाम्बु प्रक्षिपेन्मूले बोधिवृक्षस्य * बुद्धिमान् ॥ १० ॥
 वृषभेशानयोर्मध्ये कुर्यान्मार्जनमादरात् ।
 ततस्तु तुलसीमूले प्रक्षिपेद्द्वारि भूरि च ॥ ११ ॥
 (ततस्तु ब्राह्मणागारे मणिके वारि भूरिच । +)
 ततः शुद्धं भवेत्पात्रं चर्मणो नात्र संशयः ॥ १२ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 शङ्खोक्तं चर्मपात्रशुद्धिविधानम् ।

* अश्वत्थवृक्षस्येत्यर्थः । + धनुश्चिह्नितग्रन्थः स, पुस्तके नास्ति ।

अथ शिवपूजाविधानम् ।

शिवरहस्ये नन्दिकार्त्तिकेयसंवादे । कार्त्तिकेय उवाच—

नन्दिन्नश्येत्कथं पीडा प्राणिनां रोगसंभवा ।
स्वल्पेन वाऽथ पुण्येन तन्ममाऽऽचक्ष्व सुव्रत ॥ १ ॥

नन्दिकेश्वर उवाच—

यदि प्रसन्नो देवेशः शंकरस्त्रिविलोचनः ।
अन्नपूजादिभिः सर्वैरुपचारैर्मनोस्मैः ॥ २ ॥
तदा नश्यन्ति सर्वेऽपि व्याधयो देहिनां स्फुटम् ।
पित्तज्वरे समुत्पन्ने शिवं संस्त्राप्य वारिभिः ॥ ३ ॥
आदौ पश्चामृते जाते स्नपयेत्पार्वतीपतेः(तिम्) ।
ततश्च शीतलैर्वाभिर्गाङ्गेयैश्चैव चन्दनैः ॥ ४ ॥
स्नपयेत्पार्वतीनाथं ततो धूपैश्च धूपयेत् ।
ततोऽन्नानां प्रकर्तव्या पूजा चित्तप्रमोहिनी ॥ ५ ॥
मण्डकैः परिधिः कार्यः पिण्डिकोपरितः समः ।
तस्याभ्यन्तरतः सम्यक्तथैव मोदकान्न्यसेत् ॥ ६ ॥
ततश्च पूरिकाः स्वच्छा फेणिकास्तदनन्तरम् ।
ततश्च वटकान्निग्नान्दद्यात्प्रोक्तांस्ततस्ततः ॥ ७ ॥
ततस्तु मणिपात्रादौ यत्नाद्भक्तं नियोजयेत् ।
तस्याभ्यन्तरतो योज्यं पायसं सितयम सह ॥ ८ ॥
अष्टोत्तरशतं दीपान्घृतपूर्णान्नियोजयेत् ।
सकपूरांस्तु ज्वलितानासमन्तात्पटानन ॥ ९ ॥
ततस्तु कुसुमैः पूजा प्रकर्तव्या मनीषिभिः ।
ततो ध्वजादिकं सर्वं विदध्याच्छिवतुष्टये ॥ १० ॥
शंकरं प्रार्थयेत्पश्चाद्दण्डवत्प्रणमेन्मुहुः ।
ततः प्रदक्षिणीकृत्य कृताञ्जलिपुटः शुचिः ॥
प्रार्थयेद्देवदेवेशं शंकरं लोकशंकरम् ॥ ११ ॥

तत्र प्रार्थनामन्त्रः—

जगतीनाथ देवेश त्राहि मां शरणागतम् ।
 अनया पूजया विघ्नं त्राहि मां हर मे हर ॥ १२ ॥
 इति प्रार्थयित्वा स्वमन्दिरं गत्वा व्याधितमभिषेचयेत् ।
 यथा अ(ह्य)न्नमयी पूजा तथा धान्यमयी स्मृता ॥ १३ ॥
 तथा वस्त्रमयी ज्ञेया नानारत्नमयी तथा ।
 घनसारमयी पूजा तथा कास्तूरिकी मता ॥
 सर्वासामप्यभावे च पूजा पुष्पमयी शुभा ॥ १४ ॥

तत्र पुष्पविशेषो यत्र कुत्रचित्पुराणान्तरे कालविशेषेण दर्शितः ।

एवं कृते विधाने तु विघ्नः कोऽपि न जायते ।
 हियन्ते व्याधयः सर्वे पूजनात्पार्वतीपतेः ॥ १५ ॥
 शिवालयो नास्ति यत्र नास्ति विष्ण्वादिमन्दिरम् ।
 जङ्गमेऽपि विधातव्या पूजा पूजाविचक्षणैः ॥ १६ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शिवरहस्योक्तं
 सर्वगदनिवारणशिवपूजाविधानम् ।

अथ वृषोत्सर्गविधानम् ।

काशीखण्डे—

एष्टव्या बहवः पुत्रा यद्येकोऽपि गयां व्रजेत् ।
 गौरीं वाऽप्युद्वहेत्कन्यां नीलं वा वृषमुत्सृजेत् ॥ १ ॥

तत्र नीलवृषस्या लक्षणमाह—

लोहितो यस्तु सर्वाङ्गे मुखे पुच्छे च पाण्डुरः ।
 त्रिहायणोऽक्षतो गर्वा स नीलो वृष उच्यते ॥ २ ॥

यस्मिन्यस्मिन्विषये च वृष उत्सृज्यते तानाह—

गङ्गनायां च कुरुक्षेत्रे प्रयागे पुष्करे तथा ।
 गोदावर्यां च सिंहस्थे सुराचार्ये च मानसे ॥ ३ ॥
 इत्यादिषु च तीर्थेषु वृषोत्सर्गो विधीयते ।
 एकादशे च दिवसे मातापित्रोः क्षयेऽहनि ॥ ४ ॥

तत्र विशेषः श्राद्धसमुच्चये गङ्गाधरभट्टविरचिते—

पतिवन्स्त्रीक्षयेऽनङ्गवान्नोत्सृज्यो बुद्धिमन्नरैः ।

स प्रेतत्वहरो यस्मात्तन्नास्ति पतिवत्स्त्रियाः ॥ ५ ॥

+ [तथा च ब्रह्मवैवर्ते—

गयापिण्डे वृषोत्सर्गे कुरुक्षेत्रे च तर्पणे ।

गौरीकन्याविवाहे च पितृणामक्षया गतिः ॥ ६ ॥

तथा च स्मृत्यन्तरे—

अपि पुत्रवती नारी भर्तुरग्रे मृता यदि ।

वृषोत्सर्गे न कुर्वीत गां दद्यात्तु पयस्विनीम्] ॥ ७ ॥

तत्र विधानक्रमः—

कृत्वा स्नानं नदीतोये समाप्याऽऽह्निकमञ्जसा ।

स्वस्तिर्वाच्या द्विजैः सर्वैः स्थण्डिलं चैव कारयेत् ॥ ८ ॥

स्थालीपाकविधानेन कृत्वा च हवनं द्विजः ।

पायसेन प्रधानेन कृत्वा स्विष्टकृतं बुधः ॥ ९ ॥

विसृज्य विधिवद्वाह्निं विवाहविधिवद्भृशम् ।

उक्षाणं तर्णकां नद्यां प्रस्नाप्य शीतलैर्जलैः ॥ १० ॥

उभौ संयोजयेन्मन्त्रैर्वैवाह्यैर्मन्त्रकोविदः ।

वस्त्रैरावेष्टयेत्पश्चादक्षतैरभिमन्त्रयेत् ॥ ११ ॥

हरिद्रा कुङ्कुमं दूर्वा दधि धान्यं च जरिकम् ।

गोरोचनं शतोषधयो हरितालं मनःशिला ॥ १२ ॥

कलशे निहिताः सम्यगभिषेके क्षमाः शुभाः ।

अभिषिच्य ततस्ताभिरुक्षाणं तर्णकामपि ॥ १३ ॥

शीतोष्णेन जलेनैव स्वगृह्योक्तेन कर्मणा ।

सदक्षिणां तर्णकां तु दत्त्वा वृषभमुत्सृजेत् ॥ १४ ॥

+ धनुश्चिह्नितग्रन्थो नास्ति ख. पुस्तके ।

१ ख. 'मन्त्रैः' । २ ख. 'दीतीरे स' । ३ ख. 'णं तर्णकीन' । ४ ख. 'चनशतोषध्या' ।
५ ख. 'तर्पकीम्' । ६ ख. 'यम्' ।

सव्ये कटिदेशे चक्रं चन्दनेन वा कुङ्कुमेन वा संलिख्य दक्षिणे कटिदेशे त्रिशूलं संलिख्य विसृजेत् । ततो यजमान इति पठेत्—

भो भो वृष सुखं तिष्ठ सुखं गच्छ सुखमद्धि तृणं पानीयं पिब गवां पृष्ठतः सन्स्वेच्छया क्रीडन्विचर संरक्षास्मत्कुलम् । पुनीहि पितृनस्माकमवतु त्वां महे-
श्वरः । हरिस्त्वां जीवयतु ।

नासावेधं च युग्यत्वं यः करिष्यति तेऽनघ ।

षष्टिवर्षसहस्राणि कृमिभुक्स भविष्यति ॥ १५ ॥

इति पठेत् ।

शृङ्गयोश्चामरे बद्ध्वा कण्ठे घण्टां सुनादिताम् ।

किङ्किणीयुक्तसर्वाङ्गो रण नूपुरमण्डितः ॥ १६ ॥

एवं नेपथ्ययुक्ताङ्गो विभोक्तव्यो गवां पतिः ।

स तु मुक्तो लसद्देहो यत्र कुत्र च गच्छति ॥ १७ ॥

पितृणां तीर्थयात्रा स्याद्यजमानस्य केवला ।

स पिबेद्यत्र पानीयं वृषराड्बलदर्पितः ॥ १८ ॥

पिबन्ति पितरः कर्तुर्जाह्नवीतोयमेव तत् ।

मूत्रं करोति गोस्वामी पुरीषं यत्र कुत्रचित् ॥ १९ ॥

पुरोडाशसमं विद्यादश्वमेधशताधिकम् ।

शृङ्गाभ्यां च खुराभ्यां च दर्पादुत्किरति क्षितिम् ॥ २० ॥

तद्रजः सकलं प्रोक्तं गयावर्जनवद्बुधैः ।

लाङ्गूलचालनाद्वायुः खे सर्पति सुशीतलः ॥ २१ ॥

पितृणां देहजां ग्लानिं पितृलोके व्यपोहति ।

नन्दन्ति पितरस्तस्य वस(द)न्ति च पितामहाः ॥ २२ ॥

उत्स्रष्टा वृषभस्यैवमस्मद्गोत्रसमुद्भवः ।

पुष्करस्य शतं यात्रा वाराणस्यां शतत्रयम् ॥ २३ ॥

गोदावर्याः सहस्रं च वृषोत्सर्गसमं त्रयम् ।

महालयं गयाश्राद्धं(द्धौ)दधिस्नानं(ने) ह्यक्रतुः ॥ २४ ॥

[* वृषोत्सर्गस्य पुण्यस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ।

* धनुश्चिह्नितो भागः ख. पुस्तके नास्ति ।

१ ख. °ष्ठगः स° । २ ख. ग्लानीं पि° ।

वृषोत्स्रष्टा गयाश्राद्धदाता च (स्य दाता) दुहितुः क्षितेः ॥
उद्धरेत्सप्तगोत्रस्थान्दश पूर्वान्दशापरान् ॥ २५ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
काशीखण्डोक्तं वृषोत्सर्गविधानम् ।

अथ नारायणबलिविधानम् ।

दाल्भ्य उवाच—

भगवन्ब्राह्मणाः केचिदपमृत्युवशं गताः ।
कथं तेषां भवेन्मार्गः किं स्थानं का गतिर्भवेत् ॥ १ ॥
कथं श्राद्धं भवेत्तेषां विधानं च विधीयते ।
त्वत्तोऽहं श्रोतुमिच्छामि ब्रूहि त्वं परमेश्वर ॥ २ ॥

श्रीविष्णुरुवाच—

साधु साधु महाप्राज्ञ कृता पृच्छा गरीयसी ।
ब्रह्मचर्याश्रमादीनां द्विजानामपमृत्युता ॥ ३ ॥
तेषां मार्गो गतिः स्थानं विधानं च विधीयते ।
शस्त्रघातमृता ये च सलिले वा कदाचन ॥ ४ ॥
हयैर्वा ताडिता ये च गोवृषैः कुञ्जरैस्तथा ।
वृक्षेभ्यः पतिता ये च मृता ये च चतुष्पथे ॥ ५ ॥
व्याघ्रैः सर्पैर्वराहैश्च भक्षिताः श्वापदैस्तथा ।
कुष्ठव्याधिमृता ये च मश्वकोपरि ये मृताः ॥ ६ ॥
तूलिकायां मृता ये च कम्बलोपरि ये मृताः ।
गोघ्नश्च ब्रह्महा यश्च तथा स्त्रीबालघातकाः ॥ ७ ॥
वर्णसंकरकर्तारो ब्रह्मसूत्रविवर्जिताः ।
ब्राह्मणानां गुरुणां च तथा ये लिङ्गभेदकाः ॥ ८ ॥
जलाग्निबन्धनभ्रष्टास्तथैवाऽऽत्मप्रहिसकाः ।
विषं यैर्भक्षितं विप्रैः प्रेतसंस्कारलोपकाः ॥ ९ ॥
संतानरहिता ये च क्षयरोगेण ये मृताः ।
कण्ठे ग्रासविलग्नाश्च विष्टिविद्युन्निपातिताः ॥ १० ॥

हता ये करकाघातैः शीतपातैर्मृताश्च ये ।
 अनाहारमृता ये च मार्गश्रमनिपीडिताः ॥ ११ ॥
 स्वलनान्मरणं प्राप्ताः शूलारोपणतो हताः ।
 विषाग्निना मृता ये च मृताः कण्टकपीडनैः ॥ १२ ॥
 एकादशाहे वृषोत्सर्गादिश्राद्धविवर्जिताः ।
 देशान्तरमृता भ्रष्टा अग्निदाहादिवर्जिताः ॥ १३ ॥
 एतैश्चान्यैश्च बहुभिर्घ्नियन्ते चापमृत्युभिः ।
 अपमृत्युमृतानां च स्थानं दाल्भ्य हि तच्छृणु ॥ १४ ॥
 गच्छन्ति नरके घोरे पूयशोणितसंकुले ।
 बहुचञ्चुस्वगाकीर्णे लोहकण्टकदुर्गमे ॥ १५ ॥
 अधोमुखाश्च तिष्ठन्ति नराः पापसमाकुलाः ।
 न तेषां कारयेदाद्यं मृतकं नोदकक्रियाः ॥ १६ ॥
 विधानं न तथोक्तं न क्रियामूर्ध्वाभिधां तथा ।
 अन्त्येष्टिं कारयेत्क्षिप्रं षण्मासाभ्यन्तरेषु च ॥ १७ ॥
 कर्तव्यं मणिसंस्तारं शुभतीर्थं समाश्रयेत् ।
 गङ्गायां यमुनायां च पुष्करे नैमिषे तथा ॥ १८ ॥
 कुरुक्षेत्रे सरस्वत्यां तीर्थेऽन्यस्मिञ्शुभेऽपि वा ।
 नद्यामब्धौ तडागे वा संगमे निर्झरेऽपि वा ॥ १९ ॥
 दाल्भ्य वै जलपूर्णे च हृदे वा विमले जले ।
 वापीकूपे (वापीकूले) गवां गोष्ठे कुण्डे वा प्रतिमाश्रये ॥
 मन्नाम्ना कारयेदाद्यं बलिं नारायणं शुभम् ॥ २० ॥

दाल्भ्य उवाच—

विप्रस्यार्थे त्वया देव कथिता या बलिक्रिया ।
 शेषा वर्णाः कथं विष्णो न यान्ति नरकं ध्रुवम् ॥ २१ ॥

विष्णुरुवाच—

चातुर्वर्ण्येन कर्तव्यो बलिर्नारायणाभिधः ।
 विधानं पूर्ववर्णस्य दाहोऽग्नेन क्रमेण तु ॥ २२ ॥
 षण्मासाद्वाह्ये दाहस्त्रिमासात्क्षत्रिये स्मृतः ।
 अर्यस्यार्थेन मासेन सद्यः शूद्रैर्विधीयते ॥ २३ ॥

यद्यग्निहोत्रिणो मृत्युर्जायते निन्द्य एव च ।
 त्रिभिर्मासैस्त्रिभिः पक्षैर्न तु षाण्मासिकोऽवाधिः ॥ २४ ॥
 अग्निहोत्रविनाशस्य भयेन मुनिपुंगव ।
 धेनूनां दशकं दत्त्वा सद्य एव विधीयते ॥ २५ ॥
 यत्फलं कथ्यते यज्ञे कन्यायज्ञशतत्रये ।
 तत्फलं प्राप्नुयान्मर्त्यः कुर्वन्नारायणं बलिम् ॥ २६ ॥
 नारायणं बलिं सम्यग्यः करोति मृतस्य च ।
 प्रेतश्चापि च कर्ता च उभौ तौ फलभागिनौ ॥ २७ ॥
 न तच्छ्रेयोऽग्निहोत्रेण ह्यग्निष्टोमादिभिर्मखैः ।
 अपमृत्युविनष्टानां नारायणबलिः शुभः ॥ २८ ॥
 अकृत्वैवं बलिं विष्णोर्योऽनङ्गाहं प्रमुञ्चति ।
 सर्वमूर्ध्वकृतं चापि नोपतिष्ठति तस्य तत् ॥ २९ ॥
 पुत्रो वा बन्धुपुत्रो वा पौत्रो वा बन्धुरेव च ।
 स्वगोत्रो वाऽर्थभागी च कुर्यान्नारायणं बलिम् ॥ ३० ॥
 शिष्यो वा ऋणहर्ता वा भार्या वा भगिनी तथा ।
 जामाता दुहिता वाऽपि कुर्यान्नारायणं बलिम् ॥ ३१ ॥
 एतेऽधिकारिणो मोहान्न कुर्वन्ति बलिं मम ।
 सर्वे तिष्ठन्ति नरके प्रेतेन सह दारुणे ॥ ३२ ॥
 यद्येतत्क्रियते विष्णोर्बलिसंज्ञं विधानकम् ।
 यथावित्तं यथाकालं लोकानन्त्याय कल्पते ॥ ३३ ॥
 सौम्यमृत्युफलं तस्य यस्यैषा क्रियते क्रिया ।
 ब्रह्मलोकप्रदा ज्ञेया यावदाभूतसंग्रहम् ॥ ३४ ॥

दालभ्य उवाच—

केन देव विधानेन कार्यो नारायणो बलिः ।
 किं तत्र तर्पणं श्राद्धं कस्योद्देशो विधीयते ॥ ३५ ॥

विष्णुरुवाच—

पूर्वं मे तर्पणं भक्त्या मन्त्रैः पौराणवैदिकैः ।
 सर्वौषध्यक्षतैर्मिश्रैर्विष्णुद्देशेन कारयेत् ॥ ३६ ॥
 तर्पणं पुरुषस्यैव सूक्तेन च विधीयते ।
 दक्षिणाभिमुखो भूत्वा प्रेतप्रेक्षप्रदं स्मरन् ॥ ३७ ॥

तर्पणस्यावसाने तु वीतरागो विमत्सरः ।
जितेन्द्रियचयो भूत्वा सुस्थिरं धर्ममाचरेत् ॥ ३८ ॥
दानधर्मरतः शान्तो गुणवान्वाग्यतः शुचिः ।
यजमानो भवेत्तत्र पुत्रवन्धुसमन्वितः ॥ ३९ ॥

तत्राऽऽवाहनमन्त्रः —

आगच्छाभिमुखस्तावद्यावन्नारायणं बलिम् ।
करोमि प्रेतमुक्त्यर्थं तपेणाद्धोममुत्तमम् ॥ ४० ॥
इमं मन्त्रं पठेद्विद्वान्विष्णोरावाहने क्षमम् ।
शुक्लामेकादशीं प्राप्य वैष्णवीं तिथिमुत्तमाम् ॥ ४१ ॥
कारयेद्वैष्णवं श्राद्धं नन्वेकादशभिर्द्विजैः ।
स्थापयेद्वैष्णवी (वं) बलिं विधिना निर्वपेच्चरुम् ॥
तदिदानीं स्पष्टमाह कालश्रवणपूर्वकम् ॥ ४२ ॥

अमुकगोत्रस्यामुकभेतस्य प्रेतत्वविमुक्त्यर्थं दुर्मरणजनितपातकपरिहारार्थं च लोकगर्हापरिहारार्थं च त्रिंशत्ताजापत्यान्यात्राद्वारेण ब्राह्मणसहायवान्प्रायश्चित्तं करिष्ये ।

देशान्तरमृतानां च शृङ्गिर्दंष्ट्रिनिपातिनाम् ।
प्रायश्चित्ते तु सर्वाण्ये गजदण्डो न विद्यते ॥ ४३ ॥

तत्र यस्मिन्कस्मिन्मासे मलक्षयविवर्जिते शुक्लैकादश्यामारभेत । तद्यथा - दश-
म्यामेकादश ब्राह्मणान्योग्याग्निमन्त्रयेत् । छत्रोपानद्वस्त्रोष्णीपकमण्डलुमुद्रा दक्षि-
णार्थं गावः सुवर्णं च । अनुलेपनार्थं गन्धादिकम् । प्रतिष्ठापनार्थं कुम्भाः पञ्च ।
आज्यस्थाल्यादिपात्राणि । तण्डुलदुग्धसर्पिःसर्वोषध्यः । अक्षततिलदर्भास्तर्प-
णार्थम् । मृत्तिका गोमयं पुष्पं स्नानार्थम् । ब्राह्मणानां निर्वापिका । कलश-
मुद्रापताकार्थं द्रव्यम् । होमदक्षिणार्थं गावः । आचार्यस्य गोमिथुनं हिण्यं च ।
एतानि गृहीत्वा नदीं गच्छेत् । प्रथमं नित्योक्तेन विधिनाऽऽचार्यः स्नानसं-
ध्यातर्पणदेवतार्चनादिकं कृत्वा नारायणबलिं समारभेत । तत्रामुकगोत्रस्य
कृष्णशर्मणो दुर्मरणजनितप्रत्यवायपरिहारार्थं लोकगर्हापरिहारार्थं च नारायणव-
लिप्रहं करिष्ये । ततः पश्चात्स्थण्डिलं कर्तव्यम् । तस्योपर्यव्रणं लोहितं
मृन्मयं कुम्भं स्थापयेत् । विष्णुकलशस्योपरि सुवर्णमयीं मूर्तिं स्थापयेत् । ततो

दक्षिणाभिमुखो भूत्वा सर्वौषधिगन्धाक्षतत्रीहीनगृहीत्व ऋजुर्ध्वैस्तर्पणं कर्तव्यम् ।
 प्रथमं पुरुषसूक्तेन प्रत्यृचं नारायणं तर्पयामीति प्रयोगः । सहस्रशीर्षा० १ पुरुष
 एवे० २ एतावानस्य० ३ त्रिपादूर्ध्व० ४ तस्माद्विराड्० ५ यत्पुरुषेण० ६
 तं यज्ञं० ७ तस्माद्यज्ञात्० ८ तस्माद्यज्ञात्० ९ तस्मादश्वा० १० यत्पुरुषं०
 ११ ब्राह्मणोऽस्य० १२ चन्द्रमा मनसो० १३ नाभ्या आसीद० १४
 सप्तास्याऽऽसन्० १५ यज्ञेन यज्ञम० १६ प्रथमामृचं जपित्वा तस्या अग्र इमं
 मन्त्रं पठेत् ।

अनादिनिधनो देवः शङ्खचक्रगदाधरः ।

अक्षयः पुण्डरीकाक्ष प्रेतमोक्षप्रदो भव ॥ ४४ ॥

मानसेऽमुकगोत्रप्रेतमोक्षार्थे विष्णुस्तृप्यतु । पक्षे च मासे च युञ्जते मन
 इत्यष्टर्चेन तर्पणं तेनैव विधिना । युञ्जते मन० १ इदं विष्णु० २ इरावती
 धेनुमती० ३ देवश्रुतौ० ४ विष्णोर्नुकं० ५ दिवो वा० ६ प्रतद्वि० ७ विष्णो-
 रराट्० ८ अग्नेस्तव० ९ त्रीणि पदा० १० तद्विप्रासो० ११ रक्षोहणं वलगह-
 नं० १२ रक्षोहणो व० १३ तद्विष्णोः० १४ विष्णोः कर्माणि० १५ उपयाम
 गृहीतोऽस्यादित्येभ्यस्त्वा० १६ वाचस्पतये० १७ एताभिस्तर्पणं पूर्वविधिना ।
 पश्चात्स्थण्डिलं समागत्य यथोक्तविधिनाऽग्निस्थापनं कर्तव्यम् । चरुश्रपणादिकं
 च पर्युक्षणान्तम । ततो नारायणवलयङ्गाभूतहोममहं करिष्ये । तत आज्येन
 चरुणा विष्णुमहं यक्ष्ये । प्रजापतये । इन्द्राय । अग्नये । सोमाय । युञ्जते मन
 इत्यष्टाभिर्ऋग्भिश्चरुगृहीतेनाऽऽज्येनाऽऽहुतीर्जुहुयात् । इदं विष्णव इति त्यागः ।
 लोमभ्यः स्वाहेत्यादि । द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा । उत्तरादिद्विचत्वारि पृ(रिंशत्पृ)-
 पदाज्याहुतीर्जुहोति । संस्रवरहिताः सुवेण सहस्रशीर्षेति षोडशाऽऽहुतीर्जुहोति ।
 अद्भ्यः संभूतमिति षड्विगुणा आज्याहुतीर्जुहोति । अथ चरुहोमः । इदं विष्णु० ।
 अतो देवा० । त्रीणि पदा० । तद्विप्रासो० । रक्षोहणं वलगहनं० । तद्विष्णोः० ।
 विष्णोर्नुकं० । दिवो वा० । प्रतद्वि० । विष्णोरराट्० । अद्भ्यः संभूतमिति षट् ।
 अग्नये स्विष्टकृते । अथ भूरादिनवाऽऽहुतयः । स्वाहा प्राणेभ्य इति ऋक्त्रयेण
 पूर्णाहुतिं हुत्वा संस्र प्राशनम् । होमान् आचार्याय कलशं हिरण्यं कल्पयि-
 त्वाऽनन्तरमेकादश श्राद्धानि ।

ततश्च वैष्णवं श्राद्धं कुर्याच्छ्रद्धासमन्वितः ।

शास्त्रोक्तविधिना विप्र ब्राह्मणैर्वेदपारगैः ॥ ४५ ॥

मामुद्दिश्य प्रकुर्वीत प्रेतं हि मनसा स्मरन् ।
 दर्भैश्च ऋजुभिः श्राद्धमक्षतैर्दक्षिणामुखः ॥ ४६ ॥
 प्रेतं हि मनसा ध्यायन्देवतीर्थेन निर्वपेत् ।
 पिण्डश्राद्धं प्रकुर्वीत तुलसीं तु न दापयेत् ॥ ४७ ॥
 दापयेत्तुलसीपत्रं पितृणां हितमिच्छता ।
 निपात्य जानुनी भूमावेकोद्दिष्टविधानतः ॥ ४८ ॥
 निर्वर्त्य श्राद्धमखिलं भोजयेत्क्रमशो द्विजान् ।
 भोज्यं व्रीहियवान्नं च गोधूमान्नं तथैव च ॥ ४९ ॥
 छत्रोपानत्कर्णभूषा हस्तमुद्रास्तथैव च ।
 वस्त्रोष्णीपं च यष्टिं च भोज्यपात्रे कमण्डलुम् ॥ ५० ॥
 दापयेत्सर्वविप्रेभ्यो नात्र कार्या विचारणा ।
 नमस्कृत्य ततो विप्रान्गन्धपुष्पतिलाक्षतान् ॥ ५१ ॥
 प्रतिपिण्डे वसोवर्षां वेदमन्त्रैश्च दापयेत् ।
 शङ्खपात्रे च ताम्रे च अलाभे मृन्मयेऽपि च ॥
 ततो जलं समादाय पिण्डे पिण्डे पृथक्पृथक् ॥ ५२ ॥

प्रथमं विष्णवे । द्वितीयं शिवाय । यमाय सानुचराय तृतीयम् । सोमाय चतुर्थम् । हव्यवाहनाय पञ्चमम् । कव्यवाहनाय षष्ठम् । कालाय सप्तमम् । रुद्रायाष्टमम् । पुरुषाय नवमम् । प्रेताय दशमम् । विश्वरूपिण एकादशम् । विष्णवे एकोद्दिष्टविधिना करिष्य इति संकल्पः । विष्णवेतत्ते पादार्घ्यं संपद्यताम् । कालज्ञानम् । एवं काले नारायणवलिनिमित्तं विष्णुश्राद्धमहं करिष्ये । विष्णवे इदमासनम् । शिवायेदमासनम् । तथाऽन्येषां सर्वेषामासनम् ।

श्राद्धे सर्वत्र षष्ठी स्यादासने च क्षणे तथा ।

वृद्धिश्राद्धे चतुर्थी स्याद्विष्णुश्राद्धे तथैव च ॥ ५३ ॥

इति कोऽपि पक्षः । अन्यथा सर्वत्र षष्ठी स्यात् । विष्णुश्राद्धे क्षणः क्रियताम् । तथा प्राप्नोतु भवान् । प्राप्नवानि । आवाहनम् । विष्णवेप तेऽर्घ्यं इति सर्वत्र समानम् । गोत्र प्रेत विष्णुरूपैष तेऽर्घ्यः । चतुर्थ्यन्तेन विनियोगेनात्र गन्धपुष्पधूपदीपाच्छादनार्चनक्रिया संपद्यताम् । यथाक्रमं सर्वेषामपि । विष्णवे-
 तत्त आमं ब्राह्मणभोजनपर्याप्तममृतरूपेण स्वाहा संपद्यताम् । इदं विष्णवे ।

विष्णो शुन्धतामिति ऋक्शाखाध्यायिनाम् । वाजसनेयिनां तर्हि विष्णोऽवनेनिक्षा
(क्ताम्) । शुन्धतामिति पूर्ववत् । शिवावनेनिक्षा (क्ताम्) । तथैव सर्वत्र ।
क्रमेण गोत्र प्रेत विष्णुरूप शुन्धतामवनेनिक्षा (क्ताम्) । एवमेकादश पिण्डा-
न्दद्यात्पूर्वसंस्थान् । अथ शङ्खाद्युक्तपात्रेण प्रतिपिण्डं मन्त्रेणैकेन जलधारां
दद्यात् । ये देवाः० । उपयाम गृहीतोऽस्यादित्येभ्यस्त्वा० । येनापा-
वक० । ये देवासः० । समुद्रं गच्छ० । अग्निज्योतिः० । हिरण्यगर्भः० ।
इषेत्वा० । यज्जाग्रतः० । याः फलिनीः० । विश्वतश्चक्षुरुत० । एतैर्मन्त्रैर्यथा-
संख्यं जलधारां दत्त्वा श्राद्धानि समाप्य भद्रं कर्णेभिरिति विसर्जयेत् ।
तर्पणादिमन्त्रं पौराणमग्रे पठेत् ।

अनादिनिधनं देवं शङ्खचक्रगदाधरम् ।

पीताम्बरं महाकायं महाभयविनाशकम् ॥ ५४ ॥

अतसीपुष्पसंकाशं पीतवामसमच्युतम् ।

ये नमस्यान्ति गोविन्दं न तेषां विद्यते भयम् ॥ ५५ ॥

समुद्धृत्य ततः पिण्डान्नद्यादौ च त्रिनेक्षिपेत् ।

क्षिप्रं संकीर्त्य मनसा नामगोत्रे मृतस्य तु ॥ ५६ ॥

एकादशश्राद्धप्रतिष्ठासिद्धयर्थं नानाविधं धनं दद्यात् । अनन्तरम्—

रात्रौ तु जागरः कार्य इतिहामकथादिभिः ।

गीतनृत्यविनोदेन संनिधौ हरचक्रिणोः ॥ ५७ ॥

पुनरभ्यर्चयेद्विष्णुं यमं च कुमुमादिभिः ।

गन्धपुष्पैश्च नैवेद्यैर्भक्ष्यभोज्यसमन्वितैः ॥ ५८ ॥

आमन्त्रयेद्विज्ञान्पञ्च ऋग्यजुःसामपारगान् ।

अथर्वज्ञं च सर्वज्ञमाचार्यं पञ्चभिर्युतम् ॥ ५९ ॥

मुह्येमरूप्यताम्रैश्च लोहमृद्धिश्च सन्कृतान् ।

पञ्च कुम्भान्समादाय तथा पत्रैस्तु पूरितान् ॥

निक्षिपेत्तत्र वै तोयं रत्नानि विविधानि च ॥ ६० ॥

अथ कलशस्थापनमन्त्रः—

आवाहितोऽसि देवेश सृष्टिस्थितिविनाशन ।

त्रयाणामपि लोकानां पात्रं तुभ्यं नमो नमः ॥ ६१ ॥

पञ्चानामपि कलशानां स्थापनेऽयमेव मन्त्रः । तत्र विष्णुकलशं पूर्वतः स्थप-

येत् । रुद्रकलशमुत्तरे स्थापयेत् । यमकलशं यास्ये स्थापयेत् । पुरुषकलशं पश्चिमे स्थापयेत् । मध्ये ब्रह्मकलशं स्थापयेत् ।

आपस्त्वं परमं ज्योतिस्त्रिलोकीपावनक्षमम् ।

पवित्रं कुरु मे देव आपो ज्योतिर्नमोऽस्तु ते ॥ ६२ ॥

अनेन कुम्भेषु जलं क्षिपेत् ।

सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः ।

आयान्तु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः ॥ ६३ ॥

अनेन मन्त्रेण सर्वेषां विष्ण्वादीनामावाहनमाचार्यः कुर्यात् । आवाहने कृते सति तेषु कलशेषु कुङ्कुमदेवदारुसिद्धार्थगोरोचनमुस्ताशिवाकस्तूरिकाविद्रुम-चन्द्रकान्तिसर्वापिध्यादिकं प्रक्षिपेत् । अतो देवा इति मन्त्रेण कलशवक्त्राच्छादनं कुर्यात् । श्वेतवस्त्रयुग्मैः सर्वान्यटान्परिच्छादयेत् । मध्यकलशे ब्रह्माणं रौप्यमयं पलैश्चतुर्विंशत्या कृतं ब्रह्मजज्ञानमिति मन्त्रेण कलशोपरि पूर्णपात्रे वस्त्रोपरि तण्डुलोपरि स्थापयेत् । द्वितीयकलशे सुवर्णमयं विष्णुं पलैः षोडशभिः कृतमिदं विष्णुरिति मुद्रानामुपरि विन्यसेत् । तृतीयकलशे ताम्रमयं रुद्रं पञ्च-पलमात्रं नमस्ते रुद्रेति गोधूमानामुपरि विन्यसेत् । चतुर्थकलशे लोहमयं यममशीतिपलसंख्याकं यमाय त्वेति मापाणामुपरि स्थापयेत् । पञ्चमकलशं स्वर्णमिश्रदर्भमयं पुरुषं त्र्यणुकसंख्याकं स्वर्णमयं पुरुषं वा तिलानामुपरि विन्यसेत्पुरुषसूक्तस्यैकयर्चा । कलशे षडङ्गरुद्रजपः । द्वितीयकलशेऽप्रतिस्थक-वचजपः । ततः स्वैः स्वैः सूक्तैः प्रतिकलशं जपः । स्वैः स्वैरित्यस्यायमर्थः—यस्य कलशस्य या देवता विष्ण्वाद्या तस्यास्तस्या देवतायाः सूक्तम् । तत्र तत्र समीपस्थः पञ्चानां मध्ये यस्य यस्य समीपे यजमानेन नियुक्तः स तज्जपं कुर्यात् । तृतीयकलशे पुरुषसूक्तजपः । चतुर्थकलशेऽपेदित्यध्यायजपः । पञ्चमकलशे स एवाध्यायजपः । पञ्च देवताः । पञ्च कलशाः । सर्वदेवन्नीतये षडङ्गरुद्रजपः । ततो यजमान आचम्य तानेव पञ्च ब्राह्मणानाहूय पार्वणेनै-कोद्दिष्टेन विधिना वा श्राद्धं समारभेत । ऋग्वेदी ब्रह्मोद्देशे । यजुर्वेदी विष्णुद्देशे । सामवेदी विरूपाक्षोद्देशे । अथर्ववेदी यमोद्देशे । सर्वज्ञः प्रेतोद्देशे । ब्रह्मन्पादार्थं संपद्यताम् । एवं यथाक्रमं सर्वत्र । तत एवंदि-शिष्टे काले नारायणबलिनिमित्तं विष्णुश्राद्धमहं करिष्ये । ब्रह्मण इदमासनम् ।

एवं पुरतो यथाक्रमम् । गोत्राय प्रेतायेदमासनम् । पृष्ट्या वा देयम् । ब्रह्म-
 न्नैष तेऽर्घ्यः । ततश्च यथाक्रमम् । गोत्र प्रेत विष्णुरूपैष तेऽर्घ्यः । विष्णवे गन्ध-
 पुष्पधूपदीपाच्छादनं स्वाहा संपद्यताम् । विष्णवेतत्तेऽन्नं दत्तं दास्यमानं चामृ-
 तरूपेणोपतिष्ठताम् । ततः पिण्डदानम् । पूर्वसंस्थान्पञ्च पिण्डान्दद्यात् । ब्रह्मणे
 नम इदं विष्णवे नम इति यथाक्रमम् । प्रतिपिण्डं मन्त्रौ द्वौ द्वौ पठित्वा ब्रह्म-
 पिण्डेऽग्निमील आ ब्रह्मन्निति मन्त्रद्वयेन शङ्खपात्रेण गन्धपुष्पाक्षतसर्वोषधी-
 मिश्रजलधारां दद्यात् । विष्णुपिण्ड इषेत्वेदं विष्णुः । रुद्रपिण्डेऽग्न आयाहि
 नमः शंभवे । यमपिण्डे शंनो देवीरभिष्टये यमाय त्वा । प्रेतपिण्डे नामगोत्रे मनसो-
 चार्यं यमाय स्वाहा । इति प्रतिपिण्डे जलधारां दत्त्वा शुद्धे जाते सति प्रेत-
 पिण्डे नामोच्चारं न कुर्यात् । सर्वत्र विष्णुनाम्ना कर्तव्यम् । पञ्चश्राद्धानां प्रति-
 ष्ठासिद्धयर्थं पञ्च दानानि । दक्षिणार्थे हिरण्यं दद्यात् । पञ्चश्राद्धेषु दक्षिणावि-
 शेषः । प्रथमे श्राद्धे जातसस्या वसुंधरा दातव्या ।

वसु धारयसे यस्मात्तस्मात्त्वं वसुधा स्मृता ।

अतो मोचय पापेभ्यो दत्ता शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ ६४ ॥

इति भूमिदानमन्त्राः ।

द्वितीये श्राद्धे गां पयस्विनीं दद्यात् । तत्र मन्त्रः—

गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश ।

यस्मात्तस्माच्छिवं मे स्यादिह लोके परत्र च ॥ ६५ ॥

तृतीये श्राद्धे कलधौतवस्त्रं कृष्णवर्णं दद्यात् । तत्र मन्त्रः—

दुर्लभं मानुषे लोके लज्जाया रक्षणं परम् ।

सुवेषधारणं यस्मात्तस्माच्छान्तिं प्रयच्छ मे ॥ ६६ ॥

चतुर्थे श्राद्धे गोणीसंख्याकांस्तिलान्दद्यात् । तत्र मन्त्रः—

तिलाः पापहरा नित्यं विष्णुदेहसमुद्भवाः ।

सुवर्णा हरदेहोत्था अतः शान्तिं प्रयच्छत ॥ ६७ ॥

पञ्चमे श्राद्धे प्रेतोद्देशेन गोमिथुनं दद्यात् । तत्र मन्त्रौ—

यस्मात्त्वं पृथिवी सर्वा धेनुः केशवसंनिधौ ।

सर्वपापहरा नित्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ ६८ ॥

धर्मस्त्वं वृषरूपेण जगदानन्दकारकः ।

अष्टमूर्त्तेरधिष्ठानमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ ६९ ॥

‘ अक्रञ्छर्म ’ इति सर्वश्राद्धानि विसृज्य पिण्डानुदके क्षिपेत् । मतान्तरे पञ्चकलशस्थापनं तेषामर्चनादि सर्वे रात्रावेव क्रियते । द्वादश्यां तेष्वेव ब्राह्मणेषु श्राद्धपञ्चकं कुर्यात् । यथोक्ते कर्मणि यजमानोऽकिञ्चनस्तदा सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो वस्त्रयुग्ममेकैकशो दद्यात् । भूम्यभावे सवत्सां धेनुं दद्यात् । धान्यं दक्षिणा । केषांचिन्मतेन तान्ब्राह्मणानुपोषयेत् ।

एवं कृते विधाने च दुर्मृत्युभवपातकम् ।

ब्रह्मादीनां च सर्वेषां × नश्यते नात्र संशयः ॥ ७० ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां विष्णुदा-
लभ्यसंवादे भारते विष्णूक्तनारायणबलि-
विधानम् ।

— — —

अथ नागबलिविधानम् ।

तत्रैवोक्तसर्पदष्टस्य दुर्मरणकृते नारायणबलौ कश्चिद्विशेषोऽस्ति ।

श्रावणे मासि भाद्रे वा पञ्चम्यां शुक्लकृष्णयोः ।

पक्षयोश्चैव कर्तव्यः शुद्धये नागबलिः शुभः ॥ १ ॥

एकभक्तं तु कर्तव्यं चतुर्थ्या व्रीहिभोजनम् ।

उपोषणं तु पञ्चम्यां स्नात्वा प्रार्त्नदीजले ॥ २ ॥

कर्तव्यं विधिवद्भक्त्वा जागरं तत्र कारयेत् ।

कृत्वा हेममयं नागं शक्त्या भोगफणान्वितम् ॥ ३ ॥

स्वस्तिकं तण्डुलानां च कुर्याद्द्रोणचतुष्टये ।

कलशं स्थापयेत्तत्र तन्मुखे वंशभाजनम् ॥ ४ ॥

तस्योपरि न्यसेन्नागं मन्त्रैस्तल्लिङ्गैर्कर्मणे ।

प्रतिष्ठामन्त्रतो वाऽपि गायत्र्या वा समाहितः ॥

अत्र गन्धादिकं सर्वं कार्यं तस्य च भोगिनः ॥ ५ ॥

तत्र नाममन्त्रैरुपचारान्कारयेदित्येके ।

ॐ अनन्ताय नमः । ॐ वासुकये नमः । ॐ शङ्खाय नमः । ॐ पद्माय नमः । ॐ काकोदराय नमः । ॐ कर्कोटकाय नमः । ॐ व्यन्तराय नमः । ॐ धृतराष्ट्राय नमः । ॐ शङ्खपालाय नमः । ॐ कालिकाय नमः । ॐ तक्षकाय नमः । ॐ कपिलाय नमः ।

एवं प्रणवादिनमोन्ता नाममन्त्राः । अत्र विशेषमाह—भाद्रपदपर्यन्तं श्रावणादिमारभ्य (भाद्रपदमारभ्य श्रावणपर्यन्तं) द्वादशमासेषु द्वादशनामभिः स च स्वर्णमयो नागः पूजनीयः । पञ्चम्यां द्वादश द्वादश ब्राह्मणान्भोजयेत्प्रतिमासं त्रीन्वेति संकल्पः । घृतपायसैस्तीक्ष्णविरहितैः पूजिते नागे भूरिब्राह्मणान्भोजयेत् । अथवा यदाऽशक्तः प्रतिमासपूजने तदा श्रावण एव व्रतविधानं समापयेत् । जाते नागपूजने तं नागं ब्राह्मणाय दद्यात् । अस्य कर्मणोऽङ्गन्तया विहितं हेममयं नागं सकलशं सवस्त्रं सदक्षिणं तुभ्यमहं संप्रददे । अनेन स्वर्णनागदानेनानन्तादिद्वादशनामानो नागाः प्रीयन्ताम् । अस्य कर्मणो विहितं ताङ्गन्तया गामेकां पयस्विनीं तुभ्यमहं संप्रददे । इति संकल्प्यगां दद्यात् । अनेन गोप्रदानेन द्वादशनामानो नागाः प्रीयन्ताम् । केषांचिन्मतेनाऽऽदौ नागवलिः कार्यः । पश्चान्नागयणवलिः । केचिद्वदन्ति नारायणवलेः पश्चान्नागवलिः । परं तु सर्पदंष्ट्रया मृतस्य वलिद्वयमेव कर्तव्यम् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां नागवलि-
विधानम् ।

अथास्थिपुरुषीकरणविधानम् ।

अप्रतिरयमात्रे (मन्त्रे) ण पुरुषसूक्तसंयुतेन चतुर्विंशत्यङ्गुलान्वत्येकं चतुर्विंशदिर्भशिखाभिः पूलकान्कृत्वा पृथक्पृथग्दीयन्ते । चतुरो मुखे ग्रीवायामेकं न्यसेत् । बाह्वोश्चतुरो हृदये पञ्च । तथोदरनाभिगुदगुह्यकटिषु प्रत्येकं पञ्च । जानुनोरेकम् । जङ्घयोरेकम् । शिरो मे धेहीत्येकम् । जिह्वां मे धेहीति द्वौ । बाहू मे धेहीति त्रीन् । पृष्टिमे इति चत्वारो निवेद्याः । नाभिर्म इति पञ्च । विष्णोः क्रमोऽसीति मन्त्रेण वेष्टयेत् । विम्राडित्यनुवाकेन क्षालनं कृत्वा तिलोऽसीतिमन्त्रेण तिलपिष्टोद्वर्तनं कृत्वाऽऽपश्चिदिति तण्डुलपिष्टेनानुश्लेषनं कृत्वा यत्रोऽसीति यत्रपिष्टानुश्लेषनं कृत्वा ब्रीहपञ्च म इति ब्रीहोऽन्तत्र मूर्तौ निक्षिपेत् ।

मुद्राश्च म इति मुद्रापिष्ठानुलेपनं कुर्यात् । त्वां गन्धर्वाः स्वर्लोकं प्रयच्छन्तिवति
हरिद्रयाऽनुलेपयेत् । प्राणाय स्वाहेति सूत्रेण बध्वा पुरुषसूक्तशतरुद्रियमन्त्रैर्म-
ङ्गलकलशोदकैः प्रक्षालयेत् । ततो दर्भाः (भृशय्या) यां चतुर्विंशत्यङ्गुलमि-
तायामस्थिशरीरं पूर्वमेव निहितमुत्क्षिपेत् । विश्रामपिण्डमुत्थानपिण्डदानानन्तरं
प्रदत्त्वा यथाविधि संस्कुर्यात् । तत्राऽऽ(?) संधीलक्षणमाह—

साक्षाच्छवस्य याऽऽसंधी पालाशैर्वा कुशैः कृता ।

खादिरैर्दैववृक्षैर्वा शवविग्रहसंमिता ॥ १ ॥

अस्थया(स्थनां)संधी चतुर्विंशत्यङ्गुलाऽत्र मि(लीभिर्मि)ता भवेत् ।

मतान्तरेण विज्ञेया पालाशैश्छदनैः कृता ॥ २ ॥

सप्त(त्य)मते—

प्रक्षालय विग्रहं वाऽऽस्थं पलाशस्य दलेषु च ।

कृष्णाजिनं परिस्तीर्य पुरुषं चास्थिरूपिणम् ॥ ३ ॥

दुग्धमिश्रेण तोयेन पुनः प्रक्षालयेद्बुधः ।

कृष्णाजिनोपरि स्थाप्या कृत्वा मूर्तिं च पौरुषीम् ॥ ४ ॥

आज्येनाभ्यज्य चूर्णेन यवानां लेपयेत्ततः ।

वैष्णवैः कलशाम्भोभिरभिपेकं च कारयेत् ॥ ५ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालाया-

मस्थिपुरुषीकरणविधानम् ।

अथास्थ्यभावे पालाशविधानम् ।

षष्ठ्याऽधिकं वृन्तशतत्रयं बुधैः संगृह्य जीर्णं च पलाशशाखिनः ।

मूर्तिं विदध्याद्गतजीवितस्य गङ्गातटे वासवपञ्चके च ॥ १ ॥

वज्र्यं च दाहस्य च कर्म पुंभिः ।

शिरस्यशीतिसंख्यानि ग्रीवादेशे दशैव च ।

बाह्वोरथ शतं दद्याद्विंशतिं च तथोरसि ॥ २ ॥

उदरे विंशतिं दद्याद्विंशतं कटिदेशतः ।

ऊर्योश्च दशकं दद्याद्विंशतं जानुजङ्घयोः ॥

पादाङ्गुलीषु वृन्तानि दश दद्यात्समाहितः ॥ ३ ॥

रेतो मूत्रं दृष्टा परिश्रुतः सीसेन तन्त्रमित्येवंमन्त्रैर्वृन्तमूर्तिं सूत्रेण वेष्टयेत् ।
 अथ पालाशवृन्तमूर्तिशिरसि तुम्बकं निदध्यात् । मुखे नारिकेलं दद्यात् । नेत्रयोश्च
 कपर्दिकाम् । गुञ्जामौक्तिकानि कर्णयोः । शुक्तिं नासापुटे । तथा पट्टसूत्रमधरयोः ।
 प्रवालदाडिमीबीजानि दन्तेषु । गुडं ग्रीवायाम् । ब्राह्मणश्चेत्स्कन्धे यज्ञोपवीत-
 कम् । हृदये हरितालं नियोजयेत् । (?) कालिञ्जस्थाने माञ्जिष्ठं वस्त्रम् ।
 मेदःस्थाने मनःशिलाम् । मांसस्थाने यवपिष्टम् । रुधिरस्थाने मधु । अन्त्रस्थाने
 पद्मनालं पटोलं वा । नखस्थाने श्वेतनिष्पावकान् । त्वक्स्थाने मृगतृचं नियोज-
 येत् । वीर्यस्थाने पारदं नियोजयेत् । सर्वसंधिस्थान इक्षुपर्वाणि । लोमस्थाने कृष्णो-
 र्णाम् । केशस्थाने सूकरकेशान्नियोजयेत् । नाभिस्थाने मूलकम् । पृष्ठे सर्वौषधीर्नि-
 योजयेत् । शिश्नस्थाने गृञ्जनम् । वृषणस्थाने वृन्ताकम् । मूत्रस्थाने गोमूत्रम् । अमे-
 ध्यस्थाने रीतिकाम् । जिह्वास्थाने ताडपत्रम् । धातुस्थाने मृत्तिकाम् । हस्तपाद इक्षवो
 योज्याः । मज्जास्थाने हरितालम् । अस्थ्यभावे पालाशवृन्तानि । अभ्यङ्गे घृतम् ।
 चन्दनं च विलेपने । स्वैः स्वैर्मन्त्रैः सर्वाण्येतानि द्रव्याणि योजयेत् । सहस्रशीर्षेति
 शिरसि तुम्बकं न्यसेत् । मुखे दशदिति मन्त्रेण नारिकेलं न्यसेत् । स्योना
 पृथिवीति मन्त्रेण तनुं यवपिष्टेन लेपयेत् । चक्षुःस्थाने वराटकौ गुञ्जे कनी-
 निकयोर्मध्यतारयोर्मौक्तिके ना (?) वातं प्राणेनेति न्यसेत् । अस्थ्यादिस्थाने
 त्वमङ्गं जपेत् । आत्मनु (?) पस्थाने (आत्मस्थाने च ।) केशश्मश्राणि शूक-
 रकेशैः कारयेत् । कृष्णोर्णां लोमस्थाने लोमानि प्रयातीति । मधु वाता इति
 रक्तस्थाने मधु । प्राणे प्रा (?) णाया इति श्रोत्रयोः शुक्तिं प्रणवेन । वरु-
 णस्योत्तम्भनमसीति तनावायुर्न्यसेत् । तेजोऽसीति तेजः परिकल्प्य वायुर-
 भ्यगा इति वायुं प्रयुज्य पञ्चभूतात्मकैर्मन्त्रैर्भूतग्रामं च कारयेत् । परीत्य भूतानीति
 वा वृन्तस्यासीति (?) चक्षुर्भ्यामञ्जनं कल्प्यम् । दाडिमीबीजानि ये देवा इति
 पुनन्तु मेतिखलु (न्यखिल) संधिषु त्रातारमिति रत्नं मुखे न्यसेत् । अध्य-
 वोचदिति गन्धस्थाने रीतिकां न्यसेत् । कांस्यगोलकं हृदये ध्रुवाऽसीति
 न्यसेत् । ब्रह्मजज्ञानमिति धातुस्थाने हरितालम् । मेदःस्थाने मनःशिलां
 कया नश्चित्रेति न्यसेत् । प्रणवेन नखस्थाने निष्पावकान्न्यसेत् । ॐकारेणैव
 जिह्वास्थाने ताडपत्रम् । नासां ख (?) ल्वपिष्टेन कारयेत् । अदितिद्यौरिति
 मृत्तिकया परिलेपनम् । विश्वतश्चक्षुरिति नालकमन्त्रस्थाने न्यसेत् । व्रीहयश्चेति

१ ख. °ष्ट्वा रूो दे दे रूो दृष्ट्वा परिश्रुतः । २ ख. °वं पञ्चम° । ३ ख. °खे देवादि° ।
 ४ ख. °के मया° ।

सप्त धान्यानि मुखे क्षिपेत् । वृन्ताके वृषणयोः । गृञ्जनं प्रजापते न त्वदेता-
निति गुह्ये न्यसेत् । ब्रह्मजज्ञानमिति शुक्रस्थाने पारदं न्यसेत् । पुरीषे पित्तलं
दद्यात्स्थिरो भवेति मन्त्रतः । मूत्रस्थाने गोमूत्रमयं त इति मन्त्रतः । ऊर्णया
रोमाणि लोमानि प्रयतेरिति । युवा सुवासा इति कौपीनं वस्त्रेण पट्टेन दुकू-
लेन वा । प्रतद्विष्णुरिति पञ्चगव्येन प्रोक्षेत् । आदित्यास्त्वगिति कृष्णाजि-
नमभिमन्त्र्य वेदाहमिति सर्वाङ्गान्यभिमन्त्रयेत् ।

कृत्वा मूर्तिं प्रयत्नेन ततो नामादि कारयेत् ।

जातकर्मादिविवाहान्ताः क्रियाः संक्षेपेण कर्तव्याः । तत्र कालनियमो
नास्ति । एककालेनैव कर्तव्याः । वैष्णवैर्मन्त्रैः सर्वसंस्कारान्कुर्यात् । गायत्र्या
वाऽस्य कायस्य शुद्धिः । अनन्तरं पुरश्चरणं सावित्रीजपो गोदानं च । तत्र
प्रयोगः—

अमुकगोत्रस्य प्रेतस्य निखिलकायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकरहस्यप्रका-
शज्ञानाज्ञानकृतमहापातकातिपातकानुपातकोपपातकसंकीर्णप्रकीर्णकदोषक्षयार्थमू-
र्ध्वोच्छिष्टाधरोच्छिष्टास्पृश्यस्पर्शानेकनिमित्तजनितपापक्षयार्थं पित्रोरौर्ध्वदे-
हिके कर्मण्यधिकारार्थं यथासंभवं प्रायश्चित्तमहं करिष्ये । इति संकल्पं कृत्वा
देवस्य त्वेति प्रेतं संस्नाप्य भूरसीति भूमौ निधाय भद्रं कर्णेभिरिति क्षौरं कार-
येत् । कृतं कर्मोच्चारयेत् । ततो वैतरणीदानम् ।

यमद्वारे महाघोरे तप्ता वैतरणी नदी ।

तर्तुकामः प्रदास्यामि तुभ्यं वैतरणीं च गाम् ॥ ४ ॥

अथाष्ट महादानानि—

कार्पासलोहलवणसप्तधान्यं तथैव च ।

हिरण्यतिलपात्रादि दद्याद्विष्णुसुतुष्टये ॥ ५ ॥

कार्पासस्य तुला । लोहस्याशीतिपलानि । लवणस्य द्रोणचतुष्टयम् । तिला-
नां द्रोणपञ्चकम् । हिरण्यं निष्कमितम् ।

ब्रीहीन्माषान्प्रियंगूश्च शालीन्मुद्गांस्तिलानपि ।

ददामि यावनालांश्च ततः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ ६ ॥

विष्णोरिति दक्षिणां कर्णे श्रावयेत् । अनन्तरं विष्णुकलशोदकेन रुद्रकलशो-
दकेन चाभिषेकः । शिरो मे श्रीरिति पञ्चभिः । वाचं ते० । नमस्ते० । ऋचं वाचः

मृ० । पुनः सर्वमन्त्रैः पुरुषसूक्तेन शं न इन्द्राग्नी० उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते० समुद्रं
गच्छ० नमो ब्रह्मणे० इत्यन्यैर्वैष्णवमन्त्रैश्च पञ्चकलशोदकेनाभिषेकः कार्यः ।
अथालंकरणानि । अधिवासने कर्पूरः । पीतं वस्त्रम् । अभ्यङ्गे घृतम् । कण्ठे
तुलशीशतपत्रमालाः । अथ प्रेतमातरः स्वर्णरौप्यमययोऽक्षतपुञ्जेषु चतुर्दिक्षु
स्थाप्याः ।

दीप्ता सूक्ष्मा जया भद्रा विभूतिर्विमला तथा ।

अमोधा विद्युता नन्दा सर्वा च सर्वतोमुखी ॥ ७ ॥

एता आदित्यं गर्भमिति पूर्वं न्यसेत् ।

दितिरदितिर्दनुः कद्रूनिंकषा विनता सुभगैता यमाय त्वेति याम्ये न्यसेत् ।

नन्दा भद्रा सुरभिला सुशीला बहुला शुभा ।

देवमाता वेदमाता लोकमाता च शङ्खिनी ।

यक्षिण्यथ च गायत्री सावित्री जलशायिनी ॥ ८ ॥

एताश्चतुर्दश मातृर्वरुणस्योत्तम्भनमसीति वारुणे न्यसेत् ।

लक्ष्मीः सुभगा पार्वती च मन्त्रिणी वसुधा तथा ।

धनदा चेति पप्मातृः स्थापयेदुत्तरे दले ॥ ९ ॥

प्रेतमातृणां प्रीत्यर्थं सप्तधान्यं प्रत्येकं द्रोणमात्रं दद्यात् । शिवसंकल्पमन्त्रेण
पूर्वमातृणां गन्धादिभिरर्चनं कुर्यात् । पुरुषसूक्तमन्त्रेण दक्षिणमातृणामर्चनं
कुर्यात् । नारायणमन्त्रेण पश्चिममातृणामर्चनं कुर्यात् । अप्रतिरथमन्त्रेणोत्तरमातृ-
णामर्चनं कुर्यात् । मातृणां प्रीतये पुनः पुरुषसूक्तमन्त्रेण समग्रेण सूक्तेन वा ब्रह्मा-
द्या देवता गन्धादिनाऽभ्यर्चयेत् । यमसूक्तैर्ऋतंवचैः स्नानं प्रेतस्य प्रयत्नतः ।
स्नानान्ते तं मृतमिति विचिन्त्य दहनं कुर्यात् । भूरसीति चिताभूमिं संशोध्य
समुद्रं गच्छेति प्रोक्षेत् । स्वशाखोक्तेन विधिना प्रेतमासंधीसंस्थमुत्क्षिप्य
चितां प्रतिनिवेशयेत् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
पालाशविधानम् ।

अथ प्रेतदाहकर्मणि दुष्टकालविवरणम् ।

भरणी कृत्तिकाऽऽश्लेषा मघा मूलान्त्यपञ्चकम् ।

नक्षत्राण्यतिदुष्टानि प्रेतकर्मणि वर्जयेत् ॥ १ ॥

विशाखा रोहिणी चित्रा मित्राख्यं च पुनर्वसू ।
 पूर्वाषाढाद्वयं वर्ज्यं दुष्टं कुणपकर्मणि ॥ २ ॥
 त्रयोदशीचतुर्दश्यौ वारौ शुक्रशनैश्चरौ ।
 वैधृतिं पातपरिघौ तथा विष्टिं विवर्जयेत् ॥ ३ ॥
 पालाशवृन्तैर्दभैश्च साग्रेश्चानग्निकस्य च ।
 क्रमाच्छरीरमाधाय दाहयेद्विधिवत्तथा ॥ ४ ॥
 साग्निकं प्रत्यक्शिरसं याम्यावक्त्रं निरग्निकम् ।
 स्वगृहोक्तेन विधिना विदध्याद्धवनं द्विजः ॥ ५ ॥
 अनग्रं हेमवक्त्रं च घृताभ्यक्तं ससूत्रकम् ।
 उत्तानं तिलकैर्युक्तं तुलसीपूर्णरन्ध्रकम् ॥ ६ ॥
 तिलाभिमन्त्रितं प्रेतं दहेद्विव्येन वह्निना ।
 चन्दनेनानुलिप्ताङ्गं पुष्पमालाभिः शोभितम् ॥ ७ ॥
 क्रमात्प्राप्ते च दाहे च नास्ति कालनिषिद्धता ।
 विनाऽन्यपञ्चकं भानां विधानं तत्र कल्पयेत् ॥ ८ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां प्रेतदाहक-
 र्मणि दुष्टकालविवरणविधानम् ।

अथ शास्त्रवीक्षाविधानम् ।

यदा कदाचित्समये वीक्षाकामैर्मनीषिभिः ।
 संमार्जिते स्थले रम्ये पूजयित्वा च पुस्तकम् ॥ १ ॥
 तण्डुलाष्टदलं कृत्वा धूपिते भूतले शुभे ।
 गन्धपुष्पाक्षतैः कुर्यादर्चनं मूलमन्त्रतः ॥ २ ॥
 सामान्योऽयं विधिः शास्त्रे सामान्ये कथ्यते बुधैः ।
 विपाके कर्मणां प्रोक्तो विशेषः शास्त्रकोविदैः ॥ ३ ॥
 स्नात्वोऽवलोकयेच्छास्त्रं रविवारे विशेषवित् ।
 तण्डुलाष्टदलं कृत्वा पूर्ववत्पूजयेद्बुधः ॥ ४ ॥

परिमाणं तण्डुलानां खारी वा द्रोणपञ्चकम् ।
 निष्किञ्चनस्तदर्धेन कुर्यादष्टदलं सुधीः ॥ ५ ॥
 वैद्यैर्विज्ञातदोषस्य दुःसाध्यस्यौषधैरपि ।
 शान्त्यर्थमीक्षते ग्रन्थं पूर्वकर्मविपाकजम् ॥ ६ ॥
 ज्योतिःशास्त्रावलोके च दद्यात्पूगी(ग)फलादिकम् ।
 पुष्पवद्ग्रहणं पश्येत्पटे संलिखितं शुभम् ॥ ७ ॥
 येनेदं दर्शितं सम्यक्तस्मै दद्याद्धनं बहु ।
 इति वीक्षा प्रकर्तव्या शास्त्रेषु कुशलैर्द्विजैः ॥ ८ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 शास्त्रवीक्षाविधानम् ।

अथ शकुनशास्त्रावलोकनविधानम् ।

ब्रह्मयामले—

रघुवंशः स्तुतिर्देव्यास्तथा भागवतं शुभम् ।
 प्रेक्षणीयानि शास्त्राणि पूर्वाभावे परं परम् ॥ १ ॥
 पूर्वेश्वरधिवास्तव्या रघुवंशस्य पुस्तिका ।
 गन्धपुष्पादिकैः सर्वैरुपचारैः प्रपूजिता ॥ २ ॥
 निमन्त्रयेत्कुमारीं तां या गौरी या विवेकिनी ।
 द्विजातीनां विशेषेण पूर्वेश्वरभिवन्द्य च ॥ ३ ॥
 प्रातःकाले समुत्थाय कृत्वाऽभ्यङ्गं समाहितः ।
 तामप्यभ्यज्य विधिवत्कन्यकां तु समाह्वयेत् ॥ ४ ॥
 संमार्जिते स्थले रम्ये चतुष्के रू(क्कैरु)पशोभिते ।
 आसनं प्राङ्मुखं कुर्यात्कुमार्यां विधिपूर्वकम् ॥ ५ ॥
 पटे वा दारुपट्टे वा केवले भूतलेऽपि वा ।
 सर्गपङ्क्तिं द्विधा कुर्यादक्षतैर्भावतत्परः ॥ ६ ॥
 प्रथमं (मा) दशसर्गाणां नवानामपरा भवेत् ।
 आदिरुत्तरतो ज्ञेया तथैवापरपङ्क्तिजा(तथा दक्षिणतोऽपरा) ॥ ७ ॥

पङ्क्तयोः प्रागे(च्ये)व दिग्भागे पीठे शास्त्रं प्रपूजयेत् ।
 उपचारैः षोडशभिः कुमारीमपि पूजयेत् ॥ ८ ॥
 वागर्थाविव संपृक्ताविति सर्वत्र मन्त्रतः ।
 अर्चयित्वा कुमारीं च पुस्तिकामपि पण्डितः ॥ ९ ॥
 चिन्तयित्वाऽऽत्मसुहितं पूगीफलमनुत्तमम् ।
 प्रदत्त्वा कन्यकाहस्ते प्रार्थयेच्च पुनःपुनः ॥ १० ॥

तत्र चिन्ताक्रमः—

यदि मे सफलं कार्यं परिपश्यसि शोभनं ।
 तदाऽस्मिन्शकुने ब्रूहि शोभनं नान्यथा वद ॥ ११ ॥
 कुमारि गिरिजारूपे भविष्यत्सदृशं फलम् ।
 निधेहि पङ्क्तिपूजेषु(पुञ्जेऽत्र) यत्र ते मनसो रुचिः ॥ १२ ॥
 कुमार्या निहितं ज्ञात्वा पूगीफलमनुत्तमम् ।
 गणयेत्सर्गदशकान्दशके तु फलं न्यसेत् ॥ १३ ॥
 श्लोके च निहिते पूगे कथां तत्र विचिन्तयेत् ।
 स्तुतिलिङ्गवर्जितः श्लोकः शकुनेषु प्रशस्यते ॥ १४ ॥
 शुभं वाऽप्यशुभं सत्यं तवर्गेतरपञ्चमम् ।
 अक्षरं प्रथमे पादे संयोगेन विवर्जितम् ॥ १५ ॥

एतद्रघुवंशविरचनमध्ये “ तस्याधिकारपुरुषैः ” इत्यादिग्रन्थसंदर्भविरचन-
 समयेऽतिप्रसन्नया परमेश्वर्यैकोनविंशसर्गसंग्रहे ममाधिष्ठानमस्तीति कालिदा-
 सोऽनुकम्पितः । ततश्च कविना वृतो वरः “ यद्गृह एत्पुस्तकं तत्रानन्तरायोऽस्तु
 यः पठति तद्वंशादिवृद्धिरस्तु । यः पूजयति तदायुर्वर्धताम् । यः शकुनार्थं
 पर्यालोचयति तस्यैव प्रकारः सम्यग्भवतु । यो लेखयित्वा ददाति तस्य माघ-
 मासप्रयागस्नानमस्तु । यस्तु बालान्पाठयति स सर्वविद्याध्यापको भवतु ” इति ।
 ततः परितुष्टया परमेश्वर्यैवमस्तिवर्त्यैवादि । इत्याख्याऽपि(ख्यायिका) रुद्रयाम-
 लादित्रयटीकासु दर्शिता । ततो निश्चयेन सम्यक्परमेश्वर्या अस्मिन्ग्रन्थेऽधिष्ठान-
 मस्त्यतो लौकिकमेतदिति न मन्तव्यम् !

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां रघुवंशे
 शकुनप्रेक्षणविधानम् ।

अथ सप्तशतीशकुनप्रेक्षणविधानम् ।

संपूज्य विधिवद्देवीं कुमारीरूपिणीं शिवाम् ।
 कृत्वाऽष्टदलमुर्वीस्थं तत्र तत्पुस्तकं न्यसेत् ॥ १ ॥
 पूजितायाः करे दद्यात्कन्यकायास्तु मुद्रिकाम् ।
 शलाकां वा हेममयीं गजदन्तस्य वा शुभाम् ॥ २ ॥
 द्वादशाङ्गुलमात्रां तु विन्यसेत्पुस्तकान्तरे ।
 संपश्येत्प्रथमां पङ्क्तिं पुटे वाऽनङ्कसंज्ञके ॥ ३ ॥
 तत्रत्यं सुविचार्याऽऽशु यत्स्वभावं कथानकम् ।
 आदिशेत्तत्स्वरूपं हि फलं शास्त्रविशारदः ॥ ४ ॥
 नमो देव्यै महादेव्यै मन्त्रमुच्चारयेद्बुधः ।
 उपचारेषु सर्वेषु नात्र कार्या विचारणा ॥ ५ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां सप्तशतीशकुन-
 प्रेक्षणविधानम् ।

अथ श्रीभागवतशकुनावलोकनम् ।

यथा रघुवंशेऽवलोकनं तथैव भागवते । परं मूलमन्त्रेणोपचाराः । द्वाद-
 शस्कन्धानां तण्डु २ पुञ्जाः कर्तव्याः । पङ्क्तिरेकैव । तत्र स्कन्धेऽध्यायानां पुञ्जा
 अध्याये दशकानां तत्र श्लोकानाम् ।

स्तुतिलिङ्गवर्जितः श्लोकः शकुनेषु प्रशस्यते ।

इति नियमोऽत्रापि । न तु तवर्गेतरपञ्चममिति । स्तुतिलिङ्गवर्जितः श्लोक
 इति नियमः सप्तशतीस्तोत्रे नास्ति । यतः कारणात्तच्छास्त्रं स्तुतिप्रधानं
 तत्र फलितार्थो ग्राह्यः । तथा कालचक्र उपचारपूर्वकं विलोकनीयम् । तथा च
 रूपकावलयक्षरकैवल्यादिषु च विलोकनीयम् । तत्र शकुनानां मध्य एक
 औत्पादिका एके सहजा भवन्ति । तत्राऽऽदावौत्पादिका विवाहादिमङ्गले कार्ये
 तथा ग्रामनिवेशने शकुना भवन्ति फलदाः किं पुनः सहजाः । पूर्णफलदाः ।
 सहजाः सामिफलदाः कृत्रिमा ज्ञेयाः । तथैवापशकुनाः क्षुतादिका निषिद्धाः
 स्युः । “ लाभस्तेषां० तदेव लग्नं० सर्वदा सर्वकार्येषु० वैन्यं पृथुं० ।

तव वर्त्मानि वर्ततां शिवं पुनरस्तु त्वरितं समागमः ।

अयि साधय साधयेप्सितं स्मरणीयाः समये वयं वयम् ॥ १ ॥

इत्याद्यौत्पादिकाः शकुना दक्षिणाः । दक्षिणः काको वायव्यभागस्था नकुल-
भरद्वाजचाषमयूराः शुभदाः । पल्लीपिङ्गलादिरुतानि यथोदितानि तान्येव शकुने
प्रशस्तानि न तु ते दर्शनफला इत्यादि सहजम् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां यन्त्रमालोक्त-
रघुवंशादिशकुनविधानम् ।

अथोपश्रुतिविधानम् ।

तथा च यज्ञकाण्डे—

उपश्रुतौ प्रधानत्वं फले कार्यं फलार्थिना ।

ज्ञातव्या यज्ञकर्मन्ते सा पौरमुखजा बुधैः ॥ १ ॥

तथा च विशेषः—

अन्त्यजानां गृहे वाक्यं पूर्वरात्रे यदुच्यते ।

स्त्रिया वा बालकैर्वाऽपि तथा पुंभिः परस्परम् ॥ २ ॥

विचार्य तद्वचस्तत्त्वमादेष्टव्यं फलं बुधैः ।

निर्णेजकालये पश्येत्प्रतिपद्येव बुद्धिमान् ॥ ३ ॥

मद्यकृतसदने पश्येद्वितीयायां न संशयः ।

तैलविक्रयिणां गेहे तृतीयायां विलोकयेत् ॥ ४ ॥

चतुर्थ्यां पुलकसानां च पञ्चम्यां लोहकारिणाम् ।

षष्ठ्यां किंशुकजातीनां सप्तम्यां मद्यकारिणाम् ॥ ५ ॥

अष्टम्यां चैव वैश्यानां नवम्यां योगजातिषु ।

पश्येत्पौष्कलके गेहे दशम्यां नात्र संशयः ॥ ६ ॥

सिन्दोलकगृहे पश्येदेकादश्यामुपश्रुतिम् ।

द्वादश्यां कुम्भकाराणां स्वर्णकारालये स्मरे ॥ ७ ॥

भूते कापालिके गेहे पौर्णमास्यां द्विजन्मनाम् ।

अमायां शूद्रजातीनां गेहे पश्येदुपश्रुतिम् ॥ ८ ॥

तत्र विलोकनक्रमः—

उपास्य पश्चिमां संध्यां स्मरन्नात्महितं सुधीः ॥
 स्वस्तिवाच्य द्विजान्गच्छेद्भालग्रन्थिर्मुदाऽन्वितः ॥ ९ ॥
 चन्दनेनानुलिप्ताङ्गः श्वेतमाल्यधरः शुचिः ।
 श्वेतवस्त्रसमायुक्तो धृतहेमविभूषणः ॥
 अक्षतानञ्जलौ धृत्वा मन्त्रेणानेन मन्त्रितान् ॥ १० ॥
 ॐ ऐं ह्रीं श्रीं देवि देवि महादेवि महादेवस्य बलभे ।
 विमोहय जनान्सर्वान्ममात्र वशगान्कुरु ॥ ११ ॥ स्वाहा ।

इत्यभिमन्त्र्याक्षतानञ्जलौ परिगृह्य वस्त्रेण बद्धनेत्रकर्णः सन्नन्येन नीयमान उपश्रुतिगृहं गत्वाऽञ्जलेरक्षतांस्तद्गृहोपरि प्रक्षिप्य मुक्तनेत्रकर्णो गृहमनुष्यशब्दा-
 ङ्च्छृणुयात् । तच्छुभमशुभं वा विचार्याऽऽदेष्टव्यमिति ।

अन्यच्च—

यदा कदाचित्समये ग्रामान्तरं जिगमिषुर्गम्यमानः पथि पौरशब्दानाकर्णये-
 तेषु क्रूरान्वर्जयित्वाऽन्ये शब्दादिवर्णाः श्रेष्ठाः । प्रयाणे गृहाणगच्छभवत्यर्थ-
 जातार्थदानार्थलाभार्थादिसाधुशब्दाः प्रशस्ताः । तेषु काकर्थो दुष्टाः । एह्यगच्छ-
 नास्तिनभवत्यर्थाजातासिद्धार्थादिशब्दा गमने दुष्टाः । ताञ्छब्दाञ्छ्रुत्वा गच्छ-
 न्सन्स्वगृहान्निवर्तयेत् । अत्युत्कटकार्यविशेषोऽस्ति तर्हि निवृत्तः सन्दिवाचम्य
 कुलदेवतां संस्मृत्य मुहूर्तं तिष्ठन्पुनर्गच्छेत् । वैश्यं पृथुं हैहयमिति प्रयाणसिद्धिदा-
 न्संस्मृत्य कार्यसिद्धये गच्छेत् । पुनश्चेन्निषिद्धप्रयागः क्षुतादिभिर्भवति तदा
 सिद्धिविनायकव्रतोपयाचितकं संकल्प्य गच्छेत् । ततश्च निषिद्धः सन्न
 गच्छेदेव ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां यज्ञका-
 ण्डोक्तमुपश्रुतिविधानम् ।

अथ त्रिपुष्करादियोगजानविघ्नभङ्गविधानम् ।

धनिष्ठापञ्चके याश्च देवताश्च त्रिपुष्करे ।
 संपूज्यास्तु प्रयत्नेन मन्त्रैस्तल्लिङ्गसंज्ञकैः ॥ १ ॥

तिथिर्वारं च नक्षत्रं त्रिपुष्कर इति स्मृतः ।
 त्रयाणां देवताः पूज्या मन्त्रैस्तल्लिङ्गैर्बुधैः ॥ २ ॥
 कुबेरस्य पृथक्पूजा विधातव्या मनीषिभिः ।
 होमं च विधिवत्कुर्यान्नक्षत्रशमनोचितम् ॥ ३ ॥
 सामान्यं च हविस्तेषां साज्यं पायसमुत्तमम् ।
 मन्त्राभावे च गायत्री पालीशयः समिधस्तथा ॥ ४ ॥
 होमान्ते यजमानस्य विदध्यादभिषेचनम् ।
 लक्ष्मीसूक्तं जपेत्पश्चाद्दद्याद्दानानि भूरिशः ॥ ५ ॥
 लक्ष्मीनारायणप्रीत्यै मञ्चकं च सतूलिकम् ।
 दद्याद्विप्राय शीलाय सदाय विशेपतः ॥ ६ ॥

मतान्तरे—

यानि कानि च ऋक्षाणि ये च वाराश्च केचन ।
 याश्च काञ्चिच्च तिथयः कथिताश्च त्रिपुष्करे ॥ ७ ॥
 सर्वेषामपि तेषां तु त्रयो देवाः प्रकीर्तिताः ।
 यमो रुद्रश्च मघवा संपूज्यो विधिवद्बुधैः ॥ ८ ॥
 महिषं वृषभं नागं लौहं ताम्रं च राजतम् ।
 आचार्याय यथाशक्त्या (क्ति) प्रदद्याद्वक्षिणां ततः ॥ ९ ॥

तत्र दानमन्त्रः—

त्रिपुष्करकर श्राद्धदेव देवनमस्कृत ।
 दानेन महिषस्यात्र निर्विघ्नं कुरु मां प्रभो ॥ १० ॥

इति महिषदानमन्त्रः ।

वृषभं कामरूपं हि सर्वकामविवर्धनम् ।
 दास्ये रुद्रस्य तुष्ट्यर्थं निर्विघ्नं कुरु मां ततः ॥ ११ ॥

इति वृषभदानमन्त्रः ।

इन्द्रवाहन वाहेन्द्र चतुर्दन्तविराजित ।
 दत्ते त्वयि विप्रवर्याय (द्विजेन्द्राय) प्रीतो भवतु देवराट् ॥ १२ ॥

इति गजदानमन्त्रः ।

ततश्च भोजयेद्विप्रानन्नैर्नानाविधैः शुभैः ।
 एवं कृते विधाने च विघ्ना नश्यन्ति भूरिशः ॥
 पुनश्च जायते लक्ष्मीस्तेजोवृद्धिविवर्धनम् ॥ १३ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां त्रिपुष्करादि-
 योगजातविघ्नभङ्गविधानम् ।

अथ ग्रहणवेधदोषहरं विधानम् ।

तत्र ज्योतिःशास्त्रम्—

त्रिषड्दशायोपगतं नराणां शुभप्रदं स्याद्ग्रहणं रवीन्द्रोः ।
 द्विसप्तनन्देषु मध्यमे स्याच्छेषेष्वनिष्टं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥ १ ॥
 सूर्यग्रहे न भोक्तव्यं पूर्वं यामचतुष्टयम् ।
 चन्द्रग्रहे न भोक्तव्यं पूर्वं यामत्रयं तथा ॥ २ ॥
 सायाह्ने संगवेऽश्रीयाच्छारदे संगवादधः ।
 मध्याह्ने परतोऽश्रीयान्नोपवासो रविग्रहे ॥ ३ ॥
 मूर्हर्तत्रितयं प्रातस्तावानेव तु संगवः ।
 मध्याह्नास्त्रिमुहूर्तः स्यादपराह्णोऽपि तादृशः ॥ ४ ॥
 सायाह्ने त्रिमुहूर्ते च न कार्यं किमपीष्यते ।
 अग्निहोत्रं तथा संध्यामतिथेः पूजनं विना ॥ ५ ॥
 यदि दुष्टे ग्रहे चन्द्रसूर्ययोर्भाविनां नृणाम् ।
 विधानं तत्र कर्तव्यं जपहोमसुरार्चनैः ॥
 तीर्थस्नानैश्च दानैश्च विष्णुमूर्तिविलोकनैः ॥ ६ ॥

तत्र मुख्यदानम्—

सौवर्णं कारयेन्नागं पलेन च पलार्धतः ।
 तदर्धेन तदर्धेन फणायां मौक्तिकं न्यसेत् ॥ ७ ॥
 ताम्रपात्रे निधायाऽऽशु घृतपूर्णे विशेषतः ।
 कांस्ये वा कान्तलोहे वा न्यस्य दद्यात्सदक्षिणम् ॥ ८ ॥

माषा निष्पावका राजमाषा मुद्राः प्रियङ्गवः ।
 देया राहूपरागे तु नरेण हितमिच्छता ॥ ९ ॥
 चन्द्रग्रहे तु रौप्यस्य बिम्बं दद्यात्सदक्षिणम् ।
 नागं रुवममयं चैव सूर्यबिम्बं च हेमजम् ॥ १० ॥
 तुरंगरथगोभूमितिलसर्पीषि काञ्चनम् ।
 दुकूलादीनि वस्त्राणि दद्याद्ग्रहणशान्तये ॥ ११ ॥
 एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ।
 ऐश्वर्यं लभते मर्त्यो नात्र कार्या विचारणा ॥ १२ ॥
 विधुंतुद नमस्तुभ्यं सिंहिकानन्दनाच्युतैः ।
 दानेनानेन नागस्य रक्ष मां वेधजाद्भयात् ॥ १३ ॥

इति स्वर्णनागदानमन्त्रः ।

तथा च तुरंगरथवृषादीनां दानमन्त्रा ये दानखण्डे प्रोक्तास्तैरेव तानि
 दानानि विदध्यात् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां ग्रहणवेध-
 दोषहरं विधानम् ।

अथ दाहादिदोषदुष्टवस्त्रदोषहरं विधानम् ।

कज्जलकर्दमगोमयलिप्ते वाससि दग्धवति स्फुटिते वा ।
 चिन्त्यमिदं नवधा विहितेऽस्मिञ्छ्रेष्ठकनिष्ठफलं च सुधीभिः ॥ १ ॥
 दाहादिदोषैर्दुष्टं स्याद्वस्त्रं यदि तदाऽऽचरेत् ।
 विधानं विधितत्त्वज्ञस्तद्विघ्नस्यापनुत्तये ॥ २ ॥
 यानि ऋक्षाणि वस्त्रस्य जन्मऋक्षं तु वा भवेत् ।
 तेषां तु देवताः पूज्या गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ ३ ॥
 हवनं च प्रकर्तव्यं मन्त्रैस्तल्लिङ्गसंज्ञकैः ।
 तनवः स्वर्णजाः कार्या ऋक्षेशानां पृथक्पृथक् ॥ ४ ॥
 प्रधानं पायसं तत्र साज्यं प्रोक्तं मनीषिभिः ।
 अयुतं वा सहस्रं वा शतमष्टोत्तरं तथा ॥ ५ ॥

वित्तशाठ्यं न कर्तव्यं श्रद्धया परयाऽन्वितः ॥
दद्याद्वस्त्रं च तद्वर्णं यद्वर्णं दुष्टमम्बरम् ॥ ६ ॥

तत्र दानमन्त्रः—

लोकलज्जाहरं श्रेष्ठं सोमलोकप्रदायकम् ।
दत्तं तुभ्यं मया ब्रह्मन्सर्वशान्तिकरो भव ॥ ७ ॥

इति वस्त्रदानमन्त्रः ।

एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ।
इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां दाहादि-
दोषदुष्टवस्त्रदोषहरं विधानम् ।

अथाऽऽस्तीकमते सर्पदष्टापमृत्युहरं विधानम् ।

दष्टे सर्पेण मनुजे मणिमन्त्रैर्हृते विषे ।
विधानं तत्र कर्तव्यमपमृत्युविनाशनम् ॥ १ ॥
निशाकल्केन कर्तव्यमङ्गोद्वर्तनमुत्तमम् ।
सपल्लवेन तोयेन कवोष्णेनैव मार्जयेत् ॥ २ ॥

सपल्लवेनेतिपञ्चपल्लवैर्युक्तेनोष्णेन वारिणेति । ते च पञ्च पल्लवाः—

अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षचूतन्यग्रोधपल्लवाः ।
मतान्तरे तु निम्बः स्यादाम्रन्यग्रोधनिह्वे ॥ ३ ॥

निह्वेऽभाव इति ।

ततस्तु नूतनं वस्त्रं परिधाय कृताह्निकः ।
स्वस्तिवाचनपूर्वं तु ब्राह्मणानर्चयेत्ततः ॥
स्वस्तिके तण्डुलानां च नव नागान्प्रपूजयेत् ॥ ४ ॥

ते च नागाः—

वासुकिस्तक्षकोऽनन्तः पद्मः शङ्खोऽथ शार्दूलः ।
कुमुदः कैरवः कुम्भो नव नागा भयप्रदाः ॥ ५ ॥
चतुर्थ्यन्तैश्च ते पूज्या नाममन्त्रैः पृथक्पृथक् ।
कूष्माण्डीसंभवैः पुष्पैरपामार्गदलैस्तथा ॥ ६ ॥

शतपत्रैस्तु पत्रैर्वा करवीरैश्च पूजयेत् ।
चन्दनेन सुगन्धेन लेपनीयाः पृथक्पृथक् ॥ ७ ॥
धूपैस्तु धूपयेत्पश्चाद्दीपैर्नीराजयेत्ततः ।
अतैलपक्कैर्नैवेद्यैस्ताम्बूलैरपि तोषयेत् ॥ ८ ॥
नागाः स्वर्णमयाः श्रेष्ठा राजतास्ताम्रजा अपि ।
अभावे मृन्मयाः कार्याः संलिखेच्चन्दनेन वा ॥ ९ ॥
परिमाणं तण्डुलानामाढकानां चतुष्टयम् ।
प्रातःकालेऽथवा कुर्याद्विधानं संगवेऽपि च ॥
पूजान्ते वैदिकैर्मन्त्रैः पौराणैर्वाऽभिषेचयेत् ॥ १० ॥

ते च पौराणमन्त्राः—

अभिषिञ्चन्तु ते देहं वासुक्याद्या भुजंगमाः ।
अभिषिञ्चन्तु ते देवाः स्वर्गे ये सुप्रतिष्ठिताः ॥ ११ ॥
वसिष्ठाद्याश्च ऋषयो मानवाः सनकादयः ।
विश्वावसुमुखा यक्षाः पौलस्त्याद्याश्च राक्षसाः ॥ १२ ॥
ऐरावतादयो नागास्तुरगेन्द्रादिवाजिनः ।
कामधेनुमुखा गावो वृक्षाः कल्पद्रुमादयः ॥ १३ ॥
चिन्तामणिमुखास्तद्वन्मणयो दिव्यरूपिणः ।
गङ्गाद्याः सरितः सर्वा मानसादिसरांसि च ॥ १४ ॥
अर्णवाद्या उदन्वन्तो हिमवत्प्रमुखा नगाः ।
एते त्वामभिषिञ्चन्तु पावमान्यः शुचित्रताः ॥ १५ ॥
अभिषिच्यथ धीमन्तः पयसा वा जलेन वा ।
शतं जीवेति मन्त्रैस्तु अभिनन्दनतत्पराः ॥ १६ ॥
आशीर्वादमुखा विप्रा अभिपूज्या धनैस्ततः ।
ततस्तु नागपीठं च समादाय द्विजैः सह ॥ १७ ॥
वल्मीकमभिगच्छेत्तु पीठं तत्र प्रदापयेत् ।
आचार्याय सुशीलाय श्रोत्रियाय कुटुम्बिने ॥ १८ ॥
अभिषिञ्चेत्तु वल्मीकं पयसा सघृतेन वा
गन्धपुष्पादिकं सर्वं वल्मीके च विधीयते ॥ १९ ॥
ततः प्रदक्षिणीकृत्य पुनरेव गृहं व्रजेत् ।
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्दक्षिणाश्च प्रदापयेत् ॥ २० ॥

एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ॥

शतायुर्जायते मर्त्यो नात्र कार्या विचारणा ॥ २१ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायामास्तीकमतोक्तं सर्पदष्टा-
पमृत्युहरं विधानम् ।

अथ मन्त्रोपदेशविधानम् ।

मन्त्ररहस्ये—

आयुष्कामः प्रजाकामः स्वर्गकामो जितेन्द्रियः ।

अर्थयेद्देवतां काञ्चित्पुष्टिदां तुष्टिदां पराम् ॥ १ ॥

तद्वश्यकरमौन्नत्यविद्यापुष्टिविवर्धनम् ।

बुद्धिमानभ्यसेन्मन्त्रं हितमायुर्दमात्मनः ॥ २ ॥

वश्याद्यैः पञ्चभिर्गुणैर्युक्तं हितमित्यर्थः ।

वरवध्वोर्यथा मैत्रीं गृह्णतस्त्वामिनोर्यथा ।

तथा विद्यामान्त्रिकयो राशिमैत्रीं विचिन्तयेत् ॥ ३ ॥

चन्द्रसूर्यग्रहे कुर्याद्विद्याग्रहणमुत्तमम् ।

पर्वण्येव च पावित्रे तथा दामनके शुभे ॥ ४ ॥

नवचण्डीमहोत्साहे शुभे वा वासरे तथा ।

विद्यासंभारमादाय गन्धपुष्पादिकं परम् ॥ ५ ॥

आचार्यं पूजयेद्भक्त्या कृतस्नानविधिः सुधीः ।

आदौ तु हवनं कृत्वाऽभ्यर्चयेन्मन्त्रदेवताम् ॥ ६ ॥

देवदारुमये पीठे दुकूले वाऽन्यवाससि ।

नीलीवर्जं विधातव्यं यन्त्रमुक्तं तु कौङ्कुमम् ॥ ७ ॥

परिवारसमायुक्तां देवतां तत्र पूजयेत् ।

पञ्चामृतैः सुस्नपितां शङ्खेनैव पृथक्पृथक् ॥ ८ ॥

अभिषिक्तोऽथ गुरुणा मान्त्रिकः संमुखः शुचिः ।

पादावानम्य मूक्तस्य सद्गुरोर्नम्रमस्तकः ॥ ९ ॥

विद्याधिकारकृतूर्णमूर्धन्यस्तार्यहस्तकः ।

आगतं दक्षिणान्कर्णान्मन्त्रं हृदि समावहेत् ॥ १० ॥

ततस्तु न्यासपूर्वं तं विद्याविधिमुत्तमम् ।

ध्यानदीपा(बीजा)दिकं सर्वमभ्यसेन्मन्त्रतत्परः ॥ ११ ॥

पुरश्चरणमेकान्ते कुर्यान्मन्त्रस्य मान्त्रिकः ।

दशांशं हवनं कुर्याद्विषोक्तेन बुद्धिमान् ॥ १२ ॥

ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चादशांशेनैव तद्यजेः ।

सर्वान्कामानवाप्नोति गुरुभक्तिपरायणः ॥ १३ ॥

पूजयेत्तु यथाशक्ति गुरुं पर्वणि पर्वणि ।

एवं कुर्वन्विधिं धीमान्तसर्वदा सुखमाप्नुयात् ॥ १४ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां मन्त्ररहस्योक्तं
मन्त्रस्वीकारविधानम् ।

अथ ब्रह्मयमालोक्तं प्रासादोद्यापनम् ।

देवालयं तु यः कुर्यात्पाषाणैर्दरुभिस्तथा ।

शंकरस्य हरेर्वाऽपि देव्या वाऽन्यस्य कस्यचित् ॥ १ ॥

शिल्पशास्त्रोक्तविधिना शुद्धार्थं शुद्धदिङ्मुखम् ।

उद्यापनं प्रकुर्वीत काले सौम्यायने सुधीः ॥ २ ॥

संभारं सर्वमादाय संस्कृते सुरमन्दिरे ।

विहिते मण्डपे सम्यक्कुर्यादुद्यापनाविधिम् ॥ ३ ॥

यजमानः शुचिर्भूत्वा स्वास्तिवाचनपूर्वकम् ।

प्रारभेद्धवनं देवसम्प्रदक्षिणतो बुधः ॥ ४ ॥

उद्यापनं तु देवस्य क्रियते यस्य कस्यचित् ।

कृत्वा तस्य तनुं हैमीं पलेन ध्यानसंयुताम् ॥ ५ ॥

पलार्धेन तदर्धेन यदि वित्तं न विद्यते ।

वित्ते सति पलेनैव नात्र कार्या विचारणा ॥ ६ ॥

सा मूर्तिः पूर्वतः पूज्या स्थण्डिलात्कलशोपरि ।

पद्मे चाष्टदले श्रेष्ठे तण्डुलानां बुधेन वै ॥ ७ ॥

परिमाणं तण्डुलानां स्वारी वा द्रोणपञ्चकम् ।

सुवृत्ते वंशपात्रे च प्रतिष्ठापनमन्त्रतः ॥ ८ ॥

विन्यस्य मतिमान्वस्त्रे वस्त्रेणान्येन वेष्टयेत् ।

प्रस्नाप्य पयसा दध्ना सर्पिषा मधुना तथा ॥

सितया भद्रया धीमान्मन्त्रैस्तल्लिङ्गसंज्ञकैः ॥ ९ ॥

भद्रयेश्वरससंभवया न तु वंशजयेति ।

ततस्तोयेन मूर्तिं तां क्षालयेन्नाममन्त्रतः ।

ततस्तु पूजयेत्पुष्पैर्लिप्त्वा वै चन्दनेन च ॥ १० ॥

दशाङ्गेनैव धूपेन धूपयेत्प्रयतः पुमान् ।

दीपैर्निराजयेत्पश्चाद्भवेद्यैः परितोषयेत् ॥ ११ ॥

अर्चयेन्मूलमन्त्रेण प्रार्थयेत्कार्यसिद्धये ।

ततस्तु हवनं कुर्याद्यथाविधि विधानवित् ॥ १२ ॥

पायसेन तु साज्येन लक्षं वाऽप्ययुतं तथा ।

तिलैर्व्याहृतयः प्रोक्ता लक्षसंख्या मनीषिभिः ॥ १३ ॥

कृत्वा स्थिष्टकृतं सम्यक्पूर्णाहुतिमुपाहरेत् ।

कुर्यादित्यर्थः ।

ज्ञान्तिपाठं ततो विद्वान्पठेत्सार्धं द्विजातिभिः ॥ १४ ॥

प्रतिपूजां ततः कुर्यान्मूर्त्तैस्तस्या विचक्षणः ।

आचार्यं पूजयेद्भक्त्या ब्राह्मणानपि पूजयेत् ॥ १५ ॥

ऋत्विजश्च ततः पूज्या वस्त्रालंकारभूषणैः ।

घेनुं पयस्विनीं दद्यादाचार्याय मनीषिणे ॥ १६ ॥

ब्रह्मणे महिषीं दद्यात्कस्मैचिन्मञ्चकोत्तमम् ।

सतूलिकं सोपधानं सोत्तरच्छदमुत्तमम् ॥ १७ ॥

ताम्बूलपेटिकां दद्यादुपस्करसमन्विताम् ।

स्थालीं दीपं सकलशं मुसलोलूखलं तथा ॥ १८ ॥

घरद्वेपणीमाढ्यां दर्वीं शूर्पं च शोभनम् ।

आहूपां वरिवर्तिसमन्वितामित्यर्थः ।

एतावदेव चैतच्च प्रासादे विन्यसेत्सुधीः ॥ १९ ॥

देवस्य त्वेति मन्त्रेण गायत्र्या च समाहितः ।

विदध्याद्धवनं धीमांस्ततस्तु प्रणमेत्पुरम् ॥ २० ॥

ध्वजमाबध्यतद्द्वारे चित्राम्बरमयं शुभम् ।

कलशाद्वृषपर्यन्तं गरुडं पादुकावधि ॥

संपूज्य विधिबद्धं ततः कृत्वा प्रदक्षिणाम् ॥ २१ ॥

आगच्छेच्च पुनर्गेहं तत्र विप्रांश्च भोजयेत् ।
 संभोज्य मिथुनान्यात्मनः(न्यन्या)नक्षतैरर्चयेत्सुधीः ॥ २२ ॥
 बह्मलंकारभूषाभिस्तोषयेच्छक्त्यपेक्षया ।
 एवं कृते विधाने तु सिद्धिर्भवति शोभना ॥ २३ ॥
 प्रासादकरणे पुण्यं फलं प्राप्नोति शोभनम् ।
 नन्दन्ति पितरस्तस्य बलान्ति च पितामहाः । २४ ॥
 अस्मद्वंश्येन देवस्य प्रासादः परिकल्पितः ।

कुतं इत्यर्थः ।

सुवर्णकलशं धेयं नासायां कीर्तिमच्छिरः ? ॥ २५ ॥
 मण्डपे कलशान्पञ्च केलुं प्रासादमध्यगम् ।
 इत्थं यः कुरुते भीमान्स मुक्तिं लभते ध्रुवम् ॥
 कुलं च नन्दते तस्य सर्वसंपत्समन्वितम् ॥ २६ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां ब्रह्मयामलोक्तं
 प्रासादोद्यापनविधानम् ।

अथ प्रासादकलशन्यासविधानम् ।

भोजकृते शिल्पदर्पणे—

मेरुं वाऽप्यर्धमेरुं वा प्रासादं विदधाति यः ।
 न तेन कलशन्यासः कर्तव्यः स्वहितेच्छया ॥ १ ॥
 कुलवृद्धो यदा नास्ति कलशन्यासकारकः ।
 तदा कृत्वा विधानं तु प्रासादे कलशं न्यसेत् ॥ २ ॥
 दद्यात्स्वमूर्तिं स्वर्णस्य पलेन विहितां शुभाम् ।
 घेनुं पयस्विनीं दद्यादाचार्याय कुटुम्बिने ॥ ३ ॥
 स्वारीमितांस्तिलान्दद्याच्छय्यां दद्यात्सदक्षिणाम् ।
 मृत्युंजयेति (यस्य) मन्त्रेण हवनं कारयेत्सुधीः ॥ ४ ॥
 लक्षं वाऽप्ययुतं वाऽपि पायसेन समर्पिषा ।
 समाप्य विधिवद्धोमं ब्राह्मणान्भोजयेच्छतम् ॥ ५ ॥
 यथाशक्ति धनं दद्यादक्षिणार्थं पृथक्पृथक् ।
 स्वस्तिवाचनपूर्वं तु कलशं स्थापयेत्सुधीः ॥ ६ ॥

कलशात्केतुपर्यन्तं ध्वजां पटमयीं न्यसेत् ।
 सूत्रेण वेष्टयेद्दीमान्प्रासादे विन्यसेच्छुभाम् ॥ ७ ॥
 धूपयेद्धूपनैः श्रेष्ठैर्दीपैर्नाराजयेत्ततः ।
 घण्टां नाद(ग)मयीं श्रेष्ठां लम्बमानां च मण्डपे ॥ ८ ॥
 दृढाळाने पौरुषे तु माने चोर्ध्वा सुलक्षणाम् ।
 ततस्तु प्रणिपत्येशमागच्छेन्निजमन्दिरम् ॥ ९ ॥
 नवग्रहमखं कुर्यात्सर्वविघ्नोपशान्तये ।
 मखान्ते भोजयेद्विप्रान्दद्यात्तेभ्यश्च दक्षिणाः ॥ १० ॥
 सर्वान्कामानवाप्नोति विन्यस्तकलशो नरः ।
 नारी वा लभते कीर्तिं समस्ते पृथिवीतले ॥
 देहान्ते लभते स्थानमव्ययं नित्यमुत्तमम् ॥ ११ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 भोजकृतशिल्पदर्पणोक्तं प्रासादकलशन्या-
 सविधानम् ।

अथ वास्तुपूजाविधानम् ।

अथर्वगुणोक्तम्—

भूमिदुर्गे नवीने तु वास्तुपूजा विधीयते ।
 देवालये तथा गेहे स्वगृहोक्तेन कर्मणा ॥ १ ॥
 वास्तुः स्वर्णमयः कार्यो गजोऽश्वो वृषभः क्रमात् ।
 दुर्गादीनां त्रयाणां च नूतनानां विधानतः ॥ २ ॥
 दुर्गे वास्तुद्वयं कार्यं द्वया उ(गजावु)भयतस्तथा ।
 मण्डपाभ्यन्तरे पूजां विदधीत यथाविधि ॥ ३ ॥
 वास्तु स्तम्भद्वये पूज्यौ स्तम्भमूले घटान्न्यसेत् ।
 वंशपात्रे शुखे कृत्वा कुम्भयोर्वस्त्रसंयुते ॥ ४ ॥
 तत्र तौ साक्षतौ वास्तु विन्यसेन्मूलमन्त्रतः ।
 प्रतिष्ठामन्त्रतो वाऽपि शङ्खपुष्पैः समर्चयेत् ॥ ५ ॥
 स्थण्डिले द्वे ततः कुर्याद्वास्तुपश्चिमतः सुधीः ।
 अग्निवक्त्रं ततः कुर्यात्स्वगृहोक्तेन कर्मणा ॥ ६ ॥

जुहुयात्सर्वमाचार्य ऋत्विग्भिर्ब्राह्मणैः सह ।
 पायसं मधुसर्पिर्भ्यामयुतं च पृथक्पृथक् ॥ ७ ॥
 कुर्युश्च व्याहृतीः पश्चात्तिलव्रीहिघृतैस्तथा ।
 लक्षं वाऽप्ययुतं वाऽपि यथासंख्यं च वा पुनः ॥ ८ ॥
 ततः स्विष्टकृते ताभ्यामाचार्याभ्यां हुते सति ।
 शान्तिपाठं पठेयुस्ते ब्राह्मणा ऋत्विजस्तथा ॥ ९ ॥
 इन्द्रश्रेष्ठेति मन्त्रेण हवनं प्रोच्यतेऽत्र वै ।
 गायत्र्या वा यजेद्दीमान्द्रयोः स्थण्डिलयोरपि ॥ १० ॥
 होमान्ते विदधीताऽऽशु बलिपूजां विधानवित् ।
 इन्द्रो वै देवता त्वस्य वास्तोर्वै त्रिविधस्य च ॥ ११ ॥
 इन्द्रादीनां दिगीशानां पूजाविधिरनुत्तमः ।
 वस्त्रं धान्यं हिरण्यं च दद्याद्विप्राय एव च ॥ १२ ॥
 ततो भक्तं वराक्तं च तैलाभ्यक्तं तथैव च ।
 प्रकिरेत्सर्वतो दिक्षु भूतानां तुष्टिदं परम् ॥ १३ ॥
 एवं कृते विधाने च दुर्गवास्तोश्च पूजने ।
 नश्यन्ति सर्वविघ्नाश्च नन्दते भूपतेः कुलम् ॥
 राष्ट्रं च वर्धते तस्य पुरवृद्धिस्तु जायते ॥ १४ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमा-
 लायां वास्तुपूजाविधानम् ।

अथ प्रासादवास्तुपूजाविधानम् ।

प्रासादे दक्षिणे कार्या वास्तुपूजा विधानतः ।
 अश्वरूपो विधातव्यो वास्तुः स्वर्णमयः शुभः ॥ १ ॥
 पलेन वा तदर्धेन सपल्याणः सचामरः ।
 तण्डुलानां चतुष्के तु वस्त्रस्योपरि स्थापयेत् ॥ २ ॥
 दधिक्राव्ण इत्यमुना कुर्याद्धोमादिपूजनम् ।

सर्वमेवं भवति ।

पूजिते तुरगे तस्मिन्वास्तुरूपे विधानतः ॥ ३ ॥

गन्धपुष्पादिभिः सम्यग्घोमं कुर्यात्ततः परम् ।
 पूर्वतः स्थण्डिलं कृत्वा कुर्यादग्निमुखं सुधीः ॥ ४ ॥
 अयुतं वा सहस्रं वा जुहुयात्तिलसर्पिषा ।
 बिस्वपत्रैश्च कहलारैः शतपत्रैश्च चम्पकैः ॥ ५ ॥
 मालतीकुसुमैर्नन्धावर्तकैः पाटलैरपि ।
 मरुबकैर्दमनकैर्होमं कुर्यादतन्द्रितः ॥ ६ ॥
 वास्तुप्रीत्यै सुरेन्द्रस्य फलैर्नानाविधैरपि ।
 होमान्ते विधिवत्कुर्याद्भलिपूजां तु पूर्ववत् ॥ ७ ॥
 धान्यं वस्त्रं हिरण्यं च दद्यादग्निभ्य एव च ।
 अन्येभ्यः सर्वभूतेभ्यो दद्याद्दध्मं यथाविधि ॥ ८ ॥
 वास्तुं दद्यात्ततो धीमान्नाचार्याय सदक्षिणम् ।
 ततो मन्दिरमागत्य ब्राह्मणान्भोजयेत्सुधीः ॥ ९ ॥
 एषं कृते विधाने च वास्तौ संपूजिते तथा ।
 तत्रैव तुष्टिमाप्नोति यत्र वास्तुः प्रपूजितः ॥ १० ॥

इति श्रीनृसिंहमहविरचितायां विधानमालायां प्रासादवास्तुपूजा-
 विधानम् ।

अथ गृहवास्तुपूजाविधानम् ।

शुभे बारे तिथौ श्रेष्ठे शुभनक्षत्रसंयुते ।
 शुभे लग्ने शुभे चन्द्रे गृहवास्तुं प्रपूजयेत् ॥ १ ॥
 अभ्यङ्ग्य प्रातरेवं हि सपत्नीको गृहाधिपः ।
 आहूय सर्वशास्त्रज्ञमाचार्यं वेदपारगम् ॥ २ ॥
 तेनैव कारयेद्वास्तुपूजनं सर्वधर्मविद् ।

वास्तुपण्डितदेवताः—

ब्रह्माणम् १ अर्यमणम् २ सवितारम् ३ विवस्वन्तम् ४ विबुधाधिपम् ५
 मित्रम् ६ राजयक्ष्माणम् ७ पृथ्वीधरम् ८ आपवत्सम् ९ शिखिनम् १०
 पर्जन्यम् ११ जयन्तम् १२ कुलिशम् १३ सूर्यम् १४ सत्यम् १५ भृशम् १६
 आकाशम् १७ वायुम् १८ पूषणम् १९ वितथम् २० बृहच्छ्रवम् २१ यमम् २२

गन्धर्वम् २३ भृङ्गराजम् ४२ मृगम् २५ पितृगणम् २६ दौवारिकम् २७
सुग्रीवम् २८ पुष्पदन्तकम् २९ वरुणम् ३० आसुरम् ३१ शोकम् ३२
पापम् ३३ रोगम् ३४ इयम् ३५ मुख्यम् ३६ भट्टाटम् ३७ समारुयम् ३८
सर्पम् ३९ अदितिम् ४० दितिम् ४१ अपः ४२ सावित्रम् ४३ जयन्तम् ४४
रुद्रम् ४५ खरकीम् ४६ बिडालीम् ४७ पूतनाम् ४८ पापराक्षसीम् ४९
स्कन्दम् ५० यमम् ५१ मृग्यकम् ५२ पिलिपित्सम् ५३ इन्द्रम् ५४
अग्निम् ५५ यमम् ५६ निर्ऋतिम् ५७ वरुणम् ५८ नाथुम् ५९ सोमम् ६०
ईशानम् ६१ चम्रसमम् ६२ डामरम् ६३ महाकालम् ६४ पिल्लियिकम् ६५
बास्तोष्पतिम् ६६ बास्तुपुरुषम् ॥ ६७ ॥

भूतगणेभ्यो नमः । पितृगणेभ्यो नमः । राक्षसगणेभ्यो नमः । पिशाच-
गणेभ्यो नमः । मातृगणेभ्यो नमः । दिव्यान्तरिक्षेभ्यो नमः ।

बास्तुं कृष्यभरुपं च होमस्याऽऽदौ प्रतिष्ठितम् ॥ ३ ॥
अन्तर्गृहे सबलं च कलशोपरि संस्थितम् ।
पूजयित्वाऽक्षतैः पुष्पैस्ततो होमं समारभेत् ॥ ४ ॥
पूर्वपक्षे गृहस्यान्ते स्थण्डिलं कारयेत्सुधीः ।
कृत्वा बलिमुखं सम्यग्जुहुयाच्चरुणा ततः ॥ ५ ॥
साज्येनैव सहस्रं तु पायसेनापि शवयेत् ।
स्वर्जुरीनारिकेलैश्च द्राक्षाकदलकैस्तथा ॥ ६ ॥

अप्सु मे सोमो अन्नवीदित्यनेन मन्त्रेण हवनं गायञ्चा वा सोमाय ।

अपे होमे च दाने च संध्यायां वन्दने तथा ।
कुवेरं सोमनामानं पुराणकवयो विदुः ॥ ७ ॥
कृते होमे विधानेन हुंते स्विष्टकृते तथा ।
पठेयुः शान्तिपाठांश्च ब्राह्मणा मन्त्रकोविदाः ॥ ८ ॥
कृत्वा बलिविधानं च दिक्षु प्राचीक्रमेण तु ।
आसनावाहने कृत्वा निशाकल्केन नाकिनाम् ॥ ९ ॥
दध्योदनं पिण्डमात्रं पोलिका मुष्टिकांस्तथा ।
दीपांश्च सर्पिषा पूर्णान्साधुवर्तिसमन्वितान् ॥ १० ॥
नाममन्त्रैश्च विन्यस्य चतुर्थ्यनैः पृथक्पृथक् ।
कुर्याच्च श्रेयसः(सेचनं) सम्यङ्मन्त्रैराचार्यसत्तमः ॥ ११ ॥

अभिषिक्तो वृषं दद्यादाचार्याय सदक्षिणम् ।
 वस्त्रयुग्मेण सहितां ब्रह्मणे धेनुमुत्तमाम् ॥ १२ ॥
 ऋत्विग्भ्यः कनकं दद्याद्यथाविभवमात्मवित् ।
 एवं कृत्वा विधिं सम्यङ् नूतने सदनोत्तमे ॥ १३ ॥
 सूर्यं तु वामतः कृत्वा प्रविशेन्मन्दिरं सुधीः ।
 पुरतः सजलान्कुम्भान्विधाय विधिवत्तमः ॥ १४ ॥
 तोरणादम्बरं सप्त पताकाभिरलंकृतम् ।
 अर्चितं चित्रितं सम्यक्संमार्जनविशोधितम् ॥ १५ ॥
 प्रविश्य विधिवत्स्वामी सभार्यात्मजभृत्यकः ।
 स्वस्तिवाचं ततः कुर्यात्परिबर्हसमावृतः ॥ १६ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्तत्र शुभैः पाकैरनुत्तमैः ।
 एवं कृते विधाने च विधानज्ञो गृहाधिपः ॥
 नन्दते सुखसन्तानैर्वर्धमानो दिने दिने ॥ १७ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायामथर्वरहस्योक्तं
 त्रिविधं वास्तुपूजनविधानम् ।

अथ दुष्टस्थानगतादित्यपूजाविधानम् ।

यतः कारणाभ्युद्योतिःशास्त्रे नराणां जन्मतः प्राधान्यमादित्येऽस्ति “ योनिः
 स्त्रीणां शिशिरकिरणश्चित्रभानुश्च पुंसाम् ” इति न्यायेन सूर्यबलं भाव्यम् ।

यदि सूर्यबलं नास्ति तदा विधानबलेन कार्यमिति ।

तत्र याज्ञवल्क्यः । “ आदित्यस्य सदा पूजाम् ” इति ।

जन्मस्थो धनदः सहस्रकिरणो दुष्टश्चतुर्थोऽपि च ।

स्यान्नित्यः खलु पञ्चमो द्युनगतो मृत्युस्थितो नो शुभः ।

तद्वत्त्वङ्मगतो भवेन्न शुभदो नेष्टो भवेद्द्वादशः ।

प्रत्यर्थिप्रवरैः किमत्र भुवने नोत्पाद्यते वैकृतम् ॥ १ ॥

यद्याकुप्यति भास्करः श्रुतिविदोऽप्यारान्महीपस्य वावे-

क्ष्याद्याः(वक्ष्युर्ये) किमु जन्तवो लघुधियस्ते नित्यमोहार्दिताः ।

तस्मात्साधुमतिः स्वधर्मनिरतः संपूजयेद्भास्करं

श्रीसौभाग्ययशांसि कीर्तिमतुलां नान्योऽस्ति दातुं क्षमः ॥ २ ॥

तत्र पूजाविधानम्—

साधुवारे समुत्पन्ने तिथौ साधौ शुभे क्षणे ।
 नक्षत्रे वा शुभे चन्द्रे विदध्याद्रविपूजनम् ॥ ३ ॥
 प्रातःकाले समुत्थाय दन्तधावनपूर्वकम् ।
 स्नात्वा शुक्लतिलैर्नद्यां कृत्वाऽऽह्निकविधिं पुमान् ॥ ४ ॥
 रविप्रसन्नतामीप्सुर्विधानं तत्समारभेत् ।
 सदनस्योत्तरे भागे मण्डपाभ्यन्तरे तथा ॥ ५ ॥
 विदध्यात्स्थण्डिलं धीमान्होमार्थं लक्षणान्वितम् ।
 स्थण्डिलात्पूर्वतो भानोः पूजापीठं प्रकल्पयेत् ॥ ६ ॥
 रक्तचन्दनपट्टे वा पटे वा लोहिते तथा ।
 षोडशारं लिखेत्पद्मं कुङ्कुमेन सुगन्धिना ॥ ७ ॥
 आकृष्णेनेति मन्त्रेण रवेरावाहनं भवेत् ।
 तेनैव पूजनं शस्तं तेनैव यजनक्रिया ॥ ८ ॥
 आचार्यप्रमुखान्विप्रान्मानपूर्वं समाह्वयेत् ।
 वाचयेत्स्वस्तिवादांश्च सार्धं तैर्द्विजसत्तमैः ॥ ९ ॥
 सतो वह्निमुखं कृत्वा समिद्धिर्जुहुयात्सुधीः ।
 अयुतं वा सहस्रं वा त्वर्कजाभिर्विचक्षणैः ॥ १० ॥
 ततस्तु पायसेनापि साज्येनापि समाहितः ।
 तिलैः सव्रीहिकैः पश्चात्सहस्रं च पृथक्पृथक् ॥ ११ ॥
 खर्जूरैर्नारिकेलैश्च कदलैश्च विशेषतः ।
 प्रायश्चित्तं घृतेनैव व्याहृतीस्तिलसर्पिषा ॥ १२ ॥
 आदित्यप्रीतये श्विष्टकृतं भवति पायसात् ।
 शान्तिपाठं ततो विप्रा आचार्यप्रमुखाश्च ये ॥ १३ ॥
 पठेयुः सर्वशास्त्रीया यजमानहितेप्सवः ।
 बलिप्रदानपूर्वां तु प्रतिपूजां रवेः पुनः ॥ १४ ॥
 विदध्याद्गन्धपुष्पाद्यैस्ततो दानविधिः स्मृतः ।
 क्षीरिणीं लोहितां धेनुं सवत्मां चारुरूपिणीम् ॥ १५ ॥

दद्यात्सन्निर्णां धीमानाचार्याय महीयसे ।
 सप्तसप्तेस्तनुं हैमीं सरथाश्वां ससारथिम् ॥ १६ ॥
 आचार्याय ततो दद्याद्वस्त्रालङ्कारभूषिताम् ।
 ब्रह्मणे कनकं दद्यादृत्विग्भ्यश्च धनानि च ॥ १७ ॥
 ततः प्रसन्नो भगवान्सविता विपुलं सुखम् ।
 ददाति विपुलान्भोगान्पूजितस्तु यथाविधि ॥ १८ ॥
 सौरैश्च स्तुतिपाठैश्च स्तोतव्यो धर्मदीधितिः ।
 तुष्टे तस्मिन्नावौ सम्यग्ब्रह्मा नश्यन्ति देहिनाम् ॥ १९ ॥
 एवं कृते रवेः पूजाविधाने विधिविस्तमैः ।
 भोक्तव्या ब्राह्मणाः सम्यक्सहस्रशतसंख्यया ॥ २० ॥
 प्रसन्नेन महीपेन किं स्यात्कार्यं शरीरिणाम् ।
 धर्मार्थकामसिद्ध्यर्थं सर्वार्थोऽर्कः प्रसादितः ॥ २१ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 दुष्टस्थानगतादित्यपूजाविधानम् ।

अथ चन्द्रपूजाविधानम् ।

द्वितीयश्च चतुर्थश्च पञ्चमः सप्तमोऽष्टमः ।
 नवमो द्वादशश्चन्द्रो गोचरे नो शुभप्रदः ॥ १ ॥
 तत्रापि द्वादशाब्धिस्थो वेधेन रहितः शशी ।
 विघ्नराशिकरः प्रोक्तो विद्धोऽपि वरणास्थितः ॥ २ ॥
 अ(ना)न्यत्र छेशदश्चन्द्रो नृणां भवति निश्चयात् ।
 तस्मात्पूज्यः प्रयत्नेन विवाहे वाऽध्वरादिषु ॥ ३ ॥
 राजावलोकने दृश्यप्रवेशे धनसंग्रहे ।
 यात्रायां च विवाहे(दे) च पूजनीयोऽसमः शशी ॥ ४ ॥
 पञ्चाङ्गे शुभतां प्राप्ते कर्तव्यं स्वहितेऽमुभिः ।
 पूजनं शशिनः सम्यङ्नायां वाऽपि नरेण वा ॥ ५ ॥
 आचार्यं प्रवरं साधुं समाहूय निजालयम् ।
 ऋत्विग्भिर्ब्राह्मणैः सार्धं नृणुयाच्चन्द्रतुष्टये ॥ ६ ॥
 वृते विप्रवरे तस्मिन्ब्राह्मणैः सहितेऽर्चिते ।
 स्वस्तिवाचनपूर्वं तु प्रारभेत्पूजनं विधौ ॥ ७ ॥

कृत्वा स्थण्डिलमारात्तं पट्टे पालाशजे विधुम् ।

पूजयेच्छतपत्रैश्च चतुरस्रे च मण्डले ॥ ८ ॥

चन्दनेन सुगन्धेन कृते सम्यग्विचक्षणैः ।

प्रत्यङ्मुखाय सोमाय दद्यादासनकं बुधः ॥ ९ ॥

अहो चन्द्र जगत्प्राण यमुनाविषयोद्भव ।

श्वेतवर्णाग्निगोत्रेन्दो गदापाणे वरप्रद ॥ १० ॥

दशाश्ववाहनाराग(रोह) उमारूपी स(पिन्स)माविश ।

चन्द्रमा मनसो जात इत्यृचा तं समाह्वयेत् ॥

श्रीश्च ते त्वितिमन्त्रेण विधोरावाहनं भवेत् ॥ ११ ॥

आप्यायस्वेति मन्त्रस्य गौतमर्षिः । सोमो देवता । गायत्री छन्दः । सोमप्री-
तये होमे विनियोगः ।

पालाशसमिधश्चात्र सहस्रं समुदाहृताः ।

अभावे तु सहस्रस्य शतमष्टोत्तरं तथा ॥ १२ ॥

पायसेन ततः कुर्याद्भवनं च ससर्पिषा ।

सहस्रं वा शतं वाऽपि द्रव्याभावे विचक्षणः ॥ १३ ॥

तिलैः सव्रीहिकैः कुर्याद्दद्याहृतीस्तु यथाविधि ।

आज्येन मधुना सार्धं प्रायश्चित्तं यजेद्बुधः ॥ १४ ॥

ततः स्विष्टकृतं कुर्याच्छेषं होमविधेः क्रमात् ।

शान्तिः सर्वत्र धिमैश्च पठितव्या समन्ततः ॥ १५ ॥

प्रतिपूजाविधेः पश्चात्कुर्याद्दानविधिं बुधः ।

शङ्खं तु मौक्तिकैः पूर्णनाचार्पय निवेदयेत् ॥ १६ ॥

वस्त्रं शुभ्रं शुभं दद्याद्ब्राह्मणाय सदक्षिणम् ।

रौप्यं दद्याद्यथालाभं धेनुं वाऽथ पयस्विनीम् ॥ १७ ॥

कस्मैचिद्विप्रवर्याय सवत्सां च सदक्षिणाम् ।

एवं निष्पादितविधिर्दानस्य शशितुष्टये ॥ १८ ॥

अभिपिक्तस्ततः कर्ता ब्राह्मणान्भोजयेच्छुभान् ।

कृतविघ्नप्रतीकारो नन्दते भुवि मानवः ॥

सुधाकरप्रसादेन नात्र कार्या विचारणा ॥ १९ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां चन्द्रपूजाविधानम् ।

अथ मङ्गलपूजाविधानम् ।

प्रथमस्तु द्वितीयश्च चतुर्थः पञ्चमस्तथा ।
 सप्तमश्चाष्टमो भौमो नवमो द्वादशोऽशुभः ॥ १ ॥
 द्वादशाष्टमजन्मस्थो विद्धोऽपि पृथिवीसुतः ।
 करोति प्राणसंदेहं देशत्यागं धनक्षयम् ॥ २ ॥
 यदा श्रद्धा भवेत्कर्तुः पीडा वा भौमसंभवा ।
 तदा पूजा प्रकर्तव्या मङ्गलस्य यथाविधि ॥ ३ ॥
 पञ्चाङ्गे गुणसंपन्ने पूजायोग्ये धनागमे ।
 तदैव यत्नतः कुर्याद्भौमपूजां विचक्षणः ॥ ४ ॥
 [५ स्नात्वा तिलैर्नदीतोये प्रातःकाले विचक्षणः] ।
 कृत्वाऽऽह्निकविधिं गेहमागत्य प्रीतमानसः ॥ ५ ॥
 प्रारभेद्भौमदेवस्य प्रीतये पूजनक्रियाम् ।
 विहिते मण्डपे द्वारे शोधिते पृथिवीतले ॥ ६ ॥
 आचार्यं तु समाहूय वरयेदृत्विजां गणम् ।
 ब्राह्मणं चापि दैवज्ञं कुशलं यज्ञकर्मणि ॥ ७ ॥
 स्वस्तिवाचनपूर्वं तु विदध्यात्पीठपूजनम् ।
 रक्तचन्दनपट्टे तु खादिरे वा त्वलाभतः ॥ ८ ॥
 वस्त्रे लोहितवर्णे च तण्डुलैः परिपूरिते ।
 रक्तचन्दनकल्केन त्रिकोणं पीठमालिखेत् ॥ ९ ॥
 प्रतिष्ठामन्त्रमुच्चार्य विन्यसेत्तत्र मङ्गलम् ।
 रक्तचन्दनजं कृत्वा ताम्रं वा तर्दभावतः ॥ १० ॥
 वैद्रुमं प(पा)न्नरागं वा भूमिपुत्रं विदुर्बुधाः ।
 दक्षिणाभिमुखं भौमं पूजयेत्प्रयतः सुधीः ॥ ११ ॥
 करवीरैर्जपापुष्पैः सिन्दूरीसंभवंस्तथा ।
 अन्यैश्च लोहितैः पुष्पैरर्चयेद्भूमिनन्दनम् ॥ १२ ॥
 आगच्छ पृथिवीपुत्र भरद्वाजकुलोद्भव ।
 उज्जयिन्याधिप श्रीमंश्चतुर्बाहो महामते ॥ १३ ॥

५ धनुश्चिह्नान्तर्गतभागो नास्ति स्वपुस्तके ।

१ ख. द्वारि शो° । २ ख. 'यचस' । ३ ख. गणान् । ब्रा° । ४ ख. °दलाभतः ।

५ ख. सुमैः ।

मूलशक्तिगदापाणे वरदाभयमण्डित ।
 अहो भौमग्रहाध्यक्ष यज्ञेऽस्मिन्कुरु संनिधिम् ॥ १४ ॥
 इत्यावाह्य धरासूनुं मङ्गलं मङ्गलार्थेनम् ।
 यदक्रन्देति भौमस्य होममन्त्रं विदुर्बुधाः ॥ १५ ॥
 अग्निर्मूर्धा दिव इति मन्त्रो लोहितपूजने ।
 द्वयोरसंभवे मन्त्रो गायत्री संप्रकीर्तिता ॥ १६ ॥
 पूजनावाहनादीनामिदं मन्त्रत्रयं मतम् ।
 समिधः खदिरस्यात्र चरुद्रव्यं प्रधानकम् ॥ १७ ॥
 सहस्रं समिधां प्रोक्तं सहस्रं हवनं चरोः ।
 पूर्ववत्स्युर्व्याहतयः सहस्रं वाऽयुतं ततः ॥ १८ ॥
 प्रायश्चित्तं घृतेनैव सर्वैः स्विष्टकृतं भवेत् ।
 होमान्ते बलिदानं च कर्तव्यं विधिवत्तथा ॥ १९ ॥
 शान्तिपाठं ततो विद्वान्पठेद्विप्रसमन्वितः ।
 पुनः पूजां ततः कृत्वा दानं दद्यात्ततः परम् ॥ २० ॥
 रक्तवस्त्रमनङ्गांश्च विद्रुमं भौमतुष्टिदम् ।
 रक्ताश्च व्रीहयो रक्ता आढवयो भौमतुष्टिदाः ॥ २१ ॥
 ताम्रं दद्याद्यथालाभं सुवर्णं तदभावात् ।
 अभिषिक्तस्ततः कर्ता दानं दत्त्वा यथाविधि ॥ २२ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चादाचार्यं प्रार्थयेत्ततः ।
 मूलमन्त्रेण तत्सर्वं भौमपीठं समर्पयेत् ॥ २३ ॥
 आचार्याय कुलीनाय शास्त्रज्ञाय कुटुम्बिने ।
 एवं कृते विधाने च भौमशान्तिर्भवेदिह ॥ २४ ॥
 तुष्टिदः पुष्टिदो भौमः प्रसन्नो जायते नृणाम् ।
 ददाति विपुलान्भोगान्नात्र कार्या विचारणा ॥ २५ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शान्तिपटलोक्तं
 मङ्गलपूजाविधानम् ।

१ ख. 'स्मिस्तत्संनिधो भव ॥ १४ ॥ इ' । २ ख. 'य नः । य' । ३ ख. 'ठं चरेद्विद्वा' ।
 ४ ख. 'मनुहुं वि' । ५ ख. 'दलाभतः' । ६ ख. 'दद्याद्यथा' ।

अथ बुधपूजाविधानम् ।

प्रथमस्तु^१ तृतीयस्तु पञ्चमः सप्तमस्तथा ।
 नवमो दशमश्चैव द्वादशोऽशुभदो बुधः ॥ १ ॥
 उद्वेगं मनसो व्याधिं धनहानिं तनोति च ।
 तस्य शान्तिः प्रकर्तव्या नरेण हितमिच्छता ॥ २ ॥
 शुभवारादिपञ्चाङ्गे प्रारभेच्छान्तिकं विदः ।
 अन्येषां बलमादाय चन्द्रादीनां कृतादिकः ॥ ३ ॥
 आचार्यं वेदशास्त्रज्ञं समाहूय समञ्जसम् ।
 वरपेद्यज्ञसिद्धयर्थमृत्विग्भिर्ब्राह्मणैः सह ॥ ४ ॥
 काञ्चनस्य तरोः पट्टे पूज्यश्चन्द्रसुतो ग्रहः ।
 वस्त्रे तु नूतने रम्ये मण्डले बाणसंमिते ॥ ५ ॥
 चक्षुष्यस्वेत्यृचा सोमसुतस्याऽऽवाहनादिकम् ।
 होमान्तं कर्म कुर्वीत गायत्र्या वा समाहितः ॥ ६ ॥
 उत्तराभिमुखः सौम्यः पूजनीयो मनीषिभिः ।
 अहो चन्द्रसुत श्रीमन्मगधक्षमासमुद्भव ॥ ७ ॥
 अत्रिगोत्र चतुर्बाहो खड्गखेटकधारक ।
 गदावरद सिंहस्थ तर्पकात्स्वरप्रभ ॥ ८ ॥
 नीलपङ्कजपत्रस्थ इदं विष्णुरितीदृशित ।
 इत्यादिसकलं कृत्वा सुवर्णतनुमुत्तमम् ॥ ९ ॥
 सौम्यं तत्र समाहूय पूजयेत्प्रयतः सुदैः ।
 क्षतपत्रैश्च कल्हारैः सुस्निग्धैस्तुलसीदलैः ॥ १० ॥
 गन्धं पुष्पं तथा धूपं दीपं जैत्रेद्यमेव च ।
 ताम्बूलं च सकर्पूरं बुधप्रीत्यै निवेदयेत् ॥ ११ ॥
 ततः स्थण्डिलमाधाय स्वगृहोक्तं विचक्षणः ।
 कृत्वा वह्निमुखं सन्यवसमिधो जुहुयात्ततः ॥ १२ ॥
 अपामार्गस्य सुस्निग्धाः सहस्रं शुभलक्षणाः ।
 [× सघृतं पायसं पश्चात्तत्संख्यं च विचक्षणः ॥ १३ ॥]

× धनुश्चिह्नान्तर्गतो भागो नास्ति ख. पुस्तके ।

१ ख. 'स्तु' द्वितीयस्तु । २ ख. 'दशः शुभदो बुधः । १ । अन्यत्स्थाने त्वसौव्या° ।
 ३ ख. 'ग्भिर्ब्राह्मणा स' । ४ ख. 'तो बुधेः । व° । ५ ख. 'तकाञ्चनसंनिभ ।

पद्मैश्च शतपत्रैश्च बिल्वपत्रैश्च शोभनैः ।
 खर्जूरैर्नारिकेलैश्च द्राक्षैः कदलबिल्वकैः ॥ १४ ॥
 हवनं तु यथालाभं कुर्याच्छ्रद्धासमन्वितः ।
 पायसं च प्रधानं च पायसं स्विष्टकृद्भवेत् ॥ १५ ॥
 होमान्ते प्रतिपूजान्ते दानं दद्याद्विचक्षणः ।
 सुवर्णं पलसंख्याकं पलार्धं तदभावतः ॥ १६ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्यथाशक्ति शुचिव्रतान् ।
 एवं कृते विधाने च प्रसन्नो जायते बुधः ॥
 तुष्टिकृत्पुष्टिकर्ता च नात्र कार्या विचारणा ॥ १७ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शान्तिपटलोक्तं
 बुधपूजाविधानम् ।

अथ गुरुपूजाविधानम् ।

जन्मस्थो वा तृतीयस्थो गुरुर्दीपकरो भवेत् ।
 तथा षष्ठश्चतुर्थोऽपि मृतिकर्मव्ययस्थितः ॥ १ ॥
 हानिं शरीरपीडां च कुरुते नात्र संशयः ।
 विधानं तत्र कर्तव्यं नरेण हितमिच्छता ॥ २ ॥
 शुभकाले प्रकर्तव्यं विधिवत्पूजनं गुरोः ।
 कृत्वा निष्कस्वर्णमयीं मूर्तिं चापि विचक्षणः ॥ ३ ॥
 पूजयेद्वादरे षष्ठे प्रतिष्ठाप्य बृहस्पतिम् ।
 पीठे तण्डुलजे कार्यं षष्टिशाकारमण्डलम् ॥ ४ ॥
 उत्तराभिमुखस्तत्र पूजनीयो बृहस्पतिः ।
 पुष्पैरगरत्यसंभूतैश्चम्पकैः शतपत्रकैः ॥ ५ ॥
 अहो वाचस्पते जीव सिन्धुमण्डलसंभव ।
 एहाङ्गिरससंभूत हयारूढ चतुर्भुज ॥ ६ ॥
 दण्डाक्षसूत्रवरदकमण्डलधर प्रभो ।
 महानिन्द्रेति संपूज्यो विबिम्बाकिनां गुरुः ॥ ७ ॥
 ब्रह्म ब्रह्मेति मन्त्रेण गायत्र्या वा समाहितः ।
 सहस्रं सभिधश्चात्र बोधिपादपसंभवाः ॥ ८ ॥

चरुर्वा पायसो वाऽपि प्रधानमिह संमतम् ।
 सहस्रसंमितं कर्ता विदध्याद्धवनं गुरोः ॥ ९ ॥
 बिल्वानि नारिकेलानि जुहुयाद्धोमसिद्धये ।
 प्रायश्चित्ते घृतं कार्यं पायसं स्विष्टकृद्भवेत् ॥ १० ॥
 व्याहृतीर्जुहुयाद्धोमान्होमसिद्धयर्थमेव च ।
 होमान्ते प्रतिपूजा स्यादेवाचार्यस्य तुष्टये ॥ ११ ॥
 गन्धं मलयजं चात्र दशाङ्गो धूप उत्तमः ।
 पुष्पं चागस्त्यसंभूतं दीप आज्येन पूरितः ॥ १२ ॥
 नैवेद्यं दधिभक्तस्य ताम्बूलेन समन्वितम् ।
 एवं कृत्वा विधानज्ञः प्रतिपूजां बृहस्पतेः ॥ १३ ॥
 श्रेयःसंपादनादूर्ध्वं प्रदद्यात्पीतमम्बरम् ।
 दुकूलं मुख्यमेवात्र समुद्दिष्टं मनीषिभिः ॥ १४ ॥
 कार्पासजमथाभावे दुकूलस्याक्षतं नवम् ।
 आचार्याय कुलीनाय श्रोत्रियाय कुटुम्बिने ॥ १५ ॥
 दद्यात्सदक्षिणां (णं) कर्ता प्रीतये नाकिनां गुरोः ।
 ऋत्विग्भ्यश्च धनं देयं ब्रह्मणे धेनुरुत्तमा ॥ १६ ॥
 बलिप्रदानात्तुष्टस्य स्वर्गिभिर्(गीर्भिर्)र्वा बृहस्पतेः ।
 कृत्वा पूजां विधानज्ञो भोगानामोति पुष्कलान् ॥ १७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शान्तिपटलोक्तं
 गुरुपूजाविधानम् ।

अथ शुक्रपूजाविधानम् ।

द्वितीयः सप्तमः काव्यो दशमो गोचरेऽशुभः ।
 अन्यत्र यादृशो दृष्टः प्रोक्तः शास्त्रविचक्षणैः ॥ १ ॥
 गोचरे वर्तमानस्य विवाहे गमने तथा ।
 जातकादिषु सर्वत्र दृष्टः पूज्यो भृगूद्बहः ॥ २ ॥
 पञ्चाङ्गे शुभर्ता प्राप्ते मनसश्च समुन्नतो ।
 आचार्यं प्रणिपत्याऽऽशु वरयेद्ब्रह्मणा सह ॥ ३ ॥

स्वस्तिवाचनपूर्वं तु कुर्यादैत्येश्वरार्चनम् ।
 आम्नवृक्षस्य पट्टे तु शुभ्रवस्त्रेण संयुते ॥ ४ ॥
 राजतं भृगुवंश्यं तं स्थापयेन्मन्त्रविद्विजः ।
 पश्चामृतैस्तु संस्नाप्य संध्यार्कसुमनोहरैः ॥ ५ ॥
 समुच्चार्य प्रयोगं च तण्डुलोपरि विन्यसेत् ।
 मण्डले पञ्चकोणे च विहिते तण्डुलोत्तमैः ॥ ६ ॥
 नाम वंशं समुच्चार्य दानवेज्यं समाह्वयेत् ।
 अहो भोजकटे जात शुक्र श्वेताश्ववाहन ॥ ७ ॥
 समागच्छ चतुर्वाहो भृगुगोत्रविभूषण ।
 परिधाक्षावलीहस्त कमण्डलुधर प्रभो ॥ ८ ॥
 पूर्वं पत्रेऽपि शु(श)क्रस्य शुक्रज्योतीति (तिस्तु) पूजित ।
 कृत्वा चाग्निमुखं विद्वान्सघृतं जुहुयाच्चरुम् ॥ ९ ॥
 अष्टोत्तरसहस्रं च यज्ञाङ्गसमिधस्तथा ।
 यथाविधि हुते द्रव्ये कृ(हु)ते स्विष्टकृते तथा ॥ १० ॥
 गन्धपुष्पादिकं सर्वं विदध्यात्प्रतिपूजने ।
 श्वेतं तुरंगमं दद्यादक्षिणार्थं च भक्तिमान् ॥ ११ ॥
 एवं संपूजिते दैत्यगुरौ क्षेममवाप्नुयात् ।
 यात्रामुखे विवाहे च गोचरे गृहवेशने ।
 पूज्यो दैत्येन्द्रपूज्योऽसौ नात्र कार्या विचारणा ॥ १२ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शान्तिपटलोक्तं
 शुक्रपूजाविधानम् ।

अथ शनैश्वरपूजाविधानम् ।

प्रथमस्तु द्वितीयस्तु चतुर्थः पञ्चमस्तथा ।
 सप्तमश्चाष्टमो मन्दो नवमो द्वादशोऽशुभः ॥ १ ॥
 करोति प्राणिनां देहधनदेशपरिप्लवम् ।
 कालोऽयं शनिरूपेण वर्तते भुवनत्रये ॥ २ ॥

१ ख. °ण वेष्टिते । २ अ. वंशाङ्गं स्था° । ३ ख. पूर्वप° ।

पूजनीयः प्रयत्नेन होमदानार्चनादिभिः ।
 जन्मसंस्थेन मन्त्रेण रावणो विनिपातितः ॥ ३ ॥
 तेनैव च द्वितीयेन कार्तवीर्यो निपातितः ।
 चतुर्थेनासुराध्यक्षः पञ्चमेन नलो नृपः ॥ ४ ॥
 स्वराज्यात्प्रापितो भ्रंशं शुम्भसेनोऽस्तगेन वै ।
 अष्टमेन महादेवो गजरूपी कृतः पुरा ॥ ५ ॥
 नवमेन कुरुश्रेष्ठो द्यूताधीनस्तु कारितः ।
 द्वादशेनार्कपुत्रेण जमदग्निर्निपातितः ॥ ६ ॥
 न बलप्रौढिरुग्रत्वं न ज्ञातृत्वं न निर्हवः ।
 सुभक्तिपूजनं चात्र शनैश्चरसुतुष्टिदम् ॥ ७ ॥
 स्वगृहोक्तेन विधिना पूजनीयः शनैश्चरः ।
 सर्वकामफलावाप्त्यै नात्र कार्या विचारणा ॥ ८ ॥
 कृष्णाञ्जनमये पीठे खादिरे वाऽऽयसे तथा ।
 तण्डुलैः कारयेत्पीठं कर्णिकाभिरलंकृतम् ॥ ९ ॥
 पश्चिमे पद्मपत्रे च मण्डलं धनुराकृति ।
 कृत्वा तु स्थापयेत्तत्र सूर्यपुत्रं यथाविधि ॥ १० ॥

ततश्चाऽऽवाहनमन्त्रः—

अहो सौराष्ट्रसंजात च्छायापुत्र चतुर्भुज ।
 कृष्णवर्णार्कगोत्रीय बाणहस्त धनुर्धर ॥ ११ ॥
 त्रिशूलिश्च समागच्छ वरदो गृध्रवाहन ।
 प्रजापते तु संपूज्यः सरोजे पश्चिमे दले ॥ १२ ॥

इत्यावाह्य धनुराकृतिकृष्णगिरिकर्णिकापुष्पैः सहस्रं (ह तं) प्रतिष्ठापयेत् ।

प्रजापते तु मन्त्रेण कुर्याद्धोमादिकं बुधः ।
 सहस्रसंमितं कुर्याद्धवनं चरुणा बुधः ॥ १३ ॥
 होमान्ते विधिवद्द्यात्कृष्णां धेनुं पयस्विनीम् ।
 मूर्तिं च सूर्यपुत्रस्य दद्याल्लोहमयीं शुभाम् ॥ १४ ॥
 सदक्षिणां सवस्त्रां च कुलीनाय कुटुम्बिने ।
 आचार्याय शुभाचारो ब्रह्मणे महिषीं तथा ॥ १५ ॥

१ ख. 'शं ह्युग्रसेनोऽस्तगेन वा । अ' । २ ख. 'ज्ञकम् । स' । ३ ख. 'पूर्वकं चा' ।
 ४ ख. 'यश्चिरुणा इवां बु' । ५ ख. 'तिं तु सू ।

अन्येभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च दद्याद्द्रव्यं यथावसु ।
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्मानागोत्रसमुद्भवान् ॥ १६ ॥
 या मूर्तिः पूजिता होमे त्वर्कजस्याऽऽयसी शुभा ।
 दत्त्वा विप्राय तां पश्चाद्याचयेत्प्रतिनिष्क्रयात् ॥ १७ ॥
 तैलभाण्डे विनिक्षिप्य शिख्यारूढां तु कारयेत् ।
 ब्राह्मणान्भोजयेच्छक्त्या तिलान्पापास्तु निर्वपेत् ॥ १८ ॥
 अभावे विप्रभुक्तेस्तु विधिरेप सनातनः ।
 एवं कृत्वा विधानं तु सर्वदा सुखमाप्स्यति ॥ १९ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शान्तिपटलोक्तं
 शनैश्चरपूजाविधानम् ।

अथ शकटभेदविधानम् ।

शौनक उवाच—

रघुवंशे सुविख्यातो राजा दशरथः पुरा ।
 चक्रवर्ती स विजयी सप्तद्वीपाधिपो नृपः ॥ १ ॥
 कृत्तिकान्ते शनिं ज्ञात्वा दैवज्ञैर्ज्ञापितो हि सः ।
 रोहिणीं भेदयित्वा तु शनिर्यास्यति सांप्रतम् ॥ २ ॥
 श(शा)कटो भेद इत्युक्तः सुरासुरभयंकरः ।
 द्वादशाब्दं च दुर्भिक्षं भविष्यति सुदारुणम् ॥ ३ ॥
 एवं धृत्वा ततो वाक्यं मन्त्रिभिः सह पार्थिवः ।
 मन्त्रयामास किमिदं भयंकरमुपस्थितम् ॥ ४ ॥
 देशाश्च नगरग्रामा भयभीताः समन्ततः ।
 आकुलं च जगद्दृष्ट्वा घोरं जनपदादिकम् ॥ ५ ॥
 धनं हि सर्वलोकानां क्षयायैतत्समागतम् ।
 पप्रच्छ प्रयतो राजा वैशिष्ट्यमुखान्द्विजान् ॥ ६ ॥

दशरथ उवाच—

समाधानं किमत्रास्ति ब्रूहि तद्द्विजसत्तम ।
 कालत्रयस्य विज्ञाने यतः स्याद्भवतो मतिः ॥ ७ ॥

वशिष्ठ उवाच—

प्रजापालनकृद्राजा तस्मिन्भीते कुतः प्रजाः ।
 लोकानां पालनायैव निर्मितः परमेष्ठिना ॥ ८ ॥
 सर्गस्तु ब्रह्मणा कार्यो यज्ञभु(मु)क्तिस्तु विष्णुना ।
 प्रजानां पालनं राज्ञा कर्तव्यं धर्मलिप्सया ॥ ९ ॥
 एष एव परो धर्मो राज्ञां प्रोक्तो मनीषिभिः ।
 न लोकाल्लभते राजन्नरक्षन्नृपतिः प्रजाः ॥ १० ॥
 न च स्फुरत्युपायोऽन्यस्तच्चक्रस्य विरोधकृ(ना)त् ।
 रोहिणीऋक्षशकटभेदाद्भुतसुशान्तये ॥ ११ ॥

शौनक उवाच—

तदा विविच्य मनसा साहसं परमं नृपः ।
 समादाय धनुर्दिव्यं दिव्यायुधसमन्वितम् ॥ १२ ॥
 रथमारुह्य वेगेन गतो नक्षत्रमण्डलम् ।
 योजनानां गतो लक्षं सूर्यादुपरि संस्थितः ॥ १३ ॥
 रोहिणीं पृष्ठतः कृत्वा राजा दशरथो बली ।
 रथे तु काञ्चने दिव्ये मणित्रातविभूषणे ॥ १४ ॥
 हंसवर्णहयैर्युक्ते महाकेतुविभूषिते ।
 दीप्यमानो महारत्नैर्निपक्तैर्मर्कतैरिव(र्मुकुटोपरि) ॥ १५ ॥
 बभ्राज स तदाऽऽकाशे द्वितीय इव भास्करः ।
 आकर्णपूरिते चापे संहारास्त्रमयोजयत् ॥ १६ ॥
 कृत्तिकान्ते शनिः स्थित्वा प्राविशत्किल रोहिणीम् ।
 स ददर्श नृपालं तं भ्रुकुटीकुटिलाननम् ॥
 हसित्वा तद्भयात्सौरिरिदं वचनमब्रवीत् ॥ १७ ॥

शनिरुवाच—

पौरुषं तव राजेन्द्र परं रिपुभयंकरम् ।
 देवासुरमनुष्याश्च सिद्धा विद्याधरोरगाः ॥ १८ ॥
 मयाऽवलोकितं राजन्दैत्यदानवपुंगवाः ।
 राजानो बहवः शूराः कलां नार्हन्ति तेऽनघ ॥ १९ ॥

तुष्टोऽहं तव राजेन्द्र तपसा पौरुषेण च ।
 क्षात्रेण तेजसा राजंस्त्वदन्यो नास्ति भूतले ॥ २० ॥
 वरं ब्रूहि प्रदास्यामि मनोभिलषितं नृप ।
 मा कुरुष्वान्न संदेहं सर्वकामप्रदो ह्यहम् ॥ २१ ॥

दशरथ उवाच—

रोहिणीं भेदयित्वा तु न गन्तव्यं त्वया शने ।
 सरितः सागरा यावद्यावच्चन्द्रार्कभूमयः ॥ २२ ॥
 याचितं हि मया सौरे नान्यमिच्छामि ते व(त्त्वद्व)रम् ।
 यतो हि भगवानिन्द्रविष्णुरुद्रार्कसंनिभः ॥ २३ ॥
 एवमस्त्विति स प्राह च्छायामूर्तिसमुद्भवः ।
 संप्राप्यैवं वरं राजा कृतकृत्योऽभवत्तदा ॥ २४ ॥
 द्वादशाब्दं तु दुर्भिक्षं भविष्यति न जातुचित् ।
 कीर्तिरेषा मदीयाऽस्तु त्रैलोक्ये तु चराचरे ॥ २५ ॥
 एवं वरं तु संप्राप्य हृष्टचित्तस्तु पार्थिवः ।
 रथोपस्थे धनुः * स्थाप्य भूत्वा चैव कृताञ्जलिः ॥ २६ ॥
 ध्यात्वा सरस्वतीं देवीं गणनाथं विनायकम् ।
 राजा दशरथः स्तोत्रं सौरेरिदमथाकरोत् ॥ २७ ॥

दशरथ उवाच—

ॐ नमः कृष्ण नीलाय शितिकण्ठनिभाय च ।
 † नमो निर्मासदेहाय दीर्घश्मश्रुजटाय च ॥ २८ ॥
 नमो विशालनेत्राय शुष्कोदरभ(श)याय च ।
 नमः परुषगात्राय स्थूलरोम्णे नमो नमः ॥
 नमो नित्यक्षुधार्ताय अ(ह्य)तृप्ताय च वै नमः ॥ २९ ॥
 नमो दीर्घाय शुष्काय काणदृष्टे नमो नमः ।
 नमस्ते क्रोधरूपाय दुर्निरीक्षाय वै नमः ॥
 नमो घोराय रौद्राय भीषणाय करालिने ॥ ३० ॥

* अत्र त्यबार्धः । † ‘ नमो नीलमयूराय नीलोत्पलनिभाय च ’ इति ख. पुस्तकेऽधि-
 कम् ।

नमस्ते सर्वभक्षाय बलीमुख नमोऽस्तु ते ।
 सूर्यपुत्र नमस्तेऽस्तु भास्करेऽभयदायिने ॥ ३१ ॥
 अधोदृष्टे नमस्तेऽस्तु संवर्तक नमोऽस्तु ते ।
 नमो मन्दगते तुभ्यं निस्त्रिंशस्र नमोऽस्तु ते ॥ ३२ ॥
 तपसा दग्धदेहाय नित्यं योगरताय च ।
 ज्ञानदृष्टे नमस्तेऽस्तु कश्यपान्मजसूनवे ॥ ३३ ॥
 तुष्टो ददासि राज्यं च रुष्टो हरसि तत्क्षणात् ।
 देवासुरमनुष्याश्च सिद्धविद्याधरोरगाः ॥ ३४ ॥
 त्वयाऽवलोकितार्थं ते दैन्यमाशु व्रजन्ति हि ।
 ब्रह्मा शक्रो मनुश्चैव ऋषयः सप्त तारकाः ॥ ३५ ॥
 राज्यभ्रष्टाः पतन्तीह तव दृष्ट्याऽवलोकिताः ।
 देशाश्च नगरग्रामा द्वीपानि सरितस्तथा ॥ ३६ ॥
 त्वयाऽवलोकिताः सर्वे न दृश्यन्ते समूलतः ।
 प्रसादं कुरु मे सौरे वरदो भव भास्करे ॥ ३७ ॥
 एवं स्तुतस्तदा सौरिर्ग्रहराजो महाबलः ।
 अब्रवीच्च ततो वाक्यं हृष्टरोमा स भास्करिः ॥ ३८ ॥
 तुष्टोऽहं तव राजेन्द्र स्तोत्रेणानेन सुव्रत ।
 वरं ब्रूहि प्रदास्यामि मनसा यदभीप्सितम् ॥
 तत्सर्वं तव दास्यामि राजवर्य महामते ॥ ३९ ॥

दशरथ उवाच—

प्रसन्नो यदि मे सौरे वरं देहि ममेप्सितम् ।
 अद्यप्रभृति भोः सौरे पीडा कार्या न कस्यचित् ॥ ४० ॥
 देवासुरमनुष्याणां पशुपक्षिशरीरिणाम् ।
 सर्वेषामपि लोकानां क्षेमदो भव भास्करे ॥ ४१ ॥

शनैश्चर उवाच—

गृह्णन्तीति ग्रहा ज्ञेया ग्रहाः पीडाकराः स्मृताः ।
 यद्देयस्तु वरो ह्येष भक्त्या चैव ददामि ते ॥ ४२ ॥
 त्वया प्रोक्तं मम स्तोत्रं यः पठिष्यति मानवः ।

१ ख. 'न्यत्वं प्राप्नुवन्ति । २ ख. 'रं प्रसन्नो दा° । ३ ख. 'दि सौरेश व° । ४ ख. 'यदि वस्तु° । ५ ख. 'कं ये पठिष्यन्ति मानवाः । ६° ।

एककालं द्विकालं वा पीडां मुञ्चामि तस्य वै ॥ ४३ ॥
 मृत्युस्थानस्थितो वाऽपि जन्मस्थानगतोऽप्यहम् ।
 यः पुनः श्रद्धया युक्तः शुचिस्नानसमाहितः ॥ ४४ ॥
 शमीपत्रैः समभ्यर्च्य प्रतिमां लोहजां मम ।
 मद्दिने तु विशेषेण स्तोत्रेणानेन पूजयेत् ॥ ४५ ॥
 पूजयित्वा जपेत्स्तोत्रं भक्त्या चैव कृताञ्जलिः ।
 तस्य पीडां न चैवाहं करिष्यामि कदाचन ॥ ४६ ॥
 गोचरे जन्मराशौ वा दशास्वन्तर्दशामु च ।
 रक्षामि सततं चाथ पीडाभ्योऽन्यग्रहस्य च ॥ ४७ ॥
 वरं प्राप्य ततो राजा शनिनोक्तं महीपतिः ।
 उवाच प्रणिपत्याऽऽशु सूर्यपुत्रं शनैश्वरम् ॥ ४८ ॥

दशरथ उवाच—

विधानं किं ग्रहाधीश प्रसन्नीकरणे तव ।
 रोहिणीशकटोद्भेदे शनैश्वर वदस्व तत् ॥ ४९ ॥

शनिरुवाच—

पूजने मम यद्द्रव्यं जाप्यं वा हवनं नृप ।
 स्वगृहोक्तेन विधिना कर्तव्यं मम तुष्टये ॥ ५० ॥
 प्रतिमां लोहजां राजन्कृत्वा मम चतुर्भुजाम् ।
 वरदामधनुःशूलबाणाङ्घ्रिकरान्विताम् ॥ ५१ ॥
 तैले वा तिलराशौ वा प्रतिष्ठाप्य यथाविधि ।
 पूजयेच्चैव मे मन्त्रैः कुङ्कुमादिविलेपनैः ॥ ५२ ॥
 तैलाक्षतैः कृष्णगन्धैस्तुलसीभिः शमीदलैः ।
 दद्यान्मे प्रीतये राजन्कृष्णां धेनुं पयस्विनीम् ॥ ५३ ॥
 तिलांस्तैलं च माषांश्च लोहं कृष्णे च वाससी ।
 एवं विशेषपूजां यो मद्वारे कुरुते नृप ॥ ५४ ॥
 मम प्रीतिकरं स्तोत्रं पठेद्भक्त्या कृताञ्जलिः ।
 मन्त्रामान्युर्पदिष्टानि जपेच्च नियतः शुचिः ॥ ५५ ॥
 तत्कुले मम पीडा नो भविष्यति कदाचन ।

- ॐ नन्दते सुखसंतानै रागद्वेषविवर्जितः ॥ ५६ ॥
 कोणस्थः पिङ्गलो बभ्रुः कृष्णो रौद्रोऽन्तको यमः ।
 सौरिः शनैश्वरो मन्दः पिप्पलादेन संस्तुतः ॥ ५७ ॥
 एतानि शनिनामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् ।
 शनैश्वरकृता पीडा न कदाचिद्भविष्यति ॥ ५८ ॥

मतान्तरे—

अयुतान्ब्राह्मणान्साधून्यथेष्टं भोजयेत्सुधीः ।
 ताम्बूलैर्विविधैर्वस्त्रैर्दक्षिणाभिश्च तोषयेत् ॥ ५९ ॥

यथा च सप्तर्षिमतम्—

यदा कदाचित्समये जगतां विप्रवाय च ।
 शकटो भिद्यते ब्रह्मन्मन्देन यमरूपिणा ॥ ६० ॥
 अनङ्गान्दीयते कृष्णः शकटं चार्पयेच्छुभम् ।
 चक्रे लोहमये कृष्णे सर्वोपस्करसंयुते ॥ ६१ ॥
 श्रोत्रियाय सुशीलाय ब्राह्मणाय समर्पयेत् ।
 नाममन्त्रेण मन्दस्य दक्षिणासहितं नृपः ॥ ६२ ॥
 इति शनैश्वरपूजाविधिः ।

पुनः स्तोत्रम् ।

कोणोऽन्तको रौद्रयमोऽपि (मौ च) बभ्रुः
 कृष्णः शनिः पिङ्गल एव मन्दः (सौरिमन्दाः) ।
 नित्यं स्मृतो यो हरते च पीडां
 तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय ॥ १ ॥
 सुरासुराः किंपुरुषा गणेशाः
 गन्धर्वविद्याधरपन्नगाश्च ।
 पीडयन्ति सर्वे विषमस्थितेऽस्मिन्-
 तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय ॥ २ ॥
 नरा नरेन्द्राः पशवो मृगेन्द्रा
 धन्याश्च ये कीटपतङ्गभृङ्गाः ।

ॐ आर्षत्वाद्व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् । ॐ कण्ड्वादेराकृतिगणत्वेन यकि रूपमेतत् ।

१ स्व. संपन्नी रागदापविवर्जितः । २ कोटस्थः । ३ स्व. तथा च संमतिः ।

पीड्यन्ति जन्मर्क्षगते च यस्मिन्-
 स्तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय ॥ ३ ॥
 देशाश्च दुर्गाणि वनानि यस्य
 ग्रामा निवेशाः पुरपत्तनानि ।
 पीड्यन्ति यस्मिन्विषमस्ति ते च
 तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय ॥ ४ ॥
 तिलैर्यवैर्माषविधानदानै-
 र्लोहेन कृष्णाम्बरदानतो वा ।
 प्रीणाति मन्त्रैर्निजवासरे च
 तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय ॥ ५ ॥
 अन्यप्रदेशात्स्वगृहं प्रविष्टो
 मदीयवारे स नरः सुखी स्यात् ।
 गृहागतो यो न पुनः प्रयाति
 तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय ॥ ६ ॥
 स्रष्टा स्वयंभूर्भुवनत्रयस्य
 त्राणे हरिः संहरणे महेशः ।
 एकस्त्रिधा त्वृग्यजुःसाममूर्ति-
 स्तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय ॥ ७ ॥
 प्रयागकूले यमुनातटे च
 सरस्वतीपुण्यजले गुहायाम् ।
 यो योगिभिर्ध्येयतमोऽतिसूक्ष्म-
 स्तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय ॥ ८ ॥
 शन्यष्टकं यः पठति प्रभाते
 नित्यं स पुत्रैः पशुबान्धवैश्च ।
 करोति राज्यं भुवि भोगसौख्यं
 प्राप्नोति निर्वाणपदं तथाऽन्ते ॥ ९ ॥

एवं कृते विधानेऽस्मिच्छकटोद्भेदकाभिधे ।

नश्यन्ति जगतः पीडा नात्र कार्या विचारणा ॥ १० ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां स्कन्दपुराणोक्तं रोहिणी-
शकटभेदविधानम् ।

अथ राहुपूजाविधानम् ।

प्रथमस्तु द्वितीयस्तु चतुर्थः पञ्चमस्तथा ।

सप्तमश्चाष्टमोऽङ्कस्थो दशमो द्वादशस्तमः ॥ १ ॥

करोति मरणं पुंसां देशत्यागं धनक्षयम् ।

विकाराञ्छोणितस्यापि युद्धे चैव पराजयम् ॥ २ ॥

विवादे वचनग्लानिं दौर्हृदं सुहृदामपि ।

निर्विघ्नार्थं तु संपूज्यो गृह्योक्तविधिना तमः ॥ ३ ॥

पूजिते तमसि प्रीते सर्वान्कामानवाप्नुयात् ।

कालाञ्जनस्य पट्टे च तथा लोहमयेऽपि वा ॥ ४ ॥

चतुरस्रे चतुष्पादे नूतने वस्त्रसंयुते ।

अक्षतैः पूरिते सम्यक्तत्र तं स्थापयेद्बुधः ॥ ५ ॥

आहूय विधिमार्गेण नाममन्त्रेण तं ग्रहम् ।

शूद्रवर्णसमुद्भूत कृष्णवर्णं चतुर्भुज ॥ ६ ॥

श्रीमन्धर्तृधनुष्पाशाश्वमालां कमण्डलुम् ।

चतुर्दश्यां समुद्भूत कृष्णपक्षे विशेषतः ॥ ७ ॥

यमरूप महाघोर देवदैत्यनिवर्धण ।

पैठीनसकुले जात देशे वर्षरसंज्ञके ॥ ८ ॥

भरणीतारकायां च सैद्धिकेय नमोऽस्तु ते ।

आगच्छ वरद श्रेष्ठ पीठेऽस्मिन्संनिधिं कुरु ॥ ९ ॥

आवाह्य विधिवद्वाहुं पूजयेत्त्रयतः शुचिः ।

ततस्तु हवनं कुर्याद्दूर्वाभिरयुतेन च ॥

प्रधानं + पायसं तत्र साज्यं चैव विशेषतः ॥ १० ॥

सहस्रसंमितो (तं) होमः (भं) पायसेन प्रकल्पयेत् ।

ततः स्विष्टकृते जाते होमे च विधिवत्तमः ॥ ११ ॥

+ ' पितृनुद्दिश्य यो भक्त्या पायसं मधुसंयुतम् ' इति स्कान्दात्तस्य नपुंसकारेणत्वमव-
सीयते ।

प्रतिपूजां ततः कुर्याद्राहोः प्रीत्यै विशेषतः ।
 आयसं दक्षिणां दद्यादाचार्याय कुटुम्बिने ॥ १२ ॥
 वस्त्रयुग्मं च सूक्ष्मं च कुण्डले कटवानि च ।
 ब्राह्मणान्भोजयेत् श्राद्धुक्तेष्वनुव्रजेत्ततः ॥ १३ ॥
 एवं यः कुरुते पूजां राहोर्गोचरगस्य च ।
 दुष्टस्थानस्थितस्याऽऽशु ग्रहपीडा विनश्यति ॥
 सर्वान्कामानवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥ १४ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शान्तिपट्योक्तं
 राहुपूजाविधानम् ।

अथ केतुपूजाविधानम् ।

यथा राहुस्तथा केतुर्ज्योतिःशास्त्रे निगद्यते ।
 तस्य शान्तिकरं सम्यग्विधानं मुनिभिः स्मृतम् ॥ १ ॥
 कृत्वा कांस्यमयं केतुं चतुर्बाहुं महातनुम् ।
 धूम्रवर्णं दीर्घहनुं पिङ्गश्मश्रुविलोचनम् ॥ २ ॥
 एके वदन्ति केतूनां रूपबाहुल्यमञ्जसा ।
 एकमेवेति चान्ये तु सहस्रं त्वपरे विदुः ॥ ३ ॥
 महाभया महारौद्रा महाभयकरा नृणाम् ।
 केतवस्त्रिषु लोकेषु तस्मात्पूज्याः सदा नृणाम् ॥ ४ ॥
 नामगोत्रे समुच्चार्य मन्त्रैरावाहयेद्बुधः ।
 निवेश्य चित्रपट्टे तु तण्डुलैः परिपूरिते ॥ ५ ॥
 वस्त्रयुग्मसमायुक्ते चन्दनेन सुचर्चिते ।
 पञ्चामृतैस्तु संक्ष्नाप्य समाहूय निवेशयेत् ॥ ६ ॥

तत्राऽऽवाहनमन्त्रः—

अहो केतो महाबाहो विशाखा*तारसंभव ।
 अमावास्यातिथौ जात शूद्रवर्णसमुद्भव ॥ ७ ॥
 आदित्यचन्द्रभयद् कालरूप नमोऽस्तु ते ।
 आगच्छ वरदानन्द नन्दनोद्भव सुव्रत ॥ ८ ॥

* नक्षत्रे नेत्रमध्ये च तारा म्यात्तार इत्यपि । इति व्यं डेः पुंलिङ्गस्तारशब्दः ।

यज्ञेऽस्मिन्कुरु सांनिध्यं कामान्मे पूरय प्रभो ।
 केतुं कृण्वन्निति मनुः पूजाहोमविधौ स्मृतः ॥ ९ ॥
 चित्रान्नं हवने चात्र कुशाश्च समिधस्तथा ।
 अयुतं हवने संख्या प्रबलं स्मृतमत्र वै ॥ १० ॥
 कृ(हु)ते स्विष्टकृते कार्या प्रतिपूजा मनीषिभिः ।
 छागस्तु दक्षिणा चात्र केतूनां प्रातये मता ॥ ११ ॥
 संपाद्य विधिवद्भक्त्या ह्याचार्याय मनीषिणे ।
 मूर्तिं छागं च वस्त्रेण नमस्कुर्यात्प्रयत्नतः ॥ १२ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्दद्यात्तेभ्यश्च दक्षिणाम् ।
 एवमर्कादिखेटानां पूजनं परिकीर्तितम् ॥ १३ ॥
 य(त)स्य य(त)स्य च खेटस्य होमे बह्वेः पृथक्पृथक् ।
 नामानि कथितान्येव यज्ञकर्मविशारदैः ॥ १४ ॥
 आदित्ये कपिलो नाम पिङ्गलः सोम उच्यते ।
 धूमकेतुस्तथा भौमे जठरास्थि(र्)र्बुधस्य च ॥ १५ ॥
 गुरौ चैव शिखी नाम शुक्रे भवति हाटकः ।
 शनैश्चरे महातेजा राहौ केतौ हुताशनः ॥ १६ ॥
 अविदित्वाऽग्निनामानि होमं कुर्याद्विचक्षणः ।
 तद्धुतं न च संस्वर्ग्यं न च यज्ञफलं भवेत् ॥ १७ ॥
 एवं विधानमुद्दिष्टं केतूनां पूजने मतम् ।
 सर्वकामप्रदं नृणां नारीणां च विशेषतः ॥ १८ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां शान्तिपटलोक्तं
 केतुपूजाविधानम् ।

अथ तुलापुरुषविधानम् ।

मत्स्यपुराणे सूत उवाच—

अथातः संप्रवक्ष्यामि महादानानुकीर्तनम् ।
 दानधर्मेऽपि यन्त्रोक्तं विष्णुना प्रभविष्णुना ॥ १ ॥
 तदहं संप्रवक्ष्यामि महादानमनुत्तमम् ।
 सर्वपापक्षयकरं नृणां दुःस्वप्ननाशनम् ॥ २ ॥

यत्तु षोडशधा प्रोक्तं वासुदेवेन भूतले ।
 पुण्यं पवित्रमायुष्यं सर्वपापहरं शुभम् ॥ ३ ॥
 पूजितं देवताभिश्च ब्रह्मविष्णुहरादिभिः ।
 आद्यं तु सर्वदानानां तुलापुरुषसंज्ञकम् ॥ ४ ॥
 हिरण्यगर्भदानं च ब्रह्माण्डं तदनन्तरम् ।
 कल्पपादपदानं च गोसहस्रं च पञ्चमम् ॥ ५ ॥
 हिरण्यकामधेनुश्च हिरण्याश्वस्तथैव च ।
 हिरण्याश्वरथस्तद्वद्धेमहस्तिरथस्तथा ॥ ६ ॥
 पञ्चलाङ्गलकं तद्वद्धरादानं तथैव च ।
 द्वादशं विश्वचक्रं च ततः कल्पलतात्मकम् ॥ ७ ॥
 सप्तसागरदानं च रत्नधेनुस्तथैव च ।
 महाभूतघटस्तद्वत्षोडशं परिकीर्तितम् ॥ ८ ॥
 सर्वाण्येतानि कृतवान्पुरा शम्बरसूदनः ।

मनुरुवाच—

महादानानि यान्येव पवित्राणि शुभानि च ॥ ९ ॥
 रहस्यानि प्रदेयानि तानि मे कथयाच्युत ।

मत्स्य उवाच—

नोक्तानि यानि गुह्यानि महादानानि षोडश ॥ १० ॥
 तानि ते संप्रवक्ष्यामि यथावदनुपूर्वशः ।
 तुलापुरुषयोगोऽयमेषामाद्योऽभिधीयते ॥ ११ ॥
 अयने विषुवे पुण्ये व्यतीपाते दिनक्षये ।
 युगादिषूपरागेषु तथा मन्वन्तरादिषु ॥ १२ ॥
 संक्रान्तौ वैधृतिदिने चतुर्दश्यष्टमीषु च ।
 सितपञ्चदशीपर्वद्वादशीष्वष्टकासु च ॥ १३ ॥
 यज्ञोत्सवविवाहेषु दुःस्वप्नाद्भुतदर्शने ।
 द्रव्यब्राह्मणलाभे वा श्रद्धा वा यत्र जायते ॥ १४ ॥
 तीर्थे वाऽऽयतने गोष्ठे कूपारामसरित्सु च ।
 गृहे वाऽथ वने वाऽपि तडागे रुचिरे तथा ॥ १५ ॥

पुण्यां तिथिं समासाद्य कृत्वा ब्राह्मणवाचनम् ।

वक्ष्यमाणमण्डपादि कारयेदित्यन्वयः । तिथिमित्युपलक्षणम् । पूर्वाह्णे पुण्यमु-
द्गतादौ च नि(रेति)वेदितव्यम् । ब्राह्मणवाचनं नाम ब्राह्मणैः पुण्याहादिशब्दना-
चनम् । तद्विधानं तु परिभाषायां प्रागभिहितम् । इह चायं प्रयोगक्रमः—उक्तकाला-
न्यतमकालात्पूर्वेद्युः प्रातः सुस्नातः शोभूतेऽहममुकदानं प्रतिपादयिष्य इति
यजमानः संकल्प्य प्रत्युहसमूहविघाताय शिवविष्णुविनायकान्संपूज्य ब्राह्मणा-
नुज्ञातैः कर्म समारभेत । अथ वृद्धिश्राद्धं कृत्वाऽनन्तरमृत्विग्भरणं विधाय तांश्च
मधुपर्कदानेन संपूजयेत् । कुण्डमण्डपलक्षणानि परिभाषायां द्रष्टव्यानि । विशे-
षस्तु वक्ष्यते—

षोडशारत्निमात्रं च दश द्वादश वा करान् ॥ १६ ॥

मण्डपं कारयेद्विद्वांश्चतुर्भद्रासनं बुधः ।

यजमानस्यैकविंशत्यङ्गुलः करः । एतच्च सानत्रयमुत्तममध्यमाधमभेदेन विज्ञे-
यम् । चतुर्भद्रासनमिति चत्वारि भद्रयुक्तान्यासनानि यस्य स तथा । यदाह
दानसभामधिकृत्य विश्वकर्मा—

द्वा रैश्चतुर्भिर्निगतैः या(भिः सह तोरणैर्या) विभूषिता सुन्दरमूर्तिरूपा ।

रत्नोज्ज्वा सा कथिता सभेयं भद्रं व्यलिन्दं करणीयमस्याः ॥ इति ।

मत्स्यपुराणे तु—

सप्तहस्ता भवेद्वेदी मध्ये पञ्चकराऽथ वा ॥ १७ ॥

तन्मध्ये तोरणं कुर्यात्क्षीरदारुमयं बुधः ।

उत्तममण्डपे सप्तकरावधिर्वेदीतरयोस्तु पञ्चकरेति व्यवस्थितो विकल्पः । सा
चेष्टकामयी चतुर्थीशोच्छ्रिता कार्या । तन्मध्ये तुलाबन्धनार्थं तोरणं सारदारु-
आकेरुगुदीत्यादिवक्ष्यमाणं कुर्यात् ।

कुर्यात्कुण्डानि चत्वारि चतुर्दिक्षु विचक्षणः ॥ १८ ॥

संभोगलायोनियुतानि तद्वत्संपूर्णकुम्भानि सहासनानि ।

सुताम्रपात्रद्वयमंयुतानि सुयज्ञपात्राणि सुविष्टराणि ॥

हस्तप्रमाणानि तिलाज्यधूपपुष्पोपहाराणि सुशोभनानि ॥ १९ ॥

चतुर्दिक्षु वेद्या इति शेषः । सपादहस्तसंमितं च वेद्यामन्तरं विधेयम् । पूर्ण-
कुम्भो जलपूर्णकलशः । ताम्रपात्रद्वयं हवनीयद्रव्याधारभूतम् । यज्ञपात्राणि सुकुसु-

वादीनि । विष्टरोऽच्छिन्नाग्रपञ्चविंशतिदर्भपवित्रनिर्मितः । भूपो गुग्गुलुप्रभृतिः ।
उपहारः फलाभ्यताम्बूलादिः ।

पूर्वोत्तरे हस्तमिता च वेदी ग्रहादिदेवेश्वरपूजनाय ।

अत्रार्चनं ब्रह्मशिवाच्युतानां तत्रैव कार्यं फलमाल्यवस्त्रैः ॥ २० ॥

पूर्वोत्तर इशानभाग आयामतो विस्तारतश्च हस्तमिता वितस्तिमात्रोच्छ्राया वेदी
कार्या । तत्र मध्ये सूर्यम् । आग्नेये सोमम् । दक्षिणे भौमम् । ऐशाने बुधम् ।
उत्तरे गुरुम् । पूर्वे भार्गवम् । पश्चिमे शनैश्वरम् । नैऋते राहुम् । वायव्ये
केतुं प्रतिष्ठापयेत् । ईश्वरगौरीस्कन्दविष्णुब्रह्मशक्रयमकालचित्रगुप्ता इत्यधिदेवताः ।
अग्निजलभूमिविष्णुशक्रशचीप्रजापतिसर्पब्रह्माण इति प्रत्यधिदेवताः । एताश्च
स्वस्वग्रहसंनिधौ स्थाप्याः । तथा विनायको दुर्गा वायुराकाशमश्विनौ चेति ।
सूर्यशनैश्वरयोरुत्तरभागे राहुकेत्वोश्च दक्षिणे विनायकस्य दुर्गाप्रभृतीनां च
स्थापनम् । तथा लोकपालानामपि स्थापनम् । तेषामुत्तरत्र देवतात्वेनाभि-
धानात् ।

तदुक्तं स्मृत्यन्तरे—

इन्द्रं पूर्वे तु संस्थाप्य प्रेतेशं दक्षिणे तथा ।

वरुणं पश्चिमे भागे कुबेरं चोत्तरे तथा ॥ २१ ॥

अग्न्यादिकोणपालांश्च कोणभागेषु विन्यसेत् ।

इन्द्रः पीतो यमः श्यामो वरुणः स्फटिकप्रभः ॥ २२ ॥

कुबेरस्तु सुवर्णाभो अ (ह्य) श्निश्चापि सुवर्णभः ।

तथैव निर्ऋतिः श्यामो वायुर्धूम्रः प्रशस्यते ॥ २३ ॥

ईशानस्तु भवेद्रक्त एवं ध्यायेत्क्रमादिमान् ।

इन्द्रस्य दक्षिणे पार्श्वे वसूनावाहयेद्बुधः ॥ २४ ॥

ध्रुवो धरस्तथा सोम आपश्चैव नलोऽनलः ।

प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ प्रकीर्तिताः ॥ २५ ॥

देवेशे शानयोर्मध्य आदित्यानां तथाऽर्चनम् ।

भाताऽर्यमा च मित्रश्च वरुणः सुभगस्तथा ॥ २६ ॥

इन्द्रो विवस्वान्पूषा च पर्जन्यो नवमः स्मृतः ।

व्रतस्त्वष्टा ततो विष्णुरजघन्यो जघन्यजः ॥ २७ ॥

इत्येते द्वादशाऽऽदित्या नामभिः परिकीर्तिताः ।
 अग्रेः पश्चिमभागे तु रुद्रागामयनं विदुः ॥ २८ ॥
 वीरभद्रश्च शंभुश्च गौरीशश्च महायशः ।
 अजैकपादहिर्बुध्न्यः पिनाकी चापरजितः ॥ २९ ॥
 भुवनाधीश्वरश्चैव कपाली च विशांपतिः ।
 स्थाणुर्भगश्च भगवान् रुद्रा एकादश स्मृताः ॥ ३० ॥
 प्रेतेशरक्षसोर्मध्ये मातृस्थानं प्रकल्पयेत् ।
 मातृनामानि परिभाषायां दर्शितानि ।
 निर्ऋतेरुत्तरे भागे मन्मथायतनं विदुः ॥ ३१ ॥
 कुबेरमरुतोर्मध्ये मरुतां स्थानमुच्यते ।
 मरुतो नाम वै देवा गणा वै सप्तसप्तकाः ॥ ३२ ॥
 आवहः प्रवहश्चैव उ(ह्यु)द्रहः संवहस्तथा ।
 परावहो विवहश्च तथा परिवहोऽनिलः ॥ ३३ ॥

एते सूर्यादयो ग्रहा यज्ञोक्तविधिना पूजनीयाः । अनुक्तमन्त्राणां प्रणवादि-
 भिश्चतुर्थ्यन्तैर्नामभिः स्थापनादि विधेयम् । अथ ब्रह्मशिवाच्युतार्चनं कर्तव्यं
 तल्लक्षणैर्मन्त्रैरेव । ततः सर्वदेवतार्चने कृते तुलापूजनं कर्तव्यम् ।

तत्र मन्त्रः—

त्वं तुले सत्यरूपाऽसि पुरा देवैर्विनिर्मिता ।
 पूजिताऽसि मया देवि पापं हर ममानघे ॥ ३४ ॥

अनेन मन्त्रेण षोडशोपचारैस्तुलोपचार्या । ततश्च स्वस्तिके तण्डुलमये हेम-
 मयं तुलापुरुषं ध्यानयुक्तं तुलायाः पूर्वतो हस्तचतुष्टये पूजयित्वा पौराणैरेव
 मन्त्रैः

तुलापुरुष देवेश वणिग्वंशसमुद्भव ।
 तुलायां रोहणान्मेऽद्य पापं नश्यतु जन्मनः ॥ ३५ ॥

इत्यनेन मन्त्रेण तुलापुरुषं संप्राप्य यदुपनीतं स्वर्णादितुलादानं तत्सर्वं
 तुलायाः पात्रे विन्यस्य वस्त्रालंकारनिजशत्रुधारी स्वयं दक्षिण भाजने समा-
 रोहेत् ।

तूर्याणां च निनादेन वेदघोषसमन्वितः ।

तत्र स्वर्णतुलापुरुषदानमन्त्रः(?) । बृहस्पतिः—

गृहादिकै तु तत्पुण्यं भवेन्मूलयानुसारतः ।
तस्मात्सर्वप्रदानानां हिरण्यमधिकं स्मृतम् ॥ ३६ ॥
यथा संतानकादीनां हेम्ना संपाद्यते क्रिया ।
न तथा गृहदानेन हिरण्यमधिकं ततः ॥ ३७ ॥

नन्दिपुराणे—

कृष्णलैः पञ्चभिर्माणैः षोडशभिः स्मृतम् ।
सुवर्णमेकं तद्दानाद्दाता स्वर्गमवाप्नुयात् ॥ ३८ ॥
तस्मात्सर्वात्मना पात्रे दद्यात्कनकदक्षिणाम् ।
दानार्थमेव तत्सृष्टं ह्युत्कृष्टं स्वर्गसाधनम् ॥
दानात्परः सुवर्णस्य विधिरेव न विद्यते ॥ ३९ ॥

आदित्यपुराणे—

आदित्योदयसंप्राप्तौ विंध्यमन्त्रपुरस्कृतम् ।
ददाति काञ्चनं यो वै दुःस्वप्नं विनिहन्ति सः ॥ ४० ॥
सर्वदाऽभ्युदिते मित्रे काञ्चनं च ददाति यः ।
सर्वपापविनिर्मुक्तः स्वर्गं प्राप्नोत्यविच्युतम् ॥ ४१ ॥
मध्याह्ने ददते रुक्मं हन्ति पापमनागतम् ।
सायंकाले च संप्राप्ते काञ्चनं यः समर्पयेत् ॥ ४२ ॥
ब्रह्मवाय्वग्निसोमानां लोकानाम्प्रोति निश्चयात् ।
सुवर्णमक्षयं दत्त्वा लोकानाम्प्रोति पुष्कलान् ॥ ४३ ॥
यस्तु संजनयत्यग्निमादित्योदयनं प्रति ।
दद्याद्यो व्रतमुद्दिश्य सर्वान्कामान्समश्नुते ॥ ४४ ॥

रामं प्रति वसिष्ठवाक्यम्—

सर्वरत्नानि निर्मथ्य तेजोराशेः समुत्थितम् ।
सुवर्णमेभ्यो राजेन्द्र रत्नं परममुत्तमम् ॥ ४५ ॥
एतस्मात्कारणाद्देवा गन्धर्वोरगराक्षसाः ।
मनुष्याश्च पिशाचाश्च प्रयता वेदयन्ति तत् ॥ ४६ ॥

मुकुटैरङ्गदयुतैरलंकारैः पृथग्विधैः ।
 सुवर्णविधृतैः तत्र विराजन्ते रघूत्तमाः ॥ ४७ ॥
 तस्मात्सर्वप्रयत्नेन पवित्रं परमं स्मृतम् ।
 पृथिवीं गां च दत्त्वैव तथाऽन्यदपि किञ्चन ॥ ४८ ॥
 काञ्चनस्य प्रदत्तस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ।
 अक्षयं पावनं चैव सुवर्णं पापनाशनम् ॥ ४९ ॥
 अर्पितं द्विजमुख्येभ्यो मुक्तिमार्गं ददाति च ।
 सुवर्णमेव सर्वासु दक्षिणासु विधीयते ॥
 सुवर्णं ये प्रयच्छन्ति ते न यान्ति यमक्षयम् ॥ ५० ॥

तत्र दानसंकल्पः—

वस्त्रसुवर्णचामरमुक्ताविद्रुमशङ्खकर्पूरमृगनाभिचन्दनताम्बूलयुक्तं सुवर्णतुला-
 पुरुषदानं पुराणोक्तफलप्राप्तयेऽद्येत्यादिविशिष्टकाले समस्तकुटुम्बक्षेमप्राप्त्यै नाना-
 नामगोत्रेभ्यो विप्रेभ्यः संप्रददे तत्र दानसिद्ध्यर्थं यथाशक्ति सुवर्णं दक्षिणां संप्र-
 दद इति संकल्प्य तुलाया अवहृद्य दण्डवत्प्रणिपत्याऽऽचार्यमभ्यर्च्य ब्रह्मर्त्विगा-
 दिभ्यो यथाप्रतिष्ठं तत्सुवर्णं दत्त्वा स्वमन्दिरं व्रजेत् । सा तुला दृढा स्वर्णस्य
 रौप्यस्य ताम्रस्य वा सदण्डा सपत्रा पलशतत्रयेण निर्मिता तां भाण्डागारे प्रति-
 ष्ठापयेत् । ततश्च लक्षमयुतं सहस्रं वा ब्राह्मणान्भोजयेत् ।

अथान्यत्तत्र सर्वं पूर्ववदेव कृत्वा रौप्यस्य तुलापुरुषं दद्यात् । तत्र रौप्य-
 प्रार्थनं कृत्वा

अद्येत्याद्युक्त्वेदं रजां सोमदेवत्यमभिनवरौप्यतुलापुरुषसहितं स्वर्गप्राप्ति-
 कामोऽहं नानागोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यः संप्रददे । एतद्रौप्यतुलापुरुषदानप्रतिष्ठासि-
 द्ध्यर्थं यथाशक्ति सुवर्णं दक्षिणां दद्यात् । एवं ताम्रकांस्यादिधातुचामरदुकूल-
 हीरकमौक्तिकरत्नकर्पूरकस्तूरिकाचन्दनतुलापुरुषविधानानि कुर्यात् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां तुलापुरुष-
 विधानम् ।

अथ विष्णुश्राद्धविधानम् ।

कालश्रवणपूर्वकं विष्णुश्राद्धमारभेत । तत्र प्रयोगः—

सर्वगर्भदोषविनाशार्थं विष्णुश्राद्धमङ्गं करिष्ये । तत्रायं क्रमः—यदाकदा-

चिन्मासि गुरुशुक्रादिविधातवर्जं कृष्णैकादशीदिने प्रातःकाले नद्यां स्नात्वा नित्यकर्म विधाय देवागारं समागत्य पुष्पमण्डपिकां कृत्वा ततश्च तिथिश्रवण-पूर्वकं रात्रौ संकल्पं कुर्यात् । पथादाचार्यवरणम् । तत्र संकल्पमन्त्रः—

पूर्वजन्मकृतैः पापैः पीडितोऽस्मि जनार्दन ।
श्राद्धेनानेन देवेश पापमुक्तिर्भवत्विवह ॥ १ ॥

इति संकल्प्य तत आचार्यं वरयेत् । तत्र मन्त्रः—

दोषैर्नानाविधैः स्थूलैः पीडितोऽस्मि महायने ।
पूर्णकामो भवेयं ते वरणादर्चनाद्धरेः ॥ २ ॥

इत्याचार्यवरणमन्त्रः ।

नारिकेलं मातुलुङ्गं पुगं धात्रीफलं तथा ।
आचार्यहस्ते दत्त्वा तु दण्डवत्प्रणमेत्ततः ॥ ३ ॥

ततो मण्डपिकामध्ये मण्डलस्योपरि तण्डुलपूर्णं मुमण्डितं कलशं स्थापयित्वा वस्त्रयुग्मेन(ण) संवेष्ट्य मुखोपर्यन्यच्च वस्त्रयुग्मं विन्यस्य देवं गरुडवाहनं सौवर्ण-निष्कनिर्मितं स्थापयेत् । तस्य पौरुषेण भूक्तेन षोडशोपचारान्कुर्यात् । सप्त धान्यराशीन्पुरतः कुर्यात् । तस्य देवस्य सव्यदक्षिणयोरन्यत्कलशद्वयं प्रति-ष्ठाप्य ब्रह्माणं शिव(वं) नाममन्त्रैस्तयोः कलशयोरुपरि पूजयेत् ।

सप्त धान्यान्याह—

तिलमाषयवत्रीहिप्रियंगुमुद्गरस्तथा ।
अयामाकाः सप्त धान्यानि समुद्दिष्टानि सूरिभिः ॥ ४ ॥
तेषां चैव तु सर्वेषामेकैकं द्रोणसंमितम् ।
व्रताङ्गेषु च सर्वेषु नात्र कार्या विचारणा ॥ ५ ॥
पश्चामृतैश्च संस्नाप्य कुर्यात्पूजां मनोरमाम् ।
जागरं कारयेत्पश्चात्कीर्तयेद्देवकीर्तनम् ॥ ६ ॥

ततः प्रभाते गङ्गायां स्नानादिनित्यक्रियां कृत्वा सप्त पञ्च त्रयो वा ब्राह्मणाः श्रीविष्णुभक्ताः शुचयो निमन्त्रयितव्या वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण—

निमन्त्रयामि भो विप्रा विष्णुश्राद्धे पवित्रके ।
भस्मी कुरुत तान्दोषान्बाले गर्भे च ये स्थिताः ॥
दण्डवत्प्रणिपातेन सर्वास्तांश्च प्रसादयेत् ॥ ७ ॥

केषांचिन्मतेन तान्पूर्वमेवैकादश्यां निमन्त्रयेत् । ततश्च तैः सार्धं जागरं कुर्यात् ।
ततश्च पूर्ववद्देवमर्चयेत् । देवस्य पुरतो नवं शरावं स्थापयित्वा तत्र पितृनावा-
हयेत् ।

कूटवादरता ये च ये च ब्राह्मणनिन्दकाः ।
ब्रह्मस्वहारिणः क्रूरा वाग्दत्तस्यापहारिणः ॥ ८ ॥
अनाचाराः कृतघ्नाश्च अ (ह्य) शास्त्राः प्राणिघातकाः ।
परदाररता ये च सर्वधर्मवहिष्कृताः ॥ ९ ॥
मिथ्याभिशापिनो ये च चौर्यकर्मणि ये रताः ।
पुनः पुनः स्मृतिं प्राप्य ये गर्भे संचरन्ति हि ॥
ते सर्वेऽत्र समायान्तु तृप्तिं तेषां करोम्यहम् ॥ १० ॥

इति तान्नूतन आर्द्रं शराव आवाहयेत् । गन्धपुष्पादि तेभ्यो दत्त्वा घृतप्लु-
तेनान्नेन पात्रं पूरयेत् । तिलगर्भसहितमुदकं गृहीत्वा संकल्पं कुर्यात् । पूर्वो-
क्तान्मन्त्रानन्त्यार्धविहीनानुच्चार्यैवं श्लोकं पठेत्—

येऽत्र पात्रे स्थिता जीवाः पापिष्ठा दुःखभागिनः ।
अन्नं तेभ्यो मया दत्तमुपतिष्ठतु तृप्तये ॥ ११ ॥

इति सतिलाञ्जलिं क्षिपेत् ।

ततो होमं प्रकुर्वीत समिद्धिश्चरुणा तिलैः ।
इदं विष्णुरिमं मन्त्रमुच्चार्याष्टोत्तरं शतम् ॥ १२ ॥
होमं कुर्यात्प्रयत्नेन विधिज्ञो विधिवद्द्विजः ।
होमान्ते होमकर्तृभ्यो दक्षिणा विधिसंयुता ॥ १३ ॥
दातव्या सत्त्वयुक्तेन वित्तशाठ्यं न कारयेत् ।
पूर्णाहुतिं ततः कृत्वा श्राद्धकर्म समारभेत् ॥
एकोद्दिष्टविधानेन विष्णुरूपमनुस्मरन् ॥ १४ ॥

तत्र चायं प्रयोगः—

अद्येत्यादिपुण्यतिथौ विष्णुश्राद्धाधिकारप्राप्तानां नानागोत्राणां नानाशर्मणां
विष्णुरूपाणामेकोद्दिष्टश्राद्धविहितेन विधिना विष्णुश्राद्धमहं करिष्ये । ततः
पाद्यादीनुपचारान्वस्त्रदक्षिणादिदानं परितोषकरं च दद्यात् । सप्तपञ्चत्रयाणां
मध्ये यावन्तो ब्राह्मणास्तावत एव पिण्डान्निर्वपेद्भुवि ।

शर्कराघृतसंमिश्रान्घृतपायससंयुतान् ।
विसर्जयेत्ततो विप्रान्संपूर्णं वाचयेच्च तान् ॥ १५ ॥

संपूर्णं विष्णुश्राद्धमिति वाचयेदित्यर्थः ।

वस्त्रैराभरणैश्चैव जलपात्रैः सपादुकैः ।

संपूर्णां दक्षिणां दद्यान्न कुर्याद्वित्तवञ्चनम् ॥

शिवाः सन्त्वाप इत्युक्त्वा श्राद्धशेषं समापयेत् ॥ १६ ॥

ततः कृष्णां सवत्सां तरुणीं रूपसंपन्नां गामग्रतः कुर्यात् ।

गन्धपुष्पैः समभ्यर्च्य रौप्यहाटकताम्रकैः ।

खुरशृङ्गपृष्ठदेशो दोहार्थं कांस्यभाजनम् ॥

पुच्छे मुक्तामणीन्बद्ध्वा द्विजहस्ते समर्पयेत् ॥ १७ ॥

तत्र दानप्रयोगः—

अमुकगोत्रायामुकप्रवरायामुकशर्मणे ब्राह्मणायेमां गां विष्णुदेवत्यां विष्णु-
श्राद्धाङ्गभूतां सुवर्णशृङ्गां रौप्यखुरीं ताम्रपृष्ठां कांस्यदोहनीवस्त्रयुग्मप्रावृतां
रत्नपुच्छीममुकगोत्रायामुकप्रवरामुकशर्मवर्मादिस्वीयं नामोच्चारयेत् । यदा दासा-
न्तं नाम तदा गोत्राद्यभावः । अमुकशर्मा चिरायुर्निर्दोषबहुपुत्रकामस्तुभ्यमहं
संप्रददे न ममेत्युक्त्वा साक्षतं सदर्थं जलं द्विजहस्ते समर्पयेत् । “ गावो मे
अग्रतः सन्तु ” इति मन्त्रं पठेच्च । ततो गोदानाङ्गदक्षिणां दद्यात् । पश्चाद्दे-
वमाचार्याय निवेदयेदनेन मन्त्रेण—

सप्तधान्ययुतं देवमुपचारैश्च पूजितम् ।

पूर्णकुम्भसमायुक्तं गृहाण त्वं द्विजोत्तम ॥

ततस्तु दक्षिणां दद्याद्गुरुतोपकरीं शुभाम् ॥ १८ ॥

अस्य विष्णुश्राद्धारूपस्य कर्मणः प्रतिष्ठासंसिद्धयर्थमाचार्यायैतत्कर्मसाद्गुण्या-
र्थमिदं हिरण्यं दक्षिणार्थं संप्रददे न ममेत्युक्त्वा समर्पयेत् । ततः “ मन्त्रही-
नम् ” इति दण्डवन्नमस्कारं विधाय देवं सोपस्करमाचार्यगृहं नयेत् । सप्त-
मते च—

अर्पयेद्देवमाचार्यवर्यरूपाय धीमते ।

एकस्मै धेनुकां दद्यात्परस्मै हाटकं तथा ॥ १९ ॥

अन्यस्मै भूमिदानं च कांस्यपात्रं सदक्षिणम् ।

अन्यस्मै प्रयतो दद्याद्धनं बहुतरं ततः ॥ २० ॥

सप्तमाय शुभं वस्त्रयुग्मं दक्षिणया सह ।

तुल्यद्रव्याणि दानानि सर्वाण्युर्वीं विनाऽर्पयेत् ॥ २१ ॥

एवं विधिं समाप्यैव श्राद्धकर्ता महामतिः ।

अन्नपूर्णं शरावं तं गृहीत्वा सरितं व्रजेत् ॥

तत्र गत्वाऽर्पयेन्मध्ये तिष्ठन्मन्त्रानिमाञ्जयेत् (पन्) ॥ २२ ॥

“ कूटवादरता ये च ” इति मन्त्राः । पश्चात्—

विष्णुश्राद्धप्रसादेन ये सर्वे तारिता मया ।

उत्तमान्यान्तु ते लोकान्पापं त्यक्त्वाऽमले जले ॥ २३ ॥

इत्युच्चार्य तं शरावं जले स्थापयेत् । पात्रनाशादाधि जले स्थित्वा सचैलं
स्नात्वा गृहमागत्य ब्राह्मणैः सुहृद्भिः सह भुञ्जीत ।

एवं यः कुरुते लोके विष्णुश्राद्धं च मानवः ।

तस्य पुत्राः प्रजायन्ते सुशीलाश्च चिरायुषः ॥

सुभगा धनसंपन्ना धर्मिष्ठाः सत्यवादिनः ॥ २४ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां यमस्मृत्युक्तं
विष्णुश्राद्धविधानम् ।

अथ दिव्यमातृकाविधानम् ।

दिव्यं राजा स्वयं पश्येद्विद्वद्भिर्ब्राह्मणैः सह ।

अन्यैश्च बहुभिर्लोकैर्देशजैर्वा विदेशजैः ॥ १ ॥

प्राड्विवाकस्तु संपश्येद्ब्राह्मणैः राजयन्त्रितैः ।

मन्त्राधिकरणाध्यक्षैः शास्त्रवृद्धिपरायणैः ॥ २ ॥

तथा च याज्ञवल्क्यः—

व्यवहारान्नृपः पश्येद्विद्वद्भिर्ब्राह्मणैः सह ।

धर्मशास्त्रानुसारेण क्रोधलोभविवर्जितः ॥ ३ ॥

अपश्यता कार्यवशाद्व्यवहारान्नृपेण तु ।

सभ्यैः सह नियोक्तव्यो ब्राह्मणः सर्वधर्मवित् ॥ ४ ॥

इति मतमादाय प्राड्विवाको व्यवहारं पश्यति तच्चापि समर्थम् ।

तत्र विधानक्रमः—

वैकल्यं चेद्भवेद्भर्तुर्दिव्यं स्व[र्ग्यं च भौमकम्] (?) ।
 व्वराद्यैर्व्याधिभिर्घोरैः काले संकुचिते सति ॥ ५ ॥
 सर्वेषां मतमादाय कर्तव्यः प्रतिहस्तकः ।
 हस्ते मुद्रा प्रकर्तव्या सायंकाले भृगोर्दिने ॥ ६ ॥
 एकभक्तविधानेन स्थातव्यं तेन तन्निशि ।
 प्रतिवादिजनः कश्चित्स्वकीयो वा जनस्तथा ॥ ७ ॥
 न गन्तव्यो(व्यः)स्थितो यत्र रक्षितो राजसेवकैः ।
 भूमौ शय्या विधातव्या रन्भापत्रे तृणेऽथवा ॥ ८ ॥
 न पुष्पं धारयेन्मूर्ध्नि ताम्बूलं नैव भक्षयेत् ।
 राजविप्रसमानीतं तृपितः सञ्जलं पिबेत् ॥ ९ ॥
 इत्यनेन प्रकारेण नीत्वा रात्रिं समाहितः ।
 प्रातःकाले समुत्थाय दन्तधावनपूर्वकम् ॥ १० ॥
 प्रातःस्नानादिकं सर्वं विदध्याद्विधिपूर्वकम् ।
 ततो ह्युपवसेद्धीमान्स्मरन्सीतां शुचिव्रताम् ॥ ११ ॥
 द्रौपदीं वा नलं धर्मं रामं सत्यपरायणम् ।
 कुलदेवीं निजां तद्वत्कामधेनुं सरस्वतीम् ॥ १२ ॥
 मध्याह्नसमये भूयः कुर्यात्स्नानादिकर्म सः ।
 सायंविधिं तु सायाह्ने शर्यात तदनन्तरम् ॥ १३ ॥
 प्रातःकाले समुत्थाय कुर्यात्प्रातर्विधिं हि सः ।
 ततो विद्वान्प्राड्विवाकः कृतस्नानविधिः शुचिः ॥ १४ ॥
 शिवद्वारे महापुण्ये ह्यथवा च चतुष्पथे ।
 संमार्जिते शुचौ देशे कुर्याद्धोमचतुष्टयम् ॥ १५ ॥
 तुलादिसर्वदिव्यानां विधिरेष सनातनः ।
 नृणां समाजमाहूय नीलवस्त्रविवर्जितम् ॥
 एवं कृते समाजे तु यथोक्ते च महर्षिभिः ॥ १६ ॥

याज्ञवल्क्यः—

श्रुताध्ययनसंपन्ना धर्मज्ञाः सत्यवादिनः ।
 राज्ञा सभासदः कार्या रिपौ मित्रे च ये समाः ॥ १७ ॥

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा वृद्धा न ते ये न वदन्ति धर्मम् ।

धर्मः स नो यत्र न सत्यमस्ति सत्यं न तद्यच्छलवाक्यविद्धम् ॥ १८ ॥

नियुक्तोऽप्यनियुक्तोऽपि शास्त्रज्ञो वक्तुमर्हति ।

दैवीं वाचं संवदति यः शास्त्रमुपजीवति ॥ १९ ॥

ग्रामे × दृष्टः पुरे याति पुरे दृष्टस्तु राजनि ।

राज्ञा दृष्टः कुदृष्टो वा नास्ति पौनर्भवो विधिः ॥ २० ॥ (?)

तस्मात्सर्वशास्त्रविदो विद्वांसो राज्ञः सकाशे भाव्याः । यदि तैः सह विचार्य धर्मतत्परो धर्मनिर्णयं करोति तदा भूपतेर्वचनीयं नास्ति । एवं राजपुरःसरे समाजे मिलित आदित्यस्य होरायां वारात्पष्टस्य पष्टस्येत्यनेन शुक्रस्य वा दिव्यं कारयेत् । ततश्चाऽऽदौ प्राङ्निवाको धर्मावाहनपूर्वकं दिव्यदेवतापूजनं कुर्यात् । तत्र पूजनक्रमः—

देवस्याङ्गणे वृषभेशानयोर्मध्ये चतुरस्रं हस्तमात्रं सर्वतोभद्रं श्वेततण्डुलैर्मण्डलं कृत्वा धर्मावाहनं तत्र कुर्यादक्षयमाणैर्मन्त्रैः । ते च मन्त्राः—

एहोहि धर्म भगवन्नस्मिन्दिव्ये समाविश ।

सहितो लोकपालैश्च वस्वादित्यमरुद्गणैः ॥

घ(ध)शादि(दी) यानि दिव्यानि तत्र धर्मं समाह्वयेत् ॥ २१ ॥

एहोहि धर्म भगवन्निति सर्वदिव्येषु धर्ममाहूय पूजयेत् ।

इन्द्रं पूर्वे तु संस्थाप्य प्रेतेशं दक्षिणे तथा ।

वरुणं पश्चिमे भागे कुबेरं चोत्तरे तथा ॥ २२ ॥

अग्न्यादिलोकपालांश्च कोणभागेषु विन्यसेत् ।

तल्लिङ्गैर्वैदिकैर्मन्त्रैः पौराणैर्वाऽभिधात्मकैः ॥

स्थाप्या वा पूजनीया वा दिव्यदेवा मनीषिभिः ॥ २३ ॥

तत्र ध्यानम्—

इन्द्रः पीतो यमः श्यामो वरुणः स्फटिकप्रभः ।

कुबेरस्तु सुवर्णाभो वह्निश्च कनकप्रभः ॥ २४ ॥

तथैव निर्ऋतिः श्यामो वायुर्धूम्रः प्रशस्यते ।

ईशानस्तु भवेद्रक्तो ह्येवं ध्यायेत्क्रमादिमान् ॥ २५ ॥

× दृष्ट इत्यत्र खपुस्तके दुष्ट इतिपाठोऽस्मिन्पथे ।

इन्द्रस्य दक्षिणे पार्श्वे वसूनावाहयेद्बुधः ।
 धरो ध्रुवस्तथा सोम आपश्चैवानलोऽनिलः ॥ २६ ॥
 प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ प्रकीर्तिताः ।
 देवेशेशानयोर्मध्य आदित्यानां तथाऽयनम् ॥ २७ ॥
 धाताऽर्यमा च मित्रश्च वरुणश्च भगस्तथा ।
 इन्द्रो विवस्वान्पूषा च पर्जन्यश्च विशेषतः ॥ २८ ॥
 ततस्त्वष्टाऽनलो विष्णुरादित्या द्वादश स्मृताः ।
 अग्नेः पश्चिमभागे तु रुद्राणामयनं विदुः ॥ २९ ॥
 वीरभद्रश्च शंभुश्च गिरिशश्च महायशः ।
 अजैकपादहिर्बुध्न्यः पिनाकी चापराजितः ॥ ३० ॥
 भुवनाधीश्वरश्चैव कपाली च विशांपतिः ।
 स्थाणुर्भगश्च भगवान्नुद्रा एकादश स्मृताः ॥ ३१ ॥
 प्रेतेशरक्षसोर्मध्ये मातृस्थानं प्रकल्पयेत् ।
 ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी तथा ॥ ३२ ॥
 वाराही चैव माहेन्द्री चामुण्डा गणसंयुता ।
 निर्ऋतेरुत्तरे भागे गणेशायतनं विदुः ॥ ३३ ॥
 वरुणस्योत्तरे भागे मरुतां स्थानमुच्यते ।
 गगनः (श्वसनः) स्पर्शनो वायुरानिलो मारुतस्तथा ॥ ३४ ॥
 प्राणः प्राणेशजीवौ च मरुतोऽष्टौ प्रकीर्तिताः ।
 दिव्यस्योत्तरभागे तु दुर्गामावाहयेद्बुधः ॥
 एतेषां दिव्यदेवानां स्वनाम्ना पूजनं शुभम् ॥ ३५ ॥

पराशरमतेन—

प्राङ्निवाकस्ततो विप्रो वेदवेदाङ्गपारगः ।
 श्रुतवृत्तोपसंपन्नः शान्तचित्तो विमत्सरः ॥ ३६ ॥
 सत्यसंधः शुचिर्दक्षः सर्वप्राणिहिते रतः ।
 उपोषितः शुद्धवासाः कृतदन्तानुवाचनः ॥ ३७ ॥
 सर्वासां देवतानां च कुर्यात्पूजां यथाविधि ।
 धर्माय(दि) साधनं भूवां दत्त्वा चाध्यादिकं क्रमात् ॥ ३८ ॥

अर्घ्यादिपश्चादङ्गानां भूषां समनुकल्पयेत् ।
 गन्धादिकां निवेद्यान्तां परिचर्यां प्रकल्पयेत् ॥ ३९ ॥
 रक्तैर्गन्धैश्च माल्यैश्च दधिपूजा (धूपदीपा) क्षतादिभिः ।
 अर्चयेद्विव्यपीठं तु ततः शिष्टांश्च पूजयेत् ॥ ४० ॥

इन्द्रादीनां विशेषा[न] भिधानाद्रक्ताक्षतैरन्यैर्वा पूजन-
 मिति पूजाक्रमो नारदेनोक्तः ।

चतुर्दिक्षु तथा होमः कर्तव्यो वेदपारगैः ।
 चतुर्दिक्ष्विति—आग्नेयीनैर्ऋतीवायव्यैशानीषु न तु पूर्वादिषु ।
 आज्येन हविषा चैव समिद्धिर्होमसाधनैः ॥ ४१ ॥
 सावित्र्या प्रणवेनाथ स्वाहान्तेनैव होमयेत् ।
 यदर्थमभियुक्तः स्यात्तल्लिखित्वा तु पत्रके ॥
 मन्त्रेणानेन सहितं तत्तत्कार्यं शिरोगतम् ॥ ४२ ॥

मन्त्रश्रायम्—

आदित्यचन्द्रावनिलोऽनलश्च द्यौर्भूमिरापो हृदयं यमश्च ।
 अहश्च रात्रिश्च उमे च संध्ये धर्मश्च जानाति नरस्य वृत्तम् ॥ ४३ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां दिव्य-
 मातृकाविधानम् ।

अथ धर्मचीरिकाविधानम् ।

एहोहि धर्मं भगवन्नस्मिन्दिव्ये समाविश ।
 सहितो लोकपालैश्च वस्वादित्यमरुद्गणैः ॥ १ ॥
 अत्रावतरन्तु मे सत्यानृतकर्मसाक्षिणः ।
 पञ्चमे ते लोकपाला दिक्पालाश्च [तथाऽष्ट वै] ॥ २ ॥
 आगच्छन्तु महादेवा लोकपालाश्च साक्षिणः ।
 सत्यानृतस्य संदेहे स्फुटवाचो भवन्तु मे ॥ ३ ॥
 आदित्यचन्द्रावनिलोऽनलश्च द्यौर्भूमिरापो हृदयं यमश्च ।
 अहश्च रात्रिश्च उमे च संध्ये धर्मश्च जानाति नरस्य वृत्तम् ॥ ४ ॥
 धर्मो जयति नाधर्मः सत्यं जयति नासत्यम् ।
 क्षमा जयति न क्रोधो विष्णुर्जयति नासुरः ॥ ५ ॥

धर्मो बन्धुर्धनुष्याणां धर्मो मण्डनमुत्तमम् ।
 अविनाशि धनं धर्मो धर्मः सर्वत्र रक्षकः ॥ ६ ॥
 सत्येन धार्यते पृथ्वी सत्येन तपते रविः ।
 सत्येन वायवो वान्ति सर्वे सत्ये प्रतिष्ठितम् ॥ ७ ॥
 यत्सत्यं त्रिषु लोकेषु इन्द्रे वैश्रवणे यमे ।
 ब्रह्मवादिषु यत्सत्यं तत्सत्यमिह दृश्यताम् ॥ ८ ॥
 एकतः क्रतवः सर्वे सत्यं च तुलया धृतम् ।
 क्रतुपुण्याधिकं चैव सत्यमेवावशिष्यते ॥ ९ ॥
 एकपादस्थिते धर्मे सत्ये च प्रलयं गते ।
 विपरीतगते काले यतो धर्मस्ततो जयः ॥ १० ॥
 अनृतं कर्तुमिच्छन्ति ये देवाः क्षुद्रजन्तवः ।
 सर्वे ते ध्वंसमायान्ति सवितुः किरणाहताः ॥ ११ ॥
 इति धर्मचीरिका ।

एतच्च धर्मावाहनं शिरसि पत्रारोपणाद्यनुष्ठानकण्डं सर्वदिव्यसाधारणम् ।
 यथोक्तम्—

इमं मन्त्रविधिं कृत्स्नं सर्वदिव्येषु योजयेत् ।
 आवाहनं तु देवानां यथावत्परिकल्पयेत् ॥ १२ ॥

अनन्तरं प्राङ्निवाकोऽदिष्टं दिव्यं धटादि तल्लिङ्गैर्मन्त्रैरभिमन्त्रयेत् । त्वं तुले
 सत्यधर्माऽसीति । ततश्च तप्तलोहपिण्डतप्तमापजलादीनां दिव्यानामभिमन्त्रणं
 कारयित्वा राजप्रमुखसर्वजनसहितो दिव्यं प्राङ्निवाकः पश्येत् । तत्र सत्यास-
 त्यसदृशं यद्भवति तद्विचारणीयम् ।

अग्निदिव्यं तथा कुम्भपन्नगं विषमेव च ।
 तप्तमापजलं दिव्यभार्द्रवासाः समोदरेत् ॥ १३ ॥

अतोऽन्यत्र दिव्ये शुद्धवासा दिव्यं समाहरेत् ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां पितामहस्मृत्युक्तं
 सर्वदिव्येषु धर्मचीरिकाविधानम् ॥

अथ स्थालीपाकादिहोमकुण्डलक्षणविधानम् ।

तथा च यज्ञकाण्डे—

स्थालीपाके भवेत्कुण्डमिषुमात्रावरं^१ समम् ।
 चतुरस्रं शुभं विद्यात्प्रत्यग्दक्षिणयोनिकम् ॥ १ ॥
 विवाहहोमे तद्वच्च गर्भाधानादिकर्मसु ।
 सर्वदानेष्विदं श्रेष्ठं व्रतेषु विविधेषु च ॥ २ ॥
 सहस्रहवने चापि स्थण्डिलं वाऽपि कारयेत् ।
 चुल्लीकुण्डं समुद्दिष्टं नित्योपासनकर्माणि ॥ ३ ॥
 वैश्वदेवे तथा चुल्ली जङ्गमं वा तयोर्द्वयोः ।
 नवान्नहवने चुल्लीकुण्डं चैव प्रकल्पयेत् ॥ ४ ॥
 उत्सर्जने च वेदानामिषुमात्रावरं स्मृतम् ।
 वृषोत्सर्गे ग्रहारिष्टशमने मूलशान्तिके ॥ ५ ॥
 गण्डान्तदोषशमने तथाऽऽश्लेषाविधानके ।
 तातयन्धुसमानर्क्षदोषशान्तौ तथाविधम् ॥ ६ ॥
 सद्वस्तुसंग्रहे चैव वास्तुपूजाविधौ तथा ।
 उद्यापने तडागादेः कृत्रिमे जलसंश्रये ॥ ७ ॥
 वृक्षोद्यापनकर्मात्रं कार्यं कर्मविचक्षणैः ।
 प्रासादोद्यापने चैव क्षेत्रारम्भे तथैव च ॥
 इत्या(ष्ट्या)दिकर्म कुर्वीत बाणमात्रावरे बुधः ॥ ८ ॥

अथ विशेषकुण्डानि ।

शतार्धहोमे बद्धमुष्टिहस्तमितं कुण्डं कुर्यात् । शतहोमेऽरत्निमित्तं स्यात् ।
 सहस्रहोमे पूर्णहस्तमितं स्यात् ।

अथाङ्गुललक्षणम् ।

तिर्यग्यवोदराण्यष्टा ऊर्ध्वा वा त्रीहयस्त्रयः ।
 मर्ध्यमं पर्व मध्याया एतदङ्गुललक्षणम् ॥ १ ॥

१ क. 'रं वरम् । २ ख. 'मात्रं च शोभनम् । वृ' । ३ क. विधे. । ४ ख. 'गादिः कृ' ।
 ५ क. 'त्र सर्वक' । ६ ख. 'ध्यमपर्व वा मध्यमया प' ।

अयुतहोमे द्विहस्तमितम् । एषु सर्वेषु कुण्डेषु यवैरष्टभिर्यदङ्गुलं तैश्चतुर्विंश-
तिभिर्ह(त्या ह)स्तः स्यात् । केषांचिन्मते ध्वजायं कुर्यात् । अत्र स्वातमेखलायोनि-
मानज्ञानं परिभाषायाम् । किंचित्कुण्डं चतुर्विंशतिधा विभज्य चतुर्विंशमङ्गुलं
परिकल्प्य तैश्चतुर्विंशतिभिर्ह(त्या ह)स्तं परिकल्प्य तन्मानेन चतुरस्रं कुण्डं
स्वातं च कुर्यात् । तेनैव हस्तेन मेखलासहितं तन्मानेनैवाधस्तादपि खनन्त् ।

अथ मेखलालक्षणम् ।

प्रथममेखलोच्छ्रायो नवाङ्गुलः । अधःस्वातमङ्गुलानि पञ्चदश । अधः-
स्वातमेखलासहितं चतुर्विंशत्यङ्गुलं कार्यम् । अधःस्वातकण्ठो द्वाभ्यामङ्गु-
लाभ्यां कर्तव्यः । द्वितीया चतुर्भिरङ्गुलैर्भवेत् । तृतीया त्रिभिर्भवति ।

अथ मानाधिक्यादिफलम् ।

हारीतः—

विस्ताररहिते कुण्डे यजमानोऽल्पजीवितः ।
स्वाताधिक्ये भवेद्रोगो हीने तु धनसंक्षयः ॥ १ ॥
कुण्डवक्त्रे मानहीने जठरे हीयते ध्रुवम् ।
आधिक्ये तु भवेत्तापो यजमानस्य निश्चितम् ॥ २ ॥
मरणं यजमानस्य जायते छिन्नमेखले ।
शोकस्तु मेखलोच्छ्राये मानाधिकतरे भवेत् ॥ ३ ॥
कण्ठाधिक्ये भवेन्नाशः पशूनां यजने तथा ।
अभियुक्ते यदा कार्ये कुण्डं न्यूनाधिकं भवेत् ॥
तदाऽधिकस्तु कर्तव्यो होमो होमविचक्षणैः ॥ ४ ॥

तथा च—

अन्नहीनस्तु यो होमो राज्यनाशाय कल्पते ।
तस्मादन्नं प्रदातव्यं सर्वभूतेषु यत्नतः ॥ ५ ॥
द्रव्यहीनश्च पुत्रांश्च सदा स (त्राश्वदासानां) मृत्यवे ध्रुवम् ।
मन्त्रहीनस्तु यो होम ऋत्विङ्नाशाय कल्पते ॥ ६ ॥
होमद्रव्यविहीनश्च यजमानं विनाशयेत् ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन होमः कार्यः सुलक्षणः ॥ ७ ॥

अथेदानीं ब्राह्मणलक्षणम् ।

मूर्खा दुष्टाः प्रलुब्धाश्च वेदज्ञानविवर्जिताः ।
अलसा मलसंयुक्ता नित्यं कलहकारिणः ॥ १ ॥

अन्येऽपि सर्वदुष्टाश्च परच्छिद्रैपिणोऽशुभाः ।
 कूरा दुष्टचरित्राश्च नित्यं वादरताश्च ये ॥
 शास्त्रहीना द्रव्यलुब्धाः पुराणार्थविवर्जिताः ॥ २ ॥

तथा च—

परच्छिद्राणि यो ब्रूते ब्रह्महा कथ्यते बुधैः ॥
 ब्रह्मघ्नेषु च सर्वेषु प्रायश्चित्तं सदा मुने ॥
 कथितं मुनिशार्दूलैर्न तत्स्यान्मर्मभेदिनः ॥ ३ ॥

तथा च ब्रह्मपुराणे—

परच्छिद्रेषु यः पापो निमग्नो मोहनत्परः ।
 वर्जनीयः शुभे कार्ये होमे चैव विशेषतः ॥ ४ ॥
 श्राद्धेषु यज्ञकार्येषु विवाहसमये तथा ।
 परमर्मरतं नित्यं वर्जयेच्च प्रयत्नतः ॥ ५ ॥
 तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सदोपान्वर्जयेद्द्विजान् ।
 निर्दोषाः फलदा विप्राः सर्वकर्मसु शोभनाः ॥ ६ ॥

अथ होममुद्राः ।

मयूरी कुक्कुटी हंसी शूकरी च मृगी तथा ।
 पञ्च मुद्रा विजानीयाद्धोमद्रव्यग्रहे बुधैः ॥ १ ॥
 न्युब्जेन पाणिना द्रव्यं त(व्यैस्त)र्जनीरहितेन यत् ।
 क्रियते हवनं त्रिप्रैर्मयूरीं तां विदुर्बुधाः ॥ २ ॥
 उत्तानलक्षिताः सर्वा अङ्गुल्योऽङ्गुष्ठयन्त्रिताः ।
 हवनं क्रियते ताभिः कुक्कुटी सा प्रकीर्तिता ॥ ३ ॥
 विकनिष्ठा तु हंसी स्यान्मुकुलाभा तु सूकरी ।
 मध्यमानामिकाङ्गुष्ठैर्मृगी चैवोपलक्षिता ॥ ४ ॥
 फलमूलयजौ श्रेष्ठा मुद्रा ज्ञेया शिखण्डिनी ।
 जारणे मारणे तद्वत्कुक्कुटी परिकीर्तिता ॥ ५ ॥
 वश्योच्चाटनपूर्वाणां कर्मणां सूकरी मता ।
 शान्तिके पौष्टिके कार्या मृगी हंसी तथोत्तमा ॥ ६ ॥

अथ द्रव्यहोमे विशेषः ।

फलमूलयजौ श्रेष्ठा मुद्रा च शिखिवल्लभा ।
कुक्कुटी पत्रपुष्पाणां शालिहोमे तु शूकरी ॥
यवानां वा तिलानां च हंसी प्रोक्ता मनीषिभिः ॥ १ ॥

अथ स्रुवधारणम् ।

अग्रे धृतो विनाशाय (शं च) धृतो मध्ये प्रजाक्षयम् ।
मूले धृतश्च होतुश्च मृतिं दद्यात्स्रुवो ध्रुवम् ॥ १ ॥
अग्रान्मध्याच्च मध्ये तु मूलान्मध्याच्च मध्यतः ।
स्रुवः प्रधान्यो विद्वद्भिः सर्वकार्यार्थसिद्धये ॥ २ ॥

अथाऽऽहुतिविभागलक्षणम् ।

खण्डत्रयं तु मूलानां कर्तव्यं स्वप्रमाणतः ।
ग्रासार्धमात्रमन्नानां पञ्च सूक्ष्माणि होमयेत् ॥ १ ॥
पनसस्य फलस्यैव शतं भागाः प्रकीर्तिताः ।
तथैव च विभागश्च कूष्माण्डस्य प्रकीर्तितः ॥ २ ॥
नारिकेलस्य विद्वद्भिर्भागाः प्रोक्तास्तु षोडश ।
तावन्त एव भागाः स्युः कदलस्य क्रतूत्तमे ॥ ३ ॥
खर्जूरीफलभागाश्च पञ्च प्रोक्ता मनीषिभिः ।
पत्रमेकैकमेव स्यात्तथा पुष्पं च हूयते ॥ ४ ॥
तिला अशीतिसंख्याकास्तथा पष्टिर्यवाः स्मृताः ।
व्रीहयश्च शतं ग्राह्या गोधूमाः पष्टिसंभिवाः ॥ ५ ॥
प्रियंगवश्च विज्ञेया विडालपदमात्रकाः ।
तथैव तण्डुलाः प्रोक्ता होमलक्षणकोविदैः ॥ ६ ॥
फलानि बदरादीनि पञ्च पञ्च च हावयेत् ।

आदिशब्देन बदरमात्राण्येव ।

इक्षवः पर्वमात्राश्च पल्लवाः कोमला यतः (मताः) ॥ ७ ॥
शर्करा च गुडश्चैव विडालपदमात्रतः ।
हवनीयाः सदा सद्भिः प्रवृत्ते यज्ञकर्मणि ॥ ८ ॥
अतिसूक्ष्माणि बीजानि फलानि च तथैव च ।
यज्ञकृद्यज्ञसिद्धयर्थं वल्लमात्राणि हावयेत् ॥ ९ ॥

घतुर्धा बीजपूराणि दाडिमानि तथैव च ।
 कन्दास्त्वेकैकशः श्रेष्ठा आर्द्रमङ्कुरशः शुभाः (भम्) ॥ १० ॥
 कन्देष्वपि विशेषात्तु सूरणो दशधा भवेत् ।
 जम्बीरामलका(क) द्राक्षास्तथा (प्यथ)भल्लातकाः कणाः ॥ ११ ॥
 अक्षाः पथ्याम्रमूलाद्याः प्रोक्ता ह्येकैकशो यजौ ।
 आज्यं च पृषदाज्यं च दधि दुग्धं तथैव च ॥
 सुववक्त्रमितं श्रेष्ठं तथा मांसं प्रकीर्तितम् ॥ १२ ॥

अथ वर्णेषु कुण्डविशेषः ।

त्रिमेखलं द्विजे कुण्डं क्षत्रियस्य द्विमेखलम् ।
 मेखलैका तु वैश्यस्य शूद्रस्य न हि मेखला ॥ १ ॥
 वक्रकुण्डे च संतापो मरणं हीनमेखले ।
 अपत्यनाशनं प्रोक्तं कुण्डे कण्ठोष्ठवर्जिते ॥ २ ॥
 भार्याविनाशनं प्रोक्तं कुण्डे योनिविवर्जिते ।
 दैर्घ्यायामसमं श्रेष्ठं समगर्भं तु कारयेत् ॥ ३ ॥
 एवं लक्षणसंयुक्तं सत्कुण्डं प्रोच्यते बुधैः ।
 कण्ठोष्ठा च यवैः कार्यौ तिर्यक्पोडशभिस्तथा ॥
 हस्तः प्रमाणं कुण्डस्य ह्यरत्निर्वेति मन्यते ॥ ४ ॥

तत्रोष्ठकण्ठविशेषमाह—

यवैश्चतुर्भिरोष्ठः स्यादुभिरक्षणाङ्गितः ।
 तथा पोडशभिः कण्ठः कर्तव्यः सूत्रकोविदैः ॥ ५ ॥
 अष्टाङ्गुलं त्यजेत्पक्षं त्यजेन्मात्रां षडङ्गुलाम् ।
 मध्ये त्वरत्निमात्रास्यं नियुज्ज्यात्सर्वकर्मसु ॥ ६ ॥(?)
 दिग्भ्रान्ते विभ्रमः कुण्डे सूत्रहीने तु षड्गुता ।
 स्वातहीने विरोधस्तु बन्धुभिः सह जायते ॥ ७ ॥
 ओष्ठहीने त्वपस्मारो योनिहीने भगन्दरम् (रः) ।
 नाभिहीने स्थाननाशो मरणं छिन्नमेखले ॥ ८ ॥
 उक्तमानाधिका न्यूना मेखला व्याधिवर्धिनी ।

१ ख. एष्वक्त्रमितं । २ क. 'क्रतु' । ३ ख. 'क्तं कुण्डं यो' । ४ ख. 'र्जितम् । वै' ।

५ ख. 'था हस्तप्रमाणतः कुण्डमर' । ६ ख. दिग्वाते वि' । ७ ख. उक्तमानाधिकोन्माना ।

समसूत्रां च कुर्वीत समसूत्रेण दिक्क्रमात् ।
 विदिङ्मुखे कर्तृनाशस्तस्माद्विक्साधनं शुभम् ॥ १० ॥
 समभूद्विक्प्रमाणेन द्वारतोरणकर्तृभिः ।
 पताकावेदिकास्तम्भकुण्डादिभिरलंकृतः ॥
 मण्डपः शुभदः सम्यग्जायते निष्फलोऽन्यथा ॥ ११ ॥

अन्यच्च—

इक्षु(क्षो)रापर्व मानं तु मूलमानं गुण(लानामङ्गुल)द्वयम् ।
 पुष्पं पत्रं स्वमानेन समिधस्तु दशाङ्गुलाः ॥ १२ ॥
 चन्द्रचन्दनकाश्मीरकस्तूरीयक्षकर्दमाः ।
 कलापसंमिता भद्रा गुग्गुलुर्वदरास्थिवत् ॥ १३ ॥

तत्र देवयोनिलक्षणम्—

कुण्डस्य पूर्वभागे तु देवयोनिर्विधीयते ।
 हस्तमात्रान्तरालं स्याद्देवतायोनिकुण्डयोः ॥ १४ ॥
 ओष्ठः पञ्चाङ्गुलः कार्यः सर्वावयवसंयुतः ।
 मध्येऽङ्गुष्ठप्रमाणस्तु गलः कार्यः स्तनद्वयम् ॥
 देवयोनिरिति ख्याता तत्र संस्था दिवौकसाम् ॥ १५ ॥

अन्यच्च—

कुण्डं च मण्डपं चैव देवयोनिं तथैव च ।
 वेदिकां मणिकारम्भं विद्ध्यद्बृद्धिवासरे ॥ १६ ॥
 विवाहव्रतचौलेषु प्रवृत्ते यज्ञकर्मणि ।
 वृद्धिश्राद्धानि कुर्वीत यावन्मासः समाप्यते ॥ १७ ॥
 सिद्धे कर्मणि मासान्ते वृद्धिं कृत्वा महामतिः ।
 कुण्डं समण्डपं देवयोनियुक्तं विसर्जयेत् ॥ १८ ॥

अन्यच्च—

पाणिहोमे कथं कुण्डं कियन्मात्रं विधीयते ।
 तन्ममाऽऽचक्ष्व विप्रेन्द्र पृच्छतः शुचिमानस ॥ १९ ॥

१ ख. °दिक्कुण्डे नृनाशः स्यात्तस्मा° । २ ख. °प्रभागैश्च द्वा° । ३ क. °वयोनिषु कु° । ४ क. वृद्धानि कुर्वीत कुण्डानि या° । ५ क. °न्ते धृतिं कू° । ६ ख. विवर्ज° ।

मैत्रेय उवाच—

दर्भैः कुण्डं प्रकर्तव्यं चतुरस्रं सुशोभनम् ।
 साग्रैरष्टभिरेव स्यात्समूलैर्नात्र संशयः ॥ २० ॥
 दर्भस्य समिधं तत्र जुहुयान्मौनमास्थितः ।
 सोमाग्नि(ग्री)दैवते तत्र पितृमत्कव्यवाहने(नौ) ॥
 अपसव्येन होतव्यमाहुतिद्वयमेव च ॥ २१ ॥
 एतत्पाणियजौ कुण्डं प्रोक्तं विप्रवरैः शुभम् ।
 बहिः क(हिष्क)र्मणि कुण्डं तु त्रिकोणं मनुरब्रवीत् ॥ २२ ॥
 नवश्राद्धेषु सर्वेषु कुण्डं पाणितैलं मतम् ।
 परिस्तरणमुद्दिष्टं पत्रमेव कुशोद्भवम् ॥ २३ ॥
 यत्कुण्डमयुते प्रोक्तं लक्षे तद्विगुणं भवेत् ।
 चतुर्गुणं कोटिहोमे प्रयुते लक्षहोमजम् ॥ २४ ॥
 त्रिमेखलोपरि ज्ञेया योनिश्च कुंजरोष्ठवत् ।
 कुंजराशनपत्रेण सदृशी वा प्रपद्य(उच्य)ते ॥ २५ ॥
 पश्चिमे दक्षिणे योनी कार्ये कार्यविचक्षणैः ।
 एवं कुण्डानि सर्वाणि यज्ञकर्मणि योजयेत् ॥ २६ ॥
 कुण्डहीनस्तु यो होमो वैश्वदेवं विनाऽशुभः ।
 गार्हपत्यादयो ये च होमा ये च मनस्विनाम् ॥
 यज्ञकाण्डे समुद्दिष्टं तेषां कुण्डं पृथक्पृथक् ॥ २७ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विद्यानवालायां स्थालीपाकादि-
 होमकुण्डलक्षणविधानम् ।

अथ विवाहव्रतबन्धमध्ये मातृरजोदो(जसि तदो)रहरं
 विधानम् ।

शान्तिपटले—

विवाहे व्रतबन्धे च माता यस्य रजस्वला ।
 मृत्युश्च जडता ज्ञेया क्रमान्मनुजसत्तमैः ॥ १ ॥

तत्र शान्तिं प्रवक्ष्यामि सर्वेषां हितकारिणीम् ।
यस्मिन्दिने समुत्पन्नं मातुर्दोषकरं रजः ॥ २ ॥
तस्माद्दिनात्समारभ्य जपेन्मृत्युंजयं बुधः ।
चतुर्थेऽहानि संप्राप्ते पञ्चमे वा समाहितः ॥ ३ ॥
कुर्याच्छिवार्चनं विद्वान्पायसेन समाहितः ।
मण्डकैः पूरकैश्चापि(पूरिकाभिश्च) लड्डुकैः शर्करान्वितैः ॥ ४ ॥
भक्तेन घृतयुक्तेन पञ्चान्नैः पूजयेच्छिवम् ।
पिण्डिकां मण्डकैः साज्यैः परितः परिपूजयेत् ॥ ५ ॥
अधस्ताल्लिङ्गतः कार्या(पूज्या) पूरकैर्मोदकैस्तैतः ।
भक्तस्य परिधिं कृत्वा पायसेनार्चयेच्छिवम् ॥ ६ ॥
दीपान्पोडशसंख्याकानाञ्चप्रज्वलिताञ्शुभान् ।
अर्पयेद्देवदेवाय हुपचारैः समन्वितान् ॥ ७ ॥

तत्र मन्त्राः पुरुषसूक्ताक्ताः ।

ततः संप्राथम्यं देवेशं सतूर्यो गृहमाव्रजेत् ।
तत्र स्थण्डिलमाधाय हवनं कारयेद्बुधः ॥ ८ ॥
अग्निमीलेन मन्त्रेण(ॐ इत्यमुना) जुहुयादयुतं सुधीः ।
पायसेनैव साज्येन स्वगृहोक्तविधानतः ॥
वर्णयेत्सप्तजिह्वस्य जिह्वाः सप्त हविर्भुजः ॥ ९ ॥

अग्नेः सप्त जिह्वानामान्याह—

कराली लोहिता श्वेता महत्पूर्वा च लोहिता ।
पीता च पद्मरागा च सुवर्णारुया तथैव च ॥ १० ॥
लोहिता पूर्वतो ज्ञेया महत्पूर्वा शुचेर्दिशि ।
सुवर्णा दक्षिणे जिह्वा पद्मरागा ततः परा ॥ ११ ॥
श्वेता तु वारुणे भागे पीता वायुदिशि स्मृता ।
ईशानदिशि विख्याता या जिह्वा जातवेदसः ॥ १२ ॥
कराली नाम सा ज्ञेया तथा रक्षांसि तोषयेत् ।
सुवर्णा मध्यभागस्थां केचिदूचुर्मनीषिणः ॥ १३ ॥
लोहितायां पिशाचांश्च यजेद्विद्वान्क्रतौ क्रतौ ।
महालोहितया यक्षास्तृप्तिमायान्ति शाश्वतीम् ॥ १४ ॥

सुवर्णया च वै देवाः पन्नगाः पन्नरागया ।
श्वेतया ग्रहदेवाश्च पीतया चेटकादयः ॥ १५ ॥

तत्र स्तुतिमन्त्राः पौराणाः स्कन्दपुराणे —

नमस्ते रसने देवि तपनस्य करालिके ।
हुते त्वयि समश्नन्ति राक्षसा बलदर्पिताः ॥ १६ ॥
नमस्ते लोहिते जिह्वे ज्वलनस्य सुशोभने ।
पिशाचास्तृप्तिमायान्ति हुते त्वयि हविष्मतः ॥ १७ ॥
नमस्ते रसने देवि महालोहितसंज्ञिके ।
हुते त्वयि समश्नन्ति यक्षगन्धर्वकिंनराः ॥ १८ ॥
नमस्ते वीतिहोत्रस्य सुवर्णे रसने शुभे ।
त्वया तृप्तो यमो देवो ददाति विपुलं सुखम् ॥ १९ ॥
पन्नरागे नमस्तुभ्यं देवपन्नगतर्पणम् ।
जायते शाश्वतं देवि हुते त्वयि हुताशने ॥ २० ॥
ग्रहाणां तर्पणं श्वेते कुरु जिह्वे हविर्भुजः ।
हुते हविषि विप्रैश्च ग्रहतृप्त्यर्थमादरात् ॥ २१ ॥
चेटकः कामदेवश्च समस्ताः कुलदेवताः ।
पीतायां हवने जाते तृप्तिमायान्ति शाश्वतीम् ॥ २२ ॥
इति जिह्वास्तुतिं कृत्वा समाप्य विधिवद्यजिम् ।
अभिषेकं ततः कुर्यादुदक्याः सूनुना सह ॥ २३ ॥
ततस्तु दक्षिणां दद्यादाचार्याय मनीषिणे ।
अन्येभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च यथाशक्ति क्षमापयेत् ॥ २४ ॥
कस्मैचिन्मञ्चकं दद्यात्सोपधानं सदक्षिणम् ।
प्रेतराजं समुद्दिश्य मन्त्रेणानेन सत्तम ॥ २५ ॥

स च मन्त्रः—

नमस्ते धर्मराजाय देवदेवाय ते नमः ।
मञ्चकस्यास्य दानेन प्रीतो भव मम प्रभो ॥ २६ ॥

ततस्तु—

यद्वाससि रजो दृष्टं तद्वासस्तु परित्यजेत् ।
अपरं वस्त्रमादाय ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ॥ २७ ॥

एवं कृते विधाने च विघ्ना नश्यन्ति तत्क्षणात् ।
नन्दते सुखसंतानैः सह मात्रा निजे गृहे ॥ २८ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां विवाहव्रतबन्ध-
मध्ये मातृरजोदो(जसि तद्दो)पहरं विधानम् ।

अथ पुण्याहवाचनम् ।

पुण्येऽहनि तु संप्राप्ते विवाहे चौलवेः तथा ।
व्रतबन्धे च यज्ञादौ तथा च व्रतकर्मणि ॥ १ ॥
गृहारम्भे धनप्राप्तौ तीर्थाभिगमने तथा ।
नवग्रहमखे शान्तावद्भुतानां तथैव च ॥ २ ॥
गृहप्रवेशने चैव ग्रामस्याभिनिवेशने ।
गजबन्धे तुरङ्गणां दासादीनां च संग्रहे ॥ ३ ॥
अन्यस्मिन्नपि सर्वस्मिञ्शुभे कर्मणि सत्तमैः ।
वाचनीया द्विजाः सम्यग्वेदशास्त्रपरायणाः ॥ ४ ॥
न तत्र कुनखी काणो हीनाङ्गो विकलस्तथा ।
क्षयरोगी च कुष्ठी च श्यामदन्तोऽभिशापकः ॥ ५ ॥
बन्ध्यश्च विधुरो वाग्मी क्रूरस्तु खलसेवकः ।
बकवृत्तिश्च दम्भी च हैतुको ज्ञानदुर्वलः ॥ ६ ॥
सहोपपत्तिरुन्मत्तो व्यसनी सोमविक्रयी ।
कन्याविक्रयकृद्वाजिविक्रयी पिशुनोऽनृतः ॥ ७ ॥
लोकदुष्टः पराधीनो राजद्रोहपरायणः ।
एते चान्येऽपि विप्राश्च न वाच्याः स्वस्तिवाचने ॥ ८ ॥
ताम्बूलमक्षता द्रव्यं दूर्वाः पुष्पाणि चन्दनम् ।
कुङ्कुमं स्र(त्व)कशमीपत्राण्यक्षताः कुङ्कुमान्विताः ॥ ९ ॥
पुण्यतीर्थोदकं सम्यङ्निधाय कलशे शुभे ।
सुवर्णं तदभावे तु द्रव्यमात्रं निधापयेत् ॥ १० ॥

१ ख. दासराणां च । २ क. 'णि चोदने । वा° । ३ ख. 'भिशस्तकः । ४ ख. 'लिकृन्म° । ५ ख. 'तो यज्ञार्थं सो° । ६ ख. 'इकुभा च श° ।

पूर्णी(ग)फलादिपुण्यानि फलानि तु विशेषतः ।
 साक्षते भाजने पुण्ये दीपान्नीराजनात्मकान् ॥ ११ ॥
 संगृह्य विधिवद्धीमान्वाचयेत्स्वस्तिवाचनम् ।
 उदङ्मुखः प्राङ्मुखो वा यजमानः समाहितः ॥ १२ ॥
 निषण्णो मङ्गले पीठे तथाऽन्येऽपि द्विजातयः ।
 सदूर्वापाणयः सर्वे शुचयः शुचिवाससः ॥ १३ ॥
 गणेशं कुलदेवीं च नमस्कृत्य प्रयत्नवान् ।
 कालज्ञानं ततः कुर्यादनुज्ञातो द्विजातिभिः ॥ १४ ॥
 प्रारब्धकृत्यमुद्दिश्य पिधाय कलशं सुधीः ।
 मङ्गलद्रव्ययुक्तेन भाजनेन समाहितः ॥ १५ ॥
 उद्धृत्य सविधानं तु कलशं हेमपूरितम् ।
 पद्मासनसमाविष्टो नमस्कुर्यात्प्रयत्नतः ॥ १६ ॥

कमलमुकुलसदृशेनाञ्जलिना कलशं धृत्वा ललाटपर्यन्तमानीय नमस्कृत्य च
 पुनर्भूमौ निधाय कलशवदनात्पिधानं निःसारयेत् । ततो ह्यात्मनः कामरूपाणि
 वचांस्युक्त्वा विप्रान्प्रार्थयेत् । तैश्चापि सूचयितव्यानि । तान्याह—

ऐरावतादयो नागा गङ्गाद्याश्चैव निम्नगाः ।
 महेन्द्राद्या गिरीन्द्राश्च त्रीणि विष्णुपदानि च ॥
 तेनाऽऽयुष्यप्रमाणेन पुण्याहमेतदस्त्विति ॥ १७ ॥

दीर्घमायुरस्तु । शिवा आपः सन्तु । सौमनस्यमस्तु । अक्षतं चारिष्टं
 चास्तु । गन्धाः पान्तु । सौमङ्गल्यं चास्तु । अक्षताः पान्तु । आयुष्यमस्तु ।
 पुष्पाणि पान्तु । सौश्रियमस्तु । ताम्बूलानि पान्तु । ऐश्वर्यमस्तु । दक्षिणाः
 पान्तु । बहु देयं चास्तु । दीर्घमायुः श्रेयः शान्तिः पुष्टिर्स्तुष्टिश्चास्तु । श्रीर्यशो विद्या
 विनयो वित्तं बहुपुत्रं चाऽऽयुष्यं चास्तु । यं कृत्वा सर्ववेदयज्ञक्रियाकरणकर्मारम्भाः
 शुभाः शोभनाः प्रवर्तन्ते तमहर्माकारमादिं कृत्वा, ऋग्यजुःसामाशीर्वचनं बहुऋ-
 षिमतं संविज्ञातं भवद्भिरनुज्ञातः पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये । इति यजमानः
 पृच्छति । वाच्यतामिति तैर्वक्तव्यम् । ‘ द्रविणोदा ’ इति पठित्वा दीर्घमायुर-
 स्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु इति यजमानेन प्रष्टव्यम् । दीर्घमायुरस्त्विति विप्राः प्रति-
 ब्रूयुः । ततश्च ‘ सविता पश्चातात् ’ इति पठित्वा दीर्घमायुरस्त्विति यजमानः
 पृच्छति । अस्तु दीर्घमायुरिति विप्राः प्रतिब्रूयुः । ततश्च ‘ नवो नवो भवति ’

इति पठित्वा दीर्घमायुरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्त्विति यजमानो ब्रवीति । दीर्घ-
मायुरस्त्विति ते प्रतिब्रूयुः । ततश्च ' उच्चा दिवि ' इति यजमानो ब्रूयात् ।
दीर्घमायुरिति तैर्वक्तव्यम् । इति चतुर्णां मन्त्राणामवसाने त्रिवारं प्रश्नस्त्रिवार-
मेव प्रतिवचनम् । इति परस्परोक्तौ जातायां पुनराशीर्वचनानि प्रार्थयते ।
तान्याह —

ॐ नमः(मनः) समाधीयताम् । समाहितमनसः स्मः । प्रसीदन्तु भवन्तः ।
प्रसन्नाः स्मः । इति यजमानेनोक्ते* सति तैर्वक्तव्यम् † । ततः शान्तिरस्तु ।
पुष्टिरस्तु । तुष्टिरस्तु । ऋद्धिरस्तु । वृद्धिरस्तु । अविघ्नमस्तु । आयुष्यमस्तु ।
आरोग्यमस्तु । शिवं कर्मास्तु । कर्मसमृद्धिरस्तु । अहरहरं भिवृद्धिरस्तु । धनधा-
न्यसमृद्धिरस्तु । वेदसमृद्धिरस्तु । शास्त्रसंपदस्तु । पुत्रसंपदस्तु । इष्टसंपदस्तु ।
[बहिर्देशे] अ(सर्वा)रिष्टनिरसनमस्तु । यत्पापं तत्प्रतिहतमस्तु । [मध्ये ।]
यच्छ्रेयस्तदस्तु । उत्तरे कर्मण्यविघ्नमस्तु । उत्तरोत्तरं श्रीरस्तु । उत्तरोत्तरमहर-
हरं भिवृद्धिरस्तु । उत्तरोत्तराः क्रियाः शुभाः शोभनाः संपद्यन्ताम् । तिथिकरण-
मुहूर्तनक्षत्रसंपदस्तु । तिथिकरणमुहूर्तनक्षत्रग्रहलग्नाधिदेवताः प्रीयन्ताम् । तिथि-
करणे मुहूर्तनक्षत्रे सग्रहे सदैवते प्रीयेताम् । दुर्गापाञ्चाल्यौ प्रीयेताम् । अग्निपु-
रोगाः सर्वे देवाः प्रीयन्ताम् । इन्द्रपुरोगा मरुद्गणाः प्रीयन्ताम् । आदि-
त्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयन्ताम् । ब्रह्मपुरोगाः सर्वे वेदाः प्रीयन्ताम् । विष्णुपु-
रोगाः सर्वे देवाः प्रीयन्ताम् । माहेश्वरीपुरोगा उमामातरः प्रीयन्ताम् । अरुन्धती-
पुरोगा एकपत्न्यः प्रीयन्ताम् । वसिष्ठपुरोगा ऋषिगणाः प्रीयन्ताम् । ब्रह्म च
ब्राह्मणाश्च प्रीयन्ताम् । श्रीसरस्वत्यौ प्रीयेताम् । श्रद्धामेधे प्रीयेताम् । भगवती
कात्यायनी प्रीयताम् । भगवती महालक्ष्मीः प्रीयताम् । भगवती शान्तिकरी
प्रीयताम् । भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम् । भगवती तुष्टिकरी प्रीयताम् । भगवती,
ऋद्धिकरी प्रीयताम् । भगवती वृद्धिकरी प्रीयताम् । भगवन्तौ विघ्नविनायकौ
प्रीयेताम् । भगवान्स्वामी महासेनः सपत्नीकः ससुतः सपार्षदः सर्वस्थानगतः
प्रीयताम् । हरिहरहिरण्यगर्भाः प्रीयन्ताम् । सर्वाः कुलदेवताः प्रीयन्ताम् । सर्वा
ग्रामदेवता प्रीयन्ताम् । [बहिः] शाम्यन्तु घोराणि । शाम्यन्तु पापानि ।
शाम्यन्तु वीतयः । हता ब्रह्मद्विषः । हताः परिपन्थिनः । हताश्च कर्मणो विघ्नक-
र्तारः । शत्रवः पराभवं यान्तु । [अन्तः] शिवानि वर्धन्ताम् । शिवा आपः
सन्तु । शिवा ऋतवः सन्तु । शिवा ओषधयः सन्तु । शिवा वनस्पतयः सन्तु ।

शिवा अग्नयः सन्तु । शिवा आहुतयः सन्तु । शिवा अतिथयः सन्तु । अहो-
रात्रे शिवे स्याताम् । निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु । फलिन्यो न ओषधयः
पच्यन्ताम् । योगक्षेमो नः कल्पताम् । ऋषयश्छन्दांस्याचार्या वेदा देवा यज्ञाश्च
प्रीयन्ताम् । आदित्यसोमाङ्गारकबुधबृहस्पतिशुक्रशनिराहुकेतवो ग्रहाः प्रीय-
न्ताम् । भगवान्भारायणः प्रीयताम् । भगवान्स्वामी महासेनः प्रीयताम् ।
पुण्याहकालान्वाचयिष्य इति यजमानेन वक्तव्यम् । वाच्यतामिति विप्रैर्व-
क्तव्यम् । ‘ उद्गातेव० याज्यया यजति० ’ इति मन्त्रब्राह्मणे पठित्वा
पुण्याहमिति यजमानो वदति त्रिवारम् । पुण्याहमिति त्रिवारं विप्रा ब्रूयुरुत्तरम् ।
ततः ‘ स्वस्ति न इन्द्रो० ’ ‘ आदित्य उदयनीयः० ’ इति मन्त्रब्राह्मणे पठि-
त्वा स्वस्त्यस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्त्विति त्रिवारं यजमानो वदति । तेऽपि त्रिवारं
स्वस्ति ब्रूयुः । पुनः ‘ ऋद्ध्या(ध्या)म स्तोमं० सर्वामृद्धि० ’ इतिमन्त्रब्राह्मणं पा-
ठान्ते यजमान ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्त्विति त्रिवारं पठति । ऋध्यतामिति त्रिवारं
विप्राः । ततः ‘ श्रिये जातः० ’ श्रिय एवैनं तदिति मन्त्रब्राह्मणान्ते श्रीर-
स्त्विति यजमानो वदति त्रिवारम् । प्रतिवचनं तथैव त्रिवारम् । तत इहैव
स्तमिति पठित्वाऽक्षतार्पणं कुर्युर्विप्राः । ततः समस्तस्वस्तिप्राप्त्यर्थं नानागोत्रेभ्यो
ब्राह्मणेभ्य इदं हिरण्यममृतरूपेण संपद्यतामिति संकल्प्य यथाशक्ति द्रव्यं
दद्यात् ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां सर्वकामसिद्धिदं
पुण्याहवाचनारूपं विधानम् ।

अथ दुष्टप्रसवदोषहरं विधानम् ।

माघे बुधे च महिषी श्रावणे वडवा दिवा ।

सिंहे गावः प्रसूयन्ते स्वामिनो मृत्युदायकाः ॥ १ ॥

तथा —

विष्टिं भद्रातिथिं वाऽपि त्यक्त्वा नैव प्रसूयते ।

तदा विघ्नः प्रजायेत स्वामिनो मृत्युदायकः ॥ २ ॥

विधानं तत्र कर्तव्यं स्वामिनो विघ्ननाशनम् ।

कृष्णपक्षे मध्यमासु कुर्यात्तिथिषु पञ्चसु ॥ ३ ॥

कालायसमयं कृत्वा यमं महिषवाहनम् ।

कालदण्डधरं हेमं(म)यमान्या सहितं नृप ॥ ४ ॥

तथा मृत्युंजयेनापि जुहुयाद्घृतपायसम् ।
 रक्षोघ्नैः श(शा)मनैर्मन्त्रैः शं न इत्यादिभिस्तथा ॥ ५ ॥
 निर्गुण्डीपल्लवैः स्निग्धैरभिषेकं च कारयेत् ।
 साऽऽचार्याय प्रदातव्या यममूर्तिः सदक्षिणा ॥ ६ ॥

दानमन्त्रः—

सदक्षिणं श्राद्धदेवं यमान्या सहितं द्विज ।
 सोपस्करं गृहाण त्वं मम विघ्नहरो भव ॥ ७ ॥

इति दानमन्त्रः ।

ततः शिशुं प्रजातं तं प्रदद्यादग्रजन्मने ।
 सदक्षिणं नृपश्रेष्ठ तस्माद्विघ्नो विनश्यति ॥ ८ ॥
 पश्चात्संतप (प) येद्विद्वान्पायसापूपमोदकैः ।
 सघृतैः शर्करायुक्तैर्यथाविभवसारतः (विस्तरम्) ॥ ९ ॥
 एवं कृते विधाने च मृत्युस्तुष्यति पूजितः ।
 निष्प्रत्यूहो भवेन्नूनं यजमानो नराधिप ॥ १० ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां
 पद्मपुराणोक्तं दुष्टप्रसवदोषहरं
 विधानम् ।

अथ निषिद्धाभ्यङ्गदोषहरं विधानम् ।

क्षुद्राण्यन्यानि सर्वाणि यानि कानि समासतः ।

वक्ष्ये तानि विधानानि शास्त्रदृष्टेन कर्मणा (वर्त्मना) ॥ १ ॥

‘ रतिस्तापं कान्तिम्० ’ इति शास्त्रम् । यदा निषिद्धवारे तैलाभ्यङ्गकरणं घटते तदा विधानपूर्वकं कृतं चेन्न दोषभाग्भवति । तच्चाऽऽह—रविकुज-गुरुभृगुवारेषु द्रव्यमिश्रितं तैलं कृत्वा मस्तके पुराणोपदिष्टेन मन्त्रेण निधायोष्णेन वारिणा स्नायात् । स्नात्वा [च] नर्मदागण्डकीगोमतीतीरसैकतो-ज्जवान्, [देवान्] एलाबकुलकुसुमचम्पकोपवासितेन शुद्धेन तैलेनाभ्यज्य कवोष्णेन वारिणा प्रस्नाप्य गन्धपुष्पादिभिरुपचर्य तेनोदकेन स्वमूर्धानं मार्जयेत् ‘ इमं मे गङ्गे ’ इति मन्त्रेण । तत्राऽऽदित्यकुजगुरुभृगुवारेषु संमोहनानि (दोषहराणि) द्रव्याण्यह—

अर्के पुष्पं गुरौ दूर्वा भौमवारे च मृत्तिकाम् ।

भार्गवे गोमयं क्षित्वा तैलाभ्यङ्गो विधीयते ॥ २ ॥

तत्र—‘नमः सवित्रे’ इति रविमन्त्रः ।

अङ्गारको महाकायो रक्तवर्णश्चतुर्भुजः ।

सिद्धिदः सिद्धिकृद्वाग्मी भूयाच्छान्तिकरो मम ॥ ३ ॥

इति भौषमन्त्रः ।

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां निषिद्धाभ्यङ्गदो-
षहरं विधानम् ।

अथ कृष्णपक्षचतुर्दश्यां (शी) प्रसूतिदोषहरं विधानम् ।

कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां प्रसूतेश्च फलं शृणु ।

चतुर्दश्यास्तु षड्भागाः प्रथमस्तु न दोषभाक् ॥ १ ॥

द्वितीयः पितरं हन्ति तृतीयो मातरं तथा ।

चतुर्थो मातुलं हन्ति पञ्चमः कुलनाशनः ॥ २ ॥

षष्ठश्चैव शिशुं हन्ति गण्डदोषो यथाक्रमम् ।

अथ शान्तिं प्रकुर्वीत सर्वारिष्टप्रणाशिनीम् ॥ ३ ॥

रुद्ररूपं विधायाऽऽशु सुवर्णेन विचक्षणः ।

कर्षमात्रसुवर्णेन तदर्धार्धेन वा पुनः ॥ ४ ॥

वस्त्रद्वयसमायुक्तं षोडशैरु (ध्यानपूर्वो) पचारकैः ।

त्रैयम्बकेण मन्त्रेण पूजां होमं च कारयेत् ॥ ५ ॥

पलाशसमिधस्तत्र चरुं तिलसमन्वितम् ।

शतमष्ट सहस्रं वा जुहुयाद्घृतपूरितम् ॥ ६ ॥

मूलाश्लेषविधानं च (पोक्तविधिना) वित्तशाठ्यं न कारयेत् ।

अकृत्वा शान्तिकं मूढो धनधान्यविनश्यति (न्यैर्वियुज्यते) ॥ ७ ॥

चतुर्दश्यां सिनीवाल्यां गोश्वयोर्महिषस्य च ।

स्त्रीणां चैव प्रसूतिश्च शक्रस्यापि श्रियं हरेत् ॥ ८ ॥

गृहं क्षेत्रं तथा धान्यं गृहोपकरणानि च ।

पशुवस्त्रादिकं चेति नू (न्यू) नमित्युच्यते बुधैः ॥ ९ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां

कृष्णचतुर्दशीप्रसूतिदोषहरं

विधानम् ।

अथामाप्रसूतिदोषहरं विधानम् ।

सिनीवालीप्रसूता स्याद्यस्य भार्या पशुस्तथा ।
 गजाश्वमहिषाश्चैव(करिण्यश्वामहिप्यश्च) शक्रस्यापि श्रियं हरेत् ॥ १ ॥
 नारीं विना तु शेषस्य परित्यागो विधीयते ।
 परित्यागात्ततः शान्तिं कुर्याद्धीमान्विचक्षणः(धानतः) ॥ २ ॥
 रुद्रः शक्रश्च पितरः पूज्याः स्युर्देवताः क्रमात् ।
 कर्पेण तु सुवर्णेन तदर्धार्धेन वा पुनः ॥ ३ ॥
 स्वशक्त्याऽप्यथ वा कुर्याद्वित्तशाठ्यविवर्जितः ।
 नवग्रहमखं कुर्यात् [अत्र शान्तौ प्रयत्नतः] ॥ ४ ॥
 प्रतिमां कारयेच्छंभोश्चतुर्भुजसमन्विताम् ।
 त्रिशूलखड्गपरशुवरदण्डान्यथाक्रमम् ॥ ५ ॥
 श्वेतवर्णां श्वेतरक्तां श्वेतपुष्परथस्थिताम् ।
 त्रैयम्बकेण मन्त्रेण सर्वपूजां प्रकल्पयेत् ॥
 दत्त्वा दानं विधायाऽऽशु ततः सौख्यं लभेन्नरः ॥ ६ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायाममाप्रसूतिदोष-
 हरं विधानम् ।

अथ नष्टानन्तदोरकविघ्नहरं विधानम् ।

युधिष्ठिर उवाच—

अनन्तव्रतमाहात्म्यं बहुधा च मया श्रुतम् ।
 दोररूपो ह्यनन्तोऽपि रक्षतीति सुरोत्तम ॥ १ ॥
 प्रमादाद्यदि नष्टः स्याद्दोरग्रन्थिषु पूजितः ।
 तदा किं करणीयं स्याद्वद त्रैलोक्यपालक ॥ २ ॥

कृष्ण उवाच—

साधु पृष्ठं त्वया राजन्वक्ष्यामि च यथातथम् ।
 शृणु लोकस्य सर्वस्य रक्षार्थं शान्तिमिच्छता ॥ ३ ॥
 दोरे नष्टे महान्दोषः संभवेद्बहुकायिकः ।
 तस्मात्तद्दोषशान्त्यर्थं प्रायश्चित्तं समारभेत् ॥ ४ ॥

गुरुं प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कृत्य समाहितः ।
 विज्ञाप्य दोरनाशं च तेन सार्धं व्रतं चरेत् ॥ ५ ॥
 कारयित्वा च दोरं तु पूर्ववद्ग्रन्थिसंयुतम् ।
 हव्यवाहं प्रतिष्ठाप्य तस्मिन्नावाहयेद्धरिम् ॥ ६ ॥
 आज्यमग्नावधिश्रित्य दद्याद्विप्राय वा(चाऽऽ)सनम् ।
 अष्टोत्तरशतं हुत्वा मूलमन्त्रेण संयुतः ॥ ७ ॥
 नामत्रयं च (मन्त्रेण) हुत्वा च केशवादिक्र(दीन्क्र)मात्ततः ।
 अर्चयेदर्चनाद्यै (हँ) श्व सुमनोभिः सदूर्वकैः ॥ ८ ॥
 अनन्तं कामयेद्देवं सर्वकामफलप्रदम् ।
 अनन्तं दोररूपेण अनन्ताय नमो नमः ॥ ९ ॥

अथ भविष्योत्तरपुराणोक्तविधिर्लिख्यते ।

युधिष्ठिर उवाच—

प्रमादाद्यदि देवेश नश्येच्चानन्तदोरकः ।
 तदा किं करणीयं स्याद्दद त्रैलोक्यपालकं ॥ १ ॥

कृष्ण उवाच—

साधु पृष्टं त्वया पार्थ वक्ष्यामि च यथाक्रमम् ।
 गृणु सर्वस्य लोकस्य रक्षार्थं विधिमुत्तमम् ॥ २ ॥
 दोरे नष्टे महान्दोषः संभवेद्बहुपातकम् ।
 तस्मात्तद्दोषशान्त्यर्थं प्रायश्चित्तविधिं चरेत् ॥ ३ ॥
 कृत्वा च मृत्तिकास्नानं गोमयेन विलेपयेत् ।
 स्नानादनन्तरं पञ्चगव्यप्राशनमाचरेत् ॥ ४ ॥
 तत्तन्मन्त्रैः प्रकुर्वीत (पञ्चगव्य) प्राशनं कल्पयेद्बुधः ।
 पश्चात्स्वहस्ते गृहीयाद्दर्भाद्दक्षिणया युतान् ॥ ५ ॥
 गुरुं प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कृत्य महाजनम् ।
 विज्ञात (प्य) दोरनाशं च तेन सार्धं व्रतं चरेत् ॥ ६ ॥
 पुण्याहं वाचयेच्चैवमाचार्यं वरयेत्ततः ।
 पश्चाद्धोमभुवं सम्यग्गोमयेनोपलिप्य च ॥ ७ ॥
 हव्यवाहं प्रतिष्ठाप्य स्वगृहोक्तविधानतः ।
 चतुर्दश स्वनामानि तैरनन्तं समाहितः ॥ ८ ॥

पूजयित्वा प्रयत्नेन पश्चाद्धोमं समारभेत् ।
 विष्णुरग्निस्तथा सूर्यः सहस्राक्षः पितामहः ॥ ९ ॥
 इन्द्रः पिनाकी विघ्नेशः स्कन्दः सोमस्तथैव च ।
 वरुणः पवनः पृथ्वी वसन्तो ग्रन्थिदेवताः ॥ १० ॥
 अष्टोत्तरशतं हुत्वा स्वाहान्तमूलमन्त्रतः ।
 अतो देवेति मन्त्रेण(वा इत्यमुना) होमं कुर्यात्प्रयत्नतः ॥ ११ ॥
 नाममन्त्रेण हुत्वाऽथ केशवादीन्क्रमात्ततः ।
 अनन्तं कामरूपं च विष्णुं जिष्णुं हरिं शिवम् ॥ १२ ॥
 ब्रह्माणं भास्करं शेषं सर्वव्यापिनमीश्वरम् ।
 विश्वरूपं महाकायं स्थितिसंहारकारकम् ॥ १३ ॥
 मूर्तित्रयं प्रकुर्वीत अ(ह्य)नन्तस्य महात्मनः ।
 शान्तिहोमं प्रकुर्वीत महाव्याहृतिभिः क्रमात् ॥ १४ ॥
 पूर्णाहुतिं ततः कुर्याद्ब्रह्मोद्गासनमेव च ।
 एवं शान्तिविधिं कृत्वा पूर्ववद्ब्रतमाचरेत् ॥ १५ ॥
 संपूज्यानन्तदेवेशं बन्धनीयः सुदोरकः ।
 संभोज्य द्विजमुख्यांश्च दत्त्वा च गुरुदक्षिणाम् ॥ १६ ॥
 गोभूहिरण्यवासादि दद्यात्तद्दोषशान्तये ।
 बन्धुभिः सहितः पश्चात्स्वयं भुञ्जीत वाग्यतः ॥ १७ ॥
 न पूजयन्ति ये मूढाश्छिन्ने नष्टेऽथ दोरके ।
 दारिद्र्यं व्याधिदुःखादि पीडयेन्नात्र संशयः ॥ १८ ॥
 एवं यः कुरुते नित्यं पूजां तस्य समादरात् ।
 न भवेत्पापभोगी स न च दुःखं भविष्यति ॥ १९ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्तेभ्यो दद्याच्च दक्षिणाम् ।
 तस्मात्सर्वप्रयत्नेन गुरुपूजा स्वशक्तितः ॥ २० ॥
 प्रतिमां वस्त्रसंयुक्तामाचार्याय निवेदयेत् ।
 विप्राशीर्वाचनं ग्राह्यं पश्चात्तान्वै क्षमापयेत् ॥ २१ ॥

इति श्रीनृसिंहभट्टविरचितायां विधानमालायां नष्टानन्तदोरक-
 विघ्नहरं विधानम् ।

+ (समाहृतमिदं शास्त्रं सर्वशास्त्रार्थसंग्रहात् ।
 विधानमालिकाख्यं हि प्राणिनामुपकारकम् ॥ १ ॥
 धर्मार्थकामशास्त्रेभ्यः संगृह्यालंकृतं मया ।
 सद्धृतं सर्वपुष्पेभ्यो यतः स्यान्मधु माक्षिकम् ॥ २ ॥
 ग्रन्थस्यास्यानुरागेण ममानुग्रहणेन वा ।
 संतोषयन्तु विद्वांसः स्वचेतांसि समञ्जसाः ॥ ३ ॥
 वैराटे विषयेऽस्ति चन्दनगिरेर्गव्यूतिमात्रं पुरं
 देव्याः प्राक्सुमनोहरं वसुमतीतीरेऽग्रहारं(रो) महत् ।
 तत्रत्योऽत्रिकुलोद्भवो गुणनिधिः श्रीमान्नृसिंहो द्विज-
 श्वक्रे शास्त्रमिदं नृणामुपकृतिं संधाय चित्ते निजे ॥ ४ ॥
 विधानमालां ग्रथितां मया तां गुणानुसंधानविराजमानाम् ।
 प्रायेण सारैः सुरभिं पवित्रां कुर्वन्तु कण्ठेष्ठनिजेषु धीराः) ॥ ५ ॥
 इति श्रीनृसिंहभट्टविरचिता विधानमाला संपूर्णा ॥



